

ॐ

श्रीमद्भगवद्गीता

पदच्छेद, अन्वय और

साधारणभाषाटीकासहित



मूल्य ॥१०॥ बीकानेर भाषा



Presented as a token
of affection L.P. Shyam Lal W.S.

J.N. Safaya

26th Sept 59

✓
So. thankfully accepted by

J. B. B. B.

26/9/58



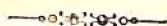
ॐ श्रीपरमात्मने नमः

श्रीमद्भगवद्गीता

पदच्छेद-अन्वय

और

साधारणभाषाटीकासहित



त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव ॥

मूल्य ॥३॥ सजिल्द ॥३॥

सं० १९८५ प्र० सं० १००००

सं० १९८८ द्वि० सं० ५०००

सं० १९९१ तृ० सं० ७०००

सं० १९९३ च० सं० ५०००

मद्रास

मुद्रक तथा प्रकाशक
धनश्यामदास जालान
गीताप्रेस, गोरखपुर

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

श्रीगीताजीकी महिमा ।

वास्तवमें श्रीमद्भगवद्गीताका माहात्म्य वाणीद्वारा वर्णन करनेके लिये किसीका भी सामर्थ्य नहीं है, क्योंकि यह एक परम रहस्यमय ग्रन्थ है । इसमें संपूर्ण वेदोंका सार सार संग्रह किया गया है, इसका संस्कृत इतना सुन्दर और सरल है कि, थोड़ा अभ्यास करनेसे मनुष्य उसको सहज ही समझ सकता है, परन्तु इसका आशय इतना गम्भीर है कि, आजीवन निरन्तर अभ्यास करते रहनेपर भी उसका अन्त नहीं आता । प्रतिदिन नये नये भाव उत्पन्न होते रहते हैं, इससे यह सदा ही नवीन बना रहता है । एवं एकाग्रचित्त होकर श्रद्धा, भक्तिसहित विचार करनेसे इसके पद प्रत्यक्ष महसूस होकर प्रत्यक्ष प्रतीत होता है । भगवान्‌के गुण, प्रभाव और मर्मका वर्णन जिस प्रकार इस गीताशास्त्रमें किया गया है, वैसा अन्य ग्रन्थोंमें मिलना कठिन है, क्योंकि प्रायः ग्रन्थोंमें कुछ न कुछ सांसारिक विषय मिला रहता है, परन्तु “श्रीमद्भगवद्गीता” एक ऐसा अनुपमेय शास्त्र भगवान्‌ने कहा है कि जिसमें एक भी शब्द सदुपदेशसे खाली नहीं है । इसीलिये श्रीवेदव्यासजीने महाभारतमें गीताजीका वर्णन करनेके उपरान्त कहा है कि:—

गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यैः शास्त्रविस्तरैः ।

या स्वयं पद्मनाभस्य मुखपद्माद्भिनिःसृता ॥

गीता सुगीता करने योग्य है, अर्थात् श्रीगीताजीको भली प्रकार पढ़कर अर्थ और भावसहित अन्तःकरणमें धारण कर लेना मुख्य कर्तव्य है, जो कि स्वयं श्रीपद्मनाभ विष्णु भगवान्‌के मुखारविन्दसे

निकली हुई है, (फिर) अन्य शाखोंके विस्तारसे क्या प्रयोज तथा स्वयं भगवान् ने भी इसका माहात्म्य अन्तमें वर्णन कि (अ० १८ श्लो० ६८ से ७१ तक)

इस गीताशास्त्रमें मनुष्यमात्रका अधिकार है, चाहे वह वि वर्ण, आश्रममें स्थित होवे, परन्तु भगवान् में श्रद्धालु और भा- अवश्य होना चाहिये, क्योंकि अपने भक्तोंमें ही इसका प्रचार क- लिये भगवान् ने आज्ञा दी है तथा यह भी कहा है कि, स्त्री, वै शूद्र और पापयोनिवाले मनुष्य भी मेरे परायण होकर परमग- प्राप्त होते हैं (अ० ९ श्लो० ३२) एवं अपने अपने स्वाभाविक कर्मे- मेरी पूजा करके मनुष्य परमसिद्धिको प्राप्त होते हैं (अ० ४६) इन सबपर विचार करनेसे यही ज्ञात होता है कि, प्राप्तिमें सभीका अधिकार है।

परन्तु उक्त विषयके मर्मको न समझनेके कारण ब- जिन्होंने श्रीगीताजीका केवल नाममात्र ही करते हैं कि, गीता तो केवल संन्यासियोंके बालकोंको भी इसी भयसे श्रीगीताजीका अ- गीताके ज्ञानसे कदाचित् लड़का घर छोड़क- किन्तु उनको विचार करना चाहिये कि, मो- धर्मसे विमुख होकर भिक्षाके अन्नसे निर्वाह कर- अर्जुनने जिस परम रहस्यमय गीताके उपदेशसे आजीव- रहकर अपने कर्तव्यका पालन किया, उस गीताशास्त्रक- परिणाम किस प्रकार हो सकता है।

अतएव कल्याणकी इच्छावाले मनुष्योंको उ-

तो त्याग करके अतिशय श्रद्धा, भक्तिपूर्वक अपने बालकोंको अर्थ
 मायके सहित श्रीगीताजीका अध्ययन करावें, एवं स्वयं भी इसका
 और मनन करते हुए भगवान्की आज्ञानुसार साधन करनेमें
 हो जायें । क्योंकि अति दुर्लभ मनुष्यके शरीरको प्राप्त होकर
 अमूल्य समयका एक क्षण भी दुःखमूलक क्षणभंगुर भोगोंके
 में नष्ट करना उचित नहीं है ।

श्रीगीताका प्रधान विषय ।

गीतामें भगवान्ने अपनी प्राप्तिके लिये मुख्य दो मार्ग
 एक सांख्ययोग, दूसरा कर्मयोग । उनमें—

१) संपूर्ण पदार्थ मृगतृष्णाके जलकी भाँति अथवा स्वप्नकी
 मायामय होनेसे मायाके कार्यरूप संपूर्ण गुण ही गुणोंमें
 समझकर मन, इन्द्रियों और शरीरद्वारा होनेवाले संपूर्ण
 उनके अभिमानसे रहित होना (अ० ५ श्लो० ८, ९) तथा

२) अन्धधन परमात्माके स्वरूपमें एकीभावसे नित्य स्थित
 में मिलना, अन्धधन वासुदेवके सिवा अन्य किसीके भी
 प मिला रहता है । यह तो सांख्ययोगका साधन है ।

भगवान्ने कह है । इसीलिये कुछ भगवान्का समझकर सिद्धि, असिद्धिमें
 के उपरान्त कह भक्ति और फलकी इच्छाका त्याग करके भगवत्-
 की ही लिये सब कर्मोंका आचरण करना ।

गीता सर्ग, अ० ५ श्लो० १०) तथा श्रद्धा, भक्तिपूर्वक मन,
 शरीरसे सब प्रकार भगवान्के शरण होकर नाम, गुण
 सहित उनके स्वरूपका निरन्तर चिन्तन करना
 श्लो० ४७) यह निष्काम कर्मयोगका साधन है ।

उक्त दोनों साधनोंका परिणाम एक होनेके कारण वास्तव
अभिन्न माने गये हैं (अ० ५ श्लोक ४, ५) परन्तु साधनकालमें अधिकार
भेदसे दोनोंका भेद होनेके कारण दोनों मार्ग भिन्न भिन्न बताये गये हैं
(अ० ३ श्लो० ३) इसलिये एक पुरुष दोनों मार्गोंद्वारा एक काल
नहीं चल सकता, गीगङ्गाजीपर जानेके लिये दो मार्ग होते हुए
भी एक मनुष्य दोनों मार्गोंद्वारा एक कालमें नहीं जा सकता। उक्त
साधनोंमें कर्मयोगका साधन संन्यास आश्रममें नहीं बन सकता
क्योंकि संन्यास आश्रममें कर्मोंका स्वरूपसे भी त्याग कहा है और
सांख्ययोगका साधन सभी आश्रमोंमें बन सकता है।

यदि कहो कि, सांख्ययोगको भगवान् ने संन्यासके नामसे कहा
है, इसलिये उसका संन्यास आश्रममें ही अधिकार है, गृहस्थमें नहीं
तो यह कहना ठीक नहीं है, क्योंकि दूसरे अध्यायमें श्लो० ११ से ३
तक जो सांख्यनिष्ठाका उपदेश किया गया है, उसके अनुसार
भगवान् ने जगह-जगह **अर्जुनको युद्ध करनेकी योग्यता दिखाई है**
यदि गृहस्थमें सांख्ययोगका अधिकार ही नहीं होता तो इस प्रकार
भगवान् का कहना कैसे बन सकता? हाँ, इतनी विशेषता अवश्य है कि
सांख्यमार्गका अधिकारी देहाभिमानसे रहित होना चाहिये। क्योंकि
जबतक शरीरमें अहंभाव रहता है, तबतक सांख्ययोगका सफल
प्रकार समझमें नहीं आता इसीसे भगवान् ने सांख्ययोगको कर्मा
बताया है (गीता अध्याय ५ श्लोक ६) और निष्काम कर्मयोग साधन
सुगम होनेके कारण अर्जुनके प्रति जगह-जगह कहा है
निरन्तर मेरा चिन्तन करता हुआ निष्काम कर्मयोगका भ्र

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम् ।

देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत् ॥

अथ श्रीमद्भगवद्गीता

भाषाटीकासहित

पहिला अध्याय

प्रधान विषय—१ से ११ तक दोनों सेनाओंके प्रधान प्रधान शूर-
वीरोंकी गणना और सामर्थ्यका कथन, (१२-१९) दोनों सेनाओंकी शङ्ख-
ध्वनिका कथन, (२०-२७) अर्जुनद्वारा सेनानिरीक्षणका प्रसङ्ग, (२८-४७)
मोहसे व्याप्त हुए अर्जुनके कायरता, स्नेह और शोकयुक्त वचन ।

धृतराष्ट्र उवाच

के विषयमें
टीका प्रश्न ।

धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः ।
मामकाः पाण्डवाश्चैव किमकुर्वत संजय ॥

पदच्छेदः

धर्मक्षेत्रे, कुरुक्षेत्रे, समवेताः, युयुत्सवः,
मामकाः, पाण्डवाः, च, एव, किम्, अकुर्वत, संजय ॥१॥

अन्वयः शब्दार्थ अन्वयः शब्दार्थ

धृतराष्ट्र बोला—

संजय = हे संजय
धर्मक्षेत्रे = धर्मभूमि

कुरुक्षेत्रे = कुरुक्षेत्रमें
समवेताः = इकट्ठे हुए

युयुत्सवः = युद्धकी इच्छावाले

मामकाः = मेरे

च = और

एव*

पाण्डवाः =

किम्

अकुर्वत = किया

संजय उवाच

मित्र बताये गये हैं

मोक्षद्वारा एक का

मार्ग होते हैं

सकता।

धृतराष्ट्रकृत
प्रश्नके उत्तरमें
द्रोणाचार्यकेपास
दुर्योधनके गमन-
का वर्णन।

दृष्ट्वा तु पाण्डवानीकं व्यूढं दुर्योधनस्तदा

आचार्यमुपसंगम्य राजा वचनमब्रवीत् ।

दृष्ट्वा, तु, पाण्डवानीकम्, व्यूढम्, दुर्योधनः, तदा
आचार्यम्, उपसंगम्य, राजा, वचनम्, अब्रवीत्

इसपर संजय बोला-

तदा = उस समय

राजा = राजा

दुर्योधनः = दुर्योधनने

व्यूढम् = व्यूह रचनायुक्त

पाण्डवा-
नीकम् = { पाण्डवोंकी
सेनाको

दृष्ट्वा = देखकर

तु = और

आचार्यम् = द्रोणाचार्य

उपसंगम्य = पास जाकर

(यह)

वचनम् = वचन

अब्रवीत् = कहा

पाण्डवसेनाको
देखनेके लिये
गुरुसे दुर्योधन-
की प्रार्थना।

पश्यैतां पाण्डुपुत्राणामाचार्य महतीं चमूम् ।

व्यूढां द्रुपदपुत्रेण तव शिष्येण धीमता ।

पश्य, एताम्, पाण्डुपुत्राणाम्, आचार्य, महतीम्, चमूम्
व्यूढाम्, द्रुपदपुत्रेण, तव, शिष्येण, धीमता ॥ ३ ॥

* यहाँ "एव" शब्द समुच्चयार्थ है ।

हे आचार्य

गणित

गुणमन्त्र

शिव्य

गण = { दुपदपुत्र
वृष्टयुन्नद्वारा

व्यूढाम् = { व्यूहाकार
खड़ी की हुई

पाण्डु-
पुत्राणाम् } = पाण्डुपुत्रोंकी

एताम् = इस

महतीम् = बड़ी भारी

चमूम् = सेनाको

पश्य = देखिये

सेनाके प्रधान यों के अत्र शूरा महेष्वासा भीमार्जुनसमा युधि ।

युयुधानो विराटश्च दुपदश्च महारथः ॥

अत्र, शूराः, महेष्वासाः, भीमार्जुनसमाः, युधि,
युयुधानः, विराटः, च, दुपदः, च, महारथः ॥ ४ ॥

अत्र = इस (सेना) में (सन्ति) = हैं (जैसे)

महेष्वासाः = { बड़े बड़े
धनुषोंवाले युयुधानः = सात्यकि

युधि = युद्धमें च = और

भीमार्जुन- = { भीम और विराटः = विराट

समाः = { अर्जुनके समान च = तथा

शूराः = बहुतसे शूरवीर महारथः = महारथी

दुपदः = राजा दुपद

] धृष्टकेतुश्चेकितानः काशिराजश्च वीर्यवान् ।

पुरुजित्कुन्तिभोजश्च शैब्यश्च नरपुङ्गवः ॥

धृष्टकेतुः, चेकितानः, काशिराजः, च, वीर्यवान्,

पुरुजित्, कुन्तिभोजः, च, शैब्यः, च, नरपुङ्गवः ॥ ५ ॥

च	= और
धृष्टकेतुः	= धृष्टकेतु
चेकितानः	= चेकितान
च	= तथा
वीर्यवान्	= बलवान्
काशिराजः	= काशिराज

पुरुजित्	= पुरुजित्
कुन्तिभोजः	= कुन्तिभोजः
च	= और
नरपुङ्गवः	= { मनुष्य
शैव्यः	= शैव्य

”] युधामन्युश्च विक्रान्त उत्तमौजाश्च वीर्यवान्

सौभद्रो द्रौपदेयाश्च सर्व एव महारथाः

युधामन्युः, च, विक्रान्तः, उत्तमौजाः, च, वीर्यवान्
सौभद्रः, द्रौपदेयाः, च, सर्वे, एव, महारथाः

च	= और
विक्रान्तः	= पराक्रमी
युधामन्युः	= युधामन्यु
च	= तथा
वीर्यवान्	= बलवान्
उत्तमौजाः	= उत्तमौजा
सौभद्रः	= { सुभद्रापुत्र अभिमन्यु

च	= और
द्रौपदेयाः	= { द्रौपदीपुत्र पांचों पु
	(यह)
सर्व	= सब
एव	= ही
महारथाः	= महारथी है

अपनी सेनाके
यान प्रधानशूर
रोंको जाननेके
लिये गुरुसे दुर्यो-
नकी प्रार्थना।

अस्माकं तु विशिष्टा ये तान्निबोध द्विजोत्तम ।

नायका मम सैन्यस्य संज्ञार्थं तान्ब्रवीमि ते ॥

अस्माकम्, तु, विशिष्टाः, ये, तान्, निबोध, द्विजोत्तम,
नायकाः, मम, सैन्यस्य, संज्ञार्थम्, तान्, ब्रवीमि, ते ॥७

द्विजोत्तम = हे ब्राह्मणश्रेष्ठ

अस्माकम् = हमारे पक्षमें

= भी

= जो जो

= प्रधान हैं

॥ = उनको

॥ (आप)

= समझ लीजिये

ते = आपके

संज्ञार्थम् = जाननेके लिये

मम = मेरी

सैन्यस्य = सेनाके

(ये) = जो जो

नायकाः = सेनापति हैं

तान् = उनको

ब्रवीमि = कहता हूँ

भवान्भीष्मश्च कर्णश्च कृपश्च समितिंजयः ।

युयुत्सो विकर्णश्च सौमदत्तिस्तथैव च ॥

अश्वत्थामा, च, कर्णः, च, कृपः, च, समितिंजयः,
अश्वत्थामा, विकर्णः, च, सौमदत्तिः, तथा, एव, च ॥ ८ ॥

एक तो स्वयम्-

भवान् = आप

च = और

भीष्मः = पितामह भीष्म

च = तथा

॥ = कर्ण

॥ = और

समितिंजयः = संग्रामविजयी

॥ = कृपाचार्य

च = तथा

तथा = वैसे

एव = ही

अश्वत्थामा = अश्वत्थामा

विकर्णः = विकर्ण

च = और

सौमदत्तः = सौमदत्त

दुर्योधन द्वारा अन्ये च बहवः शूरा मदर्थे त्यक्तजीवि-
 अपनी सेनाके नानाशस्त्रप्रहरणाः सर्वे युद्धविशार-
 शूरवीरों की नानाशस्त्रप्रहरणाः, सर्वे, युद्धविशारदाः ॥ ९.

तथा—

अन्ये	= और	मदर्थे	= मेरे
च	= भी	त्यक्त-	{ जी-
बहवः	= बहुतसे	जीविताः	= { आ
शूराः	= शूरवीर		{ त्याग
नानाशस्त्र-	{ अनेक प्रकार-	सर्वे	= सब
प्रहरणाः	= { के शस्त्र अस्त्रों-	युद्ध-	} = युद्ध
	= { से युक्त	विशारदाः	

दुर्योधनका अपर्याप्तं तदस्माकं बलं भीष्माभिरक्षि-
 पाण्डवसेना की पर्याप्तं त्विदमेतेषां बलं भीमाभिरक्षि-
 अपेक्षा अपनी पर्याप्तम्, तत्, अस्माकम्, बलम्, भीष्माभिरक्षित
 सेनाको अजेय पर्याप्तम्, तु, इदम्, एतेषाम्, बलम्, भीमाभिरक्षित
 बतलाना । और—

भीष्माभि-	= { भीष्मपितामह-	बलम्	= सेना
रक्षितम्	= { द्वारा रक्षित	अपर्याप्तम्	= { स
अस्माकम्	= {	तु	= और

भीमाभि-	= { भीमद्वारा	वलम्	= सेना
रक्षितः	= { रक्षित		
एतेषाम्	= इन लोगोंकी	पर्याप्तम्	= { जीतनेमें
इदम्	= यह		= { सुगम है

भीष्मकी रक्षा- अयनेषु च सर्वेषु यथाभागमवस्थिताः ।
 के लिये द्रोणादि भीष्ममेवाभिरक्षन्तु भवन्तः सर्व एव हि ॥
 शूरवीरोंके प्रति
 भीष्म की अयनेषु, च, सर्वेषु, यथाभागम्, अवस्थिताः,
 प्रेरणा ! भीष्मम्, एव, अभिरक्षन्तु, भवन्तः, सर्वे, एव, हि ॥११॥

च	= इसलिये	सर्वे	= सबके सब
सर्वेषु	= सब	एव	= ही
अयनेषु	= मोर्चोंपर	हि	= निःसन्देह
यथा-	= { अपनी अपनी	भीष्मम्	= { भीष्म-
भागम्	= { जगह		= { पितामहकी
अवस्थिताः	= स्थित रहते हुए	एव	= ही
भवन्तः	= आपलोग	अभिरक्षन्तु	= { सब ओरसे
			= { रक्षा करें

दुर्योधनकी तस्य संजनयन्हर्षं कुरुवृद्धः पितामहः ।
 प्रतापके लिये सिंहनादं विनद्योच्चैः शङ्खं दध्मौ प्रतापवान् ॥
 मका गर्जकर
 बजाना ।

तस्य, संजनयन्, हर्षम्, कुरुवृद्धः, पितामहः,
 सिंहनादम्, विनद्य, उच्चैः, शङ्खम्, दध्मौ, प्रतापवान् ॥१२॥

इस प्रकार द्रोणाचार्यसे कहते हुए दुर्योधनके वचनोंको सुनकर-

कुरुवृद्धः = कौरवोंमें वृद्ध	संजनयन् = उत्पन्न करते हुए
प्रतापवान् = बड़े प्रतापी	उच्चैः = उच्च स्वरसे
पितामहः = { पितामह भीष्मने	सिंहनादम् = { सिंहकी न के समान
तस्य = { उस (दुर्योधन) के (हृदयमें)	विनद्य = गर्जकर
हर्षम् = हर्ष	शङ्खम् = शङ्ख
	दध्मौ = बजाया

दुर्योधनकी सेना ततः शङ्खाश्च भेर्यश्च पणवानकगोमुखाः
नाना प्रकारके सहस्रैवाभ्यहन्यन्त स शब्दस्तुमुलोऽभवत्
जोंका भयंकर शब्द होता।

ततः, शङ्खाः, च, भेर्यः, च, पणवानकगोमुखाः,
सहसा, एव, अभ्यहन्यन्त, सः, शब्दः, तुमुलः, अभवत् ॥ १६

ततः = उसके उपरान्त	सहसा = एक साथ
शङ्खाः = शङ्ख	एव = ही
च = और	अभ्यहन्यन्त = बजे
भेर्यः = नगारे	(उनको)
च = तथा	सः = वह
पणवानक- = { ढोल मृदङ्ग	शब्दः = शब्द
गोमुखाः = { और वृत्तिहादि	तुमुलः = बड़ा
	अभवत् = हुआ

ण, अर्जुन ततः श्वेतैर्हयैर्युक्ते महति स्यन्दने स्थितौ ।

भीमसेन-
शङ्खोका माधवः पाण्डवश्चैव दिव्यौ शङ्खौ प्रदध्मतुः ॥ १४ ॥

य जाना। ततः, श्वेतैः, हयैः, युक्ते, महति, स्यन्दने, स्थितौ,
माधवः, पाण्डवः, च, एव, दिव्यौ, शङ्खौ, प्रदध्मतुः ॥ १४ ॥

ततः	= इसके अनन्तर	माधवः	= श्रीकृष्ण महाराज
श्वेतैः	= सफेद	च	= और
हयैः	= घोड़ोंसे	पाण्डवः	= अर्जुनने
युक्ते	= युक्त	एव	= भी
महति	= उत्तम	दिव्यौ	= अलौकिक
स्यन्दने	= रथमें	शङ्खौ	= शङ्ख
स्थितौ	= बैठे हुए	प्रदध्मतुः	= बजाये

॥] पाञ्चजन्यं हृषीकेशो देवदत्तं धनंजयः ।

पौण्ड्रं दध्मौ महाशङ्खं भीमकर्मा वृकोदरः ॥ १५ ॥

पाञ्चजन्यम्, हृषीकेशः, देवदत्तम्, धनंजयः,
पौण्ड्रम्, दध्मौ, महाशङ्खम्, भीमकर्मा, वृकोदरः ॥ १५ ॥

उनमें-

हृषीकेशः	= { श्रीकृष्ण महाराजने	देवदत्तम्	= { देवदत्त नामक शङ्ख (बजाया)
पाञ्चजन्यम्	= { पाञ्चजन्य नामक शङ्ख	भीमकर्मा	= { भयानक कर्मवाले
धनंजयः	= अर्जुनने		

वृकोदरः = भीमसेनने

महाशङ्खम् = महाशङ्ख

पौण्ड्रम् = पौण्ड्र नामक

दध्मौ = बजाया

युधिष्ठिर, नकुल अनन्तविजयं राजा कुन्तीपुत्रो युधिष्ठिरः ।

और सहदेवद्वारा

शङ्खोंका बजाया

जाना ।

नकुलः सहदेवश्च सुघोषमणिपुष्पकौ ॥ १६ ॥

अनन्तविजयम्, राजा, कुन्तीपुत्रः, युधिष्ठिरः,

नकुलः, सहदेवः, च, सुघोषमणिपुष्पकौ ॥ १६ ॥

कुन्तीपुत्रः = कुन्तीपुत्र

च = तथा

राजा = राजा

सहदेवः = सहदेवने

युधिष्ठिरः = युधिष्ठिरने

अनन्त-
विजयम् = { अनन्तविजय
नामक शङ्ख
(और)सुघोषमणि-
पुष्पकौ = { सुघोष और
मणिपुष्पक
नामवाले
शङ्ख (बजाये)

नकुलः = नकुल

पाण्डवोंकी सेना

के प्रधान प्रधान

योधायों द्वारा

शङ्खोंका बजाया

जाना ।

काश्यश्च परमेष्वासः शिखण्डी च महारथः ।

धृष्टद्युम्नो विराटश्च सात्यकिश्चापराजितः ॥ १७ ॥

काश्यः, च, परमेष्वासः, शिखण्डी, च, महारथः,

धृष्टद्युम्नः, विराटः, च, सात्यकिः, च, अपराजितः ॥ १७ ॥

परमेष्वासः = श्रेष्ठ धनुषवाला

शिखण्डी = शिखण्डी

काश्यः = काशिराज

च = और

च = और

धृष्टद्युम्नः = धृष्टद्युम्न

महारथः = महारथी

च = तथा

विराटः = राजा विराट
च = और

अपराजितः = अजेय
सात्यकिः = सात्यकि

[„] द्रुपदो द्रौपदेयाश्च सर्वशः पृथिवीपते ।

सौभद्रश्च महाबाहुः शङ्खान्दध्मुः पृथक्पृथक् ॥

द्रुपदः, द्रौपदेयाः, च, सर्वशः, पृथिवीपते,
सौभद्रः, च, महाबाहुः, शङ्खान्, दध्मुः, पृथक्, पृथक् ॥ १८ ॥

तथा-

द्रुपदः = राजा द्रुपद
च = और

द्रौपदेयाः = { द्रौपदीके
पांचों पुत्र

च = और

महाबाहुः = { बड़ी
मुजावाला

सौभद्रः = { सुभद्रापुत्र
अभिमन्यु

सर्वशः = इन सबने

पृथिवीपते = हे राजन्

पृथक् = अलग

पृथक् = अलग

शङ्खान् = शङ्ख

दध्मुः = बजाये

पाण्डवसेना- स घोषो धार्तराष्ट्राणां हृदयानि व्यदारयत् ।

की शङ्ख ध्वनिसे नभश्च पृथिवीं चैव तुमुलो व्यनुनादयन् ॥ १९ ॥

धृतराष्ट्र पुत्रोंके सः, घोषः, धार्तराष्ट्राणाम्, हृदयानि, व्यदारयत्,

हृदयोंका विदीर्ण होना । नभः, च, पृथिवीम्, च, एव, तुमुलः, व्यनुनादयन् ॥ १९ ॥

च = और

सः = उस

तुमुलः = भयानक

घोषः = शब्दने

नभः = आकाश

च = और

पृथिवीम् = पृथिवीको

एव = भी

व्यनु-
नादयन् { शब्दायमान
करते हुएधार्त-
राष्ट्राणाम् = { धृतराष्ट्र-
पुत्रोंके

हृदयानि = हृदय

व्यदारयत् = { विदीर्ण
कर दिये

दुर्योधनकी सेना-

को युद्धके लिये

तैयार देखकर

दोनों सेनाओंके

बीचमें रथ खड़ा

करनेके लिये

भगवान्‌के प्रति

अर्जुनकी प्रेरणा

अथ व्यवस्थितान्दृष्ट्वा धार्तराष्ट्रान्कपिध्वजः ।

प्रवृत्ते शस्त्रसंपाते धनुरुद्यम्य पाण्डवः ॥२०॥

हृषीकेशं तदा वाक्यमिदमाह महीपते ।

सेनयोरुभयोर्मध्ये रथं स्थापय मेऽच्युत ॥२१॥

अथ, व्यवस्थितान्, दृष्ट्वा, धार्तराष्ट्रान्, कपिध्वजः,

प्रवृत्ते, शस्त्रसंपाते, धनुः, उद्यम्य, पाण्डवः ॥२०॥

हृषीकेशम्, तदा, वाक्यम्, इदम्, आह, महीपते,

सेनयोः, उभयोः, मध्ये, रथम्, स्थापय, मे, अच्युत ॥२१॥

महीपते = हे राजन्

अथ = उसके उपरान्त

कपिध्वजः = कपिध्वज

पाण्डवः = अर्जुनने

व्यवस्थि-
तान् } = खड़े हुए

धार्तराष्ट्रान् = धृतराष्ट्रपुत्रोंको

दृष्ट्वा = देखकर

तदा = उस

शस्त्रसंपाते
प्रवृत्ते = { शस्त्र चलनेकी
तैयारीके
समय

धनुः	= धनुष	अच्युत	= हे अच्युत
उद्यम्य	= उठाकर	मे	= मेरे
हृषीकेशम्	= { हृषीकेश श्रीकृष्ण महाराजसे	रथम्	= रथको
इदम्	= यह	उभयोः	= दोनों
वाक्यम्	= वचन	सेनयोः	= सेनाओंके
आह	= कहा	मध्ये	= बीचमें
		स्थापय	= खड़ा करिये

दुर्योधन की सेनामें आये हुए शूरवीरोंको देखनेके लिये अर्जुनकास्वेच्छा प्रगट करना । यावदेतान्निरीक्षेऽहं योद्धुकामानवस्थितान् ।
कैर्मया सह योद्धव्यमस्मिन्नरणसमुद्यमे ॥२२॥
यावत्, एतान्, निरीक्षे, अहम्, योद्धुकामान्, अवस्थितान्, कैः, मया, सह, योद्धव्यम्, अस्मिन्, रणसमुद्यमे ॥२२॥

यावत्	= जबतक	अस्मिन्	= इस
अहम्	= मैं	रणसमुद्यमे	= { युद्धरूप व्यापारमें
एतान्	= इन	मया	= मुझे
अवस्थितान्	= स्थित हुए	कैः	= किन किनके
योद्धुकामान्	= { युद्धकी कामना- वालोंको	सह	= साथ
निरीक्षे	= { अच्छी प्रकार देख लूं(कि)	योद्धव्यम्	= { युद्ध करना योग्य है

[„]

योत्स्यमानानवेक्षेऽहं य एतेऽत्र समागताः ।

धार्तराष्ट्रस्य दुर्बुद्धेर्युद्धे प्रियचिकीर्षवः ॥२३॥

योत्स्यमानान्, अवेक्षे, अहम्, ये, एते, अत्र, समागताः,
 धार्तराष्ट्रस्य, दुर्बुद्धेः, युद्धे, प्रियचिकीर्षवः ॥२३॥

और-

दुर्बुद्धेः	= दुर्बुद्धि	अत्र	= इस सेनामें
धार्तराष्ट्रस्य	= दुर्योधनका	समागताः	= आये हैं
युद्धे	= युद्धमें	(तान्)	= उन
प्रिय-	= { कल्याण	योत्स्य-	= { युद्ध करने-
चिकीर्षवः	= { चाहनेवाले	मानान्	= { वालोंको
ये	= जो जो	अहम्	= मैं
एते	= ये राजालोग	अवेक्षे	= देखूंगा

संजय उवाच

भगवान्का एवमुक्तो हृषीकेशो गुडाकेशेन भारत ।
 दोनों सेनाओंके सेनयोरुभयोर्मध्ये स्थापयित्वा रथोत्तमम् ॥
 बीचमें रथको भीष्मद्रोणप्रमुखतः सर्वेषां च महीक्षिताम् ।
 खड़ा करना और भीष्मद्रोणप्रमुखतः सर्वेषां च महीक्षिताम् ।
 अर्जुनके प्रति उवाच पार्थ पश्यैतान्समवेतान्कुरूनिति ॥
 कौरवोंको देखने के लिये आवा देना । एवम्, उक्तः, हृषीकेशः, गुडाकेशेन, भारत,
 सेनयोः, उभयोः, मध्ये, स्थापयित्वा, रथोत्तमम् ॥२४॥

भीष्मद्रोणप्रमुखतः, सर्वेषाम्, च, महीक्षिताम्,
उवाच, पार्थ, पश्य, एतान्, समवेतान्, कुरुन्, इति ॥२५॥

संजय बोला-

भारत	= हे धृतराष्ट्र	च	= और
गुडाकेशेन	= अर्जुनद्वारा	सर्वेषाम्	= संपूर्ण
एवम्	= इस प्रकार	महीक्षिताम्	= { राजाओंके सामने
उक्तः	= कहे हुए	रथोत्तमम्	= उत्तम रथको
हृषीकेशः	= { महाराज श्रीकृष्ण- चन्द्रने	स्थापयित्वा	= खड़ा करके
उभयोः	= दोनों	इति	= ऐसे
सेनयोः	= सेनाओंके	उवाच	= कहा कि
मध्ये	= बीचमें	पार्थ	= हे पार्थ
भीष्मद्रोण- प्रमुखतः	= { भीष्म और द्रोणाचार्यके सामने	एतान्	= इन
		समवेतान्	= इकट्ठे हुए
		कुरुन्	= कौरवोंको
		पश्य	= देख

अर्जुन का तत्रापश्यत्स्थितान्पार्थः पितृनथ पितामहान् ।

दोनों सेनामें आचार्यान्मातुलान्भ्रातृन्पुत्रान्पौत्रान्सखींस्तथा ॥

स्थित हुए बन्ध- श्वशुरान्सुहृदश्चैव सेनयोरुभयोरपि ।
वोंको देखना ।

तत्र, अपश्यत्, स्थितान्, पार्थः, पितृन्, अथ, पितामहान्,
आचार्यान्, मातुलान्, भ्रातृन्, पुत्रान्, पौत्रान्, सखीन्,
तथा, श्वशुरान्, सुहृदः, च, एव, सेनयोः, उभयोः, अपि ।

अथ	= उसके उपरान्त	मातुलान्	= मामोंको
पार्थः	= पृथापुत्र अर्जुनने	भ्रातृन्	= भाइयोंको
तत्र	= उन	पुत्रान्	= पुत्रोंको
उभयोः	= दोनों	पौत्रान्	= पौत्रोंको
अपि	= ही	तथा	= तथा
सेनयोः	= सेनाओंमें	सखीन्	= मित्रोंको
स्थितान्	= स्थित हुए	श्वशुरान्	= ससुरोंको
पितृन्	= { पिताके भाइयोंको	च	= और
पितामहान्	= पितामहोंको	सुहृदः	= सुहृदोंको
आचार्यान्	= आचार्योंको	एव	= भी
		अपश्यत्	= देखा

[„] तान्समीक्ष्य स कौन्तेयः सर्वान्बन्धून्वस्थितान् ॥

कृपया परयाविष्टो विषीदन्निदमब्रवीत् ।

तान्, समीक्ष्य, सः, कौन्तेयः, सर्वान्, बन्धून्, अवस्थितान् ॥

कृपया, परया, आविष्टः, विषीदन्, इदम्, अब्रवीत् ।

इस प्रकार—

तान्	= उन	सः	= वह
अवस्थितान्	= खड़े हुए	परया	= अत्यन्त
सर्वान्	= संपूर्ण	कृपया	= करुणासे
बन्धून्	= बन्धुओंको	आविष्टः	= युक्त हुआ
समीक्ष्य	= देखकर	कौन्तेयः	= कुन्तीपुत्र अर्जुन

विषीदन् = शोक करता हुआ
इदम् = यह

अब्रवीत् = बोला

अर्जुन उवाच

स्वजनोंको दृष्ट्वेमं स्वजनं कृष्ण युयुत्सुं समुपस्थितम् ॥२८॥
युद्ध के लिये तैयार देखकर सीदन्ति मम गात्राणि मुखं च परिशुष्यति ।
अर्जुनके शरीर वेपथुश्च शरीरे मे रोमहर्षश्च जायते ॥२९॥
और मनमें कायरता और शोक-दृष्ट्वा, इमम्, स्वजनम्, कृष्ण, युयुत्सुम्, समुपस्थितम् ॥ २८ ॥
जनित चिह्नोंके सीदन्ति, मम, गात्राणि, मुखम्, च, परिशुष्यति,
होनेका कथन । वेपथुः, च, शरीरे, मे, रोमहर्षः, च, जायते ॥ २९ ॥

कृष्ण = हे कृष्ण

इमम् = इस

युयुत्सुम् = { युद्धकी
इच्छावाले

समुपस्थितम् = खड़े हुए

स्वजनम् = { स्वजन-
समुदायको

दृष्ट्वा = देखकर

मम = मेरे

गात्राणि = अङ्ग

सीदन्ति = { शिथिल
हुए जाते हैं

च = और

मुखम् = मुख (भी)

परिशुष्यति = सूखा जाता है

च = और

मे = मेरे

शरीरे = शरीरमें

वेपथुः = कम्प

च = तथा

रोमहर्षः = रोमाञ्च

जायते = होता है

[„] गाण्डीवं संसते हस्तात्त्वक्चैव परिदह्यते ।
न च शक्नोम्यवस्थातुं भ्रमतीव च मे मनः ॥३०॥

गाण्डीवम्, संसते, हस्तात्, त्वक्, च, एव, परिदह्यते,
न, च, शक्नोमि, अवस्थातुम्, भ्रमति, इव, च, मे, मनः ॥ ३० ॥

तथा—

हस्तात्	= हाथसे	मे	= मेरा
गाण्डीवम्	= गाण्डीव धनुष	मनः	= मन
संसते	= गिरता है	भ्रमति इव	= { भ्रमित सा हो रहा है
च	= और	(अतः)	= इसलिये (मैं)
त्वक्	= त्वचा	अवस्थातुम्	= खड़ा रहनेको
एव	= भी	च	= भी
परिदह्यते	= { बहुत जलती है	न शक्नोमि	= समर्थ नहीं हूँ
च	= तथा		

अर्जुनका निमित्तानि च पश्यामि विपरीतानि केशव ।
विपरीत लक्षणों-
को देखकर न च श्रेयोऽनुपश्यामि हत्वा स्वजनमाहवे ॥३१॥
युद्धमें स्वजनोंको
मारनेसे हानि निमित्तानि, च, पश्यामि, विपरीतानि, केशव,
समझना । न, च, श्रेयः, अनुपश्यामि, हत्वा, स्वजनम्, आहवे ॥ ३१ ॥

और—

केशव	= हे केशव	च	= भी
निमित्तानि	= लक्षणोंको	विपरीतानि	= विपरीत (ही)

पश्यामि	= देखता हूँ (तथा)	श्रेयः	= कल्याण
आहवे	= युद्धमें	च	= भी
स्वजनम्	= अपने कुलको	न	= नहीं
हत्वा	= मारकर	अनुपश्यामि	= देखता

स्वजनवधसे न काङ्क्षे विजयं कृष्ण न च राज्यं सुखानि च ।
 मिलनेवाले राज्य किं नो राज्येन गोविन्द किं भोगैर्जीवितेन वा ॥
 भोग और सुख न, काङ्क्षे, विजयम्, कृष्ण, न, च, राज्यम्, सुखानि, च,
 आदिको अर्जुन- किम्, नः, राज्येन, गोविन्द, किम्, भोगैः, जीवितेन, वा ॥३२॥
 का न चाहना । और-

कृष्ण	= हे कृष्ण (मैं)	(काङ्क्षे) = चाहता
विजयम्	= विजयको	गोविन्द = हे गोविन्द
न	= नहीं	नः = हमें
काङ्क्षे	= चाहता	राज्येन = राज्यसे
च	= और	किम् = क्या (प्रयोजन है)
राज्यम्	= राज्य	वा = अथवा
च	= तथा	भोगैः = भोगोंसे (और)
सुखानि	= सुखोंको (भी)	जीवितेन = जीवनसे (भी)
न	= नहीं	किम् = क्या (प्रयोजन है)

[„] येषामर्थे काङ्क्षितं नो राज्यं भोगाः सुखानि च ।

त इमेऽवस्थिता युद्धे प्राणांस्त्यक्त्वा धनानि च ॥

येषाम्, अर्थे, काङ्क्षितम्, नः, राज्यम्, भोगाः, सुखानि, च,
 ते, इमे, अवस्थिताः, युद्धे, प्राणान्, त्यक्त्वा, धनानि च ॥३३॥

क्योंकि—

नः	= हमें	इमे	= यह सब
येषाम्	= जिनके	धनानि	= धन
अर्थे	= लिये	च	= और
राज्यम्	= राज्य	प्राणान्	= { जीवन (की आशा)को
भोगाः	= भोग	त्यक्त्वा	= त्यागकर
च	= और	युद्धे	= युद्धमें
सुखानि	= सुखादिक	अवस्थिताः	= खड़े हैं
काङ्क्षितम्	= इच्छित हैं		
ते	= वे (ही)		

अर्जुन का आचार्याः पितरः पुत्रास्तथैव च पितामहाः ।

त्रिलोकीके राज्य के लिये भी मातुलाः श्वशुराः पौत्राः श्यालाः संबन्धिनस्तथा॥

आचार्यादि स्व-आचार्याः, पितरः, पुत्राः, तथा, एव, च, पितामहाः,
जनोको न मातुलाः, श्वसुराः, पौत्राः, श्यालाः, संबन्धिनः, तथा ॥३४॥

मारनेकी इच्छा

जो कि—

आचार्याः	= गुरुजन	मातुलाः	= मामा
पितरः	= ताऊ चाचे	श्वशुराः	= ससुर
पुत्राः	= लड़के	पौत्राः	= पोते
च	= और	श्यालाः	= साले
तथा	= वैसे	तथा	= तथा
एव	= ही		(और भी)
पितामहाः	= दादा	संबन्धिनः	= सम्बन्धी लोग हैं

[„] एतान्न हन्तुमिच्छामि घ्नतोऽपि मधुसूदन ।
अपि त्रैलोक्यराज्यस्य हेतोः किं नु महीकृते ॥

एतान्, न, हन्तुम्, इच्छामि, घ्नतः, अपि, मधुसूदन,
अपि, त्रैलोक्यराज्यस्य, हेतोः, किम्, नु, महीकृते ॥३५॥

इसलिये-

मधुसूदन = हे मधुसूदन (मुझे)	एतान् = इन सबको
घ्नतः = मारनेपर	हन्तुम् = मारना
अपि = भी (अथवा)	न = नहीं
त्रैलोक्य-राज्यस्य = { तीन लोकके राज्यके	इच्छामि = चाहता (फिर)
हेतोः = लिये	महीकृते = { पृथिवीके लिये (तो)
अपि = भी (मैं)	नु किम् = कहना ही क्या है

अर्जुनका निहत्य धार्तराष्ट्रान्नः का प्रीतिः स्याज्जनार्दन ।

अपने आततायी पापमेवाश्रयेदस्मान्हत्वैतानाततायिनः ॥३६॥

मारनेमें पाप निहत्य, धार्तराष्ट्रान्, नः, का, प्रीतिः, स्यात्, जनार्दन,
समझना । पापम्, एव, आश्रयेत्, अस्मान्, हत्वा, एतान्, आततायिनः॥

जनार्दन = हे जनार्दन	प्रीतिः = प्रसन्नता
धार्तराष्ट्रान् = { धृतराष्ट्रके पुत्रोंको	स्यात् = होगी
निहत्य = मारकर (भी)	एतान् = इन
नः = हमें	आततायिनः = आततायियोंको
का = क्या	हत्वा = मारकर (तो)

अस्मान् = हमें

पापम् = पाप

एव = ही

आश्रयेत् = लगेगा

स्वजनों को न मारनेकी योग्यताका निरूपण । तस्मान्नार्हा वयं हन्तुं धार्तराष्ट्रान्स्वबान्धवान् ।
स्वजनं हि कथं हत्वा सुखिनः स्याम माधव ॥

तस्मात्, न, अर्हाः, वयम्, हन्तुम्, धार्तराष्ट्रान्, स्वबान्धवान्,
स्वजनम्, हि, कथम्, हत्वा, सुखिनः, स्याम, माधव ॥३७॥

तस्मात् = इससे

माधव = हे माधव

स्वबान्धवान् = अपने बान्धव

धार्तराष्ट्रान् = { धृतराष्ट्रके
पुत्रोंको

हन्तुम् = मारनेके लिये

वयम् = हम

न अर्हाः = योग्य नहीं हैं

हि = क्योंकि

स्वजनम् = अपने कुटुम्बको

हत्वा = मारकर (हम)

कथम् = कैसे

सुखिनः = सुखी

स्याम = होंगे

लोभके कारण यद्यप्येते न पश्यन्ति लोभोपहतचेतसः ।

दुर्बोधनादि की कुलनाशककर्ममें प्रवृत्तिदेखकरभी अर्जुनका अपने लिये उससे निवृत्त होनेको योग्य समझना । कुलक्षयकृतं दोषं मित्रद्रोहे च पातकम् ॥३८॥

यद्यपि, एते, न, पश्यन्ति, लोभोपहतचेतसः,
लिये उससे कुलक्षयकृतम्, दोषम्, मित्रद्रोहे, च, पातकम् ॥३८॥

यद्यपि = यद्यपि एते = यह लोग

लोभोपहत-चेतसः = { लोभसे
अप्रचिन्तित हुए

कुलक्षयकृतम् = { कुलके
नाशकृत

दोषम् = दोषको
च = और

मित्रद्रोहे = { मित्रोंके साथ
विरोध करनेमें

पातकम् = पापको

न = नहीं

पश्यन्ति = देखते हैं

[„] कथं न ज्ञेयमस्माभिः पापादस्मान्निवर्तितुम् ।

कुलक्षयकृतं दोषं प्रपश्यद्भिर्जनार्दन ॥३६॥

कथम्, न, ज्ञेयम्, अस्माभिः, पापात्, अस्मात्, निवर्तितुम्,

कुलक्षयकृतम्, दोषम्, प्रपश्यद्भिः, जनार्दन ॥ ३९ ॥

परन्तु-

जनार्दन = हे जनार्दन

अस्मात् = इस

कुलक्षयकृतम् = { कुलके नाश
करनेसे
होते हुए

पापात् = पापसे

निवर्तितुम् = हटनेके लिये

कथम् = क्यों

दोषम् = दोषको

न = नहीं

प्रपश्यद्भिः = जाननेवाले

ज्ञेयम् = { विचार करना
चाहिये

अस्माभिः = हमलोगोंको

कुलके नाशसे
धर्मकी हानि और
पापकी वृद्धि ।

कुलक्षये प्रणश्यन्ति कुलधर्माः सनातनाः ।

धर्मे नष्टे कुलं कृत्स्नमधर्मोऽभिभवत्युत ॥४०॥

कुलक्षये, प्रणश्यन्ति, कुलधर्माः, सनातनाः,

धर्मे, नष्टे, कुलम्, कृत्स्नम्, अधर्मः, अभिभवति, उत ॥४०॥

क्योंकि-

कुलक्षये	= { कुलके नाश होनेसे	कृत्स्नम्	= संपूर्ण
सनातनाः	= सनातन	कुलम्	= कुलको
कुलधर्माः	= कुलधर्म	अधर्मः	= पाप
प्रणश्यन्ति	= नष्ट हो जाते हैं	उत	= भी
धर्मे	= धर्मके	अभिभवति	= { बहुत दबा लेता है
नष्टे	= नाश होनेसे		

पापकी वृद्धि-
से वर्णसंकरताकी
उत्पत्ति ।

अधर्माभिभवात्कृष्ण प्रदुष्यन्ति कुलस्त्रियः ।

स्त्रीषु दुष्टासु वाष्ण्येय जायते वर्णसंकरः ॥४१॥

अधर्माभिभवात्, कृष्ण, प्रदुष्यन्ति, कुलस्त्रियः,

स्त्रीषु, दुष्टासु, वाष्ण्येय, जायते, वर्णसंकरः ॥ ४१ ॥

तथा-

कृष्ण	= हे कृष्ण	(और)	
अधर्मा-	= { पापके अधिक	वाष्ण्येय	= हे वाष्ण्येय
भिभवात्	= { बढ़ जानेसे	स्त्रीषु	= स्त्रियोंके
कुलस्त्रियः	= कुलकी स्त्रियाँ	दुष्टासु	= दूषित होनेपर
प्रदुष्यन्ति	= { दूषित हो जाती हैं	वर्णसंकरः	= वर्णसंकर
		जायते	= उत्पन्न होता है

वर्णसंकरता-
से पितरों को
नरककी प्राप्ति ।

संकरो नरकायैव कुलघ्नानां कुलस्य च ।

पतन्ति पितरो ह्येषां लुप्तपिण्डोदकक्रियाः ॥४२॥

संकरः, नरकाय, एव, कुलघ्नानाम्, कुलस्य, च,

पतन्ति, पितरः, हिं, एषाम्, लुप्तपिण्डोदकक्रियाः ॥ ४२ ॥

और वह-

संकरः	=वर्णसंकर	लुप्तपिण्डो-	{ लोप हुई पिण्ड
कुलघ्नानाम्	=कुलघातियोंको	दकक्रियाः	{ और जलकी
च	=और		{ क्रियावाले
कुलस्य	=कुलको	एषाम्	=इनके
नरकाय	= { नरकमें ले	पितरः	=पितरलोग
	{ जानेके लिये	हि	=भी
एव	=ही (होता है)	पतन्ति	=गिर जाते हैं

वर्णसंकर- दोषैरेतैः कुलघ्नानां वर्णसंकरकारकैः ।
 कारक दोषोंसे उत्साद्यन्ते जातिधर्माः कुलधर्माश्च शाश्वताः ॥
 जातिधर्म और
 कुलधर्मका नाश। दोषैः, एतैः, कुलघ्नानाम्, वर्णसंकरकारकैः,
 उत्साद्यन्ते, जातिधर्माः, कुलधर्माः, च, शाश्वताः ॥४३॥

और-

एतैः	=इन	शाश्वताः	=सनातन
वर्णसंकर-	{ =वर्णसंकरकारक	कुलधर्माः	=कुलधर्म
कारकैः		च	=और
दोषैः	=दोषोंसे	जातिधर्माः	=जातिधर्म
कुलघ्नानाम्	=कुलघातियोंके	उत्साद्यन्ते	=नष्ट हो जाते हैं

कुलधर्म के उत्सन्नकुलधर्माणां मनुष्याणां जनार्दन ।
 नाशसे नरककी वासो भवतीत्यनुशुश्रुम ॥
 प्राप्ति ।

उत्सन्नकुलधर्माणाम्, मनुष्याणाम्, जनार्दन,
 नरके, अनियतम्, वासः, भवति, इति, अनुशुश्रुम ॥४४॥

तथा—

जनार्दन	= हे जनार्दन	नरके	= नरकमें
उत्सन्नकुल-	= { नष्ट हुए कुलधर्मवाले	वासः	= वास
धर्माणाम्		भवति	= होता है
मनुष्याणाम्	= मनुष्योंका	इति	= ऐसा (हमने)
अनियतम्	= { अनन्त कालतक	अनुशुश्रुम्	= सुना है

राज्यके लोभ
से स्वजनों को
मारनेमें पाप
समझकर अर्जुन-
का पश्चात्ताप
करना।

अहो बत महत्पापं कर्तुं व्यवसिता वयम् ।

यद्राज्यसुखलोभेन हन्तुं स्वजनमुद्यताः ॥४५॥

अहो, बत, महत्पापम्, कर्तुम्, व्यवसिताः, वयम्,

यत्, राज्यसुखलोभेन, हन्तुम्, स्वजनम्, उद्यताः ॥४५॥

अहो	= अहो	व्यवसिताः	= तैयार हुए हैं
वत	= शोक है (कि)	यत्	= जो कि
वयम्	= { हमलोग (बुद्धि- मान् होकर भी)	राज्यसुख- लोभेन	= { राज्य और सुखके लोभसे
महत्पापम्	= महान् पाप	स्वजनम्	= अपने कुलको
कर्तुम्	= करनेको	हन्तुम्	= मारनेके लिये
		उद्यताः	= उद्यत हुए हैं

बिना सामना
किये कौरवोंद्वारा
मारा जाने में
अर्जुन का स्व-
कल्याण समझना

यदि सामप्रतीकारमशस्त्रं शस्त्रपाणयः ।

धार्तराष्ट्रा रणे हन्युस्तन्मे क्षेमतरं भवेत् ॥४६॥

यदि, माम्, अप्रतीकारम्, अशस्त्रम्, शस्त्रपाणयः,

धार्तराष्ट्राः, रणे, हन्युः तत्, मे, क्षेमतरम्, भवेत् ॥४६॥

यदि	=यदि	रणे	=रणमें
माम्	=मुझ	हन्तुः	=मारें (तो)
अशस्त्रम्	=शस्त्ररहित	तत्	=वह (मारना भी)
अप्रतीकारम्	= { न सामना करनेवालेको	मे	=मेरे लिये
शस्त्रपाणयः	=शस्त्रधारी	क्षेमतरम्	= { अति कल्याण- कारक
धार्तराष्ट्राः	=धृतराष्ट्रके पुत्र	भवेत्	=होगा

संजय उवाच

शोकयुक्त एवमुक्त्वार्जुनः संख्ये रथोपस्थ उपाविशत् ।

अर्जुनका धनुष- वाण छोड़ कर विसृज्य सशरं चापं शोकसंविग्नमानसः ॥४७॥

वैठना । एवम्, उक्त्वा, अर्जुनः, संख्ये, रथोपस्थे, उपाविशत्, विसृज्य, सशरम्, चापम्, शोकसंविग्नमानसः ॥ ४७ ॥

संजय बोला कि-

संख्ये	=रणभूमिमें	सशरम्	=वाणसहित
शोकसंविग्न	= { शोकसे उद्विग्न	चापम्	=धनुषको
मानसः	= { मनवाला	विसृज्य	=त्यागकर
अर्जुनः	=अर्जुन	रथोपस्थे	= { रथके पिछले भागमें
एवम्	=इस प्रकार	उपाविशत्	=बैठ गया
उक्त्वा	=कहकर		

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां
योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादेऽर्जुनविषादयोगो

नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

हरिः ॐ तत्सत् हरिः ॐ तत्सत् हरिः ॐ तत्सत्

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

अथ द्वितीयोऽध्यायः

प्रधानविषय—१ से १० तक अर्जुनकी कायरताके विषयमें श्रीकृष्णार्जुनका संवाद । (११-३०) सांख्ययोगका विषय । (३१-३८) क्षात्रधर्मके अनुसार युद्ध करनेकी आवश्यकताका निरूपण । (३९-५३) निष्काम कर्मयोगका विषय । (५४-७२) स्थिरबुद्धि पुरुषके लक्षण और उसकी महिमा ।

संजय उवाच

संजय द्वारा अर्जुनकी कायरताका वर्णन । तं तथा कृपयाविष्टमश्रुपूर्णाकुलेक्षणम् ।
विषीदन्तमिदं वाक्यमुवाच मधुसूदनः ॥१॥

तम्, तथा, कृपया, आविष्टम्, अश्रुपूर्णाकुलेक्षणम्,
विषीदन्तम्, इदम्, वाक्यम्, उवाच, मधुसूदनः ॥ १ ॥

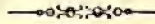
संजय बोला कि—

तथा	= पूर्वोक्त प्रकारसे	तम्	= { उस (अर्जुन)
कृपया	= करुणाकरके		= { के प्रति
आविष्टम्	= व्याप्त (और)	मधुसूदनः	= { भगवान्
अश्रुपूर्णा- कुलेक्षणम्	= { आंसुओंसे पूर्ण (तथा) व्याकुल नेत्रोंवाले	इदम्	= यह
विषीदन्तम्	= शोकयुक्त	वाक्यम्	= वचन
		उवाच	= कहा

श्रीभगवानुवाच

अर्जुन के मोहयुक्तकरुणा-
भावकी निन्दा । कुतस्त्वा कश्मलमिदं विषमे समुपस्थितम् ।
अनार्यजुष्टमस्वर्ग्यमकीर्तिकरमर्जुन ॥ २ ॥

कुतः, त्वा, कश्मलम्, इदम्, विषमे, समुपस्थितम्,
अनार्यजुष्टम्, अस्वर्ग्यम्, अकीर्तिकरम्, अर्जुन ॥ २ ॥



अर्जुन	= हे अर्जुन	(यह)
त्वा	= तुमको (इस)	{ न तो श्रेष्ठ
विषमे	= विषमस्थलमें	{ पुरुषोंसे
इदम्	= यह	{ आचरण
कश्मलम्	= अज्ञान	{ किया गया है
कुतः	= किस हेतुसे	अनार्यजुष्टम् =
समुपस्थितम्	= प्राप्त हुआ	अस्वर्ग्यम् = { न स्वर्गको
(यतः)	= क्योंकि	{ देनेवाला है
		अकीर्तिकरम् = { न कीर्तिको
		{ करनेवाला है

कायरताको त्याग कर युद्ध करनेके लिये अर्जुनके प्रति भगवान् की आज्ञा । क्लैब्यं मा स्म गमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते ।
क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परंतप ॥ ३ ॥
क्लैब्यम्, मा, स्म, गमः, पार्थ, न, एतत्, त्वयि, उपपद्यते,
क्षुद्रम्, हृदयदौर्बल्यम्, त्यक्त्वा, उत्तिष्ठ, परंतप ॥ ३ ॥

इसलिये-

पार्थ	= हे अर्जुन	मा स्म गमः	= मत प्राप्त हो
क्लैब्यम्	= नपुंसकताको	एतत्	= यह

त्वयि = तेरेमें
न उपपद्यते = योग्य नहीं है
परंतप = हे परंतप
क्षुद्रम् = तुच्छ

हृदय-
दौर्बल्यम् = { हृदयकी
दुर्बलताको
त्यक्त्वा = त्यागकर
उत्तिष्ठ = { युद्धके लिये
खड़ा हो

अर्जुन उवाच

अर्जुन का
भीष्मादिके साथ
युद्ध न करनेको
इच्छा प्रगट
करना ।

कथं भीष्ममहं संख्ये द्रोणं च मधुसूदन ।

इषुभिः प्रति योत्स्यामि पूजार्हावरिसूदन ॥४॥

कथम्, भीष्मम्, अहम्, संख्ये, द्रोणम्, च, मधुसूदन,
इषुभिः, प्रति, योत्स्यामि, पूजाहौं, अरिसूदन ॥ ४ ॥

तब अर्जुन बोला कि-

मधुसूदन = हे मधुसूदन
अहम् = मैं
संख्ये = रणभूमिमें
भीष्मम् = भीष्मपितामह
च = और
द्रोणम् = द्रोणाचार्यके
प्रति = प्रति

कथम् = किस प्रकार
इषुभिः = बाणोंकरके
योत्स्यामि = युद्ध करूंगा
(यतः) = क्योंकि
अरिसूदन = हे अरिसूदन
(तौ) = वे दोनों (ही)
पूजाहौं = पूजनीय हैं

अर्जुन का
गुरुजनों को
मारनेकी अपेक्षा
भीख मांगकर
खानेको श्रेष्ठ
समझना ।

गुरुनहत्वा हि महानुभावान्

श्रेयो भोक्तुं भैक्ष्यमपीह लोके ।

हत्वार्थकामास्तु गुरुनिहैव

भुञ्जीय भोगान् रुधिरप्रदिग्धान् ॥५॥

गुरुन्, अहत्वा, हि, महानुभावान्, श्रेयः, भोक्तुम्,
भैक्ष्यम्, अपि, इह, लोके, हत्वा, अर्थकामान्, तु, गुरुन्,
इह, एव, भुञ्जीय, भोगान्, रुधिरप्रदिग्धान् ॥ ५ ॥

इसलिये इन-

महानु- भावान्	= महानुभाव	गुरुन्	= गुरुजनोंको
गुरुन्	= गुरुजनोंको	हत्वा	= मारकर
अहत्वा	= न मारकर	(अपि)	= भी
इह	= इस	इह	= इस लोकमें
लोके	= लोकमें	रुधिरप्रदिग्धान्	= { रुधिरसे सने हुए
भैक्ष्यम्	= भिक्षाका अन्न	अर्थकामान्	= { अर्थ और कामरूप
अपि	= भी	भोगान्	= भोगोंको
भोक्तुम्	= भोगना	एव	= ही
श्रेयः	= कल्याणकारक (समझता हूँ)	तु	= तो
हि	= क्योंकि	भुञ्जीय	= भोगूंगा

अपने कर्तव्यके
विषयमें अर्जुन-
को संशय होना।

न चैतद्विद्मः कतरन्नो गरीयो
यद्वा जयेम यदि वा नो जयेयुः ।
यानेव हत्वा न जिजीविषाम-
स्तेऽवस्थिताः प्रमुखे धार्तराष्ट्राः ॥ ६ ॥

न, च, एतत्, विद्मः, कतरत्, नः, गरीयः, यद्वा, जयेम,
यदि, वा, नः, जयेयुः, यान्, एव, हत्वा, न, जिजीविषामः,
ते, अवस्थिताः, प्रमुखे, धार्तराष्ट्राः ॥ ६ ॥

और हमलोग—

एतत् = यह	जयेयुः = वे जीतेंगे
च = भी	(और)
न = नहीं	यान् = जिनको
विद्मः = जानते (कि)	हत्वा = मारकर (हम)
नः = हमारे लिये	न = { जीना भी
कतरत् = क्या (करना)	जिजीविषामः = { नहीं चाहते
गरीयः = श्रेष्ठ है	ते = वे
यद्वा = { अथवा (यह भी	एव = ही
{ नहीं जानते कि)	धार्तराष्ट्राः = { धृतराष्ट्रके
जयेम = हम जीतेंगे	{ पुत्र
यदि वा = या	प्रमुखे = हमारे सामने
नः = हमको	अवस्थिताः = खड़े हैं

अर्जुनका

भगवान्‌के शरण

होकर स्वकर्तव्य

पूछना ।

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः

पृच्छामि त्वां धर्मसंमूढचेताः ।

यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे

शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम् ॥ ७ ॥

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः, पृच्छामि, त्वाम्, धर्मसंमूढचेताः,
यत्, श्रेयः, स्यात्, निश्चितम्, ब्रूहि, तत्, मे, शिष्यः, ते,
अहम्, शाधि, माम्, त्वाम्, प्रपन्नम् ॥ ७ ॥

इसलिये—

कार्पण्य- दोषोपहत- स्वभावः	= { कायरतारूप दोषकरके उपहत हुए स्वभाववाला (और)	श्रेयः	= { बाल्याणकारक साधन
धर्म- संमूढचेताः	= { धर्मके विषयमें मोहितचित्त हुआ (मैं)	स्यात्	= हो
त्वाम्	= आपको	तत्	= वह
पृच्छामि	= पूछता हूँ	मे	= मेरे लिये
यत्	= जो (कुछ)	ब्रूहि	= कहिये (क्योंकि)
निश्चितम्	= { निश्चय किया हुआ	अहम्	= मैं
		ते	= आपका
		शिष्यः	= शिष्य हूँ (इसलिये)
		त्वाम्	= आपके
		प्रपन्नम्	= शरण हुए
		माम्	= मेरेको
		शाधि	= शिक्षा दीजिये

अर्जुनका
त्रिलोकीके राज्य
से भी शोककी
निवृत्ति न
मानना ।

न हि प्रपश्यामि ममापनुद्याद्-

यच्छोकमुच्छोषणमिन्द्रियाणाम् ।

अवाप्य भूमावसपत्नमृद्धं

राज्यं सुराणामपि चाधिपत्यम् ॥ ८ ॥

न, हि, प्रपश्यामि, मम, अपनुद्यात्, यत्, शोकम्,
 उच्छोषणम्, इन्द्रियाणाम्, अवाप्य, भूमौ, असपत्नम्,
 ऋद्धम्, राज्यम्, सुराणाम्, अपि, च, आधिपत्यम् ॥ ८ ॥



हि	= क्योंकि	(तत्)	= { उस (उपाय)
भूमौ	= भूमिमें		= { को
असपत्नम्	= निष्कण्टक	न	= नहीं
ऋद्धम्	= धनधान्यसंपन्न	प्रपश्यामि	= देखता हूँ
राज्यम्	= राज्यको	यत्	= जो कि
च	= और	मम	= मेरी
सुराणाम्	= देवताओंके	इन्द्रियाणाम्	= इन्द्रियोंके
आधि-	= {	उच्छोषणम्	= सुखानेवाले
पत्यम्	= } स्वामीपनेको	शोकम्	= शोकको
अवाप्य	= प्राप्त होकर	अपनुद्यात्	= दूर कर सके
अपि	= भी (मैं)		

संजय उवाच

अर्जुनका युद्धसे
 उपराम होना ।

एवमुत्तवा हृषीकेशं गुडाकेशः परंतप ।

न योत्स्य इति गोविन्दमुक्त्वा तूष्णीं बभूव ह ॥

एवम्, उक्त्वा, हृषीकेशम्, गुडाकेशः, परंतप,

न, योत्स्ये, इति, गोविन्दम्, उक्त्वा, तूष्णीम्, बभूव, ह ॥ ९ ॥

संजय बोला-

परंतप	= हे राजन्	गोविन्दम्	= { श्रीगोविन्द भगवान्को
गुडाकेशः	= { निद्राको जीतनेवाला अर्जुन	न योत्स्ये	= { युद्ध नहीं करूंगा
हृषीकेशम्	= { अन्तर्यामी श्रीकृष्ण महा- राजके प्रति	इति	= ऐसे
एवम्	= इस प्रकार	ह	= स्पष्ट
उक्त्वा	= कहकर (फिर)	उक्त्वा	= कहकर
		तूष्णीम्	= चुप
		बभूव	= हो गया

अर्जुनकी तमुवाच हृषीकेशः प्रहसन्निव भारत ।

अज्ञानता पर भगवान् का मुस्कराना । सेनयोरुभयोर्मध्ये विषीदन्तमिदं वचः ॥१०॥

तम्, उवाच, हृषीकेशः, प्रहसन्, इव, भारत,
सेनयोः, उभयोः, मध्ये, विषीदन्तम्, इदम्, वचः ॥१०॥

उसके उपरान्त-

भारत	= { हे भरतवंशी धृतराष्ट्र	तम्	= उस
हृषीकेशः	= { अन्तर्यामी श्रीकृष्ण महाराजने	विषीदन्तम्	= { शोकयुक्त अर्जुनको
उभयोः	= दोनों	प्रहसन् इव	= हंसते हुएसे
सेनयोः	= सेनाओंके	इदम्	= यह
मध्ये	= बीचमें	वचः	= वचन
		उवाच	= कहा

श्रीभगवानुवाच

शोक करनेको
अयोग्य बताते
हुए भगवान् का
अर्जुनके प्रति
उपदेश आरम्भ
करना ।

अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे ।

गतासूनगतासूंश्च नानुशोचन्ति पण्डिताः ॥११॥

अशोच्यान्, अन्वशोचः, त्वम्, प्रज्ञावादान्, च, भाषसे,
गतासून्, अगतासून्, च, न, अनुशोचन्ति, पण्डिताः ॥११॥

हे अर्जुन—

त्वम्	= तू				{ जिनके प्राण
अशोच्यान्	= { न शोक करने योग्योंके लिये	गतासून्	= { चले गये हैं उनके लिये		
अन्वशोचः	= शोक करता है	च	= और		
च	= और				{ जिनके प्राण
प्रज्ञावादान्	= { पण्डितोंके(से) वचनोंको	अगतासून्	= { नहीं गये हैं उनके लिये		
भाषसे	= कहता है (परन्तु)	न	= नहीं	(भी)	
पण्डिताः	= पण्डितजन	अनुशोचन्ति	= शोक करते हैं		

आत्माकी
नित्यता का
निरूपण ।

न त्वेवाहं जातु नासं न त्वं नेमे जनाधिपाः ।

न चैव न भविष्यामः सर्वे वयमतः परम् ॥१२॥

न, तु, एव, अहम्, जातु, न, आसम्, न, त्वम्, न, इमे,
जनाधिपाः, न, च, एव, न, भविष्यामः, सर्वे, वयम्, अतः, परम्
क्योंकि आत्मा निश्चय है इसलिये शोक करना अयुक्त है । वास्तवमें—

न	= न	(एवम्)	= ऐसा
तु	= तो	एव	= ही (है कि)

अहम्	= मैं	(आसन्)	= थे
जातु	= किसी कालमें	च	= और
न	= नहीं	न	= न
आसम्	= था (अथवा)	(एवम्)	= ऐसा
त्वम्	= तू	एव	= ही (है कि)
न	= नहीं	अतः	= इससे
(आसीः)	= था (अथवा)	परम्	= आगे
इमे	= यह	वयम्	= हम
जनाधिपाः	= राजालोग	सर्वे	= सब
न	= नहीं	न	= नहीं
		भविष्यामः	= रहेंगे

आत्माकी

नित्यता का

निरूपण और

धीर पुरुषकी

प्रशंसा ।

देहिनोऽस्मिन्यथा देहे कौमारं यौवनं जरा ।

तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति ॥१३॥

देहिनः, अस्मिन्, यथा, देहे, कौमारम्, यौवनम्, जरा,

तथा, देहान्तरप्राप्तिः, धीरः, तत्र, न, मुह्यति ॥१३॥

किन्तु—

यथा	= जैसे	जरा	= वृद्ध अवस्था (होती है)
देहिनः	= जीवात्माकी	तथा	= वैसे ही
अस्मिन्	= इस	देहान्तर-	= { अन्य शरीरकी
देहे	= देहमें	प्राप्तिः	= { प्राप्ति होती है
कौमारम्	= कुमार	तत्र	= उस विषयमें
यौवनम्	= युवा (और)		

धीरः = धीर पुरुष न = नहीं
मुह्यति = मोहित होता है

अर्थात् जैसे कुमार, युवा और जरा अवस्थारूप स्थूल शरीरका विकार अज्ञानसे आत्मामें भासता है वैसे ही एक शरीरसे दूसरे शरीरको प्राप्त होनारूप सूक्ष्म शरीरका विकार भी अज्ञानसे ही आत्मामें भासता है इसलिये तत्त्वको जाननेवाला धीर पुरुष इस विषयमें नहीं मोहित होता है ।

इन्द्रिय और विषयोंके संयोग की अनित्यताका निरूपण और उनको सहन करनेके लिये आशा ।

मात्रास्पर्शास्तु कौन्तेय शीतोष्णसुखदुःखदाः ।
आगमापायिनोऽनित्यास्तांस्तितिक्षस्व भारत ॥

मात्रास्पर्शाः, तु, कौन्तेय, शीतोष्णसुखदुःखदाः,
आगमापायिनः, अनित्याः, तान्, तितिक्षस्व, भारत ॥१४॥

कौन्तेय = हे कुन्तीपुत्र
शीतोष्ण-सुखदुःखदाः = { सदीर्घ गर्मी
और सुख
दुःखको देनेवाले
मात्रास्पर्शाः = { इन्द्रिय और
विषयोंके संयोग
तु = तो

आगमा-पायिनः } = क्षणभङ्गुर
(और)
अनित्याः = अनित्य हैं
(इसलिये)
भारत = { हे भरतवंशो
अर्जुन
तान् = उनको (तूं)
तितिक्षस्व = सहन कर

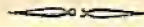
तितिक्षाका फल

यं हि न व्यथयन्त्येते पुरुषं पुरुषर्षभ ।

समदुःखसुखं धीरं सोऽमृतत्वाय कल्पते ॥१५॥

यम्, हि, न, व्यथयन्ति, एते, पुरुषम्, पुरुषर्षभ,

समदुःखसुखम्, धीरम्, सः, अमृतत्वाय, कल्पते ॥१५॥



हि = क्योंकि

पुरुषर्षभ = हे पुरुषश्रेष्ठ

एते = { यह (इन्द्रियोंके विषय)

समदुःख-
सुखम् = { दुःखसुखको
समान समझने-
वालेन व्यथयन्ति = { व्याकुल नहीं
कर सकते

यम् = जिस

सः = वह

धीरम् = धीर

अमृतत्वाय = मोक्षके लिये

पुरुषम् = पुरुषको

कल्पते = योग्य होता है

सत् असत्का
निर्णय ।

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः ।

उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः ॥१६॥

न, असतः, विद्यते, भावः, न, अभावः, विद्यते, सतः,

उभयोः, अपि, दृष्टः, अन्तः, तु, अनयोः, तत्त्वदर्शिभिः ॥१६॥

और हे अर्जुन-

असतः = { असत् (वस्तु)का
तोतु = और
सतः = सत्का

भावः = अस्तित्व

अभावः = अभाव

न = नहीं

न = नहीं

विद्यते = है

विद्यते = है

(इस प्रकार)	अन्तः = तत्त्व
अनयोः = इन	तत्त्वदर्शिभिः = { ज्ञानी
उभयोः = दोनोंका	{ पुरुषोंद्वारा
अपि = ही	दृष्टः = देखा गया है

सत् और असत्
के स्वरूपका
कथन ।

अविनाशि तु तद्विद्धि येन सर्वमिदं ततम् ।

विनाशमव्ययस्यास्य न कश्चित्कर्तुमर्हति ॥१७॥

अविनाशि, तु, तत्, विद्धि, येन, सर्वम्, इदम्, ततम्,
विनाशम्, अव्ययस्य, अस्य, न, कश्चित्, कर्तुम्, अर्हति ॥१७॥

इस न्यायके अनुसार—

अविनाशि = नाशरहित	ततम् = व्याप्त है
तु = तो	(क्योंकि)
तत् = उसको	अस्य = इस
विद्धि = जान (कि)	अव्ययस्य = अविनाशीका
येन = जिससे	विनाशम् = विनाश
इदम् = यह	कर्तुम् = करनेको
सर्वम् = संपूर्ण	कश्चित् = कोई भी
(जगत्)	न अर्हति = समर्थ नहीं है

[„] अन्तवन्त इमे देहा नित्यस्योक्ताः शरीरिणः ।

अनाशिनोऽप्रमेयस्य तस्माद्युध्यस्व भारत ॥१८॥

अन्तवन्तः, इमे, देहाः, नित्यस्य, उक्ताः, शरीरिणः,
अनाशिनः, अप्रमेयस्य, तस्मात्, युध्यस्व, भारत ॥१८॥

और इस-

अनाशिनः	= नाशरहित	अन्तवन्तः	= नाशवान्
अप्रमेयस्य	= अप्रमेय	उक्ताः	= कहे गये हैं
नित्यस्य	= नित्यस्वरूप	तस्मात्	= इसलिये
शरीरिणः	= जीवात्माके	भारत	= { हे भरतवंशी अर्जुन (तं)
इमे	= यह	युध्यस्व	= युद्ध कर
देहाः	= सब शरीर		

आत्माको मरने य एनं वेत्ति हन्तारं यश्चैनं मन्यते हतम् ।

और मारनेवाला उभौ तौ न विजानीतो नायं हन्ति न हन्यते ॥१६॥

जो मानते हैं उनको निन्दा । यः, एनम्, वेत्ति, हन्तारम्, यः, च, एनम्, मन्यते, हतम्,
उभौ, तौ, न, विजानीतः, न, अयम्, हन्ति, न, हन्यते ॥१९॥

और-

यः	= जो	उभौ	= दोनों ही
एनम्	= इस आत्माको	न	= नहीं
हन्तारम्	= मारनेवाला	विजानीतः	= जानते हैं (क्योंकि)
वेत्ति	= समझता है	अयम्	= यह आत्मा
च	= तथा	न	= न
यः	= जो	हन्ति	= मारता है (और)
एनम्	= इसको	न	= न
हतम्	= मरा	हन्यते	= मारा जाता है
मन्यते	= मानता है		
तौ	= वे		

आत्माके शुद्ध-
स्वरूपका कथन

न जायते म्रियते वा कदाचित्-

नायं भूत्वा भविता वा न भूयः ।

अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो

न हन्यते हन्यमाने शरीरे ॥२०॥

न, जायते, म्रियते, वा, कदाचित्, न, अयम्, भूत्वा, भविता,
वा, न, भूयः, अजः, नित्यः, शाश्वतः, अयम्, पुराणः, न,
हन्यते, हन्यमाने, शरीरे ॥ २० ॥

अयम् = यह आत्मा

कदाचित् = किसी कालमें भी

न = न

जायते = जन्मता है

वा = और

न = न

म्रियते = मरता है

वा = अथवा

न = न

(अयम्) = यह आत्मा

भूत्वा = हो करके

भूयः = फिर

भविता = होनेवाला है
(क्योंकि)

अयम् = यह

अजः = अजन्मा

नित्यः = नित्य

शाश्वतः = शाश्वत (और)

पुराणः = पुरातन है

शरीरे = शरीरके

हन्यमाने = नाश होनेपर भी

(यह)

न हन्यते = { नाश नहीं
होता है

आत्माको अ-वेदाविनाशिनं नित्यं य एनमजमव्ययम् ।

जन्मा और अवि-कथं स पुरुषः पार्थ कं घातयति हन्ति कम् ॥२१॥

नाशी जानने-वेद, अविनाशिनम्, नित्यम्, यः, एनम्, अजम्, अव्ययम्,

वालेकी प्रशंसा । कथम्, सः, पुरुषः, पार्थ, कम्, घातयति, हन्ति, कम् ॥२१॥

पार्थ	= हे पृथापुत्र अर्जुन	सः	= वह
यः	= जो पुरुष	पुरुषः	= पुरुष
एनम्	= इस आत्माको	कथम्	= कैसे
अवि- नाशिनम् }	= नाशरहित	कम्	= किसको
नित्यम्	= नित्य	घातयति	= मरवाता है (और)
अजम्	= अजन्मा (और)	(कथम्)	= कैसे
अव्ययम्	= अव्यय	कम्	= किसको
वेद	= जानता है	हन्ति	= मारता है

वस्त्रोंके दृष्टान्त-
से जीवात्माके
शरीर-परिवर्तन-
का कथन ।

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय
नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि ।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा-
न्यन्यानि संयाति नवानि देही ॥२२॥

वासांसि, जीर्णानि, यथा, विहाय, नवानि, गृह्णाति, नरः,
अपराणि, तथा, शरीराणि, विहाय, जीर्णानि, अन्यानि,
संयाति, नवानि, देही ॥ २२ ॥

और यदि तू कहे कि मैं तो शरीरोंके वियोगका शोक करता
हूँ तो यह भी उचित नहीं है, क्योंकि—

यथा	= जैसे	विहाय	= त्यागकर
नरः	= मनुष्य	अपराणि	= दूसरे
जीर्णानि	= पुराने	नवानि	= नये वस्त्रोंको
वासांसि	= वस्त्रोंको	गृह्णाति	= ग्रहण करता है

तथा	= वैसे (ही)	विहाय	= त्यागकर
देही	= जीवात्मा	अन्यानि	= दूसरे
जीर्णानि	= पुराने	नवानि	= नये शरीरोंको
शरीराणि	= शरीरोंको	संयाति	= प्राप्त होता है

सर्वव्यापी
आत्माके नित्य-
स्वरूपका विस्तार
से वर्णन।

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः ।

न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः ॥२३॥

न, एनम्, छिन्दन्ति, शस्त्राणि, न, एनम्, दहति, पावकः,
न, च, एनम्, क्लेदयन्ति, आपः, न, शोषयति, मारुतः ॥२३॥

और हे अर्जुन-

एनम्	= इस आत्माको	एनम्	= इसको
शस्त्राणि	= शस्त्रादि	आपः	= जल
न	= नहीं	न	= नहीं
छिन्दन्ति	= काट सकते हैं (और)	क्लेदयन्ति	= { गीला कर सकते हैं
एनम्	= इसको	च	= और
पावकः	= आग	मारुतः	= वायु
न	= नहीं	न	= नहीं
दहति	= जला सकती है (तथा)	शोषयति	= सुखा सकता है

[„] अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च ।

नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः ॥२४॥

अच्छेद्यः, अयम्, अदाह्यः, अयम्, अक्लेद्यः, अशोष्यः, एव, च,
नित्यः, सर्वगतः, स्थाणुः, अचलः, अयम्, सनातनः ॥२४॥

क्योंकि—

अयम् = यह आत्मा
 अच्छेद्यः = अच्छेद्य है
 अयम् = यह आत्मा
 अदाह्यः = अदाह्य
 अक्लेद्यः = अक्लेद्य
 च = और
 अशोष्यः = अशोष्य है
 (तथा)

अयम् = यह आत्मा
 एव = निःसन्देह
 नित्यः = नित्य
 सर्वगतः = सर्वव्यापक
 अचलः = अचल
 स्थाणुः = स्थिर रहनेवाला
 (और)
 सनातनः = सनातन है

[,] अव्यक्तोऽयमचिन्त्योऽयमविकार्योऽयमुच्यते ।

तस्मादेवं विदित्वैनं नानुशोचितुमर्हसि ॥२५॥

अव्यक्तः, अयम्, अचिन्त्यः, अयम्, अविकार्यः, अयम्,
 उच्यते, तस्मात्, एवम्, विदित्वा, एनम्, न, अनुशोचितुम्,
 अर्हसि ॥२५॥

और—

अयम् = यह आत्मा
 अव्यक्तः = { अव्यक्त अर्थात्
 { इन्द्रियोका
 { अविषय (और)
 अयम् = यह आत्मा
 अचिन्त्यः = { अचिन्त्य
 { अर्थात् मनका
 { अविषय (और)

अयम् = यह आत्मा
 अविकार्यः = { विकाररहित
 { अर्थात् न
 { बदलनेवाला
 उच्यते = कहा जाता है
 तस्मात् = इससे (हे अर्जुन)
 एनम् = इस आत्माको
 एवम् = ऐसा

विदित्वा = जानकर

(त्वम्) = तूं

अनु-
शोचितुम् } = शोक करनेकोन अर्हसि = { योग्य नहीं है
अर्थात् तुझे
शोक करना
उचित नहीं हैदूसरोंकेसिद्धान्त
से भी आत्माके
लिये शोक करने-
का निषेध ।

अथ चैनं नित्यजातं नित्यं वा मन्यसे मृतम् ।

तथापि त्वं महाबाहो नैवं शोचितुमर्हसि ॥२६॥

अथ, च, एनम्, नित्यजातम्, नित्यम्, वा, मन्यसे, मृतम्,
तथापि, त्वम्, महाबाहो, न, एवम्, शोचितुम्, अर्हसि ॥२६॥

अथ च = और यदि

त्वम् = तूं

एनम् = इसको

नित्यजातम् = सदा जन्मने

वा = और

नित्यम् = सदा

मृतम् = मरनेवाला

मन्यसे = माने

तथापि = तो भी

महाबाहो = हे अर्जुन

एवम् = इस प्रकार

शोचितुम् = शोक करनेको

न अर्हसि = योग्य नहीं है

[”] जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च ।

तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि ॥२७॥

जातस्य, हि, ध्रुवः, मृत्युः, ध्रुवम्, जन्म, मृतस्य, च,
तस्मात्, अपरिहार्ये, अर्थे, न, त्वम्, शोचितुम्, अर्हसि ॥२७॥

हि = क्योंकि

(ऐसा होनेसे तो)

जातस्य = जन्मनेवालेकी

ध्रुवः = निश्चित

मृत्युः	= मृत्यु	तस्मात्	= इससे (भी)
च	= और	त्वम्	= तू (इस)
मृतस्य	= मरनेवालेका	अपरिहार्ये	= बिना उपायवाले
ध्रुवम्	= निश्चित	अर्थे	= विषयमें
जन्म	= जन्म	शोचितुम्	= शोक करनेको
	(होना सिद्ध हुआ)	न अर्हसि	= योग्य नहीं है

शरीरों की अनित्यता का निरूपण और उनके लिये शोक करनेका निषेध । अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्तमध्यानि भारत ।
अव्यक्तनिधनान्येव तत्र का परिदेवना ॥२८॥
अव्यक्तादीनि, भूतानि, व्यक्तमध्यानि, भारत,
अव्यक्तनिधनानि, एव, तत्र, का, परिदेवना ॥२८॥

और यह भीष्मादिकोंके शरीर मायामय होनेसे अनित्य हैं
इससे शरीरोंके लिये भी शोक करना उचित नहीं, क्योंकि—

भारत	= हे अर्जुन	(केवल)
भूतानि	= संपूर्ण प्राणी	
अव्यक्तादीनि	= { जन्मसे पहिले बिना शरीरवाले (और)	व्यक्त-मध्यानि = { बीचमें ही शरीरवाले (प्रतीत होते) हैं (फिर)
अव्यक्त-निधनानि एव	= { मरनेके बाद भी बिना शरीरवाले ही हैं	तत्र का परिदेवना = उस विषयमें क्या चिन्ता है

आत्मतत्त्वके
ज्ञाता, वक्ता
और श्रोताकी
दुर्लभता का
निरूपण ।

आश्चर्यवत्पश्यति कश्चिदेन-

माश्चर्यवद्ब्रूदति तथैव चान्यः ।

आश्चर्यवच्चैनमन्यः शृणोति

श्रुत्वाप्येनं वेद न चैव कश्चित् ॥२६॥

आश्चर्यवत्, पश्यति, कश्चित्, एनम्, आश्चर्यवत्, ब्रूदति,
तथा, एव, च, अन्यः, आश्चर्यवत्, च, एनम्, अन्यः,
शृणोति, श्रुत्वा, अपि, एनम्, वेद, न, च, एव, कश्चित् ॥२६॥

और हे अर्जुन ! यह आत्मतत्त्व बड़ा गहन है इसलिये—

कश्चित् = { कोई
(महापुरुष) ही

एनम् = इस आत्माको

आश्चर्यवत् = आश्चर्यकी ज्यों

पश्यति = देखता है

च = और

तथा = वैसे

एव = ही

अन्यः = { दूसरा कोई
(महापुरुष) ही

आश्चर्यवत् = आश्चर्यकी ज्यों
(इसके तत्त्वको)

ब्रूदति = कहता है

च = और

अन्यः = दूसरा (कोई ही)

एनम् = इस आत्माको

आश्चर्यवत् = आश्चर्यकी ज्यों

शृणोति = सुनता है

च = और

कश्चित् = कोई कोई

श्रुत्वा = सुनकर

अपि = भी

एनम् = इस आत्माको

न एव = नहीं

वेद = जानता

आत्मा की देही नित्यमवध्योऽयं देहे सर्वस्य भारत ।
 नित्यता का तस्मात्सर्वाणि भूतानि न त्वं शोचितुमर्हसि ॥
 निरूपण और उसके लिये देही, नित्यम्, अवध्यः, अयम्, देहे, सर्वस्य, भारत,
 शोक करनेका तस्मात्, सर्वाणि, भूतानि, न, त्वम्, शोचितुम्, अर्हसि । ३०।
 निषेध ।

भारत	= हे अर्जुन	तस्मात्	= इसलिये
अयम्	= यह	सर्वाणि	= संपूर्ण
देही	= आत्मा	भूतानि	= { भूत प्राणियों- के लिये
सर्वस्य	= सबके	त्वम्	= तू
देहे	= शरीरमें	शोचितुम्	= शोक करनेको
नित्यम्	= सदा ही	न अर्हसि	= योग्य नहीं है
अवध्यः	= अवध्य है *		

क्षत्रियोंके लिये स्वधर्ममपि चावेक्ष्य न विकम्पितुमर्हसि ।
 धर्मयुक्त युद्धकी धर्म्याद्धि युद्धाच्छ्रेयोऽन्यत्क्षत्रियस्य न विद्यते ॥
 प्रशंसा ।

स्वधर्मम्	= अपने धर्मको	न अर्हसि	= योग्य नहीं है
चावेक्ष्य	= देखकर	हि	= क्योंकि
अपि	= भी (तू)	धर्म्यात्	= धर्मयुक्त
विकम्पितुम्	= भय करनेको	युद्धात्	= युद्धसे बढ़कर
		अन्यत्	= दूसरा

* जिसका बध नहीं किया जा सके ।

(कोई)	क्षत्रियस्य = क्षत्रियके लिये
श्रेयः = { कल्याणकारक	न = नहीं
{ कर्तव्य	विद्यते = है

[„] यदृच्छया चोपपन्नं स्वर्गद्वारमपावृतम् ।

सुखिनः क्षत्रियाः पार्थ लभन्ते युद्धमीदृशम् ॥३२॥

यदृच्छया, च, उपपन्नम्, स्वर्गद्वारम्, अपावृतम्,

सुखिनः, क्षत्रियाः, पार्थ, लभन्ते, युद्धम्, ईदृशम् ॥३२॥

और-

पार्थ = हे पार्थ	ईदृशम् = इस प्रकारके
यदृच्छया = अपने आप	युद्धम् = युद्धको
उपपन्नम् = प्राप्त हुए	सुखिनः = भाग्यवान्
च = और	क्षत्रियाः = क्षत्रिय लोग
अपावृतम् = खुले हुए	(ही)
स्वर्गद्वारम् = स्वर्गके द्वाररूप	लभन्ते = पाते हैं

धार्मिक युद्धके अथ चेत्त्वमिमं धर्म्यं संग्रामं न करिष्यसि ।

त्यागसे स्वधर्म

और कीर्तिकी

हानि एवं पाप

और अपकीर्तिकी

प्राप्ति ।

ततः स्वधर्मं कीर्तिं च हित्वा पापमवाप्स्यसि ॥३३॥

अथ, चेत्, त्वम्, इमम्, धर्म्यम्, संग्रामम्, न, करिष्यसि,

ततः, स्वधर्मम्, कीर्तिम्, च, हित्वा, पापम्, अवाप्स्यसि ॥३३॥

अथ = और	त्वम् = तू
चेत् = यदि	इमम् = इस

धर्म्यम्	= धर्मयुक्त	च	= और
संग्रामम्	= संग्रामको	कीर्तिम्	= कीर्तिको
न	= नहीं	हित्वा	= खोकर
करिष्यसि	= करेगा	पापम्	= पापको
ततः	= तो	अवाप्स्यसि	= प्राप्त होगा
स्वधर्मम्	= स्वधर्मको		

[„] अकीर्तिं चापि भूतानि कथयिष्यन्ति तेऽव्ययाम् ।

संभावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते ॥३४॥

अकीर्तिम्, च, अपि, भूतानि, कथयिष्यन्ति, ते, अव्ययाम्,
संभावितस्य, च, अकीर्तिः, मरणात्, अतिरिच्यते ॥३४॥

च	= और	कथयिष्यन्ति	= कथन करेगे
भूतानि	= सब लोग	च	= और (वह)
ते	= तेरी	अकीर्तिः	= अपकीर्ति
अव्ययाम्	= { बहुत कालतक रहनेवाली	संभावितस्य	= { माननीय पुरुषके लिये
अकीर्तिम्	= अपकीर्तिको	मरणात्	= मरणसे (भी)
अपि	= भी	अतिरिच्यते	= { अधिक(बुरी) होती है

धर्मयुद्धके त्याग- भयाद्रणादुपरतं मंस्यन्ते त्वां महारथाः ।

से बड़प्पन और येषां च त्वं बहुमतो भूत्वा यास्यसि लाघवम् ॥

मानकी हानि भयात्, रणात्, उपरतम्, मंस्यन्ते, त्वाम्, महारथाः,

होनेका कथन । येषाम्, च, त्वम्, बहुमतः, भूत्वा, यास्यसि, लाघवम् ॥३५॥

च	= और	यास्यसि	= प्राप्त होगा (वे)
येषाम्	= जिनके	महारथाः	= महारथी लोग
त्वम्	= तू	त्वाम्	= तुझे
बहुमतः	= बहुत माननीय	भयात्	= भयके कारण
भूत्वा	= होकर	रणात्	= युद्धसे
	(भी अब)	उपरतम्	= उपराम हुआ
लाघवम्	= तुच्छताको	मंस्यन्ते	= मानेंगे

[„] अवाच्यवादांश्च बहून्वदिष्यन्ति तवाहिताः ।

निन्दन्तस्तव सामर्थ्यं ततो दुःखतरं नु किम् ॥

अवाच्यवादान्, च, बहून्, वदिष्यन्ति, तव, अहिताः,
निन्दन्तः, तव, सामर्थ्यम्, ततः, दुःखतरम्, नु, किम् ॥३६॥

च	= और	अवाच्य-	= { न कहने योग्य
तव	= तेरे	वादान्	= { वचनोंको
अहिताः	= बैरी लोग	वदिष्यन्ति	= कहेंगे
तव	= तेरे	नु	= फिर
सामर्थ्यम्	= सामर्थ्यकी	ततः	= उससे
निन्दन्तः	= निन्दा करते हुए	दुःखतरम्	= अधिक दुःख
बहून्	= बहुतसे	किम्	= क्या होगा

सब प्रकारसे हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम् ।
लभ दिखाकर तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः ॥३७॥
अर्जुनको युद्ध करनेके लिये हतः, वा, प्राप्स्यसि, स्वर्गम्, जित्वा, वा, भोक्ष्यसे, महीम्,
आज्ञा देना । तस्मात्, उत्तिष्ठ, कौन्तेय, युद्धाय, कृतनिश्चयः ॥ ३७ ॥

इससे युद्ध करना तेरे लिये सब प्रकारसे अच्छा है, क्योंकि—

वा	= या (तो)	भोक्ष्यसे	= भोगेगा
हतः	= मरकर	तस्मात्	= इससे
स्वर्गम्	= स्वर्गको	कौन्तेय	= हे अर्जुन
प्राप्स्यसि	= प्राप्त होगा	युद्धाय	= युद्धके लिये
वा	= अथवा	कृतनिश्चयः	= { निश्चयवाला
जित्वा	= जीतकर		{ होकर
महीम्	= पृथिवीको	उत्तिष्ठ	= खड़ा हो

सुख दुःखादिको सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ ।

समान समझकर ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवाप्स्यसि ॥३८॥

युद्ध करनेसे पाप न लगाने का कथन । सुखदुःखे, समे, कृत्वा, लाभालाभौ, जयाजयौ,

ततः, युद्धाय, युज्यस्व, न, एवम्, पापम्, अवाप्स्यसि ॥३८॥

यदि तुझे स्वर्ग तथा राज्यकी इच्छा न हो तो भी—

सुखदुःखे	= सुख दुःख	युद्धाय	= युद्धके लिये
लाभालाभौ	= लाभ हानि (और)	युज्यस्व	= तैयार हो
जयाजयौ	= जय पराजयको	एवम्	= इस प्रकार (युद्ध करनेसे) (तू)
समे	= समान	पापम्	= पापको
कृत्वा	= समझकर	न	= नहीं
ततः	= उसके उपरान्त	अवाप्स्यसि	= प्राप्त होगा

निष्काम कर्म- एषा तेऽभिहिता सांख्ये बुद्धिर्योगे त्विमां शृणु ।
 योगका विषय
 सुननेके लिये बुद्ध्या युक्तो यया पार्थ कर्मबन्धं प्रहास्यसि ॥
 भगवान् की
 आशा और एषा, ते, अभिहिता, सांख्ये, बुद्धिः, योगे, तु, इमाम्, शृणु,
 उसके महत्त्वका बुद्ध्या, युक्तः, यया, पार्थ, कर्मबन्धम्, प्रहास्यसि ॥३९॥
 कथन ।

पार्थ	= हे पार्थ	योगे	= { निष्काम कर्म- योगके विषयमें
एषा	= यह	शृणु	= सुन (कि)
बुद्धिः	= बुद्धि	यया	= जिस
ते	= तेरे लिये	बुद्ध्या	= बुद्धिसे
सांख्ये	= { ज्ञानयोगके* विषयमें	युक्तः	= युक्त हुआ (तं)
अभिहिता	= कही गयी	कर्मबन्धम्	= { कर्मोंके बन्धनको
तु	= और	प्रहास्यसि	= { अच्छी तरहसे नाश करेगा
इमाम्	= इसीको (अब)		

निष्कामकर्मयोग नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते ।
 के प्रभाव का
 कथन । स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात् ॥४०॥

न, इह, अभिक्रमनाशः, अस्ति, प्रत्यवायः, न, विद्यते,
 स्वल्पम्, अपि, अस्य, धर्मस्य, त्रायते, महतः, भयात् ॥४०॥

*-† अध्याय ३ श्लोक ३ की टिप्पणीमें इसका विस्तार देखना चाहिये ।

और-

इह	= { इस निष्काम कर्मयोगमें	अस्य	= इस (निष्काम कर्मयोगरूप)
अभिक्रम- नाशः	= { आरम्भका अर्थात् बीजका नाश	धर्मस्य	= धर्मका
न	= नहीं	स्वल्पम्	= थोड़ा
अस्ति	= है (और)	अपि	= भी (साधन)
प्रत्ययायः	= { उलटा फलरूप दोष (भी)	महतः	= { जन्ममृत्युरूप महान्
न	= नहीं	भयात्	= भयसे
विद्यते	= होता है	त्रायते	= { उद्धार कर देता है

निश्चयात्मक व्यवसायात्मिका बुद्धिरेकेह कुरुनन्दन ।

और अनिश्चया-
त्मक बुद्धि के बहुशाखा ह्यनन्ताश्च बुद्ध्योऽव्यवसायिनाम् ॥

स्वरूप का व्यवसायात्मिका, बुद्धिः, एका, इह, कुरुनन्दन,
निरूपण । बहुशाखाः, हि, अनन्ताः, च, बुद्ध्यः, अव्यवसायिनाम् ॥४१॥

और-

कुरुनन्दन	= हे अर्जुन	एका हि	= एक ही है
इह	= इस (कल्याणमार्गमें)	च	= और
व्यव- सायात्मिका	= निश्चयात्मक	अव्यव- सायिनाम्	= { अज्ञानी (सकामी) पुरुषोंकी
बुद्धिः	= बुद्धि	बुद्ध्यः	= बुद्धियां

सकामी पुरुषों
के स्वभाव का
कथन ।

बहुशाखाः = बहुत भेदोंवाली | अनन्ताः = अनन्त होती हैं

यामिमां पुष्पितां वाचं प्रवदन्त्यविपश्चितः ।

वेदवादरताः पार्थ नान्यदस्तीति वादिनः ॥४२॥

कामात्मानः स्वर्गपरा जन्मकर्मफलप्रदाम् ।

क्रियाविशेषबहुलां भोगैश्वर्यगतिं प्रति ॥४३॥

याम्, इमाम्, पुष्पिताम्, वाचम्, प्रवदन्ति, अविपश्चितः,

वेदवादरताः, पार्थ, न, अन्यत्, अस्ति, इति, वादिनः ॥४२॥

कामात्मानः, स्वर्गपराः, जन्मकर्मफलप्रदाम्,

क्रियाविशेषबहुलाम्, भोगैश्वर्यगतिम्, प्रति ॥४३॥

और—

पार्थ = हे अर्जुन (जो)

कामात्मानः = सकामी पुरुष

वेदवादरताः = { केवल फल-
श्रुतिमें प्रीति
रखनेवाले

स्वर्गपराः = { स्वर्गको ही
परम श्रेष्ठ
माननेवाले
(इससे बढ़कर)

अन्यत् = और कुछ

न = नहीं

अस्ति = है

इति = ऐसे

वादिनः = कहनेवाले हैं
(वे)

अविपश्चितः = अविवेकीजन

जन्मकर्म-फलप्रदाम् = { जन्मरूप
कर्मफलको
देनेवाली
(और)

भोगैश्वर्य-गतिम् प्रति = { भोग तथा
ऐश्वर्यकी
प्राप्तिके लिये

क्रियाविशेष-बहुलाम् = { बहुत-सी
क्रियाओंके
विस्तारवाली

इसाम् = इस प्रकारकी

याम् = जिस

पुष्पिताम् = { दिखाऊ
शोभायुक्त

वाचम् = वाणीको

प्रवदन्ति = कहते हैं

सकामी पुरुषों
के अन्तःकरण-
में निश्चयात्मक
बुद्धि न होनेका
कथन ।

भोगैश्वर्यप्रसक्तानां तयापहतचेतसाम् ।

व्यवसायात्मिका बुद्धिः समाधौ न विधीयते ॥ ४४ ॥

भोगैश्वर्यप्रसक्तानाम्, तया, अपहतचेतसाम्,

व्यवसायात्मिका, बुद्धिः, समाधौ, न, विधीयते ॥ ४४ ॥

तथा = उस वाणीद्वारा

(उन पुरुषोंके)

अपहत-
चेतसाम्= { हरे हुए
चित्तवाले
(तथा)

समाधौ

= अन्तःकरणमें

व्यव-

सायात्मिका

} = निश्चयात्मक

भोगैश्वर्य-

प्रसक्तानाम्

= { भोग और
ऐश्वर्यमें
आसक्तिवाले

बुद्धिः

= बुद्धि

न

= नहीं

विधीयते

= होती है

निष्कामी और
आत्म-परायण
होनेके लिये
आशा ।

त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन ।

निर्द्वन्द्वो नित्यसत्त्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान् ॥

त्रैगुण्यविषयाः, वेदाः, निस्त्रैगुण्यः, भव, अर्जुन,

निर्द्वन्द्वः, नित्यसत्त्वस्थः, निर्योगक्षेमः, आत्मवान् ॥ ४५ ॥

और-

अर्जुन

= हे अर्जुन

। वेदाः = सब वेद

त्रैगुण्य- विषयाः	= { तीनों गुणोंके कार्यरूप संसारको विषय करनेवाले अर्थात् प्रकाश करनेवाले हैं (इसलिये तू)	(और)	निर्द्वन्द्वः = { सुखदुःखादि द्वन्द्वोंसे रहित
			नित्य- = { नित्य वस्तुमें सन्वस्थः = { स्थित (तथा)
निस्त्रैगुण्यः =	{ असंसारी अर्थात् निष्कामी	(और)	निर्योग- = { योग*क्षेमको† क्षेमः = { न चाहनेवाला
			आत्मवान् = आत्मपरायण भव = हो

जलाशय के दृष्टान्तसे ब्रह्म-
ज्ञानकी महिमा । यावानर्थ उदपाने सर्वतः संप्लुतोदके ।
तावान्सर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः ॥४६॥

यावान्, अर्थः, उदपाने, सर्वतः, संप्लुतोदके,
तावान्, सर्वेषु, वेदेषु, ब्राह्मणस्य, विजानतः ॥ ४६ ॥

क्योंकि—

	(मनुष्यका)		
सर्वतः	= सब ओरसे	उदपाने =	{ छोटे जलाशयमें
संप्लुतोदके	= { परिपूर्ण जलाशयके	यावान् =	जितना
		अर्थः =	प्रयोजन
(प्राप्ते सति)	= प्राप्त होनेपर	(अस्ति) =	रहता है

* अप्राप्तकी प्राप्ति का नाम 'योग' है। † प्राप्त वस्तुकी रक्षा का नाम 'क्षेम' है।

विजानतः	{ अच्छी प्रकार ब्रह्मको जानने- वाले	सर्वेषु	=सब
		वेदेषु	= वेदोंमें
ब्राह्मणस्य	= ब्राह्मणका (भी)	तावान्	{ उतना ही प्रयोजन रहता है

अर्थात् जैसे बड़े जलाशयके प्राप्त हो जानेपर जलके लिये छोटे जलाशयोंकी आवश्यकता नहीं रहती, वैसे ही ब्रह्मानन्दकी प्राप्ति होनेपर आनन्दके लिये वेदोंकी आवश्यकता नहीं रहती ।

फलासक्तिको
त्यागकर कर्म
करनेके लिये
प्रेरणा और कर्म-
त्यागका निषेध ।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि ॥४७॥

कर्मणि, एव, अधिकारः, ते, मा, फलेषु, कदाचन,
मा, कर्मफलहेतुः, भूः, मा, ते, सङ्गः, अस्तु, अकर्मणि ॥४७॥

इससे—

ते	=तेरा	(भी)	
कर्मणि	=कर्म करनेमात्रमें	मा	=मत
एव	=ही	भूः	=हो (तथा)
अधिकारः	=अधिकार होवे	ते	=तेरी
फलेषु	=फलमें	अकर्मणि	=कर्म न करनेमें (भी)
कदाचन	=कभी	सङ्गः	=प्रीति
मा	=नहीं (और तूं)	मा	=न
कर्मफल-	= { कर्मोंके फलकी	अस्तु	=होवे
हेतुः	= { वासनावाला		

आसक्तिको योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनंजय ।
 त्यागकर समत्व- बुद्धि से कर्म सिद्धयसिद्धयोः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते ॥
 करने के लिये योगस्थः, कुरु, कर्माणि, सङ्गम्, त्यक्त्वा, धनंजय,
 आज्ञा । सिद्धयसिद्धयोः, समः, भूत्वा, समत्वम्, योगः, उच्यते ॥४८॥

धनंजय = हे धनंजय	भूत्वा = होकर
सङ्गम् = आसक्तिको	योगस्थः = योगमें स्थित हुआ
त्यक्त्वा = त्यागकर	कर्माणि = कर्मोंको
(तथा)	कुरु = कर (यह)
सिद्धय- = { सिद्धि और	समत्वम् = समत्वभाव* ही
सिद्धयोः = { असिद्धिमें	योगः = योग (नामसे)
समः = समान बुद्धिवाला	उच्यते = कहा जाता है

सकाम कर्मकी दूरेण ह्यवरं कर्म बुद्धियोगाद्धनंजय ।
 निन्दा और बुद्धौ शरणमन्विच्छ कृपणाः फलहेतवः ॥४९॥
 निष्कामकर्मयोग की प्रशंसा । दूरेण, हि, अवरम्, कर्म, बुद्धियोगात्, धनंजय,
 बुद्धौ, शरणम्, अन्विच्छ, कृपणाः, फलहेतवः ॥४९॥

इस समत्वरूप-

बुद्धियोगात् = बुद्धियोगसे	(अतः) = इसलिये
कर्म = (सकाम) कर्म	धनंजय = हे धनंजय
दूरेण = अत्यन्त	बुद्धौ = { समत्वबुद्धि-
अवरम् = तुच्छ है	योगका

* जो कुछ भी कर्म किया जाय उसके पूर्ण होने और न होनेमें तथा उसके फलमें समभाव रहनेका नाम "समत्व" है ।

शरणम् = आश्रय
अन्विच्छ = ग्रहण कर
हि = क्योंकि

फलहेतवः = { फलकी
वासनावाले
कृपणाः = अत्यन्त दीन हैं

निष्काम कर्म-
योगीके पुण्य-
पापोंकी निवृत्ति-
का कथन और
निष्काम कर्म
करनेके लिये
आज्ञा ।

बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते ।
तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम् ॥

बुद्धियुक्तः, जहाति, इह, उभे, सुकृतदुष्कृते,
तस्मात्, योगाय, युज्यस्व, योगः, कर्मसु, कौशलम् ॥५०॥

और-

बुद्धियुक्तः = { समत्वबुद्धि-
युक्त पुरुष

सुकृत-
दुष्कृते } = पुण्य पाप

उभे = दोनोंको

इह = इस लोकमें

(एव) = ही

जहाति = { त्याग देता है
अर्थात् उनसे
लिपयमान
नहीं होता

तस्मात् = इससे

योगाय = { समत्वबुद्धियोगके
लिये ही

युज्यस्व = चेष्टा कर
(यह)

योगः = { समत्वबुद्धिरूप
योग ही

कर्मसु = कर्मोंमें

कौशलम् = { चतुरता है
अर्थात् कर्म-
बन्धनसे छूटने-
का उपाय है

कर्मफलके त्याग-
से परमपदकी
प्राप्ति ।

कर्मजं बुद्धियुक्ता हि फलं त्यक्त्वा मनीषिणः ।

जन्मबन्धविनिर्मुक्ताः पदं गच्छन्त्यनामयम् ॥

कर्मजम्, बुद्धियुक्ताः, हि, फलम्, त्यक्त्वा, मनीषिणः ।

जन्मबन्धविनिर्मुक्ताः, पदम्, गच्छन्ति, अनामयम् ॥५१॥

हि	= क्योंकि	जन्मबन्ध-	= { जन्मरूप
बुद्धियुक्ताः	= बुद्धियोगयुक्त	विनिर्मुक्ताः	= { बन्धनसे
मनीषिणः	= ज्ञानीजन		= { छूटे हुए
कर्मजम्	= { कर्मोंसे उत्पन्न	अनामयम्	= { निर्दोष अर्थात्
	= { होनेवाले		= { अमृतमय
फलम्	= फलको	पदम्	= परमपदको
त्यक्त्वा	= त्यागकर	गच्छन्ति	= प्राप्त होते हैं

मोहका नाश होनेसे वैराग्य-की प्राप्ति । यदा ते मोहकलिलं बुद्धिर्व्यतितरिष्यति । तदा गन्तासि निर्वेदं श्रोतव्यस्य श्रुतस्य च ॥५२॥

यदा, ते, मोहकलिलम्, बुद्धिः, व्यतितरिष्यति, तदा, गन्तासि, निर्वेदम्, श्रोतव्यस्य, श्रुतस्य, च ॥५२॥

और हे अर्जुन-

यदा	= जिस कालमें	तदा	= तब
ते	= तेरी	(त्वम्)	= तू
बुद्धिः	= बुद्धि	श्रोतव्यस्य	= सुनने योग्य
मोह-	= { मोहरूप	च	= और
कलिलम्	= { दलदलको	श्रुतस्य	= सुने हुएके
व्यति-	= { धिलकुल तर	निर्वेदम्	= वैराग्यको
तरिष्यति	= { जायगी	गन्तासि	= प्राप्त होगा

बुद्धिकी स्थिरता-से योगकी प्राप्ति

श्रुतिविप्रतिपन्ना ते यदा स्थास्यति निश्चला ।

समाधावचला बुद्धिस्तदा योगमवाप्स्यसि ॥५३॥

श्रुतिविप्रतिपन्ना, ते, यदा, स्थास्यति, निश्चला, समाधौ, अचला, बुद्धिः, तदा, योगम्, अवाप्स्यसि ॥५३॥

और-

यदा	= जब	समाधौ	= { परमात्माके स्वरूपमें
ते	= तेरी	अचला	= अचल (और)
श्रुति-	{ अनेक	निश्चला	= स्थिर
विप्रतिपन्ना	{ प्रकारके सिद्धान्तोंको सुननेसे विचलित हुई	स्थास्यति	= ठहर जायगी
बुद्धिः	= बुद्धि	तदा	= तब (तूं)
		योगम्	= { समत्वरूप योगको
		अवाप्स्यसि	= प्राप्त होगा

अर्जुन उवाच

स्थिरबुद्धि पुरुष- स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव ।
के विषय में स्थितधीः किं प्रभाषेत किमासीत ब्रजेत किम् ॥
अर्जुनके चार प्रश्न । स्थितप्रज्ञस्य, का, भाषा, समाधिस्थस्य, केशव,

स्थितधीः, किम्, प्रभाषेत, किम्, आसीत, ब्रजेत, किम् ॥५४॥

इस प्रकार भगवान्‌के वचनोंको सुनकर अर्जुनने पूछा-

केशव	= हे केशव	स्थितधीः	= स्थिरबुद्धि पुरुष
समाधिस्थस्य	= { समाधिमें स्थित	किम्	= कैसे
स्थितप्रज्ञस्य	= { स्थिरबुद्धि- वाले पुरुषका	प्रभाषेत	= बोलता है
का	= क्या	किम्	= कैसे
भाषा	= लक्षण है (और)	आसीत	= बैठता है
		किम्	= कैसे
		ब्रजेत	= चलता है

श्रीभगवानुवाच

समाधिमें स्थित
हुए स्थिरबुद्धि
पुरुषके लक्षण ।

प्रजहाति यदा कामान्सर्वान्पार्थ मनोगतान् ।
आत्मन्येवात्मना तुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते ॥

प्रजहाति, यदा, कामान्, सर्वान्, पार्थ, मनोगतान्,
आत्मनि, एव, आत्मना, तुष्टः, स्थितप्रज्ञः, तदा, उच्यते ॥५५॥

उसके उपरान्त श्रीकृष्ण महाराज बोले—

पार्थ	= हे अर्जुन	तदा	= उस कालमें
यदा	= जिस कालमें (यह पुरुष)	आत्मना	= आत्मासे
मनोगतान्	= मनमें स्थित	एव	= ही
सर्वान्	= संपूर्ण	आत्मनि	= आत्मामें
कामान्	= कामनाओंको	तुष्टः	= संतुष्ट हुआ
प्रजहाति	= त्याग देता है	स्थितप्रज्ञः	= स्थिरबुद्धिवाला
		उच्यते	= कहा जाता है

स्थिरबुद्धि पुरुष-
के अन्तःकरण
और वचनोंमें
रागद्वेषादि के
अभावका कथन

दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः ।
वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते ॥५६॥
दुःखेषु, अनुद्विग्नमनाः, सुखेषु, विगतस्पृहः,
वीतरागभयक्रोधः, स्थितधीः, मुनिः, उच्यते ॥५६॥

तथा—

दुःखेषु	= दुःखोंकी प्राप्तिमें	विगतस्पृहः	= { दूर हो गयी है स्पृहा जिसकी (तथा)
अनुद्विग्न- मनाः	= { उद्वेगरहित है मन जिसका (और)	वीतराग- भयक्रोधः	= { नष्ट हो गये हैं राग भय और क्रोध जिसके
सुखेषु	= सुखोंकी प्राप्तिमें		

(ऐसा) स्थितधीः = स्थिरबुद्धि
 मुनिः = मुनि उच्यते = कहा जाता है

[„] यः सर्वत्रानभिस्नेहस्तत्तत्प्राप्य शुभाशुभम् ।

नाभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥५७॥

यः, सर्वत्र, अनभिस्नेहः, तत्, तत्, प्राप्य, शुभाशुभम्,

न, अभिनन्दति, न, द्वेष्टि, तस्य, प्रज्ञा, प्रतिष्ठिता ॥५७॥

और—

यः	= जो पुरुष	न	= न
सर्वत्र	= सर्वत्र	अभिनन्दति	= { प्रसन्न होता है (और)
अनभिस्नेहः	= स्नेहरहित हुआ		
तत् तत्	= उस उस	न	= न
शुभाशुभम्	= { शुभ तथा अशुभ (वस्तुओं) को	द्वेष्टि	= द्वेष करता है
		तस्य	= उसको
		प्रज्ञा	= बुद्धि
प्राप्य	= प्राप्त होकर	प्रतिष्ठिता	= स्थिर है

तीसरे प्रश्नके यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः ।

इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥

यदा, संहरते, च, अयम्, कूर्मः, अङ्गानि, इव, सर्वशः,

इन्द्रियाणि, इन्द्रियार्थेभ्यः, तस्य, प्रज्ञा, प्रतिष्ठिता ॥५८॥

च	= और	इव	= { जैसे (समेट लेता है, वैसे ही)
कूर्मः	= कछुआ (अपने)	अयम्	= यह पुरुष
अङ्गानि	= अङ्गोंको		

यदा	= जब	संहरते	= समेट लेता है
सर्वशः	= सब ओरसे (अपनी)		(तब)
इन्द्रियाणि	= इन्द्रियोंको	तस्य	= उसकी
इन्द्रियार्थेभ्यः	= { इन्द्रियोंके विषयोंसे	प्रज्ञा	= बुद्धि
		प्रतिष्ठिता	= स्थिर होती है

हठपूर्वक भोगों- विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः ।

का त्याग करने-

से भी आसक्ति

नष्ट न होनेका

और परमात्म-

दर्शनसे नष्ट

होनेका कथन ।

रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते ॥५६॥

विषयाः, विनिवर्तन्ते, निराहारस्य, देहिनः,

रसवर्जम्, रसः, अपि, अस्य, परम्, दृष्ट्वा, निवर्तते ॥५९॥

यद्यपि-

	(इन्द्रियोंके द्वारा)	रसवर्जम्	= राग नहीं
	{ विषयोंको न		(निवृत्त होता)
निराहारस्य	= { ग्रहण करने-		(और)
	{ वाले		
देहिनः	= पुरुषके (भी)	अस्य	= इस पुरुषका (तो)
	(केवल)	रसः	= राग
विषयाः	= विषय (तो)	अपि	= भी
विनिवर्तन्ते	= { निवृत्त हो	परम्	= परमात्माको
	{ जाते हैं	दृष्ट्वा	= साक्षात्करके
	(परन्तु)	निवर्तते	= निवृत्त हो जाता है

इन्द्रियोंको यततो ह्यपि कौन्तेय पुरुषस्य विपश्चितः ।

प्रबलता का
निरूपण ।

इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसभं मनः ॥

यततः, हि, अपि, कौन्तेय, पुरुषस्य, विपश्चितः,
इन्द्रियाणि, प्रमाथीनि, हरन्ति, प्रसभम्, मनः ॥६०॥

और-

कौन्तेय	= हे अर्जुन	मनः	= मनको
हि	= जिससे (कि)	प्रमाथीनि	= { यह प्रमथन स्वभाववाली
यततः	= यत्न करते हुए	इन्द्रियाणि	= इन्द्रियां
विपश्चितः	= बुद्धिमान्	प्रसभम्	= बलात्कारसे
पुरुषस्य	= पुरुषके	हरन्ति	= हर लेती हैं
अपि	= भी		

इन्द्रियोंको वश तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः ।

में करके भगवत्-
परायण होनेके
लिये प्रेरणा ।

वशे हि यस्येन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥

तानि, सर्वाणि, संयम्य, युक्तः, आसीत, मत्परः,
वशे, हि, यस्य, इन्द्रियाणि, तस्य, प्रज्ञा, प्रतिष्ठिता ॥६१॥

इसलिये मनुष्यको चाहिये कि-

तानि	= उन	हि	= क्योंकि
सर्वाणि	= संपूर्ण इन्द्रियोंको	यस्य	= जिस पुरुषके
संयम्य	= वशमें करके	इन्द्रियाणि	= इन्द्रियां
युक्तः	= समाहित चित्त हुआ	वशे	= वशमें होती हैं
मत्परः	= मेरे परायण	तस्य	= उसकी (ही)
आसीत	= स्थित होवे	प्रज्ञा	= बुद्धि
		प्रतिष्ठिता	= स्थिर होती है

विषयोंके चिन्तन
से आसक्ति आदि
अवगुणोंकी क्रम-
से उत्पत्ति और
अधःपतन होने-
का कथन ।

ध्यायतो विषयान्पुंसः सङ्गस्तेषूपजायते ।

सङ्गात्संजायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते ॥

ध्यायतः, विषयान्, पुंसः, सङ्गः, तेषु, उपजायते,
सङ्गात्, संजायते, कामः, कामात्, क्रोधः, अभिजायते ॥६२॥

और हे अर्जुन ! मनसहित इन्द्रियोंको वशमें करके मेरे परायण
न होनेसे मनके द्वारा विषयोंका चिन्तन होता है और—

विषयान्	= विषयोंको	(उन विषयोंकी)
ध्यायतः	= चिन्तन करनेवाले	कामः = कामना
पुंसः	= पुरुषकी	संजायते = उत्पन्न होती है
तेषु	= उन विषयोंमें	(और)
सङ्गः	= आसक्ति	कामात् = { कामना (में
उपजायते	= हो जाती है	{ विघ्न पड़ने) से
	(और)	क्रोधः = क्रोध
सङ्गात्	= आसक्तिसे	अभिजायते = उत्पन्न होता है

[„] क्रोधाद्भवति संमोहः संमोहात्स्मृतिविभ्रमः ।

स्मृतिभ्रंशाहुर्बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति ॥

क्रोधात्, भवति, संमोहः, संमोहात्, स्मृतिविभ्रमः,
स्मृतिभ्रंशात्, बुद्धिनाशः, बुद्धिनाशात्, प्रणश्यति ॥६३॥
और—

क्रोधात्	= क्रोधसे	भवति	= उत्पन्न होता है
संमोहः	= { अविवेक अर्थात्		(और)
	{ मूढ़भाव	संमोहात्	= अविवेकसे

स्मृति- विभ्रमः	= { स्मरणशक्ति भ्रमित हो जाती है (और)	(और)	बुद्धिनाशात् = { बुद्धिके नाश होनेसे
स्मृति- भ्रंशात्	= { स्मृतिके भ्रमित हो जानेसे	(यह पुरुष)	
बुद्धिनाशः	= { बुद्धि अर्थात् ज्ञानशक्तिका नाश हो जाता है	प्रणश्यति = { अपने श्रेय- साधनसे गिर जाता है	

चौथे प्रश्नके
उत्तरमें रागद्वेष-
रहित इन्द्रियों-
द्वारा कर्म करनेसे
अन्तःकरण शुद्ध
होकर बुद्धि स्थिर
होनेका कथन ।

रागद्वेषवियुक्तैस्तु विषयानिन्द्रियैश्चरन् ।

आत्मवश्यैर्विधेयात्मा प्रसादमधिगच्छति ॥६४॥

रागद्वेषवियुक्तैः, तु, विषयान्, इन्द्रियैः, चरन्,
आत्मवश्यैः, विधेयात्मा, प्रसादम्, अधिगच्छति ॥ ६४ ॥

तु	= परन्तु	इन्द्रियैः	= इन्द्रियोंद्वारा
विधेयात्मा	= { स्वाधीन अन्तःकरण- वाला (पुरुष)	विषयान्	= विषयोंको
रागद्वेष- वियुक्तैः	= रागद्वेषसे रहित	चरन्	= भोगता हुआ
आत्मवश्यैः	= { अपने वशमें की हुई	प्रसादम्	= { अन्तःकरणकी प्रसन्नता अर्थात् खच्छताको
		अधि- गच्छति	= प्राप्त होता है

[„] प्रसादे सर्वदुःखानां हानिरस्योपजायते ।

प्रसन्नचेतसो ह्याशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते ॥६५॥

प्रसादे, सर्वदुःखानाम्, हानिः, अस्य, उपजायते,
प्रसन्नचेतसः, हि, आशु, बुद्धिः, पर्यवतिष्ठते ॥६५॥

और—

प्रसादे	= { (उस) निर्मलताके होनेपर	प्रसन्नचेतसः = { प्रसन्नचित्त- वाले पुरुषकी
अस्य	= इसके	बुद्धिः = बुद्धि
सर्वदुःखा- नाम्	= { संपूर्ण दुःखोंका	आशु = शीघ्र
हानिः	= अभाव	हि = ही
उपजायते	= हो जाता है (और उस)	पर्यवतिष्ठते = { अच्छी प्रकार स्थिर हो जाती है

साधनरहित
पुरुषको आस्ति-
कता, शान्ति
और सुख की
अप्राप्ति ।

नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य न चायुक्तस्य भावना ।

न चाभावयतः शान्तिरशान्तस्य कुतः सुखम् ॥

न, अस्ति, बुद्धिः, अयुक्तस्य, न, च, अयुक्तस्य, भावना,
न, च, अभावयतः, शान्तिः, अशान्तस्य, कुतः, सुखम् ॥६६॥

और हे अर्जुन—

अयुक्तस्य	= { साधनरहित पुरुषके (अन्तःकरणमें)	च = और (उस)
बुद्धिः	= श्रेष्ठ बुद्धि	अयुक्तस्य = अयुक्तके (अन्तःकरणमें)
न	= नहीं	भावना = आस्तिकभाव भी
अस्ति	= होती है	न = नहीं होता है (और)

अभावयतः=	{ विना आस्तिक- भाववाले पुरुषको	(फिर)	अशान्तस्य = { शान्तिरहित पुरुषको
शान्तिः	= शान्ति	सुखम्	= सुख
च	= भी	कुतः	= कैसे
न	= नहीं (होती)		(हो सकता है)

नौकाके दृष्टान्त
से वक्षमें न की
हुई इन्द्रियोंद्वारा
बुद्धिके विचलित
किये जाने का
कथन ।

इन्द्रियाणां हि चरतां यन्मनोऽनु विधीयते ।

तदस्य हरति प्रज्ञां वायुर्नावमिवाम्भसि ॥६७॥

इन्द्रियाणाम्, हि, चरताम्, यत्, मनः, अनु, विधीयते,
तत्, अस्य, हरति, प्रज्ञाम्, वायुः, नावम्, इव, अम्भसि ॥६७॥

हि	= क्योंकि	यत्	= जिस (इन्द्रियके)
अम्भसि	= जलमें	अनु	= साथ
वायुः	= वायु	मनः	= मन
नावम्	= नावको	विधीयते	= रहता है
इव	= जैसे (हर लेता है, वैसे ही विषयोंमें)	तत्	= वह (एक ही इन्द्रिय)
चरताम्	= विचरती हुई	अस्य	= { इस (अयुक्त) पुरुषकी
इन्द्रियाणाम्	= { इन्द्रियोंके बीचमें	प्रज्ञाम्	= बुद्धिको
		हरति	= हरण कर लेती है

स्थिरबुद्धि पुरुष-
के लक्षणों में
इन्द्रियनिग्रहकी
प्रधानता ।

तस्माद्यस्य महाबाहो निगृहीतानि सर्वशः ।

इन्द्रियाणोन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥

तस्मात्, यस्य, महाबाहो, निगृहीतानि, सर्वशः,
इन्द्रियाणि, इन्द्रियार्थेभ्यः, तस्य, प्रज्ञा, प्रतिष्ठिता ॥ ६८ ॥

—००००००००—

तस्मात्	= इससे	निगृहीतानि=	{ वशमें की हुई होती हैं
महाबाहो	= हे महाबाहो		
यस्य	= जिस पुरुषकी	तस्य	= उसकी
इन्द्रियाणि	= इन्द्रियां	प्रज्ञा	= बुद्धि
सर्वशः	= सब प्रकार	प्रतिष्ठिता	= स्थिर होती है
इन्द्रियार्थेभ्यः	= { इन्द्रियोंके विषयोंसे		

अज्ञानियोंके
निश्चयमें परमा-
त्मतत्त्वके अभाव
का और आत्म-
ज्ञानियों के
निश्चयमें सृष्टि-
के अभाव का
निरूपण ।

या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी ।

यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः ॥

या, निशा, सर्वभूतानाम्, तस्याम्, जागर्ति, संयमी,
यस्याम्, जाग्रति, भूतानि, सा, निशा, पश्यतः, मुनेः ॥ ६९ ॥

और हे अर्जुन—

सर्वभूतानाम्=	{ संपूर्ण भूत प्राणियोंके लिये	तस्याम्=	{ उस नित्य शुद्ध बोधस्वरूप परमानन्दमें (भगवत्को प्राप्त हुआ)
या	= जो		
निशा	= रात्रि है		

संयमी	= योगी पुरुष	जाग्रति	= जागते हैं
जागर्ति	= जागता है (और)	पश्यतः	= { तत्त्वको जाननेवाले
यस्याम्	= { जिस नाशवान् क्षणभङ्गुर सांसारिक सुखमें	मुनेः	= मुनिके लिये
भूतानि	= सब भूत प्राणी	सा	= वह
		निशा	= रात्रि है

समुद्रके दृष्टान्त-
से निष्कामी
पुरुषकी महिमा ।

आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं

समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत् ।

तद्वत्कामा यं प्रविशन्ति सर्वे

स शान्तिमाप्नोति न कामकामी ॥७०॥

आपूर्यमाणम्, अचलप्रतिष्ठम्, समुद्रम्, आपः, प्रविशन्ति,
यद्वत्, तद्वत्, कामाः, यम्, प्रविशन्ति, सर्वे, सः, शान्तिम्,
आप्नोति, न, कामकामी ॥७०॥

और-

यद्वत्	= जैसे		(उसको चलायमान न करते हुए ही)
आपूर्यमाणम्	= { सब ओरसे परिपूर्ण	प्रविशन्ति	= समा जाते हैं
अचलप्रतिष्ठम्	= { अचल प्रतिष्ठावाले	तद्वत्	= वैसे ही
समुद्रम्	= समुद्रके प्रति	यम्	= { जिस (स्थिरबुद्धि) पुरुषके प्रति
आपः	= { नाना नदियों- के जल		

सर्वे	= संपूर्ण	सः	= वह (पुरुष)
कामाः	= भोग (किसी प्रकारका विकार उत्पन्न किये बिना ही)	शान्तिम्	= परम शान्तिको
		आप्नोति	= प्राप्त होता है
		न	= न कि
प्रविशन्ति	= समा जाते हैं	कामकामी	= { भोगोंको चाहनेवाला

संपूर्ण कामना विहाय कामान्यः सर्वान्पुमांश्चरति निःस्पृहः ।
 और अहंता, निर्ममो निरहंकारः स शान्तिमधिगच्छति ॥
 समताके त्यागसे परम शान्तिकी विहाय, कामान्, यः, सर्वान्, पुमान्, चरति, निःस्पृहः,
 प्राप्ति । निर्ममः, निरहंकारः, सः, शान्तिम्, अधिगच्छति ॥७१॥

क्योंकि—

यः	= जो	निरहंकारः	= अहंकाररहित
पुमान्	= पुरुष	निःस्पृहः	= { स्पृहारहित हुआ
सर्वान्	= संपूर्ण	चरति	= बर्तता है
कामान्	= कामनाओंको	सः	= वह
विहाय	= त्यागकर	शान्तिम्	= शान्तिको
निर्ममः	= समतारहित (और)	अधिगच्छति	= प्राप्त होता है

ब्राह्मीस्थितिकी
महिमा ।

एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ नैनां प्राप्य विमुह्यति ।
 स्थित्वास्यामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति ॥

एषा, ब्राह्मी, स्थितिः, पार्थ, न, एनाम्, प्राप्य, विमुह्यति,
 स्थित्वा, अस्याम्, अन्तकाले, अपि, ब्रह्मनिर्वाणम्, ऋच्छति ७२

पार्थ	= हे अर्जुन	ब्राह्मी	= { ब्रह्मको प्राप्त हुए पुरुषकी
एषा	= यह		

स्थितिः	= स्थिति है	अपि	= भी
एनाम्	= इसको	अस्याम्	= इस निष्ठामें
प्राप्य	= प्राप्त होकर	स्थित्वा	= स्थित होकर
न	= { मोहित नहीं	ब्रह्मनिर्वाणम्	= ब्रह्मानन्दको
विमुह्यति	= { होता है (और)	रुच्छति	= { प्राप्त हो
अन्तकाले	= अन्तकालमें		= { जाता है

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे
श्रीकृष्णार्जुनसंवादे सांख्ययोगो नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

अथ तृतीयोऽध्यायः

प्रधान विषय—१ से ८ तक ज्ञानयोग और निष्काम कर्मयोगके अनुसार
अनासक्तभावसे नियतकर्म करनेकी श्रेष्ठताका निरूपण । (९-१६)
यज्ञादि कर्म करनेकी आवश्यकताका निरूपण । (१७-२४) ज्ञानवान्
और भगवान्के लिये भी लोकसंग्रहार्थ कर्म करनेकी आवश्यकता ।
(२५-३५) अज्ञानी और ज्ञानवान्के लक्षण तथा रागद्वेषसे रहित
होकर कर्म करनेके लिये प्रेरणा । (३६-४३) कामके निरोधका विषय ।

अर्जुन उवाच

ज्ञान और कर्म ज्यायसी चेत्कर्मणस्ते मता बुद्धिर्जनार्दन ।
की श्रेष्ठता के तर्किक कर्मणि घोरे मां नियोजयसि केशव ॥
विषयमें अर्जुन-ज्यायसी, चेत्, कर्मणः, ते, मता, बुद्धिः, जनार्दन,
की शङ्का और तत्, किम्, कर्मणि, घोरे, माम्, नियोजयसि, केशव ॥१॥
निश्चित मत कहनेके लिये
भगवान् से इसपर अर्जुनने प्रश्न किया कि-
प्रार्थना । जनार्दन = हे जनार्दन । चेत् = यदि

कर्मणः	= कर्मोंकी अपेक्षा	केशव	= हे केशव
बुद्धिः	= ज्ञान	माम्	= मुझे
ते	= आपके	घोरे	= भयङ्कर
ज्यायसी	= श्रेष्ठ	कर्मणि	= कर्ममें
मता	= मान्य है	किम्	= क्यों
तत्	= तो फिर	नियोजयसि	= लगाते हैं

[„] व्यामिश्रेणेव वाक्येन बुद्धिं मोहयसीव मे ।

तदेकं वद निश्चित्य येन श्रेयोऽहमाप्नुयाम् ॥

व्यामिश्रेण, इव, वाक्येन, बुद्धिम्, मोहयसि, इव, मे,
तत्, एकम्, वद, निश्चित्य, येन, श्रेयः, अहम्, आप्नुयाम् ॥२॥

तथा आप—

व्यामिश्रेण	} = मिले हुएसे	तत्	= उस
इव		एकम्	= एक (बात) को
वाक्येन	= वचनसे	निश्चित्य	= निश्चय करके
मे	= मेरी	वद	= कहिये (कि)
बुद्धिम्	= बुद्धिको	येन	= जिससे
मोहयसि	= { मोहितसी करते हैं (इसलिये)	अहम्	= मैं
इव		श्रेयः	= कल्याणको
		आप्नुयाम्	= प्राप्त होऊँ

श्रीभगवानुवाच

अधिकारीभेद लोकेऽस्मिन्द्विविधा निष्ठा पुरा प्रोक्ता मयानघ ।

से दो प्रकारकी
निष्ठा ।

ज्ञानयोगेन सांख्यानां कर्मयोगेन योगिनाम् ॥

लोके, अस्मिन्, द्विविधा, निष्ठा, पुरा, प्रोक्ता, मया, अनघ,
ज्ञानयोगेन, सांख्यानाम्, कर्मयोगेन, योगिनाम् ॥३॥

इस प्रकार अर्जुनके पूछनेपर भगवान् श्रीकृष्ण महाराज बोले-

अनघ = हे निष्पाप
(अर्जुन)

अस्मिन् = इस

लोके = लोकमें

द्विविधा = दो प्रकारकी

निष्ठा = निष्ठा*

मया = मेरेद्वारा

पुरा = पहिले

प्रोक्ता = कही गयी है

सांख्यानाम् = ज्ञानियोंकी

ज्ञानयोगेन = ज्ञानयोगसे†
(और)

योगिनाम् = योगियोंकी

कर्मयोगेन = { निष्काम
कर्मयोगसे‡

भगवत्प्राप्तिके
लिये कर्मोंके
त्यागका निषेध।

न कर्मणामनारम्भान्नैष्कर्म्यं पुरुषोऽश्नुते ।

न च संन्यसनादेव सिद्धिं समधिगच्छति ॥४॥

न, कर्मणाम्, अनारम्भात्, नैष्कर्म्यम्, पुरुषः, अश्नुते,
न, च, संन्यसनात्, एव, सिद्धिम्, समधिगच्छति ॥४॥

* साधनकी परिपक्व अवस्था अर्थात् पराकाष्ठाका नाम 'निष्ठा' है ।

† मायासे उत्पन्न हुए संपूर्ण गुण ही गुणोंमें वर्तते हैं, ऐसे समझकर
तथा मन, इन्द्रिय और शरीरद्वारा होनेवाली संपूर्ण क्रियाओंमें कर्तापनके
अभिमानसे रहित होकर सर्वव्यापी सच्चिदानन्दधन परमात्मामें एकीभावसे
स्थित रहनेका नाम 'ज्ञानयोग' है, इसीको 'संन्यास' 'सांख्ययोग' इत्यादि
नामोंसे कहा है ।

‡ फल और आसक्तिको त्यागकर भगवत्-आज्ञानुसार केवल भगवत्-अर्थ
समत्वबुद्धिसे कर्म करनेका नाम 'निष्काम कर्मयोग' है, इसीको 'समत्वयोग'
'बुद्धियोग' 'कर्मयोग' 'तदर्थकर्म' 'मदर्थकर्म' 'मत्कर्म' इत्यादि नामोंसे कहा है ।

परन्तु किसी भी मार्गके अनुसार कर्मोंको स्वरूपसे त्यागनेकी आवश्यकता नहीं है क्योंकि—

पुरुषः	= मनुष्य	न	= न
न	= न (तो)	संन्यसनात्	= { कर्मोंको
कर्मणाम्	= कर्मोंके	एव	= { त्यागनेमात्रसे
अनारम्भात्	= न करनेसे	सिद्धिम्	= { भगवत्-
नैष्कर्म्यम्	= निष्कर्मताको*		= { साक्षात्कार-
अश्नुते	= प्राप्त होता है	समधि-	= { रूप सिद्धिको
च	= और	गच्छति }	= प्राप्त होता है

बिना कर्म किये न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत् ।
 क्षणमात्र भी कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः ॥५॥
 किसीसे नहीं

रहा जाने का न, हि, कश्चित्, क्षणम्, अपि, जातु, तिष्ठति, अकर्मकृत्,
 कथन । कार्यते, हि, अवशः, कर्म, सर्वः, प्रकृतिजैः, गुणैः ॥५॥

तथा सर्वथा कर्मोंका स्वरूपसे त्याग हो भी नहीं सकता—

हि	= क्योंकि	न	= नहीं
कश्चित्	= कोई भी (पुरुष)	तिष्ठति	= रहता है
जातु	= किसी कालमें	हि	= निःसन्देह
क्षणम्	= क्षणमात्र	सर्वः	= सब (ही पुरुष)
अपि	= भी	प्रकृतिजैः	= { प्रकृतिसे
अकर्मकृत्	= बिना कर्म किये		= { उत्पन्न हुए

* जिस अवस्थाको प्राप्त हुए पुरुषके कर्म, अकर्म हो जाते हैं अर्थात् फल उत्पन्न नहीं कर सकते, उस अवस्थाका नाम 'निष्कर्मता' है ।

गुणैः	= गुणोंद्वारा	कर्म	= कर्म
अवशः	= परवश हुए	कार्यते	= करते हैं

मिथ्याचारी कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन् ।
पुरुषका लक्षण । इन्द्रियार्थान्विमूढात्मा मिथ्याचारः स उच्यते ॥

कर्मेन्द्रियाणि, संयम्य, यः, आस्ते, मनसा, स्मरन्,
इन्द्रियार्थान्, विमूढात्मा, मिथ्याचारः, सः, उच्यते ॥ ६ ॥

इसलिये-

यः	= जो	मनसा	= मनसे
विमूढात्मा	= मूढ़बुद्धि पुरुष	स्मरन्	= चिन्तन करता
कर्मेन्द्रियाणि	= कर्मेन्द्रियोंको	आस्ते	= रहता है
	(हठसे)	सः	= वह
संयम्य	= रोककर	मिथ्याचारः	= { मिथ्याचारी
इन्द्रियार्थान्	= { इन्द्रियोंके		{ अर्थात् दम्भी
	{ भोगोंको	उच्यते	= कहा जाता है

निष्काम कर्म- यस्त्विन्द्रियाणि मनसा नियम्यारभतेऽर्जुन ।
योगीकी प्रशंसा । कर्मेन्द्रियैः कर्मयोगमसक्तः स विशिष्यते ॥

यः, तु, इन्द्रियाणि, मनसा, नियम्य, आरभते, अर्जुन,
कर्मेन्द्रियैः, कर्मयोगम्, असक्तः, सः, विशिष्यते ॥ ७ ॥

तु	= और	मनसा	= मनसे
अर्जुन	= हे अर्जुन	इन्द्रियाणि	= इन्द्रियोंको
यः	= जो (पुरुष)	नियम्य	= वशमें करके

असक्तः = अनासक्त हुआ	आरभते = { आचरण करता है
कर्मेन्द्रियैः = कर्मेन्द्रियोंसे	सः = वह
कर्मयोगम् = कर्मयोगका	विशिष्यते = श्रेष्ठ है

शास्त्रनियत कर्म
करनेके लिये
आज्ञा ।

नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः ।

शरीरयात्रापि च ते न प्रसिद्ध्येदकर्मणः ॥

नियतम्, कुरु, कर्म, त्वम्, कर्म, ज्यायः, हि, अकर्मणः,

शरीरयात्रा, अपि, च, ते, न, प्रसिद्ध्येत्, अकर्मणः ॥ ८ ॥

इसलिये-

त्वम् = तू	कर्म = कर्म करना
नियतम् = { शास्त्रविधिसे नियत किये हुए	ज्यायः = श्रेष्ठ है
कर्म = { स्वधर्मरूप कर्मको	च = तथा
कुरु = कर	अकर्मणः = कर्म न करनेसे
हि = क्योंकि	ते = तेरा
अकर्मणः = { कर्म न करनेकी अपेक्षा	शरीरयात्रा = शरीरनिर्वाह
	अपि = भी
	न = नहीं
	प्रसिद्ध्येत् = सिद्ध होगा

भगवदर्थ कर्म
करनेके लिये
आज्ञा ।

यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः ।

तदर्थं कर्म कौन्तेय मुक्तसङ्गः समाचर ॥ ९ ॥

यज्ञार्थात्, कर्मणः, अन्यत्र, लोकः, अयम्, कर्मबन्धनः,

तदर्थम्, कर्म, कौन्तेय, मुक्तसङ्गः, समाचर ॥ ९ ॥

और हे अर्जुन ! बन्धनके भयसे भी कर्मोंका त्याग करना योग्य नहीं है क्योंकि—

यज्ञार्थात्	= { यज्ञ अर्थात् विष्णुके निमित्त किये हुए	कौन्तेय	= हे अर्जुन (इसलिये)
कर्मणः	= कर्मके सिवाय	मुक्तसङ्गः	= { आसक्तिसे रहित हुआ
अन्यत्र	= अन्य कर्ममें (लगा हुआ ही)	तदर्थम्	= { उस परमेश्वरके निमित्त
अयम्	= यह	कर्म	= कर्मका
लोकः	= मनुष्य	समाचर	= { भली प्रकार आचरणकर
कर्मबन्धनः	= { कर्मोंद्वारा बन्धता है		

प्रजापतिकी सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः ।
आज्ञानुसार कर्म अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक् ॥

करनेसे परम श्रेयकी प्राप्ति । सहयज्ञाः, प्रजाः, सृष्ट्वा, पुरा, उवाच, प्रजापतिः,
अनेन, प्रसविष्यध्वम्, एषः, वः, अस्तु, इष्टकामधुक् ॥१०॥

तथा कर्म न करनेसे तू पापको भी प्राप्त होगा क्योंकि—

प्रजापतिः	= प्रजापति (ब्रह्मा)ने	प्रस-	= { वृद्धिको प्राप्त
पुरा	= कल्पके आदिमें	विष्यध्वम्	= { (होवो और)
सहयज्ञाः	= यज्ञसहित	एषः	= यह यज्ञ
प्रजाः	= प्रजाको	वः	= तुमलोगोंको
सृष्ट्वा	= रचकर	इष्टकामधुक्	= { इच्छित कामनाओंके देनेवाला
उवाच	= कहा कि	अस्तु	= होवे
अनेन	= इस यज्ञद्वारा (तुमलोग)		

[„] देवान्भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः ।

परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ ॥११॥

देवान्, भावयत, अनेन, ते, देवाः, भावयन्तु, वः,

परस्परम्, भावयन्तः, श्रेयः, परम्, अवाप्स्यथ ॥११॥

तथा तुमलोग-

अनेन	= इस यज्ञद्वारा	(एवम्)	= इस प्रकार
देवान्	= देवताओंकी	परस्परम्	= आपसमें
भावयत	= उन्नति करो (और)		(कर्तव्य समझकर)
ते	= वे	भावयन्तः	= उन्नति करते हुए
देवाः	= देवतालोग	परम्	= परम
वः	= तुमलोगोंकी	श्रेयः	= कल्याणको
भावयन्तु	= उन्नति करें	अवाप्स्यथ	= प्राप्त होवोगे

देवताओंको
बिना दिये भोग
भोगनेवालों की
निन्दा ।

इष्टान्भोगान् हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः ।

तैर्दत्तान्प्रदायैभ्यो यो भुङ्क्ते स्तेन एव सः ॥

इष्टान्, भोगान्, हि, वः, देवाः, दास्यन्ते, यज्ञभाविताः,

तैः, दत्तान्, अप्रदाय, एभ्यः, यः, भुङ्क्ते, स्तेनः, एव, सः ॥१२॥

तथा-

यज्ञभाविताः	= { यज्ञद्वारा बढ़ाये हुए	इष्टान्	= प्रिय
देवाः	= देवतालोग	भोगान्	= भोगोंको
वः	= तुम्हारे लिये (बिना मांगे ही)	दास्यन्ते	= देंगे
		तैः	= उनके द्वारा
		दत्तान्	= दिये हुए भोगोंको

यः	= जो पुरुष	भुङ्क्ते	= भोगता है
एभ्यः	= इनके लिये	सः	= वह
अप्रदाय	= बिना दिये	एव	= निश्चय
हि	= ही	स्तेनः	= चोर है

यज्ञसे बचा हुआ यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः ।
 अन्न खानेवालों-
 की प्रशंसा और भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात् ॥
 इसके विपरीत यज्ञशिष्टाशिनः, सन्तः, मुच्यन्ते, सर्वकिल्बिषैः,
 करनेवालों की भुञ्जते, ते, तु, अघम्, पापाः, ये पचन्ति, आत्मकारणात् ॥ १३ ॥
 निन्दा ।

कारण कि-

यज्ञशिष्टाशिनः	= { यज्ञसे शेष बचे हुए अन्नको खानेवाले	पापाः	= पापीलोग
सन्तः	= श्रेष्ठ पुरुष	आत्म- कारणात्	= { अपने (शरीर पोषणके) लिये ही
सर्वकिल्बिषैः	= सब पापोंसे	पचन्ति	= पकाते हैं
मुच्यन्ते	= छूटते हैं (और)	ते	= वे
ये	= जो	तु	= तो
		अघम्	= पापको ही
		भुञ्जते	= खाते हैं

सृष्टिचक्रका अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः ।

वर्णन ।

यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः ॥ १४ ॥

अन्नात्, भवन्ति, भूतानि, पर्जन्यात्, अन्नसम्भवः,

यज्ञात्, भवति, पर्जन्यः, यज्ञः, कर्मसमुद्भवः ॥ १४ ॥

क्योंकि—

भूतानि	= संपूर्ण प्राणी	पर्जन्यः	= वृष्टि
अन्नात्	= अन्नसे	यज्ञात्	= यज्ञसे
भवन्ति	= उत्पन्न होते हैं (और)	भवति	= होती है (और वह)
अन्नसम्भवः	= अन्नकी उत्पत्ति	यज्ञः	= यज्ञ
पर्जन्यात्	= वृष्टिसे होती है (और)	कर्मसमुद्भवः	= {कर्मसे उत्पन्न होनेवाला है

[„] कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम् ।

तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम् ॥१५॥

कर्म, ब्रह्मोद्भवम्, विद्धि, ब्रह्म, अक्षरसमुद्भवम्,
तस्मात्, सर्वगतम्, ब्रह्म, नित्यम्, यज्ञे, प्रतिष्ठितम् ॥१५॥

तथा उस—

कर्म	= कर्मको (तू)	तस्मात्	= इससे
ब्रह्मोद्भवम्	= { वेदसे उत्पन्न हुआ	सर्वगतम्	= सर्वव्यापी
विद्धि	= जान (और)	ब्रह्म	= { परम अक्षर परमात्मा
ब्रह्म	= वेद	नित्यम्	= सदा ही
अक्षर-	{ अविनाशी	यज्ञे	= यज्ञमें
समुद्भवम्	= { (परमात्मा) से उत्पन्न हुआ है	प्रतिष्ठितम्	= प्रतिष्ठित है

सृष्टिचक्रके
अनुसार न बर्तने
वालेकी निन्दा ।

एवं प्रवर्तितं चक्रं नानुवर्तयतीह यः ।

अधायुरिन्द्रियारामो मोघं पार्थ स जीवति ॥१६॥

एवम्, प्रवर्तितम्, चक्रम्, न, अनुवर्तयति, इह, यः,
अघायुः, इन्द्रियारामः, मोघम्, पार्थ, सः, जीवति ॥१६॥

पार्थ	= हे पार्थ	कर्मोंको नहीं
यः	= जो पुरुष	करता है)
इह	= इस लोकमें	सः = वह
एवम्	= इस प्रकार	इन्द्रियोंके
प्रवर्तितम्	= चलाये हुए	इन्द्रियारामः = सुखको
चक्रम्	= सृष्टिचक्रके	भोगनेवाला
न	= { अनुसार नहीं	अघायुः = पापआयु
अनुवर्तयति	= { वर्तता है	(पुरुष)
	(अर्थात् शास्त्र	मोघम् = व्यर्थ ही
	अनुसार	जीवति = जीता है

आत्मशान्ति के
लिये कर्तव्यका
अभाव ।

यस्त्वात्मरतिरेव स्यादात्मतृप्तश्च मानवः ।

आत्मन्येव च संतुष्टस्तस्य कार्यं न विद्यते ॥१७॥

यः, तु, आत्मरतिः, एव, स्यात्, आत्मतृप्तः, च, मानवः,
आत्मनि, एव, च, संतुष्टः, तस्य, कार्यम्, न, विद्यते ॥१७॥

तु	= परन्तु	आत्मनि	= आत्मामें
यः	= जो	एव	= ही
मानवः	= मनुष्य	संतुष्टः	= संतुष्ट
आत्मरतिः	= { आत्मा ही में	स्यात्	= होवे
एव	= { प्रीतिवाला	तस्य	= उसके लिये
च	= और	कार्यम्	= कोई कर्तव्य
आत्मतृप्तः	= आत्मा ही में तृप्त	न	= नहीं
च	= तथा	विद्यते	= है

कर्म करने और नैव तस्य कृतेनार्थो नाकृतेनेह कश्चन ।
 न करनेमें शानी न चास्य सर्वभूतेषु कश्चिदर्थव्यपाश्रयः ॥१८॥
 की निःस्वार्थता- न, एव, तस्य, कृतेन, अर्थः, न, अकृतेन, इह, कश्चन,
 का कथन । न, च, अस्य, सर्वभूतेषु, कश्चित्, अर्थव्यपाश्रयः ॥१८॥

क्योंकि-

इह	= इस संसारमें	(प्रयोजन)
तस्य	= उस (पुरुष) का	न = नहीं है
कृतेन	= किये जानेसे	च = तथा
एव	= भी (कोई)	अस्य = इसका
अर्थः	= प्रयोजन	सर्वभूतेषु = संपूर्ण भूतोंमें
न	= नहीं है (और)	कश्चित् = कुछ भी
अकृतेन	= न किये जानेसे	अर्थ- = { स्वार्थका
	(भी)	व्यपाश्रयः = { संबन्ध
कश्चन	= कोई	न = नहीं है

तो भी उसके द्वारा केवल लोकहितार्थ कर्म किये जाते हैं ।

अनासक्तभावसे तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर ।
 असक्तो ह्याचरन्कर्म परमाप्नोति पूरुषः ॥१९॥
 अनासक्त कर्तव्यकर्म करने के लिये आया असक्तो ह्याचरन्कर्म परमाप्नोति पूरुषः ॥१९॥
 और उससे तस्मात्, असक्तः, सततम्, कार्यम्, कर्म, समाचर,
 भगवत्-प्राप्ति । असक्तः, हि, आचरन्, कर्म, परम्, आप्नोति, पूरुषः ॥१९॥

तस्मात्	= इससे (त्)	कर्म	= कर्मका
असक्तः	= अनासक्त हुआ	समाचर	= { अच्छी प्रकार
सततम्	= निरन्तर		{ आचरण कर
कार्यम्	= कर्तव्य	हि	= क्योंकि

असक्तः = अनासक्त

आचरन् = करता हुआ

पूरुषः = पुरुष

परम् = परमात्माको

कर्म = कर्म

आप्नोति = प्राप्त होता है

जनकादिके कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः ।

दृष्टान्तसे कर्म
करनेके लिये
प्रेरणा ।

लोकसंग्रहमेवापि संपश्यन्कर्तुमर्हसि ॥२०॥

कर्मणा, एव, हि, संसिद्धिम्, आस्थिताः, जनकादयः,
लोकसंग्रहम्, एव, अपि, संपश्यन्, कर्तुम्, अर्हसि ॥२०॥

इस प्रकार—

जनकादयः =	{ जनकादि ज्ञानीजन भी (आसक्तिरहित)	हि = इसलिये (तथा) लोकसंग्रहम् = लोकसंग्रहको संपश्यन् = देखता हुआ अपि = भी (तूं) कर्तुम् = कर्म करनेको एव = ही अर्हसि = योग्य है
कर्मणा	= कर्मद्वारा	
एव	= ही	
संसिद्धिम्	= परमसिद्धिको	
आस्थिताः	= प्राप्त हुए हैं	

श्रेष्ठ पुरुषके
आचरण प्रमाण-
स्वरूप माने
जानेका कथन ।

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः ।

स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ॥२१॥

यत्, यत्, आचरति, श्रेष्ठः, तत्, तत्, एव, इतरः, जनः,
सः, यत्, प्रमाणम्, कुरुते, लोकः, तत्, अनुवर्तते ॥२१॥

क्योंकि—

श्रेष्ठः = श्रेष्ठ पुरुष
यत् = जो
यत् = जो

आचरति = आचरण करता है
इतरः = अन्य
जनः = पुरुष (भी)

तत्	= उस	प्रमाणम्	= प्रमाण
तत्	= उसके	कुरुते	= कर देता है
एव	= ही	लोकः	= लोग (भी)
	(अनुसार वर्तते हैं)	तत्	= उसके
सः	= वह पुरुष	अनुवर्तते	= { अनुसार वर्तते हैं*
यत्	= जो कुछ		

भगवान्‌के लिये न मे पार्थास्ति कर्तव्यं त्रिषु लोकेषु किंचन ।
 कोई कर्तव्य न
 होनेपर भी लोक नानवाप्तमवाप्तव्यं वर्त एव च कर्मणि ॥२२॥
 संग्रहार्थ कर्म न, मे, पार्थ, अस्ति, कर्तव्यम्, त्रिषु, लोकेषु, किंचन,
 करनेकी आव-
 श्यकता का न, अनवाप्तम्, अवाप्तव्यम्, वर्ते, एव, च, कर्मणि ॥२२॥
 निरूपण ।

इसलिये—

पार्थ	= हे अर्जुन (यद्यपि)	(किंचित् भी)
मे	= मुझे	
त्रिषु	= तीनों	अवाप्तव्यम् = { प्राप्त होने योग्य वस्तु
लोकेषु	= लोकोंमें	अनवाप्तम् = अप्राप्त
किंचन	= कुछ भी	न = नहीं है
कर्तव्यम्	= कर्तव्य	(तो भी मैं)
न	= नहीं	कर्मणि = कर्ममें
अस्ति	= है	एव = ही
च	= तथा	वर्ते = वर्तता हूँ

* यहाँ क्रियामें एकवचन है परन्तु लोक शब्द समुदायवाचक होनेसे
 भाषामें बहुवचनकी क्रिया लिखी गयी है ।

[„] यदि ह्यहं न वर्तेयं जातु कर्मण्यतन्द्रितः ।

मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः ॥

यदि, हि, अहम्, न, वर्तेयम्, जातु, कर्मणि, अतन्द्रितः,
मम, वर्त्म, अनुवर्तन्ते, मनुष्याः, पार्थ, सर्वशः ॥२३॥

हि	= क्योंकि	पार्थ	= हे अर्जुन
यदि	= यदि	सर्वशः	= सब प्रकारसे
अहम्	= मैं	मनुष्याः	= मनुष्य
अतन्द्रितः	= सावधान हुआ	मम	= मेरे
जातु	= कदाचित्	वर्त्म	= वर्तावके
कर्मणि	= कर्ममें	अनुवर्तन्ते =	{ अनुसार वर्तते हैं अर्थात् वर्तने लग जायं
न	= न		
वर्तेयम्	= वर्तूँ (तो)		

[„] उत्सीदेयुरिमे लोका न कुर्यां कर्म चेदहम् ।

संकरस्य च कर्ता स्यामुपहन्यामिमाः प्रजाः ॥

उत्सीदेयुः, इमे, लोकाः, न, कुर्याम्, कर्म, चेत्, अहम्,
संकरस्य, च, कर्ता, स्याम्, उपहन्याम्, इमाः, प्रजाः ॥२४॥

तथा—

चेत्	= यदि	इमे	= यह सब
अहम्	= मैं	लोकाः	= लोक
कर्म	= कर्म	उत्सीदेयुः	= भ्रष्ट हो जायं
न	= न	च	= और (मैं)
कुर्याम्	= करूँ (तो)	संकरस्य	= वर्णसंकरका

कर्ता	= करनेवाला	प्रजाः	= प्रजाको
स्याम्	= होऊं (तथा)	उपहन्याम्	= { हनन करूं अर्थात् मारने- वाला बनूं
इमाः	= इस सारी		

लोकसंग्रहार्थं सक्ताः कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वन्ति भारत ।

अनासक्तभावसे

कर्म करनेके

लिये प्रेरणा ।

कुर्याद्विद्वांस्तथासक्तश्चिकीर्षुर्लोकसंग्रहम् ॥२५॥

सक्ताः, कर्मणि, अविद्वांसः, यथा, कुर्वन्ति, भारत,

कुर्यात्, विद्वान्, तथा, असक्तः, चिकीर्षुः, लोकसंग्रहम् ॥२५॥

इसलिङ्गे-

भारत	= हे भारत	असक्तः	= अनासक्त हुआ
कर्मणि	= कर्ममें	विद्वान्	= विद्वान् (भी)
सक्ताः	= आसक्त हुए	लोक-	} = लोकशिक्षाको
अविद्वांसः	= अज्ञानीजन	संग्रहम्	
यथा	= जैसे	चिकीर्षुः	= चाहता हुआ
कुर्वन्ति	= कर्म करते हैं	कुर्यात्	= कर्म करे
तथा	= वैसे ही		

सकामी पुरुषों-

की बुद्धिमें भ्रम

उत्पन्न करनेका

निषेध ।

न बुद्धिभेदं जनयेदज्ञानां कर्मसङ्गिनाम् ।

जोषयेत्सर्वकर्माणि विद्वान्युक्तः समाचरन् ॥

न, बुद्धिभेदम्, जनयेत्, अज्ञानाम्, कर्मसङ्गिनाम्,

जोषयेत्, सर्वकर्माणि, विद्वान्, युक्तः, समाचरन् ॥२६॥

तथा-

विद्वान्	= ज्ञानी पुरुष	अज्ञानाम्	= अज्ञानियोंकी
	(को चाहिये कि)	बुद्धिभेदम्	= { बुद्धिमें भ्रम अर्थात् कर्मोंमें अश्रद्धा
कर्म-	= { कर्मोंमें आसक्ति- वाले		
सङ्गिनाम्			

न जनयेत् = उत्पन्न न करे
(किन्तु स्वयम्) समाचरन् = { अच्छी प्रकार
करता हुआ
युक्तः = { परमात्माके (उनसे भी
= स्वरूपमें स्थित (वैसे ही)
हुआ (और)
सर्वकर्माणि = सब कर्मोंको जोषयेत् = करावे

मूढ़ पुरुषका

लक्षण ।

प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः ।

अहंकारविमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते ॥२७॥

प्रकृतेः, क्रियमाणानि, गुणैः, कर्माणि, सर्वशः,
अहंकारविमूढात्मा, कर्ता, अहम्, इति, मन्यते ॥२७॥

और हे अर्जुन ! वास्तवमें—

सर्वशः	= संपूर्ण	अहंकार- विमूढात्मा	= { अहंकारसे मोहित हुए अन्तःकरण- वाला पुरुष
कर्माणि	= कर्म		
प्रकृतेः	= प्रकृतिके	अहम्	= मैं
गुणैः	= गुणोंद्वारा	कर्ता	= कर्ता हूँ
क्रियमाणानि	= किये हुए हैं	इति	= ऐसे
	(तो भी)	मन्यते	= मान लेता है

तत्त्ववेत्ता पुरुष-

का लक्षण ।

तत्त्ववित्तु महाबाहो गुणकर्मविभागयोः ।

गुणा गुणेषु वर्तन्त इति मत्वा न सज्जते ॥२८॥

तत्त्ववित्, तु, महाबाहो, गुणकर्मविभागयोः,
गुणाः, गुणेषु, वर्तन्ते, इति, मत्वा, न, सज्जते ॥२८॥

तु = परन्तु । महाबाहो = हे महाबाहो

गुणकर्म- विभागयोः	= { गुणविभाग और कर्म- विभागके*	गुणाः	= संपूर्ण गुण
		गुणेषु	= गुणोंमें
		वर्तन्ते	= वर्तते हैं
तत्त्ववित्	= { तत्त्वको† जाननेवाला	इति	= ऐसे
		मत्वा	= मानकर
		न	= नहीं
	(ज्ञानी पुरुष)	सज्जते	= आसक्त होता है

अज्ञानियोंको
कर्मोंसे चलाय-
मान करनेका
निषेध ।

प्रकृतेर्गुणसंमूढाः सज्जन्ते गुणकर्मसु ।
तानकृत्स्नविदो मन्दान्कृत्स्नविन्न विचालयेत् ॥
प्रकृतेः, गुणसंमूढाः, सज्जन्ते, गुणकर्मसु,
तान्, अकृत्स्नविदः, मन्दान्, कृत्स्नवित्, न, विचालयेत् ॥२९॥

और—

प्रकृतेः	= प्रकृतिके	मन्दान्	= मूर्खोंको
गुण- संमूढाः	= { गुणोंसे मोहित हुए पुरुष	कृत्स्नवित्	= { अच्छी प्रकार जाननेवाला
गुणकर्मसु	= गुण और कर्मोंमें		
सज्जन्ते	= आसक्त होते हैं		(ज्ञानी पुरुष)
तान्	= उन		
अकृत्स्न- विदः	= { अच्छी प्रकार न समझनेवाले	न विचालयेत्	= { चलायमान न करे

* त्रिगुणात्मक मायाके कार्यरूप पांच महाभूत और मन, बुद्धि, अहंकार तथा पांच ज्ञानेन्द्रियां, पांच कर्मेन्द्रियां और शब्दादि पांच विषय इन सबके समुदायका नाम 'गुणविभाग' है और इनकी परस्परकी चेष्टाओंका नाम 'कर्मविभाग' है ।

† उपरोक्त 'गुणविभाग' और 'कर्मविभाग' से आत्माको पृथक् अर्थात् निर्लेप जानना ही इनका तत्त्व जानना है ।

संपूर्ण कर्म
भगवान्‌में अर्पण
करके युद्ध करने-
की आज्ञा ।

मयि सर्वाणि कर्माणि संन्यस्याध्यात्मचेतसा ।

निराशीर्निर्ममो भूत्वा युध्यस्व विगतज्वरः ॥३०॥

मयि, सर्वाणि, कर्माणि, संन्यस्य, अध्यात्मचेतसा,

निराशीः, निर्ममः, भूत्वा, युध्यस्व, विगतज्वरः ॥३०॥

इसलिये हे अर्जुन ! तू—

अध्यात्म-	= { ध्याननिष्ठ	(और)
चेतसा	= { चित्तसे	निर्ममः = ममतारहित
सर्वाणि	= संपूर्ण	भूत्वा = होकर
कर्माणि	= कर्मोंको	
मयि	= मुझमें	विगतज्वरः = { सन्तापरहित
संन्यस्य	= समर्पण करके	{ (हुआ)
निराशीः	= आशारहित	युध्यस्व = युद्ध कर

भगवत्सिद्धान्त

ये मे मतमिदं नित्यमनुतिष्ठन्ति मानवाः ।

के अनुकूल
वर्तनेसे मुक्ति ।

श्रद्धावन्तोऽनसूयन्तो मुच्यन्ते तेऽपि कर्मभिः ॥३१॥

ये, मे, मतम्, इदम्, नित्यम्, अनुतिष्ठन्ति, मानवाः,

श्रद्धावन्तः, अनसूयन्तः, मुच्यन्ते, ते, अपि, कर्मभिः ॥३१॥

और हे अर्जुन—

ये	= जो कोई	नित्यम्	= सदा (ही)
अपि	= भी	मे	= मेरे
मानवाः	= मनुष्य	इदम्	= इस
अनसूयन्तः	= { दोषबुद्धिसे	मतम्	= मतके
	{ रहित	अनुतिष्ठन्ति	= { अनुसार
	(और)		{ वर्तते हैं
श्रद्धावन्तः	= श्रद्धासे युक्त हुए	ते	= वे पुरुष

कर्मभिः = संपूर्ण कर्मोंसे | मुच्यन्ते = छूट जाते हैं

भगवत्सिद्धान्त के अनुकूल न ये त्वेतदभ्यसूयन्तो नानुतिष्ठन्ति मे मतम्।

वर्तनेसे अयो- सर्वज्ञानविमूढांस्तान्निद्वि नष्टानचेतसः ॥३२॥

गति । ये, तु, एतत्, अभ्यसूयन्तः, न, अनुतिष्ठन्ति, मे, मतम्,
सर्वज्ञानविमूढान्, तान्, विद्वि, नष्टान्, अचेतसः ॥३२॥

तु	= और	तान्	= उन
ये	= जो	सर्वज्ञान-	{ संपूर्ण ज्ञानोंमें मोहित चित्तवालोंको
अभ्यसूयन्तः	= दोषदृष्टिवाले	विमूढान्	
अचेतसः	= मूर्खलोग		(तूँ)
एतत्	= इस		
मे	= मेरे		
मतम्	= मतके	नष्टान्	= { कल्याणसे भ्रष्ट हुए (ही)
न	= { अनुसार	विद्वि	= जान
अनुतिष्ठन्ति	= { नहींवर्ततेहैं		

स्वाभाविक कर्मों सद्दशं चेष्टते स्वस्याः प्रकृतेर्ज्ञानवानपि ।

की चेष्टामें प्रकृतिं यान्ति भूतानि निग्रहः किं करिष्यति ॥३३॥

प्रकृति प्रवृत्ति । सद्दशम्, चेष्टते, स्वस्याः, प्रकृतेः, ज्ञानवान्, अपि,
प्रकृतिम्, यान्ति, भूतानि, निग्रहः, किम्, करिष्यति ॥३३॥

क्योंकि—

भूतानि	= सभी प्राणी	अर्थात् अपने स्वभावसे
प्रकृतिम्	= प्रकृतिको	परवश हुए कर्म करते हैं
यान्ति	= प्राप्त होते हैं	ज्ञानवान् = ज्ञानवान्

अपि	= भी	(फिर इसमें किसीका)
स्वस्याः	= अपनी	निग्रहः = हठ
प्रकृतेः	= प्रकृतिके	किम् = क्या
सदृशम्	= अनुसार	करिष्यति = करेगा
चेष्टते	= चेष्टा करता है	

रागद्वेषके वशमें इन्द्रियस्येन्द्रियस्यार्थे रागद्वेषौ व्यवस्थितौ ।

होनेका निषेध । तयोर्न वशमागच्छेत्तौ ह्यस्य परिपन्थिनौ ॥३४॥

इन्द्रियस्य, इन्द्रियस्य, अर्थे, रागद्वेषौ, व्यवस्थितौ,
तयोः, न, वशम्, आगच्छेत्, तौ, हि, अस्य, परिपन्थिनौ ॥३४॥

इसलिये मनुष्यको चाहिये कि-

इन्द्रियस्य	= इन्द्रिय	वशम्	= वशमें
इन्द्रियस्य	= इन्द्रियके	न	= नहीं
अर्थे	= अर्थमें	आगच्छेत्	= होवे
	अर्थात् सभी	हि	= क्योंकि
	इन्द्रियोंके	अस्य	= इसके
	भागोंमें	तौ	= वे दोनों (ही)

व्यवस्थितौ = स्थित (जो)

रागद्वेषौ = राग और द्वेष हैं

तयोः = उन दोनोंके

परिपन्थिनौ = { कल्याण-
मार्गमें विघ्न
करनेवाले
महान् शत्रु हैं

स्वधर्म पालनसे श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात् ।

कल्याण और स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः ॥३५॥

परधर्मसे हानि ।

श्रेयान्, स्वधर्मः, विगुणः, परधर्मात्, स्वनुष्ठितात्,

स्वधर्मे, निधनम्, श्रेयः, परधर्मः, भयावहः ॥३५॥

इसलिये उन दोनोंको जीतकर सावधान हुआ स्वधर्मका आचरण करे क्योंकि—

स्वनुष्ठितात्	= { अच्छी प्रकार आचरण किये हुए	श्रेयान्	= अति उत्तम है
परधर्मात्	= दूसरेके धर्मसे	स्वधर्मे	= अपने धर्ममें
विगुणः	= गुणरहित	निधनम्	= मरना (भी)
(अपि)	= भी	श्रेयः	= कल्याणकारक है (और)
स्वधर्मः	= अपना धर्म	परधर्मः	= दूसरेका धर्म
		भयावहः	= भयकोदेनेवाला है

अर्जुन उवाच

बलात्कारसे अथ केन प्रयुक्तोऽयं पापं चरति पूरुषः ।

पाप करानेमें अनिच्छन्नपि वाष्णैथ बलादिव नियोजितः ॥

कौन हेतु है इस
विषयमें अर्जुन-
का प्रश्न ।

अथ, केन, प्रयुक्तः, अयम्, पापम्, चरति, पूरुषः,

अनिच्छन्, अपि, वाष्णैथ, बलात्, इव, नियोजितः ॥३६॥

इसपर अर्जुनने पूछा कि—

वाष्णैथ	= हे कृष्ण	अनिच्छन्	= न चाहता हुआ
अथ	= फिर	अपि	= भी
अयम्	= यह	केन	= किससे
पूरुषः	= पुरुष	प्रयुक्तः	= प्रेरा हुआ
बलात्	= बलात्कारसे	पापम्	= पापका
नियोजितः	= लगाये हुएके	चरति	= आचरण करता है
इव	= सदृश		

श्रीभगवानुवाच.

बलात्कारसे
पाप कराने में
कामरूप हेतुका
कथन ।

काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः ।

महाशनो महापाप्मा विद्ध्येनमिह वैरिणम् ॥३७॥

कामः, एषः, क्रोधः, एषः, रजोगुणसमुद्भवः,
महाशनः, महापाप्मा, विद्धि, एनम्, इह, वैरिणम् ॥३७॥

इस प्रकार अर्जुनके पूछनेपर श्रीकृष्ण महाराज बोले हे अर्जुन-

रजोगुण- { रजोगुणसे
समुद्भवः { उत्पन्न हुआ
एषः = यह
कामः = काम (ही)
क्रोधः = क्रोध है
एषः = यह (ही)

महाशनः = { महाअशन
अर्थात् अग्निके
सदृश भोगोंसे
न तृप्त होनेवाला

(और)
महापाप्मा = बड़ा पापी है
इह = इस विषयमें
एनम् = इसको (ही)
(तूं)
वैरिणम् = बैरी
विद्धि = जान

कामरूप बैरीसे
ज्ञान ढका हुआ
है इस विषयका
दृष्टान्तों सहित
कथन ।

धूमेनाव्रियते वह्निर्यथादर्शो मलेन च ।

यथोल्बेनावृतो गर्भस्तथा तेनेदमावृतम् ॥३८॥

धूमेन, आव्रियते, वह्निः, यथा, आदर्शः, मलेन, च,
यथा, उल्बेन, आवृतः, गर्भः, तथा, तेन, इदम्, आवृतम् ॥३८॥

यथा = जैसे
धूमेन = धूँसे
वह्निः = अग्नि
च = और

मलेन = मलसे
आदर्शः = दर्पण
आव्रियते = ढका जाता है
(तथा)

यथा	= जैसे	तथा	= वैसे ही
उत्बेन	= जेरसे	तेन	= उस कामके द्वारा
गर्भः	= गर्भ	इदम्	= यह (ज्ञान)
आवृतः	= ढका हुआ है	आवृतम्	= ढका हुआ है

[„] आवृतं ज्ञानमेतेन ज्ञानिनो नित्यवैरिणा ।

कामरूपेण कौन्तेय दुष्पूरेणानलेन च ॥३६॥

आवृतम्, ज्ञानम्, एतेन, ज्ञानिनः, नित्यवैरिणा,
कामरूपेण, कौन्तेय, दुष्पूरेण, अनलेन, च ॥३९॥

च	= और	कामरूपेण	= कामरूप
कौन्तेय	= हे अर्जुन	ज्ञानिनः	= ज्ञानियोंके
एतेन	= इस	नित्यवैरिणा	= नित्य बैरीसे
अनलेन	= अग्नि (सदृश)	ज्ञानम्	= ज्ञान
दुष्पूरेण	= न पूर्ण होनेवाले	आवृतम्	= ढका हुआ है

कामके वास- इन्द्रियाणि मनो बुद्धिरस्याधिष्ठानमुच्यते ।

स्थानोंका कथन।

एतैर्विमोहयत्येष ज्ञानमावृत्य देहिनम् ॥४०॥

इन्द्रियाणि, मनः, बुद्धिः, अस्य, अधिष्ठानम्, उच्यते,
एतैः, विमोहयति, एषः, ज्ञानम्, आवृत्य, देहिनम् ॥४०॥

तथा-

इन्द्रियाणि	= इन्द्रियां	अधिष्ठानम्	= वासस्थान
मनः	= मन (और)	उच्यते	= कहे जाते हैं
बुद्धिः	= बुद्धि		(और)
अस्य	= इसके	एषः	= यह (काम)

एतैः	= { इन (मन, बुद्धि और इन्द्रियों) द्वारा ही	आवृत्य	= { आच्छादित करके (इस)
ज्ञानम्	= ज्ञानको	देहिनम्	= जीवात्माको
		विमोहयति	= { मोहित करता है

इन्द्रियोंको वशमें
करके काम को
मारनेकी आज्ञा।

तस्मात्त्वमिन्द्रियाण्यादौ नियम्य भरतर्षभ ।

पाप्मानं प्रजहि ह्येनं ज्ञानविज्ञाननाशनम् ॥४१॥

तस्मात्, त्वम्, इन्द्रियाणि, आदौ, नियम्य, भरतर्षभ,
पाप्मानम्, प्रजहि, हि, एनम्, ज्ञानविज्ञाननाशनम् ॥४१॥

तस्मात्	= इसलिये	ज्ञानविज्ञान-	= { ज्ञान और विज्ञानके
भरतर्षभ	= हे अर्जुन	नाशनम्	= { नाश करने- वाले
त्वम्	= तू	एनम्	= इस (काम)
आदौ	= पहिले	पाप्मानम्	= पापीको
इन्द्रियाणि	= इन्द्रियोंको	हि	= निश्चयपूर्वक
नियम्य	= वशमें करके	प्रजहि	= मार

इन्द्रिय, मन इन्द्रियाणि पराण्याहुरिन्द्रियेभ्यः परं मनः ।

और बुद्धिसे भी
आत्माकी अति
श्रेष्ठताका कथन।

मनसस्तु परा बुद्धिर्यो बुद्धेः परतस्तु सः ॥४२॥

इन्द्रियाणि, पराणि, आहुः, इन्द्रियेभ्यः, परम्, मनः,
मनसः, तु, परा, बुद्धिः, यः, बुद्धेः, परतः, तु, सः ॥४२॥

और यदि तू समझे कि इन्द्रियोंको रोककर कामरूप वैरीको
मारनेकी मेरी शक्ति नहीं है तो तेरी यह भूल है क्योंकि इस शरीरसे तो-

इन्द्रियाणि	= इन्द्रियोंको	पराणि	{ परे (श्रेष्ठ बलवान् और सूक्ष्म)
-------------	----------------	-------	--

आहुः	= कहते हैं (और)	परा	= परे
इन्द्रियेभ्यः	= इन्द्रियोंसे	बुद्धिः	= बुद्धि है
परम्	= परे	तु	= और
मनः	= मन है	यः	= जो
तु	= और	बुद्धेः	= बुद्धिसे (भी)
मनसः	= मनसे	परतः	= अत्यन्त परे है
		सः	= वह (आत्मा) है

बुद्धिसे परे एवं बुद्धेः परं बुद्ध्वा संस्तभ्यात्मानमात्मना ।
 आत्माको जान- कर और मनको वशमें करके एवम्, बुद्धेः, परम्, बुद्ध्वा, संस्तभ्य, आत्मानम्, आत्मना,
 कामको मारने- जहि, शत्रुम्, महाबाहो, कामरूपम्, दुरासदम् ॥४३॥
 की आज्ञा ।

एवम्	= इस प्रकार	आत्मानम्	= मनको
बुद्धेः	= बुद्धिसे	संस्तभ्य	= वशमें करके
परम्	= परे अर्थात् सूक्ष्म तथा सब प्रकार बलवान् और श्रेष्ठ अपने आत्माको	महाबाहो	= हे महाबाहो (अपनी शक्तिको समझकर इस)
बुद्ध्वा	= जानकर (और)	दुरासदम्	= दुर्जय
आत्मना	= बुद्धिके द्वारा	कामरूपम्	= कामरूप
		शत्रुम्	= शत्रुको
		जहि	= मार

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां
 योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे कर्मयोगो नाम

तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

अथ चतुर्थोऽध्यायः

प्रधानविषय-१ से १८ तक सगुण भगवान्का प्रभाव और निष्काम कर्मयोगका विषय, (१९-२३) योगी महात्मा पुरुषोंके आचरण और उनकी महिमा, (२४-३२) फलसहित पृथक् पृथक् यशोंका कथन, (३३-४२) ज्ञानकी महिमा ।

श्रीभगवानुवाच

योगकी परम्परा इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम् ।
और बहुत काल विवस्वान्मनवे प्राह मनुर्इक्ष्वाकवेऽब्रवीत् ॥१॥
उसके लोप हो

ज्ञानका कथन इमम्, विवस्वते, योगम्, प्रोक्तवान्, अहम्, अव्ययम्,
विवस्वान्, मनवे, प्राह, मनुः, इक्ष्वाकवे, अब्रवीत् ॥१॥

इसके उपरान्त श्रीकृष्ण महाराज बोले हे अर्जुन—

अहम् = मैंने	(अपने पुत्र)
इमम् = इस	मनवे = मनुके प्रति
अव्ययम् = अविनाशी	प्राह = कहा (और)
योगम् = योगको	मनुः = मनुने
(कल्पके आदिमें)	(अपने पुत्र)
विवस्वते = सूर्यके प्रति	इक्ष्वाकवे = { राजा इक्ष्वाकुके
प्रोक्तवान् = कहा था (और)	{ प्रति
विवस्वान् = सूर्यने	अब्रवीत् = कहा

[„] एवं परम्पराप्राप्तमिमं राजर्षयो विदुः ।

स कालेनेह महता योगो नष्टः परंतप ॥२॥

एवम्, परम्पराप्राप्तम्, इमम्, राजर्षयः, विदुः,
सः, कालेन, इह, महता, योगः, नष्टः, परंतप ॥२॥

एवम्	= इस प्रकार	सः	= वह
परम्परा-	= { परम्परासे प्राप्त	योगः	= योग
प्राप्तम्	= { हुआ	महता	= बहुत
इमम्	= इस (योग) को	कालेन	= कालसे
राजर्षयः	= राजर्षियोंने	इह	= { इस (पृथिवी) लोकमें
विदुः	= जाना	नष्टः	= { लोप (प्रायः) हो गया था
	(परन्तु)		
परंतप	= हे अर्जुन		

पुरातन योगकी
प्रशंसा ।

स एवायं मया तेऽद्य योगः प्रोक्तः पुरातनः ।

भक्तोऽसि मे सखा चेति रहस्यं ह्येतदुत्तमम् ॥३॥

सः, एव, अयम्, मया, ते, अद्य, योगः, प्रोक्तः, पुरातनः,

भक्तः, असि, मे, सखा, च, इति, रहस्यम्, हि, एतत्, उत्तमम् ३

सः	= वह	भक्तः	= भक्त
एव	= ही	च	= और
अयम्	= यह	सखा	= प्रिय सखा
पुरातनः	= पुरातन	असि	= है
योगः	= योग	इति	= इसलिये (तथा)
अद्य	= अब	एतत्	= यह (योग)
मया	= मैंने	उत्तमम्	= बहुत उत्तम
ते	= तेरे लिये		(और)
प्रोक्तः	= वर्णन किया है	रहस्यम्	= { रहस्य अर्थात् अति मर्मका विषय है
हि	= क्योंकि (तू)		
मे	= मेरा		

अर्जुन उवाच

श्रीकृष्णभगवान् अपरं भवतो जन्म परं जन्म विवस्वतः ।
का जन्म आधु-
निक मानकर कथमेतद्विजानीयां त्वमादौ प्रोक्तवानिति ॥४॥

अर्जुनका प्रश्न अपरम्, भवतः, जन्म, परम्, जन्म, विवस्वतः,
करना । कथम्, एतत्, विजानीयाम्, त्वम्, आदौ, प्रोक्तवान्, इति ॥४॥

इस प्रकार भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र महाराजके वचन सुनकर
अर्जुनने पूछा हे भगवन्—

भवतः	= आपका	एतत्	= इस योगको
जन्म	= जन्म (तो)		(कल्पके)
अपरम्	= { आधुनिक अर्थात् अब हुआ है (और)	आदौ	= आदिमें
विवस्वतः	= सूर्यका	त्वम्	= आपने
जन्म	= जन्म	प्रोक्तवान्	= कहा था
परम्	= बहुत पुराना है (इसलिये)	इति	= यह (मैं)
		कथम्	= कैसे
		विजानीयाम्	= जानूं

श्रीभगवानुवाच

श्रीभगवान् बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन ।
द्वारा अपने और
अर्जुनके बहुत तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परंतप ॥५॥

जन्म व्यतीत बहूनि, मे, व्यतीतानि, जन्मानि, तव, च, अर्जुन,
होनेका कथन । तानि, अहम्, वेद, सर्वाणि, न, त्वम्, वेत्थ, परंतप ॥५॥

इसपर श्रीकृष्ण महाराज बोले—

अर्जुन	= हे अर्जुन	च	= और
मे	= मेरे	तव	= तेरे

बहूनि	= बहुतसे	सर्वाणि	= सबको
जन्मानि	= जन्म	त्वम्	= तू
व्यतीतानि	= हो चुके हैं (परन्तु)	न	= नहीं
परंतप	= हे परंतप	वेत्थ	= जानता है (और)
तानि	= उन	अहम्	= मैं
		वेद	= जानता हूँ

श्रीभगवान्‌के जन्मकी अलौ-
किकता । अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन् ।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय संभवाम्यात्ममायया ॥६॥

अजः, अपि, सन्, अव्ययात्मा, भूतानाम्, ईश्वरः, अपि, सन्,
प्रकृतिम्, स्वाम्, अधिष्ठाय, संभवामि, आत्ममायया ॥६॥

तथा मेरा जन्म प्राकृत मनुष्योंके सदृश नहीं है—

(मैं)	ईश्वरः	= ईश्वर
अव्ययात्मा = { अविनाशी-	सन्	= होनेपर
स्वरूप	अपि	= भी
अजः = अजन्मा	स्वाम्	= अपनी
सन् = होनेपर	प्रकृतिम्	= प्रकृतिको
अपि = भी (तथा)	अधिष्ठाय	= आधीन करके
भूतानाम् = { सब भूत-	आत्ममायया	= योगमायासे
प्राणियोंका	संभवामि	= प्रकट होता हूँ

श्रीभगवान्‌के अवतार लेनेके समयका कथन । यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥७॥

यदा, यदा, हि, धर्मस्य, ग्लानिः, भवति, भारत,
अभ्युत्थानम्, अधर्मस्य, तदा, आत्मानम्, सृजामि, अहम् ॥७॥

भारत	= हे भारत	भवति	= होती है
यदा	= जब	तदा	= तब तब
यदा	= जब	हि	= ही
धर्मस्य	= धर्मकी	अहम्	= मैं
ग्लानिः	= हानि (और)	आत्मानम्	= अपने रूपको
अधर्मस्य	= अधर्मकी	सृजामि	= { रचता हूँ अर्थात् प्रकट करता हूँ
अभ्युत्थानम्	= वृद्धि		

श्रीभगवान्‌के अवतार लेनेके कारणका कथन । परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् । धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे ॥ ८ ॥

परित्राणाय, साधूनाम्, विनाशाय, च, दुष्कृताम्,
धर्मसंस्थापनार्थाय, संभवामि, युगे, युगे ॥ ८ ॥

क्योंकि—

साधूनाम्	= साधु पुरुषोंका	विनाशाय	= { नाश करनेके लिये (तथा)
परित्राणाय	= { उद्धार करनेके लिये	धर्मसंस्थाप- नार्थाय	= { धर्म स्थापन करनेके लिये
च	= और	युगे	= युग
दुष्कृताम्	= { दूषित कर्म करनेवालोंका	युगे	= युगमें
		संभवामि	= प्रकट होता हूँ

श्रीभगवान्‌के जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वतः ।
जन्म कर्मोंको त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन ॥ ९ ॥
दिव्य ज्ञाननेका जन्म, कर्म, च, मे, दिव्यम्, एवम्, यः, वेत्ति, तत्त्वतः,
फल । त्यक्त्वा, देहम्, पुनः, जन्म, न, एति, माम्, एति, सः, अर्जुन ॥ ९ ॥

इसलिये-

अर्जुन	= हे अर्जुन	सः	= वह
मे	= मेरा (वह)	देहम्	= शरीरको
जन्म	= जन्म	त्यक्त्वा	= त्यागकर
च	= और	पुनः	= फिर
कर्म	= कर्म	जन्म	= जन्मको
दिव्यम्	= { दिव्य अर्थात् अलौकिक है	न	= नहीं
एवम्	= इस प्रकार	एति	= प्राप्त होता है (किन्तु)
यः	= जो पुरुष	माम्	= मुझे (ही)
तत्त्वतः	= तत्त्वसे*	एति	= प्राप्त होता है
वेत्ति	= जानता है		

श्रीभगवान्को
प्राप्त हुए पुरुषों-
के लक्षण ।

वीतरागभयक्रोधा मन्मया मामुपाश्रिताः ।

बहवो ज्ञानतपसा पूता मद्भावमागताः ॥१०॥

वीतरागभयक्रोधाः, मन्मयाः, माम्, उपाश्रिताः,

बहवः, ज्ञानतपसा, पूताः, मद्भावम्, आगताः ॥ १० ॥

* सर्वशक्तिमान् सच्चिदानन्दधन परमात्मा अज अविनाशी और सर्व-
भूतोंके परम गति तथा परम आश्रय हैं, वे केवल धर्मको स्थापन करने और
संसारका उद्धार करनेके लिये ही अपनी योगमायासे सगुणरूप होकर प्रकट
होते हैं इसलिये परमेश्वरके समान सुहृद् प्रेमी और पतितपावन दूसरा
कोई नहीं है ऐसा समझकर जो पुरुष परमेश्वरका अनन्य प्रेमसे निरन्तर चिन्तन
करता हुआ आसक्तिरहित संसारमें वर्तता है वही उनको तत्त्वसे जानता है ।

और हे अर्जुन पहिले भी-

वीतराग-	= { राग भय और	उपाश्रिताः	= शरण हुए
भयक्रोधाः	= { क्रोधसे रहित	बहवः	= बहुतसे पुरुष
	{ अनन्यभावसे	ज्ञानतपसा	= ज्ञानरूप तपसे
मन्मयाः	= { मेरेमें स्थिति-	पूताः	= पवित्र हुए
	{ वाले	मद्भावम्	= मेरे स्वरूपको
माम्	= मेरे	आगताः	= प्राप्त हो चुके हैं

श्रीभगवान्को ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम् ।

भजने वाले मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः ॥११॥
पुरुषोंके अनुकूल

भगवान्के वर्ताव ये, यथा, माम्, प्रपद्यन्ते, तान्, तथा, एव, भजामि, अहम्,
का कथन । मम, वर्त्म, अनुवर्तन्ते, मनुष्याः, पार्थ, सर्वशः ॥ ११ ॥

क्योंकि-

पार्थ	= हे अर्जुन	भजामि	= भजता हूँ
ये	= जो		(इस रहस्यको
माम्	= मेरेको		जानकर ही)
यथा	= जैसे	मनुष्याः	= { बुद्धिमान्
प्रपद्यन्ते	= भजते हैं		{ मनुष्यगण
अहम्	= मैं (भी)	सर्वशः	= सब प्रकारसे
तान्	= उनको	मम	= मेरे
तथा	= वैसे	वर्त्म	= मार्गके
एव	= ही	अनुवर्तन्ते	= अनुसार वर्तते हैं

सकामी पुरुषों- काङ्क्षन्तः कर्मणां सिद्धिं यजन्त इह देवताः ।

को देवताओंके क्षिप्रं हि मानुषे लोके सिद्धिर्भवति कर्मजा ॥१२॥
पूजनसे शीघ्र

फल प्राप्तिका काङ्क्षन्तः, कर्मणाम्, सिद्धिम्, यजन्ते, इह, देवताः,
कथन । क्षिप्रम्, हि, मानुषे, लोके, सिद्धिः, भवति, कर्मजा ॥१२॥

और जो मेरेको तत्त्वसे नहीं जानते हैं वे पुरुष—

इह	= इस		(और उनके)
मानुषे	= मनुष्य		
लोके	= लोकमें	कर्मजा	= { कर्मोंसे उत्पन्न हुई
कर्मणाम्	= कर्मोंके	सिद्धिः	= सिद्धि (भी)
सिद्धिम्	= फलको	क्षिप्रम्	= शीघ्र
काङ्क्षन्तः	= चाहते हुए	हि	= ही
देवताः	= देवताओंको	भवति	= होती है
यजन्ते	= पूजते हैं		

परन्तु उनको मेरी प्राप्ति नहीं होती इसलिये तू मेरेको ही सब प्रकारसे भज ।

चारों वर्णोंकी
रचना करनेमें
भगवान् के
अकर्तापन का
कथन ।

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः ।

तस्य कर्तारमपि मां विद्ध्यकर्तारमव्ययम् ॥१३॥

चातुर्वर्ण्यम्, मया, सृष्टम्, गुणकर्मविभागशः,

तस्य, कर्तारम्, अपि, माम्, विद्ध्य, अकर्तारम्, अव्ययम् ॥१३॥

तथा हे अर्जुन—

गुणकर्म-	= { गुण और कर्मों-	कर्तारम्	= कर्ताको
विभागशः	= { के विभागसे	अपि	= भी
चातुर्वर्ण्यम् =	{ ब्राह्मण क्षत्रिय	माम्	= मुझ
	{ वैश्य और शूद्र	अव्ययम् =	{ अविनाशी परमेश्वरको (तू)
मया	= मेरे द्वारा	अकर्तारम् =	अकर्ता (ही)
सृष्टम्	= रचे गये हैं	विद्ध्य	= जान
तस्य	= उनके		

श्रीभगवान्के न मां कर्माणि लिम्पन्ति न मे कर्मफले स्पृहा ।
 कर्मोंकी दिव्य- इति मां योऽभिजानाति कर्मभिर्न स बध्यते ॥
 ता और उनके
 जाननेका फल । न, माम्, कर्माणि, लिम्पन्ति, न, मे, कर्मफले, स्पृहा,
 इति, माम्, यः, अभिजानाति, कर्मभिः, न, सः, बध्यते ॥१४॥

क्योंकि—

कर्मफले	= कर्मोंके फलमें	इति	= इस प्रकार
मे	= मेरी	यः	= जो
स्पृहा	= स्पृहा	माम्	= मेरेको
न	= नहीं है (इसलिये)	अभिजानाति	= { तत्त्वसे जानता है
माम्	= मेरेको	सः	= वह (भी)
कर्माणि	= कर्म	कर्मभिः	= कर्मोंसे
न	= { लिपायमान	न	= नहीं
लिम्पन्ति	= { नहीं करते	बध्यते	= बंधता है

पूर्वज मुमुक्षु एवं ज्ञात्वा कृतं कर्म पूर्वैरपि मुमुक्षुभिः ।
 पुरुषोंकी भांति कुरु कर्मैव तस्मात्त्वं पूर्वैः पूर्वतरं कृतम् ॥१५॥
 निष्काम कर्म
 करनेके लिये एवम्, ज्ञात्वा, कृतम्, कर्म, पूर्वैः, अपि, मुमुक्षुभिः,
 आज्ञा । कुरु, कर्म, एव, तस्मात्, त्वम्, पूर्वैः, पूर्वतरम्, कृतम् ॥१५॥

तथा—

पूर्वैः	= पहिले होनेवाले	ज्ञात्वा	= जानकर (ही)
मुमुक्षुभिः	= { मुमुक्षु पुरुषों- द्वारा	कर्म	= कर्म
अपि	= भी	कृतम्	= किया गया है
एवम्	= इस प्रकार	तस्मात्	= इससे
		त्वम्	= तू (भी)

पूर्वैः	= पूर्वजोंद्वारा	कर्म	= कर्मको
पूर्वतरम्	} = सदासे किये हुए	एव	= ही
कृतम्		कुरु	= कर

कर्म और अकर्म को तत्त्वसे जाननेका फल। किं कर्म किमकर्मैति कवयोऽप्यत्र मोहिताः ।
तत्ते कर्म प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात् ॥

किम्, कर्म, किम्, अकर्म, इति, कवयः, अपि, अत्र, मोहिताः,
तत्, ते, कर्म, प्रवक्ष्यामि, यत्, ज्ञात्वा, मोक्ष्यसे, अशुभात् ॥ १६ ॥

परन्तु—

कर्म	= कर्म	तत्	= वह
किम्	= क्या है (और)	कर्म	= { कर्म अर्थात्
अकर्म	= अकर्म		{ कर्मोंका तत्त्व
किम्	= क्या है	ते	= तेरे लिये
इति	= ऐसे	प्रवक्ष्यामि	= { अच्छी प्रकार
अत्र	= इस विषयमें		{ कहूंगा (कि)
कवयः	= बुद्धिमान् पुरुष	यत्	= जिसको
अपि	= भी	ज्ञात्वा	= जानकर (तूं)
मोहिताः	= मोहित हैं	अशुभात्	= { अशुभ अर्थात्
	(इसलिये मैं)		{ संसारबन्धनसे
		मोक्ष्यसे	= छूट जायगा

कर्म विकर्म और अकर्मके स्वरूप-को जानने के लिये प्रेरणा। कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मणः ।
अकर्मणश्च बोद्धव्यं गहना कर्मणो गतिः ॥

कर्मणः, हि, अपि, बोद्धव्यम्, बोद्धव्यम्, च, विकर्मणः,
अकर्मणः, च, बोद्धव्यम्, गहना, कर्मणः, गतिः ॥ १७ ॥

कर्मणः = कर्मका स्वरूप | अपि = भी

बोद्धव्यम् = जानना चाहिये

च = और

अकर्मणः = { अकर्मका
स्वरूप (भी)

बोद्धव्यम् = जानना चाहिये

च = तथा

विकर्मणः = { निषिद्ध कर्मका
स्वरूप (भी)

बोद्धव्यम् = जानना चाहिये

हि = क्योंकि

कर्मणः = कर्मकी

गतिः = गति

गहना = गहन है

कर्ममें अकर्म कर्मण्यकर्म यः पश्येदकर्मणि च कर्म यः ।

और अकर्म में स बुद्धिमान्मनुष्येषु स युक्तः कृत्स्नकर्मकृत् ॥

कर्मको तत्त्वसे

जाननेका फल । कर्मणि, अकर्म, यः, पश्येत्, अकर्मणि, च, कर्म, यः,

सः, बुद्धिमान्, मनुष्येषु, सः, युक्तः, कृत्स्नकर्मकृत् ॥१८॥

यः = जो पुरुष

कर्मणि = { कर्ममें अर्थात्
अहंकाररहित की
हुई संपूर्ण चेष्टाओंमें

अकर्म = { अकर्म अर्थात्
वास्तवमें उनका
न होनापना

पश्येत् = देखे

च = और

यः = जो पुरुष

अकर्मणि = { अकर्ममें अर्थात्
अज्ञानी पुरुषद्वारा
किये हुए संपूर्ण
क्रियाओंके त्यागमें

(भी)

कर्म = { कर्मको अर्थात्
त्यागरूप क्रियाको
(देखे)

सः = वह पुरुष

मनुष्येषु = मनुष्योंमें

बुद्धिमान् = बुद्धिमान् है

(और)

सः = वह

युक्तः = योगी

कृत्स्न-कर्मकृत् = { संपूर्ण कर्मोंका
करनेवाला है

कामना और संकल्प रहित आचरण वाले ज्ञानीकी प्रशंसा। यस्य सर्वे समारम्भाः कामसंकल्पवर्जिताः ।
 ज्ञानाग्निदग्धकर्माणं तमाहुः पण्डितं बुधाः ॥१६॥
 यस्य, सर्वे, समारम्भाः, कामसंकल्पवर्जिताः,
 ज्ञानाग्निदग्धकर्माणम्, तम्, आहुः, पण्डितम्, बुधाः ॥१९॥

और हे अर्जुन-

यस्य	= जिसके	ज्ञानाग्नि-	= { ज्ञानरूप अग्नि- द्वारा भस्म हुए कर्मोंवाले पुरुषको
सर्वे	= संपूर्ण	दग्ध-	
समारम्भाः	= कार्य	कर्माणम्	
कामसंकल्प-	= { कामना और संकल्पसे रहित हैं (ऐसे)	बुधाः	= ज्ञानीजन (भी)
वर्जिताः		पण्डितम्	= पण्डित
तम्	= उस	आहुः	= कहते हैं

फलासक्तिको त्यागकर कर्म करनेवाले की प्रशंसा । त्यक्त्वा कर्मफलासङ्गं नित्यतृप्तो निराश्रयः ।
 कर्मण्यभिप्रवृत्तोऽपि नैव किञ्चित्करोति सः ॥
 त्यक्त्वा, कर्मफलासङ्गम्, नित्यतृप्तः, निराश्रयः,
 कर्मणि, अभिप्रवृत्तः, अपि, न, एव, किञ्चित्, करोति, सः ॥२०॥

और जो पुरुष-

निराश्रयः	= { सांसारिक आश्रयसे रहित	कर्म-	= { कर्मोंके फल और सङ्ग अर्थात् कर्तृत्व अभिमानको
नित्य-	= { सदा परमानन्द परमात्मामें तृप्त है	फलासङ्गम्	
तृप्तः			त्यक्त्वा
सः	= वह	कर्मणि	= कर्ममें

अभिप्रवृत्तः	= { अच्छी प्रकार वर्तता हुआ	एव	= भी
अपि	= भी	न	= नहीं
किञ्चित्	= कुछ	करोति	= करता है

केवल शरीर- निराशीर्यतचित्तात्मा त्यक्तसर्वपरिग्रहः ।
सम्बन्धी कर्म शरीरं केवलं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम् ॥२१॥
करते हुए संन्या-
सीको पाप न निराशीः, यतचित्तात्मा, त्यक्तसर्वपरिग्रहः,
लगनेका कथन । शरीरम्, केवलम्, कर्म, कुर्वन्, न, आप्नोति, किल्बिषम् ॥२१॥

और-

यत- चित्तात्मा	= { जीत लिया है अन्तःकरण और शरीर जिसने (तथा)	केवलम्	= केवल
		शरीरम्	= शरीरसम्बन्धी
		कर्म	= कर्मको
त्यक्तसर्व- परिग्रहः	= { त्याग दी है संपूर्ण भोगोंकी सामग्री जिसने (ऐसा)	कुर्वन्	= करता हुआ (भी)
		किल्बिषम्	= पापको
निराशीः	= { आशारहित पुरुष	न	= नहीं
		आप्नोति	= प्राप्त होता है

निष्कामकर्मयोग यदृच्छालाभसंतुष्टो द्वन्द्वातीतो विमत्सरः ।
के साधक का समः सिद्धावसिद्धौ च कृत्वापि न निबध्यते ॥२२॥
लक्षण और यदृच्छालाभसंतुष्टः, द्वन्द्वातीतः, विमत्सरः,
कर्मोंसे न बंधने- समः, सिद्धौ, असिद्धौ, च, कृत्वा, अपि, न, निबध्यते ॥२२॥
का कथन ।

और-

यदृच्छा-	अपने आप जो	सिद्धौ	= सिद्धि
लाभ-	कुछ आ प्राप्त	च	= और
संतुष्टः	हो उसमें ही	असिद्धौ	= असिद्धिमें
	संतुष्ट रहनेवाला		
	(और)	समः	= { समत्वभाववाला
			{ पुरुष
			(कर्मोंको)
द्वन्द्वातीतः	हर्षशोकादि	कृत्वा	= करके
	द्वन्द्वोंसे अतीत	अपि	= भी
	हुआ (तथा)	न	= नहीं
विमत्सरः	मत्सरता अर्थात्	निबध्यते	= बंधता है
	ईर्ष्यासे रहित		

यज्ञार्थं कर्म गतसङ्गस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थितचेतसः ।
 करनेवाले ज्ञानी यज्ञायाचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते ॥२३॥
 के संपूर्ण कर्म
 नष्ट होनेका गतसङ्गस्य, मुक्तस्य, ज्ञानावस्थितचेतसः,
 कथन । यज्ञाय, आचरतः, कर्म, समग्रम्, प्रविलीयते ॥२३॥

क्योंकि-

गतसङ्गस्य	= { आसक्तिसे	आचरतः	= { आचरण
	{ रहित		{ करते हुए
ज्ञानावस्थित-	{ ज्ञानमें स्थित	मुक्तस्य	= मुक्त पुरुषके
चेतसः	{ हुए चित्तवाले	समग्रम्	= संपूर्ण
		कर्म	= कर्म
यज्ञाय	= यज्ञके लिये	प्रविलीयते	= नष्ट हो जाते हैं

ब्रह्मयज्ञका

ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम् ।

ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना ॥२४॥

कथन ।

ब्रह्म, अर्पणम्, ब्रह्म, हविः, ब्रह्माग्नौ, ब्रह्मणा, हुतम्,
ब्रह्म, एव, तेन, गन्तव्यम्, ब्रह्मकर्मसमाधिना ॥२४॥

उन यज्ञके लिये आचरण करनेवाले पुरुषोंमेंसे कोई तो इस भावसे यज्ञ करते हैं कि—

अर्पणम् = { अर्पण अर्थात्	हुतम् = हवन किया गया है
{ सुवादिक (भी)	(वह भी ब्रह्म ही
ब्रह्म = ब्रह्म है (और)	है इसलिये)
हविः = { हवि अर्थात्	ब्रह्मकर्म- = { ब्रह्मरूप कर्ममें
{ हवन करने	समाधिना = { समाधिस्थ हुए
{ योग्य द्रव्य (भी)	तेन = उस पुरुषद्वारा
ब्रह्म = ब्रह्म है (और)	(जो)
ब्रह्माग्नौ = ब्रह्मरूप अग्निमें	गन्तव्यम् = प्राप्त होने योग्य है
ब्रह्मणा = { ब्रह्मरूप कर्ताके	(वह भी)
{ द्वारा	ब्रह्म = ब्रह्म
(जो)	एव = ही है

देवयज्ञ और दैवमेवापरे यज्ञं योगिनः पर्युपासते ।

ज्ञानयज्ञ का ब्रह्माग्नावपरे यज्ञं यज्ञेनैवोपजुह्वति ॥२५॥

दैवम्, एव, अपरे, यज्ञम्, योगिनः, पर्युपासते,
ब्रह्माग्नौ, अपरे, यज्ञम्, यज्ञेन, एव, उपजुह्वति ॥२५॥

और—

अपरे = दूसरे	यज्ञम् = यज्ञको
योगिनः = योगीजन	एव = ही
दैवम् = { देवताओंके	पर्यु- = { अच्छी प्रकार उपासते
{ पूजनरूप	पासते = { हैं अर्थात् करते हैं

(और)	यज्ञेन	= यज्ञके द्वारा
अपरे = दूसरे (ज्ञानीजन)	एव	= ही
ब्रह्माग्नौ = { परब्रह्म परमात्मा-	यज्ञम्	= यज्ञको
रूप अग्निमें	उपजुहति	= हवन * करते हैं

इन्द्रियसंयम-
रूप यज्ञ और
विषयहवनरूप
यज्ञका कथन ।

श्रोत्रादीनीन्द्रियाण्यन्ये संयमाग्निषु जुहति ।

शब्दादीन्विषयानन्य इन्द्रियाग्निषु जुहति ॥२६॥

श्रोत्रादीनि, इन्द्रियाणि, अन्ये, संयमाग्निषु, जुहति,
शब्दादीन्, विषयान्, अन्ये, इन्द्रियाग्निषु, जुहति ॥२६॥

और-

अन्ये = अन्य योगीजन	अन्ये = { और दूसरे
श्रोत्रादीनि = श्रोत्रादिक	{ योगीलोग
इन्द्रियाणि = सब इन्द्रियोंको	शब्दादीन् = शब्दादिक
संयमाग्निषु = { संयम अर्थात्	विषयान् = विषयोंको
{ स्वाधीनतारूप	इन्द्र-
{ अग्निमें	याग्निषु = { इन्द्रियरूप
	{ अग्निमें
जुहति = { हवन करते हैं	जुहति = { हवन करते हैं
{ अर्थात्	{ अर्थात् रागद्वेष-
{ इन्द्रियोंको	{ रहित इन्द्रियों-
{ विषयोंसे रोक-	{ द्वारा विषयोंको
{ कर अपने वशमें	{ ग्रहण करते हुए
{ कर लेते हैं	{ भी भस्मरूप
	{ करते हैं

* परब्रह्म परमात्मामें ज्ञानद्वारा एकीभावसे स्थित होना ही ब्रह्मरूप अग्निमें यज्ञके द्वारा यज्ञको हवन करना है ।

अन्तःकरण

सर्वाणीन्द्रियकर्माणि प्राणकर्माणि चापरे ।

संयमरूप यज्ञ ।

आत्मसंयमयोगाग्नौ जुहति ज्ञानदीपिते ॥२७॥

सर्वाणि, इन्द्रियकर्माणि, प्राणकर्माणि, च, अपरे,

आत्मसंयमयोगाग्नौ, जुहति, ज्ञानदीपिते ॥ २७ ॥

और-

अपरे	= दूसरे योगीजन	ज्ञान-दीपिते	= { ज्ञानसे प्रकाशित हुई
सर्वाणि	= संपूर्ण		
इन्द्रिय-कर्माणि	= { इन्द्रियोंकी चेष्टाओंको	आत्मसंयम-योगाग्नौ	= { परमात्मामें स्थितिरूप योगाग्नमें
च	= तथा		
प्राण-कर्माणि	= { प्राणोंके व्यापारको	जुहति	= हवन करते हैं*

द्रव्ययज्ञ, तपोयज्ञ, योगयज्ञास्तथापरे ।

योगयज्ञ और स्वाध्यायज्ञानयज्ञाश्च यतयः संशितव्रताः ॥

स्वाध्याय रूप ज्ञानयज्ञकाकथन द्रव्ययज्ञाः, तपोयज्ञाः, योगयज्ञाः, तथा, अपरे

स्वाध्यायज्ञानयज्ञाः, च, यतयः, संशितव्रताः ॥ २८ ॥

और-

अपरे	= दूसरे (कई पुरुष)	तथा	= वैसे ही (कई पुरुष)
द्रव्य-यज्ञाः	= { ईश्वर अर्पण बुद्धिसे लोकसेवामें द्रव्य लगानेवाले हैं	तपो-यज्ञाः	= { स्वधर्मपालनरूपतप- यज्ञको करनेवाले हैं (और कई)

* सच्चिदानन्दधन परमात्माके सिवाय अन्य किसीका भी न चिन्तन करना ही उन सबका हवन करना है ।

योग-	= { अष्टाङ्ग योगरूप		
यज्ञाः	= { यज्ञको करनेवाले हैं		
च	= और (दूसरे)		
संशित-	= { अहिंसादि	स्वाध्याय-	= { भगवान् के नाम-
व्रताः	= { तीक्ष्ण व्रतोंसे	ज्ञानयज्ञाः	= { का जप तथा
	= { युक्त		= { भगवत्प्राप्ति-
यतयः	= यत्नशील पुरुष		= { विषयक शास्त्रों-
			= { का अध्ययनरूप
			= { ज्ञानयज्ञके
			= { करनेवाले हैं

यज्ञरूपसे त्रिविध

अपाने जुहति प्राणं प्राणेऽपानं तथापरे ।

प्राणायाम का
कथन ।

प्राणापानगती रुद्ध्वा प्राणायामपरायणाः ॥

अपाने, जुहति, प्राणम्, प्राणे, अपानम्, तथा, अपरे,
प्राणापानगती, रुद्ध्वा, प्राणायामपरायणाः ॥ २९ ॥

और दूसरे योगीजन-

अपाने	= अपानवायुमें	अपरे	= अन्य योगीजन
प्राणम्	= प्राणवायुको		
जुहति	= हवन करते हैं	प्राणापान-	= { प्राण और
तथा	= वैसे ही	गती	= { अपानकी
	(अन्य योगीजन)		= { गतिको
प्राणे	= प्राणवायुमें	रुद्ध्वा	= रोककर
अपानम्	= अपानवायुको	प्राणायाम-	= { प्राणायामके
(जुहति)	= हवन करते हैं	परायणाः	= { परायण
	(तथा)		= { (होते हैं)

यज्ञरूपसे चतुर्थ
प्राणायाम का
कथन और सब
प्रकारके यज्ञ
करनेवालों की
प्रशंसा ।

अपरे नियताहाराः प्राणान्प्राणेषु जुहति ।

सर्वेऽप्येते यज्ञविदो यज्ञक्षपितकल्मषाः ॥ ३० ॥

अपरे, नियताहाराः, प्राणान्, प्राणेषु, जुहति,

सर्वे, अपि, एते, यज्ञविदः, यज्ञक्षपितकल्मषाः ॥ ३० ॥

और-

अपरे	= दूसरे	यज्ञक्षपित-	= { यज्ञोंद्वारा नाश
नियताहाराः	= { नियमित आहार*करने- वाले योगीजन	कल्मषाः	= { हो गया है पाप जिनका (ऐसे)
प्राणान्	= प्राणोंको	एते	= यह
प्राणेषु	= प्राणोंमें ही	सर्वे	= सब
जुह्वति	= हवन करते हैं (इस प्रकार)	अपि	= ही (पुरुष)
		यज्ञविदः	= { यज्ञोंको जाननेवाले हैं

यज्ञ करनेवालों
को भगवत्प्राप्ति
और न करने-
वालोंकी निन्दा।

यज्ञशिष्टामृतभुजो यान्ति ब्रह्म सनातनम् ।
नायं लोकोऽस्त्ययज्ञस्य कुतोऽन्यः कुरुसत्तम ॥

यज्ञशिष्टामृतभुजः, यान्ति, ब्रह्म, सनातनम्,
न, अयम्, लोकः, अस्ति, अयज्ञस्य, कुतः, अन्यः, कुरुसत्तम३१

और-

कुरुसत्तम	= { हे कुरुश्रेष्ठ अर्जुन	(और)	अयज्ञस्य	= यज्ञरहित पुरुषको
यज्ञ-	{ यज्ञोंके परिणाम-	अयम्	= यह	
शिष्टामृत-	{ रूप ज्ञानामृतको	लोकः	= मनुष्यलोक	
भुजः	{ भोगनेवाले योगीजन		(भी सुखदायक)	
सनातनम्	= सनातन	न	= नहीं	
ब्रह्म	= { परब्रह्म परमात्माको	अस्ति	= है (फिर)	
यान्ति	= प्राप्त होते हैं	अन्यः	= परलोक	
		कुतः	= कैसे	
			(सुखदायक होगा)	

* गीता अध्याय ६ श्लोक १७ में देखना चाहिये ।

यज्ञोंको तत्त्वसे
जाननेका फल।

एवं बहुविधा यज्ञा वितता ब्रह्मणो मुखे ।

कर्मजान्विद्धि तान्सर्वानेवं ज्ञात्वा विमोक्ष्यसे ॥

एवम्, बहुविधाः, यज्ञाः, वितताः, ब्रह्मणः, मुखे,
कर्मजान्, विद्धि, तान्, सर्वान्, एवम्, ज्ञात्वा, विमोक्ष्यसे ॥३२॥

एवम् = ऐसे

बहुविधाः = बहुत प्रकारके

यज्ञाः = यज्ञ

ब्रह्मणः = वेदकी

मुखे = वाणोंमें

वितताः = { विस्तार किये
गये हैं

तान् = उन

सर्वान् = सबको

कर्मजान् = { शरीर, मन और
इन्द्रियोंकी
क्रियाद्वारा ही
उत्पन्न होनेवाले

विद्धि = जान

एवम् = इस प्रकार
(तत्त्वसे)

ज्ञात्वा = जानकर
(निष्काम कर्मयोगद्वारा)

विमोक्ष्यसे = { संसारबन्धनसे
मुक्त हो जायगा

ज्ञानयज्ञकी

श्रेयान्द्रव्यमयाद्यज्ञाज्ञानयज्ञः परंतप ।

सर्वं कर्माखिलं पार्थ ज्ञाने परिसमाप्यते ॥३३॥

श्रेयान्, द्रव्यमयात्, यज्ञात्, ज्ञानयज्ञः, परंतप,

सर्वम्, कर्म, अखिलम्, पार्थ, ज्ञाने, परिसमाप्यते ॥ ३३ ॥

और-

परंतप = हे अर्जुन

द्रव्यमयात् = { सांसारिक

वस्तुओंसे

{ सिद्ध होनेवाले

यज्ञात् = यज्ञसे

ज्ञानयज्ञः = ज्ञानरूप यज्ञ
(सब प्रकार)

श्रेयान् = श्रेष्ठ है

प्रशंसा ।

	(क्योंकि)	ज्ञाने	= ज्ञानमें
पार्थ	= हे पार्थ		{ शेष होते हैं
सर्वम्	= संपूर्ण	परिसमाप्यते =	{ अर्थात् ज्ञान
अग्निलम्	= यावन्मात्र		{ उनकी
कर्म	= कर्म		{ पराकाष्ठा है

ज्ञानके लिये तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया ।
 ज्ञानवानों की उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः ॥३४॥
 शरण जानेका तत्, विद्धि, प्रणिपातेन, परिप्रश्नेन, सेवया,
 कथन । उपदेक्ष्यन्ति, ते, ज्ञानम्, ज्ञानिनः, तत्त्वदर्शिनः ॥३४॥

इसलिये तत्त्वको जाननेवाले ज्ञानी पुरुषोंसे—

प्रणि-	{ भली प्रकार	ते	= वे
पातेन	= { दण्डवत्	तत्त्वदर्शिनः =	{ मर्मको
	{ प्रणाम (तथा)		{ जाननेवाले
सेवया	= सेवा (और)	ज्ञानिनः	= ज्ञानीजन
परि-	{ निष्कपटभावसे		(तुझे उस)
प्रश्नेन	= { किये हुए प्रश्नद्वारा	ज्ञानम्	= ज्ञानका
तत्	= उस ज्ञानको	उपदेक्ष्यन्ति =	{ उपदेश
विद्धि	= जान		{ करेगे

ज्ञानका फल । यज्ज्ञात्वा न पुनर्मोहमेवं यास्यसि पाण्डव ।

येन भूतान्यशेषेण द्रक्ष्यस्यात्मन्यथो मयि ॥३५॥

यत्, ज्ञात्वा, न, पुनः, मोहम्, एवम्, यास्यसि, पाण्डव,
 येन, भूतानि, अशेषेण, द्रक्ष्यसि, आत्मनि, अथो, मयि ॥३५॥

कि—

यत् = जिसको | ज्ञात्वा = जानकर (तू)

पुनः	= फिर	आत्मनि	= { अपने अन्तर्गत समष्टि बुद्धिके आधार
एवम्	= इस प्रकार	अशेषेण	= संपूर्ण
मोहम्	= मोहको	भूतानि	= भूतोंको
न	= नहीं	द्रक्ष्यसि	= देखेगा * (और)
यास्यासि	= प्राप्त होगा (और)	अथो	= उसके उपरान्त
पाण्डव	= हे अर्जुन	मयि	= { मेरेमें अर्थात् सच्चिदानन्द- स्वरूपमें एकीभाव हुआ सच्चिदानन्द- मय ही देखेगा†
येन	= { जिस ज्ञानके द्वारा (सर्वव्यापी अनन्त चेतनरूप हुआ)		

ज्ञानरूप नौका अपि चेदसि पापेभ्यः सर्वेभ्यः पापकृत्तमः ।
 द्वारा अतिशय
 पापी का भी सर्व ज्ञानप्लवेनैव वृजिनं संतरिष्यसि ॥३६॥
 उद्धार ।

अपि, चेत्, असि, पापेभ्यः, सर्वेभ्यः, पापकृत्तमः,
 सर्वम्, ज्ञानप्लवेन, एव, वृजिनम्, संतरिष्यसि ॥३६॥

और—

चेत्	= यदि (तू)	अपि	= भी
सर्वेभ्यः	= सब	पापकृत्तमः	= { अधिक पाप करनेवाला
पापेभ्यः	= पापियोंसे		

* गीता अध्याय ६ श्लोक २९ में देखना चाहिये ।

† गीता अध्याय ६ श्लोक ३० में देखना चाहिये ।

असि = है (तो भी)

ज्ञानप्लवेन = { ज्ञानरूप
नौकाद्वारा

एव = निःसन्देह

सर्वम् = संपूर्ण

वृजिनम् = पापोंको

संतरिष्यसि = { अच्छी प्रकार
तर जायगाअग्निके दृष्टान्त-
से ज्ञान की
महिमा ।

यथैधांसि समिद्धोऽग्निर्भस्मसात्कुरुतेऽर्जुन ।

ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात्कुरुते तथा ॥३७॥

यथा, एधांसि, समिद्धः, अग्निः, भस्मसात्, कुरुते, अर्जुन,
ज्ञानाग्निः, सर्वकर्माणि, भस्मसात्, कुरुते, तथा ॥३७॥

क्योंकि-

अर्जुन = हे अर्जुन

यथा = जैसे

समिद्धः = प्रज्वलित

अग्निः = अग्नि

एधांसि = इन्धनको

भस्मसात् = भस्ममय

कुरुते = कर देता है

तथा = वैसे ही

ज्ञानाग्निः = ज्ञानरूप अग्नि

सर्वकर्माणि = संपूर्ण कर्मोंको

भस्मसात् = भस्ममय

कुरुते = कर देता है

ज्ञानकी अति-
शय पवित्रता
और पुरुषार्थसे
ज्ञान प्राप्तिका
कथन ।

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते ।

तत्स्वयं योगसंसिद्धः कालेनात्मनि विन्दति ॥

न, हि, ज्ञानेन, सदृशम्, पवित्रम्, इह, विद्यते,

तत्, स्वयम्, योगसंसिद्धः, कालेन, आत्मनि, विन्दति ॥३८॥

इसलिये-

इह = इस संसारमें

ज्ञानेन = ज्ञानके

सदृशम् = समान

पवित्रम् = पवित्र करनेवाला

हि = निःसन्देह (कुछ भी)

न = नहीं

विद्यते = है

तत् = उस ज्ञानको

कालेन = कितनेक कालसे

स्वयम् = अपने आप

योग-संसिद्धः = { समत्वबुद्धिरूप
योगके द्वारा अच्छी
प्रकार शुद्धान्तः-
करण हुआ पुरुष } आत्मनि=आत्मामें
विन्दति=अनुभव करता है

ज्ञानके पात्र- श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः ।
का और ज्ञानसे ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति ॥
परम शान्तिकी श्रद्धावान्, लभते, ज्ञानम्, तत्परः, संयतेन्द्रियः,
प्राप्तिका कथन। ज्ञानम्, लब्ध्वा, पराम्, शान्तिम्, अचिरेण, अधिगच्छति । ३९।

और हे अर्जुन-

संयतेन्द्रियः = जितेन्द्रिय | अचिरेण = तत्क्षण
तत्परः = तत्पर हुआ (भगवत्प्राप्तिरूप)
श्रद्धावान् = श्रद्धावान् पुरुष
ज्ञानम् = ज्ञानको पराम् = परम
लभते = प्राप्त होता है शान्तिम् = शान्तिको
ज्ञानम् = ज्ञानको अधि- = { प्राप्त हो
लब्ध्वा = प्राप्त होकर गच्छति = { जाता है

श्रद्धारहित संशयात्मा विनश्यति ।
संशय युक्त नायं लोकोऽस्ति न परो न सुखं संशयात्मनः ॥
अज्ञानीकीदुर्गति का कथन । अज्ञः, च, अश्रद्धावान्, च, संशयात्मा, विनश्यति,
न, अयम्, लोकः, अस्ति, न, परः, न, सुखम्, संशयात्मनः । ४०।

और हे अर्जुन-

अज्ञः = { भगवत्-
विषयको न
जाननेवाला } अश्रद्धावान् = श्रद्धारहित
च = और
च = तथा संशयात्मा = { संशययुक्त
पुरुष

विनश्यति	= { परमार्थसे भ्रष्ट हो जाता है (उनमें भी)	अयम् = यह लोकः = लोक है न = न परः = परलोक अस्ति = है अर्थात् यह लोक और परलोक दोनों ही उसके लिये भ्रष्ट हो जाते हैं
संशयात्मनः	= { संशययुक्त पुरुषके लिये तो	
न	= न	
सुखम्	= सुख है (और)	
न	= न	

संशयरहित योगसंन्यस्तकर्माणं ज्ञानसंछिन्नसंशयम् ।

निष्काम कर्म-
योगीके लिये
कर्म-बन्धन का
निषेध ।

आत्मवन्तं न कर्माणि निबध्नन्ति धनंजय ॥४१॥

योगसंन्यस्तकर्माणम्, ज्ञानसंछिन्नसंशयम्,
आत्मवन्तम्, न, कर्माणि, निबध्नन्ति, धनंजय ॥ ४१ ॥
और-

धनंजय = हे धनंजय

योग-
संन्यस्त-
कर्माणम् = { समत्वबुद्धिरूप
योगद्वारा भगवत्-
अर्पण कर दिये
हैं संपूर्ण कर्म
जिसने

(और)

ज्ञान-
संछिन्न-
संशयम् = { ज्ञानद्वारा
नष्ट हो गये हैं
सब संशय
जिसके ऐसे
आत्मवन्तम् = { परमात्म-
परायण
पुरुषको
कर्माणि = कर्म
न = नहीं
निबध्नन्ति = बांधते हैं

निष्कामयोगमें
स्थित होकर युद्ध
करने के लिये
आज्ञा ।

तस्मादज्ञानसंभूतं हृत्स्थं ज्ञानासिनात्मनः ।

छित्त्वैनं संशयं योगमातिष्ठोत्तिष्ठ भारत ॥४२॥

तस्मात्, अज्ञानसंभूतम्, हृत्स्थम्, ज्ञानासिना, आत्मनः,
छित्त्वा, एनम्, संशयम्, योगम्, आतिष्ठ, उत्तिष्ठ, भारत॥४२॥

तस्मात् = इससे	हृत्स्थम् = हृदयमें स्थित	
भारत = { हे भरतवंशी अर्जुन (तू)	एनम् = इस	
योगम् = { समत्वबुद्धिरूप योगमें	आत्मनः = अपने	
आतिष्ठ = स्थित हो (और)	संशयम् = संशयको	
अज्ञान- = { अज्ञानसे उत्पन्न	ज्ञानासिना = { ज्ञानरूप संभूतम् = { हुए	छित्त्वा = छेदन करके (युद्धके लिये)
	उत्तिष्ठ = खड़ा हो	

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे
श्रीकृष्णार्जुनसंवादे ज्ञानकर्मसंन्यासयोगो नाम चतुर्थोऽध्यायः ४

अथ पञ्चमोऽध्यायः

प्रधान विषय-१ से ६ तक सांख्ययोग और निष्काम कर्मयोगका
निर्णय, (७-१२) सांख्ययोगी और निष्काम कर्मयोगीके लक्षण और
उनकी महिमा, (१३-२६) ज्ञानयोगका विषय, (२७-२९) भक्ति-
सहित ध्यानयोगका वर्णन ।

अर्जुन उवाच

संन्यास और
निष्कामकर्मयोग
में कौन श्रेष्ठ है
यह जाननेके
लिये अर्जुनका
प्रश्न ।

संन्यासं कर्मणां कृष्ण पुनर्योगं च शंससि ।

यच्छ्रेय एतयोरेकं तन्मे ब्रूहि सुनिश्चितम् ॥ १ ॥

संन्यासम्, कर्मणाम्, कृष्ण, पुनः, योगम्, च, शंससि,
यत्, श्रेयः, एतयोः, एकम्, तत्, मे, ब्रूहि, सुनिश्चितम् ॥ १ ॥

उसके उपरान्त अर्जुनने पूछा—

कृष्ण	= हे कृष्ण (आप)	एतयोः	= इन दोनोंमें
कर्मणाम्	= कर्मोंके	एकम्	= एक
संन्यासम्	= संन्यासकी	यत्	= जो
च	= और	सुनिश्चितम्	= { निश्चय किया हुआ
पुनः	= फिर	श्रेयः	= कल्याणकारक (होवे)
योगम्	= { निष्काम कर्मयोगकी	तत्	= उसको
शंससि	= प्रशंसा करते हो (इसलिये)	मे	= मेरे लिये
		ब्रूहि	= कहिये

श्रीभगवानुवाच

संन्यासः कर्मयोगश्च निःश्रेयसकरावुभौ ।

संन्यासकी
अपेक्षा निष्काम
कर्मयोगकी श्रेष्ठ-
ताका कथन ।

तयोस्तु कर्मसंन्यासात्कर्मयोगो विशिष्यते ॥२॥

संन्यासः, कर्मयोगः, च, निःश्रेयसकरौ, उभौ,

तयोः, तु, कर्मसंन्यासात्, कर्मयोगः, विशिष्यते ॥२॥

इस प्रकार अर्जुनके पूछनेपर श्रीकृष्ण महाराज बोले हे अर्जुन—

संन्यासः = { कर्मोंका
संन्यास*

च = और

कर्मयोगः = { निष्काम
कर्मयोग†

उभौ = यह दोनों ही

* अर्थात् मन, इन्द्रियों और शरीरद्वारा होनेवाले संपूर्ण कर्मोंमें
कर्तापनका त्याग ।

† अर्थात् समत्वबुद्धिसे भगवत्-अर्थ कर्मोंका करना ।

निःश्रेयसकरौ = { परम
कल्याणके
करनेवाले हैं

तु = परन्तु

तयोः = उन दोनोंमें भी

निष्काम कर्म-
योगीकी प्रशंसा

ज्ञेयः स नित्यसंन्यासी यो न द्वेष्टि न काङ्क्षति ।

निर्द्वन्द्वो हि महाबाहो सुखं बन्धात्प्रमुच्यते ॥

ज्ञेयः, सः, नित्यसंन्यासी, यः, न, द्वेष्टि, न, काङ्क्षति,
निर्द्वन्द्वः, हि, महाबाहो, सुखम्, बन्धात्, प्रमुच्यते ॥३॥

इसलिये—

महाबाहो = हे अर्जुन

यः = जो पुरुष

न = न (किसीसे)

द्वेष्टि = द्वेष करता है (और)

न = न (किसीकी)

काङ्क्षति = आकाङ्क्षा करता है

सः = वह

(निष्काम कर्मयोगी)

नित्य-
संन्यासी } सदा संन्यासी ही

ज्ञेयः = समझने योग्य है

हि = क्योंकि

निर्द्वन्द्वः = { रागद्वेषादि
द्वन्द्वोंसे रहित
हुआ पुरुष

सुखम् = सुखपूर्वक

बन्धात् = { संसाररूप
बन्धनसे

प्रमुच्यते = मुक्त हो जाता है

फलमें सांख्य- सांख्ययोगौ पृथग्बालाः प्रवदन्ति न पण्डिताः ।

योग और एकमप्यास्थितः सम्यग्भयोर्विन्दते फलम् ॥४॥

निष्कामकर्मयोग
की एकता ।

सांख्ययोगौ, पृथक्, बालाः, प्रवदन्ति, न, पण्डिताः,
एकम्, अपि, आस्थितः, सम्यक्, उभयोः, विन्दते, फलम् ॥४॥

और हे अर्जुन-

	(ऊपर कहे हुए)	पण्डिताः = पण्डितजन (क्योंकि दोनोंमेंसे)
सांख्ययोगौ =	{ संन्यास और निष्काम कर्मयोगको	एकम् = एकमें अपि = भी
बालाः	= मूर्खलोग	सम्यक् = अच्छी प्रकार
पृथक्	= अलग अलग (फलवाले)	आस्थितः = स्थित हुआ (पुरुष)
प्रवदन्ति	= कहते हैं	उभयोः = दोनोंके
न	= न कि	फलम् = { फलरूप परमात्माको
		विन्दते = प्राप्त होता है

[„] यत्सांख्यैः प्राप्यते स्थानं तद्योगैरपि गम्यते ।

एकं सांख्यं च योगं च यः पश्यति स पश्यति ॥

यत्, सांख्यैः, प्राप्यते, स्थानम्, तत्, योगैः, अपि, गम्यते,
एकम्, सांख्यम्, च, योगम्, च, यः, पश्यति, सः, पश्यति ॥५॥

तथा-

सांख्यैः	= ज्ञानयोगियोंद्वारा	गम्यते = { प्राप्त किया
यत्	= जो	{ जाता है
स्थानम्	= परमधाम	(इसलिये)
प्राप्यते	= { प्राप्त किया	यः = जो (पुरुष)
	{ जाता है	सांख्यम् = ज्ञानयोग
योगैः	= { निष्काम	च = और
	{ कर्मयोगियोंद्वारा	योगम् = { निष्काम
अपि	= भी	{ कर्मयोगको
तत्	= वही	(फलरूपसे)

एकम् = एक
पश्यति = देखता है
सः = वह

च = ही
(यथार्थ)
पश्यति = देखता है

निष्काम कर्मयोग की अपेक्षा सांख्य योगके साधनमें कठिनता का कथन । संन्यासस्तु महाबाहो दुःखमाप्तुमयोगतः । योगयुक्तो मुनिर्ब्रह्म नचिरेणाधिगच्छति ॥६॥
संन्यासः, तु, महाबाहो, दुःखम्, आप्तुम्, अयोगतः, योगयुक्तः, मुनिः, ब्रह्म, नचिरेण, अधिगच्छति ॥६॥

तु = परन्तु
महाबाहो = हे अर्जुन
अयोगतः = { निष्काम. कर्म-
योगके विना
संन्यास अर्थात्
मन, इन्द्रियों
और शरीरद्वारा
संन्यासः = { होनेवाले संपूर्ण
कर्मोंमें कर्ता-
पनका त्याग
आप्तुम् = प्राप्त होना

दुःखम् = कठिन है (और)
मुनिः = { भगवत्-
स्वरूपको मनन
करनेवाला
योगयुक्तः = { निष्काम
कर्मयोगी
ब्रह्म = { परब्रह्म
परमात्माको
नचिरेण = शीघ्र ही
अधि-
गच्छति = { प्राप्त हो जाता
है

निष्काम कर्म-योगी कर्म करता हुआ भी लिपा-यमान नहीं होता है इस विषयका कथन । योगयुक्तो विशुद्धात्मा विजितात्मा जितेन्द्रियः । सर्वभूतात्मभूतात्मा कुर्वन्नपि न लिप्यते ॥७॥
योगयुक्तः, विशुद्धात्मा, विजितात्मा, जितेन्द्रियः, सर्वभूतात्मभूतात्मा, कुर्वन्, अपि, न, लिप्यते ॥७॥

तथा—

विजितात्मा =	{ वशमें किया हुआ है शरीर जिसके ऐसा	सर्व-भूतात्म-भूतात्मा =	{ संपूर्ण प्राणियोंके आत्मरूप परमात्मामें एकीभाव हुआ
जितेन्द्रियः =	जितेन्द्रिय (और)	योगयुक्तः =	निष्काम कर्मयोगी
विशुद्धात्मा =	{ विशुद्ध अन्तःकरणवाला (एवं)	कुर्वन् अपि न लिप्यते =	{ कर्म करता हुआ भी लिपायमान नहीं होता

सांख्ययोगीका लक्षण । नैव किञ्चित्करोमीति युक्तो मन्येत तत्त्ववित् ।

पश्यञ्शृण्वन्स्पृशञ्जिघ्रन्अश्नन्गच्छन्स्वपञ्श्वसन् ॥

प्रलपन्विसृजन्गृह्णन्नुन्मिषन्निमिषन्नपि ।

इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेषु वर्तन्त इति धारयन् ॥६॥

न, एव, किञ्चित्, करोमि, इति, युक्तः, मन्येत, तत्त्ववित्, पश्यन्, शृण्वन्, स्पृशन्, जिघ्रन्, अश्नन्, गच्छन्, स्वपन्, श्वसन्, प्रलपन्, विसृजन्, गृह्णन्, उन्मिषन्, निमिषन्, अपि, इन्द्रियाणि, इन्द्रियार्थेषु, वर्तन्ते, इति, धारयन् ॥ ८-९ ॥

और हे अर्जुन—

तत्त्ववित् =	{ तत्त्वको जानने-वाला	शृण्वन् =	सुनता हुआ
युक्तः =	सांख्ययोगी तो	स्पृशन् =	स्पर्श करता हुआ
पश्यन् =	देखता हुआ	जिघ्रन् =	सूँघता हुआ

अश्नन् = { भोजन करता हुआ	अपि = भी
गच्छन् = { गमन करता हुआ	इन्द्रियाणि = सब इन्द्रियां
स्वप्न = सोता हुआ	इन्द्रियार्थेषु = { अपने अपने अर्थोंमें
श्वसन् = श्वास लेता हुआ	वर्तन्ते = वर्त रही हैं
प्रलपन् = बोलता हुआ	इति = इस प्रकार
विसृजन् = त्यागता हुआ	धारयन् = समझता हुआ
गृह्णन् = { ग्रहण करता हुआ (तथा)	एव = निःसन्देह
उन्मिषन् = { आंखोंको खोलता (और)	इति = ऐसे
निमिषन् = मीचता हुआ	मन्येत = माने कि (मैं)
	किञ्चित् = कुछ भी
	न = नहीं
	करोमि = करता हूँ

भगवदर्थ कर्म
करनेवाले की
निलेंपतामें पद्म-
पत्रका दृष्टान्त ।

ब्रह्मण्याधाय कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा करोति यः ।

लिप्यते न स पापेन पद्मपत्रमिवाम्भसा ॥१०॥

ब्रह्मणि, आधाय, कर्माणि, सङ्गम्, त्यक्त्वा, करोति, यः,

लिप्यते, न, सः, पापेन, पद्मपत्रम्, इव, अम्भसा ॥ १० ॥

परन्तु हे अर्जुन ! देहाभिमानियोंद्वारा यह साधन होना कठिन
है और निष्काम कर्मयोग सुगम है क्योंकि—

यः = जो पुरुष

कर्माणि = सब कर्मोंको

ब्रह्मणि = परमात्मामें

आधाय = अर्पण करके (और)

सङ्गम् = आसक्तिको

त्यक्त्वा = त्यागकर

करोति = कर्म करता है

सः = वह पुरुष

अम्भसा = जलसे

पद्मपत्रम् = कमलके पत्तेकी

इव = सदृश | न = { लिपायमान
पापेन = पापसे | लिप्यते = { नहीं होता

आत्मशुद्धिके कायेन मनसा बुद्ध्या केवलैरिन्द्रियैरपि ।

लिये योगियोंके योगिनः कर्म कुर्वन्ति सङ्गं त्यक्त्वात्मशुद्धये ॥

कर्माचरण का कथन । कायेन, मनसा, बुद्ध्या, केवलैः, इन्द्रियैः, अपि,
योगिनः, कर्म, कुर्वन्ति, सङ्गम्, त्यक्त्वा, आत्मशुद्धये ॥११॥

इसलिये-

योगिनः	= निष्काम कर्मयोगी	अपि	= भी
	(ममत्वबुद्धिरहित)	सङ्गम्	= आसक्ति को
केवलैः	= केवल	त्यक्त्वा	= त्यागकर
इन्द्रियैः	= इन्द्रिय	आत्म-	= { अन्तःकरणकी
मनसा	= मन	शुद्धये	= { शुद्धिके लिये
बुद्ध्या	= बुद्धि (और)	कर्म	= कर्म
कायेन	= शरीरद्वारा	कुर्वन्ति	= करते हैं

कर्मफलके त्याग युक्तः कर्मफलं त्यक्त्वा शान्तिमाप्नोति नैष्ठिकीम् ।

से शान्ति और अयुक्तः कामकारेण फले सक्तो निबध्यते ॥

कामनासे बन्धन युक्तः, कर्मफलम्, त्यक्त्वा, शान्तिम्, आप्नोति, नैष्ठिकीम्,
अयुक्तः, कामकारेण, फले, सक्तः, निबध्यते ॥१२॥

इसीसे-

युक्तः	= { निष्काम	नैष्ठिकीम्	= { भगवत्-
	= { कर्मयोगी		= { प्राप्तिरूप
कर्मफलम्	= कर्मोंके फलको	शान्तिम्	= शान्तिको
त्यक्त्वा	= { परमेश्वरके	आप्नोति	= प्राप्त होता है
	= { अर्पण करके		(और)

अयुक्तः = सकामी पुरुष

फले = फलमें

सक्तः = आसक्त हुआ

कामकारेण = कामनाके द्वारा

निबध्यते = बंधता है

इसलिये निष्काम कर्मयोग उत्तम है ।

सांख्ययोगीकी
स्थितिका कथन ।

सर्वकर्माणि मनसा संन्यस्यास्ते सुखं वशी ।

नवद्वारे पुरे देही नैव कुर्वन्न कारयन् ॥१३॥

सर्वकर्माणि, मनसा, संन्यस्य, आस्ते, सुखम्, वशी,

नवद्वारे, पुरे, देही, न, एव, कुर्वन्, न, कारयन् ॥१३॥

और हे अर्जुन-

वशी = { वशमें है अन्तः-
करण जिसके ऐसा
सांख्ययोगका
आचरण करने-
वाला

देही = पुरुष (तो)

एव = निःसन्देह

न = न

कुर्वन् = करता हुआ
(और)

न = न

कारयन् = करवाता हुआ

नवद्वारे = नवद्वारोंवाले

पुरे = शरीररूप घरमें

सर्वकर्माणि = सब कर्मोंको

मनसा = मनसे

संन्यस्य = त्यागकर अर्थात्
इन्द्रियां इन्द्रियों-

के अर्थोंमें वर्तती

हैं ऐसे मानता

हुआ

सुखम् = आनन्दपूर्वक
(सच्चिदानन्दधन

परमात्माके

स्वरूपमें)

आस्ते = स्थित रहता है

परमात्मामें

कर्तापनके अ-

भावका कथन ।

न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः ।

न कर्मफलसंयोगं स्वभावस्तु प्रवर्तते ॥१४॥

न, कर्तृत्वम्, न, कर्माणि, लोकस्य, सृजति, प्रभुः,
न, कर्मफलसंयोगम्, स्वभावः, तु, प्रवर्तते ॥ १४ ॥

और-

प्रभुः	= परमेश्वर (भी)	(वास्तवमें)
लोकस्य	= भूतप्राणियोंके	सृजति = रचता है
न	= न	तु = किन्तु
कर्तृत्वम्	= कर्तापनको (और)	(परमात्माके
न	= न	सकाशसे)
कर्माणि	= कर्मोंको (तथा)	स्वभावः = प्रकृति (ही)
न	= न	प्रवर्तते = वर्तती है अर्थात्
कर्मफल-	= { कर्मोंके फलके	गुण ही गुणोंमें
संयोगम्	= { संयोगको	वर्त रहे हैं

परमात्मा किसी नादत्ते कस्यचित्पापं न चैव सुकृतं विभुः ।
के पाप-पुण्यको अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः ॥ १५ ॥
ग्रहण नहीं करता इस न, आदत्ते, कस्यचित्, पापम्, न, च, एव, सुकृतम्, विभुः,
विषयमें कथन । अज्ञानेन, आवृतम्, ज्ञानम्, तेन, मुह्यन्ति, जन्तवः ॥ १५ ॥

और-

विभुः	= { सर्वव्यापी	सुकृतम् = शुभकर्मको
	= { परमात्मा	एव = भी
न	= न	आदत्ते = ग्रहण करता है
कस्यचित्	= किसीके	(किन्तु)
पापम्	= पापकर्मको	अज्ञानेन = मायाके द्वारा
च	= और	ज्ञानम् = ज्ञान
न	= न	आवृतम् = ढका हुआ है
	(किसीके)	तेन = इससे

जन्तवः = सब जीव | मुह्यन्ति = मोहित हो रहे हैं

सूर्यके दृष्टान्तसे ज्ञानेन तु तदज्ञानं येषां नाशितमात्मनः ।
ज्ञानकी महिमा।

तेषामादित्यवज्ज्ञानं प्रकाशयति तत्परम् ॥१६॥

ज्ञानेन, तु, तत्, अज्ञानम्, येषाम्, नाशितम्, आत्मनः,
तेषाम्, आदित्यवत्, ज्ञानम्, प्रकाशयति, तत्परम् ॥१६॥

तु	= परन्तु	(वह)
येषाम्	= जिनका	ज्ञानम् = ज्ञान
तत्	= वह	आदित्यवत् = सूर्यके सदृश
आत्मनः	= अन्तःकरणका	तत्परम् = { उस सच्चिदानन्द- घन परमात्माको
अज्ञानम्	= अज्ञान	
ज्ञानेन	= आत्मज्ञानद्वारा	
नाशितम्	= नाश हो गया है	प्रकाशयति = प्रकाशता है*
तेषाम्	= उनका	

परमात्मामें तद्बुद्ध्यस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तत्परायणाः ।
तद्रूप हुए महा- गच्छन्त्यपुनरावृत्तिं ज्ञाननिर्धूतकल्मषाः ॥१७॥
त्माओंको परम- गच्छन्ति, तद्बुद्ध्यः, तदात्मानः, तन्निष्ठाः, तत्परायणाः,
गतिकी प्राप्ति। अपुनरावृत्तिम्, ज्ञाननिर्धूतकल्मषाः ॥१७॥

और हे अर्जुन-

तद्बुद्ध्यः = { तद्रूप है बुद्धि जिनकी (तथा)	तन्निष्ठाः = { उस सच्चिदानन्द- घन परमात्मामें ही है निरन्तर एकी- भावसे स्थिति जिनकी ऐसे
तदात्मानः = { तद्रूप है मन जिनका (और)	

* अर्थात् परमात्माके स्वरूपको साक्षात् कराता है ।

तत्परायणाः = { तत्परायण
पुरुष
अपुनरा-वृत्तिम् = { अपुनरावृत्ति-
को अर्थात्
परमगतिको
ज्ञाननिर्धूत- = { ज्ञानके द्वारा
कल्मषाः = { पापरहित हुए गच्छन्ति = प्राप्त होते हैं

ज्ञानियों के विद्याविनयसंपन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि ।

समत्व भावका शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः ॥

कथन और उनकी महिमा । विद्याविनयसंपन्ने, ब्राह्मणे, गवि, हस्तिनि,
शुनि, च, एव, श्वपाके, च, पण्डिताः, समदर्शिनः ॥१८॥

ऐसे वे-

पण्डिताः	= ज्ञानीजन	शुनि	= कुत्ते (और)
विद्याविनय-	= { विद्या और	श्वपाके	= चाण्डालमें
संपन्ने	= { विनययुक्त	च	= भी
ब्राह्मणे	= ब्राह्मणमें	सम-	= { समभावसे*
च	= तथा	दर्शिनः	= { देखनेवाले
गवि	= गौ	एव	= ही (होते हैं)
हस्तिनि	= हाथी		

[,] इहैव तैर्जितः सर्गो येषां साम्ये स्थितं मनः ।

निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्माद्ब्रह्मणि ते स्थिताः ॥

इह, एव, तैः, जितः, सर्गः, येषाम्, साम्ये, स्थितम्, मनः,
निर्दोषम्, हि, समम्, ब्रह्म, तस्मात्, ब्रह्मणि, ते, स्थिताः ॥१९॥

इसलिये-

येषाम्	= जिनका	साम्ये	= समत्वभावमें
मनः	= मन	स्थितम्	= स्थित है

* इसका विस्तार गीता अ० ६ श्लोक ३२ की टिप्पणीमें देखना चाहिये ।

तैः = उनके द्वारा
 इह = इस जीवित अवस्थामें
 एव = ही
 सर्गः = संपूर्ण संसार
 जितः = जीत लिया गया*
 हि = क्योंकि
 ब्रह्म = { सच्चिदानन्दघन
 परमात्मा

निर्दोषम् = निर्दोष (और)
 समम् = सम है
 तस्मात् = इससे
 ते = वे
 ब्रह्मणि = { सच्चिदानन्दघन
 परमात्मामें ही
 स्थिताः = स्थित हैं

ब्रह्मज्ञानीके
 लक्षण और उस-
 को अक्षय सुख-
 की प्राप्ति ।

न प्रहृष्येत्प्रियं प्राप्य नोद्विजेत्प्राप्य चाप्रियम् ।
 स्थिरबुद्धिरसंमूढो ब्रह्मविद्ब्रह्मणि स्थितः ॥२०॥

न, प्रहृष्येत्, प्रियम्, प्राप्य, न, उद्विजेत्, प्राप्य, च, अप्रियम्,
 स्थिरबुद्धिः, असंमूढः, ब्रह्मविद्, ब्रह्मणि, स्थितः ॥२०॥

और जो पुरुष-

प्रियम् = { प्रियको अर्थात्
 जिसको लोग
 प्रिय समझते हैं
 उसको

प्राप्य = प्राप्त होकर

न प्रहृष्येत् = हर्षित नहीं हो

च = और

अप्रियम् = { अप्रियको
 अर्थात् जिस-
 को लोग अप्रिय
 समझते हैं उसको

प्राप्य = प्राप्त होकर
 न उद्विजेत् = उद्वेगवान् न हो
 (ऐसा)

स्थिरबुद्धिः = स्थिरबुद्धि

असंमूढः = संशयरहित

ब्रह्मविद् = ब्रह्मवेत्ता पुरुष

ब्रह्मणि = { सच्चिदानन्द-
 घन परब्रह्म
 परमात्मामें

स्थितः = { एकीभावसे
 नित्य स्थित है

* अर्थात् वे जीते हुए ही संसारसे मुक्त हैं ।

[,] बाह्यस्पर्शेष्वसक्तात्मा विन्दत्यात्मनि यत्सुखम् ।

स ब्रह्मयोगयुक्तात्मा सुखमक्षयमश्नुते ॥२१॥

बाह्यस्पर्शेषु, असक्तात्मा, विन्दति, आत्मनि, यत्, सुखम्,
सः, ब्रह्मयोगयुक्तात्मा, सुखम्, अक्षयम्, अश्नुते ॥२१॥

और—

बाह्य- स्पर्शेषु	= { बाहरके विषयों- में अर्थात् सांसारिक भोगोंमें	(तत्) = उसको विन्दति = प्राप्त होता है (और)
असक्तात्मा	= { आसक्तिरहित अन्तःकरण- वाला पुरुष	सः = वह पुरुष ब्रह्मयोग- युक्तात्मा = { सच्चिदानन्दधन परब्रह्म परमात्मा- रूप योगमें एकी- भावसे स्थित हुआ
आत्मनि	= अन्तःकरणमें	
यत्	= जो	
सुखम्	= { भगवत्-ध्यान- जनित आनन्द है	अक्षयम् = अक्षय सुखम् = आनन्दको अश्नुते = अनुभव करता है

विषयभोगोंकी ये हि संस्पर्शजा भोगा दुःखयोनय एव ते ।

निन्दा ।

आद्यन्तवन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुधः ॥२२॥

ये, हि, संस्पर्शजाः, भोगाः, दुःखयोनयः, एव, ते,
आद्यन्तवन्तः, कौन्तेय, न, तेषु, रमते, बुधः ॥२२॥

और—

ये	= जो (यह)	{ इन्द्रिय तथा संस्पर्शजाः { विषयोंके संयोगसे उत्पन्न होनेवाले
----	----------------	--

भोगाः	= सब भोग हैं				
ते	= वे				
	(यद्यपि विषयी				
	पुरुषोंको सुख-				
	रूप भासते हैं				
	तो भी)				
हि	= निःसन्देह				
दुःखयोनयः	= { दुःखके ही				
एव	{ हेतु हैं				
	(और)				
		आद्यन्तवन्तः	= { आदि अन्त-		
			वाले अर्थात्		
			{ अनित्य हैं		
			(इसलिये)		
		कौन्तेय	= हे अर्जुन		
		बुधः	= { बुद्धिमान्		
			{ विवेकी पुरुष		
		तेषु	= उनमें		
		न	= नहीं		
		रमते	= रमता		

काम-क्रोधके शक्नोतीहैव यः सोढुं प्राक्शरीरविमोक्षणात् ।
वेगको जीतनेवाले
योगीकी प्रशंसा । कामक्रोधोद्भवं वेगं स युक्तः स सुखी नरः ॥

शक्नोति, इह, एव, यः, सोढुम्, प्राक्, शरीरविमोक्षणात्,
कामक्रोधोद्भवम्, वेगम्, सः, युक्तः, सः, सुखी, नरः ॥२३॥

यः	= जो मनुष्य	शक्नोति	= समर्थ है अर्थात्
शरीर-	= { शरीरके नाश		काम क्रोधको
विमोक्षणात्	{ होनेसे		जिसने सदाके
प्राक्	= पहिले		लिये जीत लिया है
एव	= ही	सः	= वह
काम-	= { काम और	नरः	= मनुष्य
क्रोधोद्भवम्	{ क्रोधसे उत्पन्न	इह	= इस लोकमें
	{ हुए	युक्तः	= योगी है (और)
वेगम्	= वेगको	सः	= वही
सोढुम्	= सहन करनेमें	सुखी	= सुखी है

ज्ञानी महात्मा- योऽन्तःसुखोऽन्तरारामस्तथान्तज्योतिरेव यः ।
 ओंके लक्षण और स योगी ब्रह्मनिर्वाणं ब्रह्मभूतोऽधिगच्छति ॥
 उनको निर्वाण ब्रह्मकी प्राप्ति । यः, अन्तःसुखः, अन्तरारामः, तथा, अन्तज्योतिः, एव, यः,
 सः, योगी, ब्रह्मनिर्वाणम्, ब्रह्मभूतः, अधिगच्छति ॥२४॥

यः	= जो पुरुष	अन्तज्योतिः=	{ आत्मामें ही
एव	= निश्चय करके		{ ज्ञानवाला है
			(ऐसा)
अन्तःसुखः	= { अन्तर आत्मामें ही सुखवाला है (और)	सः	= वह
			{ सच्चिदानन्द- वन परब्रह्म
अन्तरारामः	= { आत्मामें ही आरामवाला है	ब्रह्मभूतः	= { परमात्माके साथ एकी- भाव हुआ
तथा	= तथा	योगी	= सांख्ययोगी
यः	= जो	ब्रह्मनिर्वाणम्	= शान्त ब्रह्मको
		अधिगच्छति	= प्राप्त होता है

[„] लभन्ते ब्रह्मनिर्वाणमृषयः क्षीणकल्मषाः ।

छिन्नद्वैधा यतात्मानः सर्वभूतहिते रताः ॥२५॥

लभन्ते, ब्रह्मनिर्वाणम्, ऋषयः, क्षीणकल्मषाः,
 छिन्नद्वैधाः, यतात्मानः, सर्वभूतहिते, रताः ॥२५॥

और-

क्षीण- कल्मषाः	= { नाश हो गये हैं सब पाप जिनके (तथा)	छिन्नद्वैधाः	= { ज्ञान करके निवृत्त हो गया है संशयजिनका
-------------------	---	--------------	--

	(और)		(ऐसे)
सर्वभूत- हिते रताः	= { संपूर्ण भूत प्राणियोंके हितमें है रति जिनकी	ऋषयः	= ब्रह्मवेत्ता पुरुष
यतात्मानः	= { एकाग्र हुआ है भगवान्‌के ध्यानमें चित्त जिनका	ब्रह्म- निर्वाणम्	= { शान्त परब्रह्मको
		लभन्ते	= प्राप्त होते हैं

[„] कामक्रोधवियुक्तानां यतीनां यतचेतसाम् ।
अभितो ब्रह्मनिर्वाणं वर्तते विदितात्मनाम् ॥२६॥

कामक्रोधवियुक्तानाम्, यतीनाम्, यतचेतसाम्,
अभितः, ब्रह्मनिर्वाणम्, वर्तते, विदितात्मनाम् ॥२६॥

और-

कामक्रोध- वियुक्तानाम्	= { काम क्रोधसे रहित	यतीनाम्	= { ज्ञानी पुरुषोंके छिये
यतचेतसाम्	= { जीते हुए चित्तवाले	अभितः	= सब ओरसे
विदिता- त्मनाम्	= { परब्रह्म परमात्माका साक्षात्कार किये हुए	ब्रह्म- निर्वाणम्	= { शान्त परब्रह्म परमात्मा ही
		वर्तते	= प्राप्त है

संक्षेपसे फल-सहित ध्यान-योगका कथन ।
स्पर्शान्कृत्वा बहिर्बाह्यांश्चक्षुश्चैवान्तरे भ्रुवोः ।
प्राणापानौ समौ कृत्वा नासाभ्यन्तरचारिणौ ॥

स्पर्शान्, कृत्वा, वहिः, बाह्यान्, चक्षुः, च, एव, अन्तरे, भ्रुवोः,
प्राणापानौ, समौ, कृत्वा, नासाभ्यन्तरचारिणौ ॥ २७ ॥

और हे अर्जुन-

बाह्यान्	= बाहरके	अन्तरे	= बीचमें
स्पर्शान्	= विषय भोगोंको (न चिन्तन करता हुआ)		(स्थित करके) (तथा)
वहिः	= बाहर	नासा-	= { नासिकामें विचरनेवाले
एव	= ही	भ्यन्तर-	
कृत्वा	= त्यागकर	चारिणौ	
च	= और	प्राणापानौ	= { प्राण और अपान वायुको
चक्षुः	= नेत्रोंकी दृष्टिको	समौ	= सम
भ्रुवोः	= भृकुटीके	कृत्वा	= करके

[„] यतेन्द्रियमनोबुद्धिर्मुनिर्मोक्षपरायणः ।

विगतेच्छाभयक्रोधो यः सदा मुक्त एव सः ॥

यतेन्द्रियमनोबुद्धिः, मुनिः, मोक्षपरायणः,

विगतेच्छाभयक्रोधः, यः, सदा, मुक्तः, एव, सः ॥२८॥

यतेन्द्रिय-	= { जीती हुई हैं इन्द्रियां मन और बुद्धि जिसकी ऐसा	यः	= जो
मनोबुद्धिः		मोक्ष-	} = मोक्षपरायण
		परायणः	
		मुनिः	= मुनि*

* परमेश्वरके स्वरूपका निरन्तर मनन करनेवाला ।

विगतेच्छा-	{ इच्छा भय	सदा	= सदा
भयक्रोधः	{ और क्रोधसे	मुक्तः	= मुक्त
	{ रहित है	एव	= ही है
सः	= वह		

प्रभावसहित परमेश्वर को जाननेसे शान्ति की प्राप्ति । भोक्तारं यज्ञतपसां सर्वलोकमहेश्वरम् ।
सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छति ॥ २६ ॥

भोक्तारम्, यज्ञतपसाम्, सर्वलोकमहेश्वरम्,
सुहृदम्, सर्वभूतानाम्, ज्ञात्वा, माम्, शान्तिम्, ऋच्छति ॥ २९ ॥

और हे अर्जुन मेरा भक्त-

माम्	= मेरेको	सर्व-	= { संपूर्ण भूत-
यज्ञतपसाम्	= { यज्ञ और	भूतानाम्	= { प्राणियोंका
	{ तपोंका		
भोक्तारम्	= भोगनेवाला	सुहृदम्	= { सुहृद् अर्थात्
(और)			{ स्वार्थरहित
			{ प्रेमी
			(ऐसा)
सर्वलोक-	= { संपूर्ण लोकोंके	ज्ञात्वा	= तत्त्वसे जानकर
महेश्वरम्	= { ईश्वरोंका भी	शान्तिम्	= शान्तिको
	{ ईश्वर	ऋच्छति	= प्राप्त होता है
	(तथा)		

और सच्चिदानन्दघन परिपूर्ण शान्त ब्रह्मके सिवाय उसकी दृष्टिमें
और कुछ भी नहीं रहता केवल वासुदेव ही वासुदेव रह जाता है ।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां
योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे कर्मसंन्यासयोगो

नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥५॥

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

अथ षष्ठोऽध्यायः

प्रधान विषय—१ से ४ तक निष्काम कर्मयोगका विषय और योगारूढ़ पुरुषके लक्षण, (५-१०) आत्मउद्धारके लिये प्रेरणा और भगवत्-प्राप्तिवाले पुरुषके लक्षण, (११-३२) विस्तारसे ध्यानयोगका विषय, (३३-३६) मनके निग्रहका विषय, (३७-४७) योगभ्रष्ट पुरुषकी गतिका विषय और ध्यानयोगीकी महिमा ।

श्रीभगवानुवाच

निष्काम कर्म-
योगीकी प्रशंसा

अनाश्रितः कर्मफलं कार्यं कर्म करोति यः ।

स संन्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रियः ॥१॥

अनाश्रितः, कर्मफलम्, कार्यम्, कर्म, करोति, यः,

सः, संन्यासी, च, योगी, च, न, निरग्निः, न, च, अक्रियः ॥१॥

उसके उपरान्त श्रीकृष्णमहाराज बोले हे अर्जुन—

यः = जो पुरुष
कर्मफलम् = कर्मके फलको
अनाश्रितः = न चाहता हुआ
कार्यम् = करने योग्य
कर्म = कर्म
करोति = करता है
सः = वह
संन्यासी = संन्यासी
च = और
योगी = योगी है

च = और (केवल)
निरग्निः = { अग्निको
 { त्यागनेवाला
 (संन्यासी योगी)
न = नहीं है
च = तथा (केवल)
अक्रियः = { क्रियाओंको
 { त्यागनेवाला
 (भी संन्यासी योगी)
न = नहीं है

संन्यास और
निष्कामकर्मयोग
की एकता ।

यं संन्यासमिति प्राहुर्योगं तं विद्धि पाण्डव ।

न ह्यसंन्यस्तसंकल्पो योगी भवति कश्चन ॥२॥

यम्, संन्यासम्, इति, प्राहुः, योगम्, तम्, विद्धि, पाण्डव,
न, हि, असंन्यस्तसंकल्पः, योगी, भवति, कश्चन ॥२॥

इसलिये—

पाण्डव	= हे अर्जुन	हि	= क्योंकि
यम्	= जिसको	असंन्यस्त-	= { संकल्पोंको न
संन्यासम्	= संन्यास*	संकल्पः	= { त्यागनेवाला
इति	= ऐसा	कश्चन	= कोई भी पुरुष
प्राहुः	= कहते हैं	योगी	= योगी
तम्	= उसीको (तूं)	न	= नहीं
योगम्	= योग †	भवति	= होता
विद्धि	= जान		

मुमुक्षुके लिये
कल्याणके उपाय
का कथन ।

आरुरुक्षोर्मुनेर्योगं कर्म कारणमुच्यते ।

योगारूढस्य तस्यैव शमः कारणमुच्यते ॥३॥

आरुरुक्षोः, मुनेः, योगम्, कर्म, कारणम्, उच्यते,
योगारूढस्य, तस्य, एव, शमः, कारणम्, उच्यते ॥३॥

और—

योगम्	= { समत्वबुद्धि- रूप योगमें	मुनेः	= { मननशील पुरुषके लिये
आरुरुक्षोः	= { आरूढ़ होने- की इच्छावाले		(योगकी प्राप्तिमें)

*—गीता अ० ३ श्लोक ३ की टिप्पणीमें इसका खुलासा अर्थ लिखा है।

कर्म = { निष्कामभावसे
कर्म करना ही

कारणम् = हेतु

उच्यते = कहा है
(और योगारूढ
हो जानेपर)

तस्य = उस

योगारूढस्य = { योगारूढ
पुरुषके लिये

शमः = { सर्व संकल्पों-
का अभाव

एव = ही (कल्याणमें)

कारणम् = हेतु

उच्यते = कहा है

योगारूढ पुरुष यदा हि नेन्द्रियार्थेषु न कर्मस्वनुषज्जते ।
के लक्षण ।

सर्वसंकल्पसंन्यासी योगारूढस्तदोच्यते ॥४॥

यदा, हि, न, इन्द्रियार्थेषु, न, कर्मसु, अनुषज्जते,
सर्वसंकल्पसंन्यासी, योगारूढः, तदा, उच्यते ॥ ४ ॥

और-

यदा = जिस कालमें

न = न (तो)

इन्द्रियार्थेषु = { इन्द्रियोंके
भोगोंमें

(अनुषज्जते) = { आसक्त
होता है
(तथा)

न = न

कर्मसु = कर्मोंमें

हि = ही

अनुषज्जते = { आसक्त
होता है

तदा = उस कालमें

सर्वसंकल्प-
संन्यासी = { सर्व संकल्पोंका
त्यागी पुरुष

योगारूढः = योगारूढ

उच्यते = कहा जाता है

अपना उद्धार उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत् ।

करनेके लिये आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः ॥५॥
प्रेरणा ।

उद्धरेत्, आत्मना, आत्मानम्, न, आत्मानम्, अवसादयेत्,
आत्मा, एव, हि, आत्मनः, बन्धुः, आत्मा, एव, रिपुः, आत्मनः ॥५॥

और यह योगारूढता कल्याणमें हेतु कही है इसलिये मनुष्यको चाहिये कि

आत्मना = अपने द्वारा

आत्मानम् = आपका

(संसारसमुद्रसे)

उद्धरेत् = उद्धार करे

(और)

आत्मानम् = { अपने
आत्माको

न { अधोगतिमें
अवसादयेत् = { न पहुंचावे

हि = क्योंकि (यह)

आत्मा = जीवात्मा आप

एव = ही (तो)

आत्मनः = अपना

बन्धुः = मित्र है (और)

आत्मा = आप

एव = ही

आत्मनः = अपना

रिपुः = शत्रु है

अर्थात् और कोई दूसरा शत्रु या मित्र नहीं है ।

[१०] बन्धुरात्मात्मनस्तस्य येनात्मैवात्मना जितः ।

अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत् ॥६॥

बन्धुः, आत्मा, आत्मनः, तस्य, येन, आत्मा, एव, आत्मना,
जितः, अनात्मनः, तु, शत्रुत्वे, वर्तेत, आत्मा, एव, शत्रुवत् ॥६॥

तस्य = उस

आत्मनः = जीवात्माका तो
(वह)

आत्मा = आप

एव = ही

बन्धुः = मित्र है (कि)

येन = जिस

आत्मना = जीवात्माद्वारा

आत्मा = { मन और इन्द्रियों-
सहित शरीर

जितः = जीता हुआ है

तु = और

अनात्मनः = { जिसके द्वारा
मन और
इन्द्रियोंसहित
शरीर नहीं
जीता गया है
उसका (वह)

आत्मा = आप

एव	= ही	शत्रुत्वे	= शत्रुतामें
शत्रुवत्	= शत्रुके सदृश	वर्तेत	= वर्तता है

परमात्माको
प्राप्त हुए योगीके
लक्षण ।

जितात्मनः प्रशान्तस्य परमात्मा समाहितः ।
शीतोष्णसुखदुःखेषु तथा मानापमानयोः ॥७॥

जितात्मनः, प्रशान्तस्य, परमात्मा, समाहितः,
शीतोष्णसुखदुःखेषु, तथा, मानापमानयोः ॥ ७ ॥
और हे अर्जुन—

शीतोष्ण- सुखदुःखेषु	= { सर्दी गर्मी और सुख- दुःखादिकोंमें	जितात्मनः	= { स्वाधीन आत्मावाले पुरुषके (ज्ञानमें)
तथा	= तथा	परमात्मा	= { सच्चिदानन्द- घन परमात्मा
मानाप- मानयोः	= { मान और अपमानमें	समाहितः	= { सम्यक्प्रकारसे स्थित है अर्थात् उसके ज्ञानमें परमात्माके सिवाय अन्य कुछ है ही नहीं
प्रशान्तस्य	= { जिसके अन्तः- करणकी वृत्तियां अच्छी प्रकार शान्त हैं अर्थात् विकार- रहित हैं (ऐसे)		

[„] ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रियः ।

युक्त इत्युच्यते योगी समलोष्टाश्मकाञ्चनः ॥

ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा, कूटस्थः, विजितेन्द्रियः,
युक्तः, इति, उच्यते, योगी, समलोष्टाश्मकाञ्चनः ॥ ८ ॥

और—

ज्ञान-	{ ज्ञान विज्ञानसे	(तथा)
विज्ञान-	= { तृप्त है अन्तः-	{ समान है
तृप्तात्मा	{ करण जिसका	{ मिट्टी पत्थर
	(तथा)	{ और सुवर्ण
	समलोष्टाश्म-	{ जिसके (वह)
कूटस्थः	= { विकाररहित है	
	{ स्थिति जिसकी	योगी = योगी
	(और)	
	{ अच्छी प्रकार	युक्तः = { युक्त अर्थात्
विजितेन्द्रियः	= { जीती हुई हैं	{ भगवत्की
	{ इन्द्रियां	{ प्राप्तिवाला है
	{ जिसकी	इति = ऐसे
	उच्यते	= कहा जाता है

सबमें समबुद्धि-
वाले योगीकी
प्रशंसा ।

सुहृन्मित्रार्युदासीनमध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु ।
साधुष्वपि च पापेषु समबुद्धिर्विशिष्यते ॥६॥

सुहृन्मित्रार्युदासीनमध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु,
साधुषु, अपि, च, पापेषु, समबुद्धिः, विशिष्यते ॥ ९ ॥

और जो पुरुष—

सुहृद्	= सुहृद्*	(तथा)
मित्र	= मित्र	साधुषु = धर्मात्माओंमें
अरि	= वैरी	च = और
उदासीन	= उदासीन†	पापेषु = पापियोंमें
मध्यस्थ	= मध्यस्थ‡	अपि = भी
द्वेष्य	= द्वेषी (और)	समबुद्धिः = { समान भाव-
बन्धुषु	= बन्धुगणोंमें	{ वाला है

* स्वार्थरहित सबका हित करनेवाला । † पक्षपातरहित ।

‡ दोनों ओरकी भलाई चाहनेवाला ।

(वह)

विशिष्यते = अति श्रेष्ठ है

ध्यानयोगका
साधन करनेके
लिये प्रेरणा ।

योगी युञ्जीत सततमात्मानं रहसि स्थितः ।

एकाकी यतचित्तात्मा निराशीरपरिग्रहः ॥१०॥

योगी, युञ्जीत, सततम्, आत्मानम्, रहसि, स्थितः,

एकाकी, यतचित्तात्मा, निराशीः, अपरिग्रहः ॥१०॥

इसलिये उचित है कि-

यत-	= { जिसका मन और इन्द्रियोंसहित शरीर जीता हुआ है ऐसा	एकाकी	= अकेला ही
चित्तात्मा		रहसि	= एकान्त स्थानमें
		स्थितः	= स्थित हुआ
		सततम्	= निरन्तर
निराशीः	= वासनारहित (और)	आत्मानम्	= आत्माको
अपरिग्रहः	= संग्रह रहित	युञ्जीत	= { (परमेश्वरके ध्यानमें) लगावे
योगी	= योगी		

ध्यानयोगके
लिये आसन-
स्थापनकी विधि

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्मनः ।

नात्युच्छ्रितं नातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम् ॥११॥

शुचौ, देशे, प्रतिष्ठाप्य, स्थिरम्, आसनम्, आत्मनः,

न, अत्युच्छ्रितम्, न, अतिनीचम्, चैलाजिनकुशोत्तरम् ॥११॥

कैसे कि-

शुचौ	= शुद्ध	आत्मनः	= अपने
देशे	= भूमिमें	आसनम्	= आसनको
	= { कुशा मृगछाला और वस्त्र हैं उपरोपरि जिसके ऐसे	न	= न
चैलाजिन-		अत्युच्छ्रितम्	= अति ऊंचा (और)
कुशोत्तरम्		न	= न

अतिनीचम् = अति नीचा
स्थिरम् = स्थिर

प्रतिष्ठाप्य = स्थापन करके

आसनपर बैठ-
कर योग का
साधन करनेके
लिये कथन ।

तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेन्द्रियक्रियः ।

उपविश्यासने युञ्ज्याद्योगमात्मविशुद्धये ॥१२॥

तत्र, एकाग्रम्, मनः, कृत्वा, यतचित्तेन्द्रियक्रियः,
उपविश्य, आसने, युञ्ज्यात्, योगम्, आत्मविशुद्धये ॥१२॥

और-

तत्र = उस
आसने = आसनपर
उपविश्य = बैठकर
(तथा)
मनः = मनको
एकाग्रम् = एकाग्र
कृत्वा = करके

यत-चित्त और
चित्तेन्द्रिय-इन्द्रियोंकी
क्रियः क्रियाओंको वश-
में किया हुआ
आत्म- = { अन्तःकरणकी
विशुद्धये = { शुद्धिके लिये
योगम् = योगका
युञ्ज्यात् = अभ्यास करे

ध्यानयोगकी विधि । समं कायशिरोग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरः ।

संप्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन् ॥१३॥

समम्, कायशिरोग्रीवम्, धारयन्, अचलम्, स्थिरः,
संप्रेक्ष्य, नासिकाग्रम्, स्वं, दिशः, च, अनवलोकयन् ॥१३॥

उसकी विधि इस प्रकार है कि-

कायशिरो-	= { काया शिर और ग्रीवाको	अचलम्	= अचल
ग्रीवम्		धारयन्	= धारण किये हुए
समम्	= समान	स्थिरः	= दृढ़
च	= और		(होकर)

स्वम्	= अपने	दिशः	= { अन्य
नासिकाग्रम्	= { नासिकाके		{ दिशाओंको
	{ अग्रभागको	अनव-	= { न देखता
संग्रेक्ष्य	= देखकर	लोकयन्	{ हुआ

[„] प्रशान्तात्मा विगतभीर्ब्रह्मचारिव्रते स्थितः ।

मनः संयम्य मच्चित्तो युक्त आसीत् मत्परः ॥१४॥

प्रशान्तात्मा, विगतभीः, ब्रह्मचारिव्रते, स्थितः,

मनः, संयम्य, मच्चित्तः, युक्तः, आसीत्, मत्परः ॥१४॥

और—

ब्रह्मचारि-	= { ब्रह्मचर्यके	युक्तः	= सावधान
व्रते	{ व्रतमें		(होकर)
स्थितः	= { स्थित रहता	मनः	= मनको
	{ हुआ	संयम्य	= वशमें करके
विगतभीः	= भयरहित (तथा)	मच्चित्तः	= { मेरेमें लगे हुए
	{ अच्छी प्रकार		{ चित्तवाला
प्रशान्तात्मा	= { शान्त अन्तः-		(और)
	{ करणवाला	मत्परः	= मेरे परायण हुआ
	(और)	आसीत्	= स्थित होवे

ध्यानयोगका

युञ्जन्नेवं सदात्मानं योगी नियतमानसः ।

फल ।

शान्तिं निर्वाणपरमां मत्संस्थामधिगच्छति ॥१५॥

युञ्जन्, एवम्, सदा, आत्मानम्, योगी, नियतमानसः,

शान्तिम्, निर्वाणपरमाम्, मत्संस्थाम्, अधिगच्छति ॥१५॥

एवम् = इस प्रकार | आत्मानम् = आत्माको

सदा	= निरन्तर	मत्संस्थाम्	= { मेरेमें स्थिति- रूप
युञ्जन्	= { (परमेश्वरके स्वरूपमें) लगाता हुआ	निर्वाण-	= { परमानन्द
नियत-	= { स्वाधीन मन-	परमाम्	= { पराकाष्ठा- वाली
मानसः	= { वाला	शान्तिम्	= शान्तिको
योगी	= योगी	अधिगच्छति	= प्राप्त होता है

अनियमित
भोजनादिकरने-
वालेको योगकी
अप्राप्ति ।

नात्यश्नतस्तु योगोऽस्ति न चैकान्तमनश्नतः।

न चाति स्वप्नशीलस्य जाग्रतो नैव चार्जुन ॥१६॥

न, अति, अश्नतः, तु, योगः, अस्ति, न, च, एकान्तम्, अनश्नतः,

न, च, अति, स्वप्नशीलस्य, जाग्रतः, न, एव, च, अर्जुन ॥१६॥

परन्तु-

अर्जुन	= हे अर्जुन	च	= तथा
योगः	= यह योग	न	= न
न	= न	अति	= अति
तु	= तो	स्वप्न-	= { शयन करनेके
अति	= बहुत	शीलस्य	= { स्वभाववालेका
अश्नतः	= खानेवालेका	च	= और
अस्ति	= सिद्ध होता है	न	= न
च	= और	जाग्रतः	= { अत्यन्त जागनेवालेका
न	= न	एव	= ही
एकान्तम्	= बिल्कुल		(सिद्ध होता है)
अनश्नतः	= न खानेवालेका		

नियमित आहार युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु ।
 विहार आदि युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा ॥१७॥
 करने वालेको योगकी प्राप्ति । युक्ताहारविहारस्य, युक्तचेष्टस्य, कर्मसु,
 युक्तस्वप्नावबोधस्य, योगः, भवति, दुःखहा ॥ १७ ॥

यह-

दुःखहा	= { दुःखोंका नाश करनेवाला	युक्त-चेष्टस्य	= { यथायोग्य चेष्टा करने-वालेका (और)
योगः	= योग (तो)		
युक्ताहार-विहारस्य	= { यथायोग्य आहार और विहार करने-वालेका (तथा)	युक्तस्वप्नावबोधस्य	= { यथायोग्य शयन करने तथा जागने-वालेका (ही) (सिद्ध)
कर्मसु	= कर्मोंमें	भवति	= होता है

योगयुक्त पुरुष- यदा विनियतं चित्तमात्मन्येवावतिष्ठते ।

का लक्षण ।

निःस्पृहः सर्वकामेभ्यो युक्त इत्युच्यते तदा ॥१८॥

यदा, विनियतम्, चित्तम्, आत्मनि, एव, अवतिष्ठते,

निःस्पृहः, सर्वकामेभ्यः, युक्तः, इति, उच्यते, तदा ॥१८॥

इस प्रकार योगके अभ्याससे-

विनियतम्	= { अत्यन्त वशमें किया हुआ	एव	= ही
चित्तम्	= चित्त	अवतिष्ठते	= { भली प्रकार स्थित हो जाता है
यदा	= जिस कालमें	तदा	= उस कालमें
आत्मनि	= परमात्मा में		

सर्व-	= { संपूर्ण	युक्तः	= योगयुक्त
कामेभ्यः	= { कामनाओंसे	इति	= ऐसा
निःस्पृहः	= { स्पृहारहित	उच्यते	= कहा जाता है
	= { हुआ पुरुष		

दीपकके दृष्टान्त-
से योगीके चित्त
की उपमा ।

यथा दीपो निवातस्थो नेङ्गते सोपमा स्मृता ।

योगिनो यतचित्तस्य युञ्जतो योगमात्मनः ॥१६॥

यथा, दीपः, निवातस्थः, न, इङ्गते, सा, उपमा, स्मृता,
योगिनः, यतचित्तस्य, युञ्जतः, योगम्, आत्मनः ॥१९॥

और-

यथा	= जिस प्रकार	उपमा	= उपमा
निवातस्थः	= { वायुरहित	आत्मनः	= परमात्माके
	= { स्थानमें स्थित	योगम्	= { ध्यानमें लगे
दीपः	= दीपक	युञ्जतः	= { हुए
न	= नहीं	योगिनः	= योगीके
इङ्गते	= { चलायमान	यतचित्तस्य	= { जीते हुए
	= { होता है		= { चित्तकी
सा	= वैसी ही	स्मृता	= कही गई है

६ यानयोग की

परिपक्व अवस्था-

के लक्षण और

ध्यानयोगी के

आनन्द की

महिमा ।

यत्रोपरमते चित्तं निरुद्धं योगसेवया ।

यत्र चैवात्मनात्मानं पश्यन्नात्मनि तुष्यति ॥२०॥

यत्र, उपरमते, चित्तम्, निरुद्धम्, योगसेवया,

यत्र, च, एव, आत्मना, आत्मानम्, पश्यन्, आत्मनि, तुष्यति ॥

और हे अर्जुन-

यत्र	= जिस अवस्थामें	निरुद्धम्	= निरुद्ध हुआ
योगसेवया	= { योगके	चित्तम्	= चित्त
	= { अभ्याससे	उपरमते	= उपराम हो जाता है

च	= और	पश्यन्	= { साक्षात् करता
यत्र	= जिस अवस्थामें		{ हुआ
	(परमेश्वरके ध्यानसे)	आत्मनि	= { सच्चिदानन्द-
आत्मना	= { शुद्ध हुई सूक्ष्म		{ घन परमात्मा में
	{ बुद्धिद्वारा	एव	= ही
आत्मानम्	= परमात्माको	तुष्यति	= संतुष्ट होता है

[„] सुखमात्यन्तिकं यत्तद्बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम् ।

वेत्ति यत्र न चैवायं स्थितश्चलति तत्त्वतः ॥२१॥

सुखम्, आत्यन्तिकम्, यत्, तत्, बुद्धिग्राह्यम्, अतीन्द्रियम्,
वेत्ति, यत्र, न, च, एव, अयम्, स्थितः, चलति, तत्त्वतः ॥२१॥

तथा—

अतीन्द्रियम्	= { इन्द्रियोसे	तत्	= उसको
	{ अतीत	यत्र	= जिस अवस्थामें
	{ केवल शुद्ध	वेत्ति	= अनुभव करता है
	{ हुई सूक्ष्म	च	= और
बुद्धिग्राह्यम्	= { बुद्धिद्वारा	(यत्र)	= जिस अवस्थामें
	{ ग्रहण करने	स्थितः	= स्थित हुआ
	{ योग्य	अयम्	= यह योगी
यत्	= जो	तत्त्वतः	= भगवत्स्वरूपसे
आत्यन्तिकम्	= अनन्त	न एव	= नहीं
सुखम्	= आनन्द है	चलति	= चलायमान होता है

[„] यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः ।

यस्मिन्स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते ॥

यम्, लब्ध्वा, च, अपरम्, लाभम्, मन्यते, न, अधिकम्, ततः,
यस्मिन्, स्थितः, न, दुःखेन, गुरुणा, अपि, विचाल्यते ॥२२॥

और-

यम्	= { (परमेश्वरकी प्राप्तिरूप) जिस लाभको	च	= और
लब्ध्वा	= प्राप्त होकर	यस्मिन्	= { (भगवत्-प्राप्ति-रूप) जिस अवस्थामें
ततः	= उससे	स्थितः	= स्थित हुआ योगी
अधिकम्	= अधिक	गुरुणा	= बड़े भारी
अपरम्	= दूसरा (कुछ भी)	दुःखेन	= दुःखसे
लाभम्	= लाभ	अपि	= भी
न	= नहीं	न	= { चलायमान
मन्यते	= मानता है	विचाल्यते	= { नहीं होता है

तत्पर होकर तं विद्याद्दुःखसंयोगवियोगं योगसंज्ञितम् ।
ध्यानयोग करने-
के लिये कथन । स निश्चयेन योक्तव्यो योगोऽनिर्विण्णचेतसा ॥२३॥

तम्, विद्यात्, दुःखसंयोगवियोगम्, योगसंज्ञितम्,
सः, निश्चयेन, योक्तव्यः, योगः, अनिर्विण्णचेतसा ॥२३॥

और जो-

दुःख-	= { दुःखरूप संसार-	सः	= वह
संयोग-	= { के संयोगसे	योगः	= योग
वियोगम्	= { रहित है (तथा)	अनिर्विण्ण-	= { न उक्तताये हुए
योग-	= { जिसका नाम	चेतसा	= { चित्तसे अर्थात्
संज्ञितम्	= { योग है		{ तत्पर हुए चित्तसे
तम्	= उसको	निश्चयेन	= निश्चयपूर्वक
विद्यात्	= जानना चाहिये	योक्तव्यः	= करना कर्तव्य है

अचिन्त्यस्वरूप
परमात्मा के
ध्यानकी विधि।

संकल्पप्रभवान्कामास्त्यक्त्वा सर्वानशेषतः ।

मनसैवेन्द्रियग्रामं विनियम्य समन्ततः ॥२४॥

संकल्पप्रभवान्, कामान्, त्यक्त्वा, सर्वान्, अशेषतः,
मनसा, एव, इन्द्रियग्रामम्, विनियम्य, समन्ततः ॥२४॥

इसलिये मनुष्यको चाहिये कि-

संकल्प- प्रभवान्	= { संकल्पसे उत्पन्न होनेवाली	मनसा	= मनके द्वारा
सर्वान्	= संपूर्ण	इन्द्रियग्रामम्	= { इन्द्रियोंके समुदायको
कामान्	= कामनाओंको	समन्ततः	= सब ओरसे
अशेषतः	= { निःशेषतासे अर्थात् वासना और आसक्ति- सहित	एव	= ही
त्यक्त्वा	= त्यागकर	विनियम्य	= { अच्छी प्रकार वशमें करके

[„] शनैः शनैरुपरमेद्बुद्ध्या धृतिगृहीतया ।

आत्मसंस्थं मनः कृत्वा न किञ्चिदपि चिन्तयेत् ॥

शनैः, शनैः, उपरमेत्, बुद्ध्या, धृतिगृहीतया,
आत्मसंस्थम्, मनः, कृत्वा, न, किञ्चित्, अपि, चिन्तयेत् ॥२५॥

शनैः	= { क्रम क्रमसे (अभ्यास	धृति- गृहीतया	= धैर्ययुक्त
शनैः	= { करता हुआ)	बुद्ध्या	= बुद्धिद्वारा
उपरमेत्	= { उपरामताको प्राप्त होवे (तथा)	मनः	= मनको
		आत्म- संस्थम्	= { परमात्मामें स्थित

कृत्वा = करके
(परमात्माके
सिवाय और)

किंचित् = कुछ
अपि = भी
न चिन्तयेत् = चिन्तन न करे

मनको परमात्मा
में लगानेका
उपाय ।

यतो यतो निश्चरति मनश्चञ्चलमस्थिरम् ।

ततस्ततो नियम्यैतदात्मन्येव वशं नयेत् ॥२६॥

यतः, यतः, निश्चरति, मनः, चञ्चलम्, अस्थिरम्,
ततः, ततः, नियम्य, एतत्, आत्मनि, एव, वशम्, नयेत् ॥२६॥

परन्तु जिसका मन वशमें नहीं हुआ हो उसको चाहिये कि-

एतत् = यह
अस्थिरम् = { स्थिर न रहने-
वाला (और)

ततः = उस
ततः = उससे
नियम्य = रोककर
(बारम्बार)

चञ्चलम् = चञ्चल
मनः = मन
यतः = { जिस जिस
यतः = { कारणसे

आत्मनि = परमात्मामें
एव = ही
वशम् = निरोध
नयेत् = करे

निश्चरति = { सांसारिक पदार्थों-
में विचरता है

ध्यानयोगसे
उत्तम और
अत्यन्त सुखकी
प्राप्ति ।

प्रशान्तमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम् ।

उपैति शान्तरजसं ब्रह्मभूतमकल्मषम् ॥२७॥

प्रशान्तमनसम्, हि, एनम्, योगिनम्, सुखम्, उत्तमम्,
उपैति, शान्तरजसम्, ब्रह्मभूतम्, अकल्मषम् ॥२७॥

हि = क्योंकि
प्रशान्त-
मनसम् = { जिसका मन
अच्छी प्रकार
शान्त है (और)

अकल्मषम् = { जो पापसे
रहित है (और)

शान्त-	{ जिसका रजोगुण शान्त हो गया है ऐसे	योगिनम् = योगीको
रजसम् = इस		उत्तमम् = अति उत्तम
ब्रह्म-	{ सच्चिदानन्दघन ब्रह्मके साथ एकीभाव हुए	सुखम् = आनन्द
भूतम्		उपैति = प्राप्त होता है

[„] युञ्जन्नेवं सदात्मानं योगी विगतकल्मषः ।

सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यन्तं सुखमश्नुते ॥२८॥

युञ्जन्, एवम्, सदा, आत्मानम्, योगी, विगतकल्मषः,
सुखेन, ब्रह्मसंस्पर्शम्, अत्यन्तम्, सुखम्, अश्नुते ॥२८॥

और वह-

विगतकल्मषः = पापरहित	सुखेन = सुखपूर्वक
योगी = योगी	ब्रह्म- = { परब्रह्म संस्पर्शम् = { परमात्माकी प्राप्तिरूप
एवम् = इस प्रकार	
सदा = निरन्तर	अत्यन्तम् = अनन्त
आत्मानम् = आत्माको	सुखम् = आनन्दको
युञ्जन् = { (परमात्मामें) लगाता हुआ	अश्नुते = अनुभव करता है

सर्वत्र आत्म-
दर्शनका कथन ।

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि ।

ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः ॥२९॥

सर्वभूतस्थम्, आत्मानम्, सर्वभूतानि, च, आत्मनि,

ईक्षते, योगयुक्तात्मा, सर्वत्र, समदर्शनः ॥२९॥

और हे अर्जुन—

योग- युक्तात्मा = { सर्वव्यापी अनन्त चेतनमें एकी- भावसे स्थितिरूप योगसे युक्त हुए आत्मावाला (तथा)	आत्मानम् = आत्माको सर्वभूतस्थम् = { संपूर्ण भूतोंमें वर्षमें जलके सदृश व्यापक (देखता है)
सर्वत्र = सर्वमें समदर्शनः { समभावसे देखने- वाला योगी	च = और सर्वभूतानि = संपूर्ण भूतोंको आत्मानि = आत्मामें ईक्षते = देखता है

अर्थात् जैसे स्वप्नसे जगा हुआ पुरुष स्वप्नके संसारको अपने अन्तर्गत संकल्पके आधार देखता है वैसे ही वह पुरुष संपूर्ण भूतोंको अपने सर्वव्यापी अनन्त चेतन आत्माके अन्तर्गत संकल्पके आधार देखता है ।

सर्वत्र परमात्म-
दर्शनका फल ।

**यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति ।
तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति ॥३०॥**

यः, माम्, पश्यति, सर्वत्र, सर्वम्, च, मयि, पश्यति,
तस्य, अहम्, न, प्रणश्यामि, सः, च, मे, न, प्रणश्यति ॥३०॥

और—

यः = जो पुरुष सर्वत्र = संपूर्ण भूतोंमें माम् = { सबके आत्मरूप मुझ वासुदेवको ही (व्यापक)	पश्यति = देखता है च = और सर्वम् = संपूर्ण भूतोंको मयि = { मुझ वासुदेवके अन्तर्गत *
---	--

* गीता अध्याय ९ श्लोक ६ देखना चाहिये ।

पश्यति	= देखता है	च	= और
तस्य	= उसके (लिये)	सः	= वह
अहम्	= मैं	मे	= मेरे (लिये)
न प्रणश्यामि	= { अदृश्य नहीं होता हूं	न प्रणश्यति	= { अदृश्य नहीं होता है—

क्योंकि वह मेरेमें एकीभावसे स्थित है ।

सर्वव्यापी सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः ।

परमात्माकाएकी
भावसे ध्यान
करनेवाले योगी-
की महिमा ।

सर्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मयि वर्तते ॥३१॥

सर्वभूतस्थितम्, यः, माम्, भजति, एकत्वम्, आस्थितः,
सर्वथा, वर्तमानः, अपि, सः, योगी, मयि, वर्तते ॥३१॥

इस प्रकार—

यः	= जो	भजति	= भजता है
एकत्वम्	= एकीभावमें	सः	= वह
आस्थितः	= स्थित हुआ	योगी	= योगी
सर्वभूत- स्थितम्	= { संपूर्ण भूतोंमें आत्मरूपसे स्थित	सर्वथा	= सब प्रकारसे
माम्	= { मुझ सच्चिदानन्दधन वासुदेवको	वर्तमानः	= वर्तता हुआ
		अपि	= भी
		मयि	= मेरेमें ही
		वर्तते	= वर्तता है—

क्योंकि उसके अनुभवमें मेरे सिवाय अन्य कुछ है ही नहीं ।

परम योगीके आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन ।

लक्षण ।

सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमो मतः ॥३२॥

आत्मौपम्येन, सर्वत्र, समम्, पश्यति, यः, अर्जुन,
सुखम्, वा, यदि, वा, दुःखम्, सः, योगी, परमः, मतः ॥३२॥

और-

अर्जुन	= हे अर्जुन	सुखम्	= सुख
यः	= जो योगी	यदि वा	= अथवा
आत्मौपम्येन	= { अपनी सादृश्यतासे*	दुःखम्	= दुःखको (भी) (सबमें सम देखता है)
सर्वत्र	= संपूर्ण भूतोंमें	सः	= वह
समम्	= सम	योगी	= योगी
पश्यति	= देखता है	परमः	= परम श्रेष्ठ
वा	= और	मतः	= माना गया है

अर्जुन उवाच

मनकी चञ्चलता योऽयं योगस्त्वया प्रोक्तः साम्येन मधुसूदन ।
के कारण अर्जुन

का ध्यानयोगको एतस्याहं न पश्यामि चञ्चलत्वात्स्थितिं स्थिराम् ॥

और मन के यः, अयम्, योगः त्वया, प्रोक्तः, साम्येन, मधुसूदन,

नियंत्रणको कठिन एतस्य, अहम्, न, पश्यामि, चञ्चलत्वात्, स्थितिम्, स्थिराम् । ३३।

मानना ।

इस प्रकार भगवान्‌के वाक्योंको सुनकर अर्जुन बोला-

मधुसूदन	= हे मधुसूदन	अयम्	= यह
यः	= जो	योगः	= ध्यानयोग

* जैसे मनुष्य अपने मस्तक, हाथ, पैर और गुदादिके साथ ब्राह्मण, क्षत्रिय, शूद्र और म्लेच्छादिकोंका-सा बर्ताव करता हुआ भी उनमें आत्मभाव अर्थात् अपनापना समान होनेसे, सुख और दुःखको समान ही देखता है वैसे ही सब भूतोंमें देखना 'अपनी सादृश्यतासे' सम देखना है ।

त्वया	= आपने	स्थिराम्	= { बहुत काल- तक ठहरने- वाली
साम्येन	= समत्वभावसे	स्थितिम्	= स्थिति को
प्रोक्तः	= कहा है	न	= नहीं
एतस्य	= इसकी	पश्यामि	= देखता हूँ
अहम्	= मैं (मनके)		
चञ्चलत्वात्	= चञ्चल होनेसे		

[„] चञ्चलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद्दृढम् ।

तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम् ॥३४॥

चञ्चलम्, हि, मनः, कृष्ण, प्रमाथि, बलवत्, दृढम्,

तस्य, अहम्, निग्रहम्, मन्ये, वायोः, इव, सुदुष्करम् ॥३४॥

हि	= क्योंकि	(अतः)	= इसलिये
कृष्ण	= हे कृष्ण (यह)	तस्य	= उसका
मनः	= मन	निग्रहम्	= वशमें करना
चञ्चलम्	= बड़ा चञ्चल (और)	अहम्	= मैं
प्रमाथि	= { प्रमथन स्वभाव- वाला है (तथा)	वायोः	= वायुकी
दृढम्	= बड़ा दृढ़ (और)	इव	= भांति
बलवत्	= बलवान् है	सुदुष्करम्	= अति दुष्कर
		मन्ये	= मानता हूँ

श्रीभगवानुवाच

अभ्यास और असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम् ।

वैराग्यसे मन

वशमें होनेका

कथन ।

अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते ॥३५॥

असंशयम्, महाबाहो, मनः, दुर्निग्रहम्, चलम्,

अभ्यासेन, तु, कौन्तेय, वैराग्येण, च, गृह्यते ॥३५॥

इस प्रकार अर्जुनके पूछनेपर श्रीकृष्ण भगवान् बोले-

महाबाहो	= हे महाबाहो	कौन्तेय	= { हे कुन्तीपुत्र अर्जुन
असंशयम्	= निःसन्देह		
मनः	= मन		
चलम्	= चञ्चल (और)	अभ्यासेन	= { अभ्यास* अर्थात् स्थितिके लिये बारम्बार यत्न करनेसे
दुर्निग्रहम्	= { कठिनतासे वशमें होने- वाला है	च	= और
तु	= परन्तु	वैराग्येण	= वैराग्यसे
		गृह्यते	= वशमें होता है

इसलिये इसको अवश्य वशमें करना चाहिये ।

मनके निग्रहसे ध्यानयोग की प्राप्ति । असंयतात्मना योगो दुष्प्राप इति मे मतिः ।

वश्यात्मना तु यतता शक्योऽवाप्तुमुपायतः ॥३६॥

असंयतात्मना, योगः, दुष्प्रापः, इति, मे, मतिः,

वश्यात्मना, तु, यतता, शक्यः, अवाप्तुम्, उपायतः ॥३६॥

क्योंकि-

असंयतात्मना	= { मनको वशमें न करनेवाले पुरुषद्वारा	दुष्प्रापः	= { दुष्प्राप्य है अर्थात् प्राप्त होना कठिन है
योगः	= योग	तु	= और
		वश्यात्मना	= स्वाधीन मनवाले

* गीता अ० १२ श्लोक ९ की टिप्पणीमें इसका विस्तार देखना चाहिये ।

यतता	= { प्रयत्नशील पुरुषद्वारा	शक्यः = सहज है
उपायतः	= साधन करनेसे	इति = यह
अवाप्तुम्	= प्राप्त होना	मे = मेरा
		मतिः = मत है

अर्जुन उवाच

योगभ्रष्ट पुरुषकी अयतिः श्रद्धयोपेतो योगाच्चलितमानसः ।

गतिके सम्बन्धमें अप्राप्य योगसंसिद्धिं कां गतिं कृष्ण गच्छति ॥

अर्जुनका प्रश्न और उभय-भ्रष्ट अयतिः, श्रद्धया, उपेतः, योगात्, चलितमानसः, होनेकी शङ्का अप्राप्य, योगसंसिद्धिम्, काम्, गतिम्, कृष्ण, गच्छति ॥३७॥ करना ।

इसपर अर्जुन बोला-

कृष्ण	= हे कृष्ण	योग-	{ योगकी सिद्धिको
योगात्	= योगसे	संसिद्धिम्	= अर्थात् भगवत्-
चलित-	{ चलायमान हो		{ साक्षात्कारताको
मानसः	= गया है मन	अप्राप्य	= न प्राप्त होकर
	{ जिसका ऐसा	काम्	= किस
अयतिः	= शिथिल यत्नवाला	गतिम्	= गतिको
श्रद्धया	{ = श्रद्धायुक्त पुरुष	गच्छति	= प्राप्त होता है
उपेतः			

[„] कच्चिन्नोभयविभ्रष्टश्छिन्नाभ्रमिव नश्यति ।

अप्रतिष्ठो महाबाहो विमूढो ब्रह्मणः पथि ॥३८॥

कच्चित्, न, उभयविभ्रष्टः, छिन्नाभ्रम्, इव, नश्यति,

अप्रतिष्ठः, महाबाहो, विमूढः, ब्रह्मणः, पथि ॥३८॥

और-

महाबाहो = हे महाबाहो | कच्चित् = क्या (वह)

ब्रह्मणः	= भगवत्प्राप्तिके	इव	= भांति
पथि	= मार्गमें		{ दोनों ओरसे
विमूढः	= मोहित हुआ	उभय-	{ अर्थात् भगवत्-
अग्रतिष्ठः	= { आश्रयरहित	विभ्रष्टः	= { प्राप्ति और
	{ पुरुष		{ सांसारिक भोगोंसे
			{ भ्रष्ट हुआ
छिन्नाभ्रम्	= { छिन्नभिन्न	न	= { नष्ट तो नहीं हो
	{ बादलकी	नश्यति	= { जाता है ?

संशय निवारण करनेके लिये अर्जुन की भगवान् प्रार्थना ।

एतन्मे संशयं कृष्ण छेत्तुमर्हस्यशेषतः ।
 त्वदन्यः संशयस्यास्य छेत्ता न ह्युपपद्यते ॥३६॥

से एतत्, मे, संशयम्, कृष्ण, छेत्तुम्, अर्हसि, अशेषतः,
 त्वदन्यः, संशयस्य, अस्य, छेत्ता, न, हि, उपपद्यते ॥३९॥

कृष्ण	= हे कृष्ण	हि	= क्योंकि
मे	= मेरे	त्वदन्यः	= { आपके सिवाय
एतत्	= इस		{ दूसरा
संशयम्	= संशयको	अस्य	= इस
अशेषतः	= संपूर्णतासे	संशयस्य	= संशयका
छेत्तुम्	= { छेदन करनेके	छेत्ता	= छेदन करनेवाला
	{ लिये (आप ही)	न	= { मिलना संभव
अर्हसि	= योग्य हैं	उपपद्यते	= { नहीं है

श्रीभगवानुवाच

अर्जुनकी शङ्का के उत्तरमें निष्कामकर्म करनेवालेकी दुर्गतिका निषेध ।

पार्थ नैवेह नामुत्र विनाशस्तस्य विद्यते ।
 न हि कल्याणकृत्कश्चिद्दुर्गतिं तात गच्छति ॥४०॥

पार्थ, न, एव, इह, न, अमुत्र, विनाशः, तस्य, विद्यते,
 न, हि, कल्याणकृत्, कश्चित्, दुर्गतिम्, तात, गच्छति ॥४०॥

इस प्रकार अर्जुनके पूछनेपर श्रीकृष्ण भगवान् बोले—

पार्थ	= हे पार्थ	तात	= हे प्यारे
तस्य	= उस पुरुषका	कश्चित्	= कोई भी
न	= न तो	कल्याण-	{ शुभ कर्म
इह	= इस लोकमें (और)	कृत	{ करनेवाला
न	= न		{ अर्थात्
अमुत्र	= परलोकमें		{ भगवत्-अर्थ
एव	= ही		{ कर्म करनेवाला
विनाशः	= नाश	दुर्गतिम्	= दुर्गतिको
विद्यते	= होता है	न	= नहीं
हि	= क्योंकि	गच्छति	= प्राप्त होता है

योगभ्रष्ट पुरुषको प्राप्य पुण्यकृतां लोकानुषित्वा शाश्वतीः समाः ।
 स्वर्गलोक और शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोऽभिजायते ॥४१॥
 पवित्र धनवान्—
 के घरमें जन्म प्राप्य, पुण्यकृताम्, लोकान्, उषित्वा, शाश्वतीः, समाः,
 प्राप्त होनेका शुचीनाम्, श्रीमताम्, गेहे, योगभ्रष्टः, अभिजायते ॥४१॥
 कथन ।

किन्तु वह—

योगभ्रष्टः	= योगभ्रष्ट पुरुष	शाश्वतीः	= बहुत
पुण्य-	} = पुण्यवानोंके	समाः	= वर्षोंतक
कृताम्		उषित्वा	= वास करके
लोकान्	= { लोकोंको अर्थात्	शुचीनाम्	= शुद्ध आचरणवाले
	= { स्वर्गादिक	श्रीमताम्	= { श्रीमान्
	= { उत्तम लोकोंको		= { पुरुषोंके
प्राप्य	= प्राप्त होकर	गेहे	= घरमें
	(उनमें)	अभिजायते	= जन्म लेता है

वैराग्यवान् योग
भ्रष्टकी ज्ञानियों-
केकुलमें उत्पत्ति
और साधन में
स्वाभाविक प्र-
वृत्ति होने का
कथन ।

अथवा योगिनामेव कुले भवति धीमताम् ।

एतद्धि दुर्लभतरं लोके जन्म यदीदृशम् ॥४२॥

अथवा, योगिनाम्, एव, कुले, भवति, धीमताम्,

एतत्, हि, दुर्लभतरम्, लोके, जन्म, यत्, ईदृशम् ॥४२॥

अथवा	= अथवा	(परन्तु)
(वैराग्यवान् पुरुष उन	ईदृशम्	= इस प्रकारका
लोकोमें न जाकर)	यत्	= जो
धीमताम् = ज्ञानवान्	एतत्	= यह
योगिनाम् = योगियोंके	जन्म	= जन्म है (सो)
एव = ही	लोके	= संसारमें
कुले = कुलमें	हि	= निःसन्देह
भवति = जन्म लेता है	दुर्लभतरम्	= अतिदुर्लभ है

[„] तत्र तं बुद्धिसंयोगं लभते पौर्वदेहिकम् ।

यतते च ततो भूयः संसिद्धौ कुरुनन्दन ॥४३॥

तत्र, तम्, बुद्धिसंयोगम्, लभते, पौर्वदेहिकम्,

यतते, च, ततः, भूयः, संसिद्धौ, कुरुनन्दन ॥४३॥

और वह पुरुष-

तत्र	= वहां	बुद्धि- संयोगम् = <table border="0"> <tr> <td rowspan="4"> बुद्धिके संयोगको अर्थात् समत्व- बुद्धियोगके संस्कारोंको </td> </tr> </table>	बुद्धिके संयोगको अर्थात् समत्व- बुद्धियोगके संस्कारोंको	
बुद्धिके संयोगको अर्थात् समत्व- बुद्धियोगके संस्कारोंको				
	तम्			= उस
	पौर्व-			{ पहिले शरीरमें साधन किये हुए
	देहिकम्			

	(अनायास ही)	भूयः	= फिर
लभते	= प्राप्त हो जाता है		(अच्छी प्रकार)
च	= और	संसिद्धौ	= { भगवत्प्राप्तिके
कुरुनन्दन	= हे कुरुनन्दन		{ निमित्त
ततः	= उसके प्रभावसे	यतते	= यत्न करता है

पूर्वाभ्यासके बलसे पुनः योग साधनमें लगने-का कथन । पूर्वाभ्यासेन तेनैव हियते ह्यवशोऽपि सः ।
 जिज्ञासुरपि योगस्य शब्दब्रह्मातिवर्तते ॥४४॥
 पूर्वाभ्यासेन, तेन, एव, हियते, हि, अवशः, अपि, सः,
 जिज्ञासुः, अपि, योगस्य, शब्दब्रह्म, अतिवर्तते ॥४४॥

और-

सः	= वह *		(तथा)
अवशः	= { विषयोंके वशमें हुआ	योगस्य	= { समत्व बुद्धि- रूप योगका
अपि	= भी	जिज्ञासुः	= जिज्ञासु
तेन	= उस	अपि	= भी
पूर्वाभ्यासेन	= { पहिलेके अभ्याससे	शब्दब्रह्म	= { वेदमें कहे हुए सकाम कर्मोंके फलको
एव	= ही		
हि	= निःसन्देह	अतिवर्तते	= { उल्लंघन कर जाता है
हियते	= { भगवत्की ओर आकर्षित किया जाता है		

* यहाँ "वह" शब्दसे श्रीमानोंके घरमें जन्म लेनेवाला योगब्रह्म पुरुष समझना चाहिये ।

परमगतिकी प्राप्तिके लिये अति प्रयत्नसे अभ्यास करने-की आवश्यकता प्रयत्नाद्यतमानस्तु योगी संशुद्धकिल्बिषः ।
 अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परं गतिम् ॥४५॥

जब कि इस प्रकार मन्द प्रयत्न करनेवाला योगी भी परम-गतिको प्राप्त हो जाता है तब क्या कहना है कि—

अनेक-जन्म-संसिद्धः	= { अनेक जन्मोंसे अन्तःकरणकी शुद्धिरूप सिद्धि- को प्राप्त हुआ	संशुद्ध-किल्बिषः	= { संपूर्ण पापोंसे अच्छी प्रकार शुद्ध होकर
तु	= और	ततः	= { उस साधनके प्रभावसे
प्रयत्नात्	= अति प्रयत्नसे	पराम्	= परम
यतमानः	= { अभ्यास करने- वाला	गतिम्	= गतिको
योगी	= योगी	याति	= { प्राप्त होता है अर्थात् परमात्मा- को प्राप्त होता है

योगीकी महिमा और योगी बनने के लिये आज्ञा । तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः ।
 कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन ॥

तपस्विभ्यः, अधिकः, योगी, ज्ञानिभ्यः, अपि, मतः, अधिकः,
 कर्मिभ्यः, च, अधिकः, योगी, तस्मात्, योगी, भव, अर्जुन ॥४६॥

क्योंकि—

योगी	= योगी	च	= और
तपस्विभ्यः	= तपस्वियोंसे	ज्ञानिभ्यः	= { शास्त्रके ज्ञान- वालोंसे
अधिकः	= श्रेष्ठ है		

अपि	= भी	योगी	= योगी
अधिकः	= श्रेष्ठ	अधिकः	= श्रेष्ठ है
मतः	= माना गया है (तथा)	तस्मात्	= इससे
कर्मिभ्यः	= { सकाम कर्म करनेवालोंसे (भी) }	अर्जुन	= हे अर्जुन (तू)
		योगी	= योगी
		भव	= हो

सब योगियोंमें योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनान्तरात्मना ।
ध्यानयोगी की श्रेष्ठता । श्रद्धावान्भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः ॥४७॥

योगिनाम्, अपि, सर्वेषाम्, मद्गतेन, अन्तरात्मना,
श्रद्धावान्, भजते, यः, माम्, सः, मे, युक्ततमः, मतः ॥४७॥

और हे प्यारे—

सर्वेषाम्	= संपूर्ण	माम्	= मेरेको
योगिनाम्	= योगियोंमें	भजते	= { निरन्तर भजता है
अपि	= भी	सः	= वह योगी
यः	= जो	मे	= मुझे
श्रद्धावान्	= श्रद्धावान् योगी	युक्ततमः	= परमश्रेष्ठ
मद्गतेन	= मेरेमें लगे हुए	मतः	= मान्य है
अन्तरात्मना	= अन्तरात्मासे		

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां
योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे आत्मसंयमयोगो
नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

हरिः ॐ तत्सत् हरिः ॐ तत्सत् हरिः ॐ तत्सत्

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

अथ सप्तमोऽध्यायः

प्रधान विषय—१ से ७ तक विज्ञानसहित ज्ञानका विषय, (८-१२)
संपूर्ण पदार्थोंमें कारणरूपसे भगवान्की व्यापकताका कथन, (१३-१९)
आसुरी स्वभाववालोंकी निन्दा और भगवद्भक्तोंकी प्रशंसा, (२०-२३)
अन्य देवताओंकी उपासनाका विषय, (२४-३०) भगवान्के प्रभाव और
स्वरूपकी न जाननेवालोंकी निन्दा और जाननेवालोंकी महिमा ।

श्रीभगवानुवाच

ज्ञानसहित मय्यासक्तमनाः पार्थ योगं युञ्जन्मदाश्रयः ।

भक्तियोग सुनने-
के लिये अर्जुन-
के प्रति भगवान्-
की आज्ञा ।

असंशयं समग्रं मां यथा ज्ञास्यसि तच्छृणु ॥१॥

मयि, आसक्तमनाः, पार्थ, योगम्, युञ्जन्, मदाश्रयः,
असंशयम्, समग्रम्, माम्, यथा, ज्ञास्यसि, तत्, शृणु ॥१॥

उसके उपरान्त श्रीकृष्ण भगवान् बोले —

पार्थ	= हे पार्थ (तू)		
मयि	= मेरेमें		
आसक्त- मनाः	= { अनन्य प्रेमसे आसक्त हुआ मनवाला (और) (अनन्य भावसे)	समग्रम्	= { संपूर्ण विभूति बल ऐश्वर्यादि गुणोंसे युक्त सबका आत्म- रूप
मदाश्रयः	= मेरे परायण	यथा	= जिस प्रकार
योगम्	= योगमें	असंशयम्	= संशयरहित
युञ्जन्	= लगा हुआ	ज्ञास्यसि	= जानेगा
माम्	= मुझको	तत्	= उसको
		शृणु	= सुन

विज्ञानसहित ज्ञानं तेऽहं सविज्ञानमिदं वक्ष्याम्यशेषतः ।
 ज्ञानका वर्णन यज्ज्ञात्वा नेह भूयोऽन्यज्ज्ञातव्यमवशिष्यते॥२॥
 करनेके लिये
 भगवान् की ज्ञानम्, ते, अहम्, सविज्ञानम्, इदम्, वक्ष्यामि, अशेषतः,
 प्रतिज्ञा और यत्, ज्ञात्वा, न, इह, भूयः, अन्यत्, ज्ञातव्यम्, अवशिष्यते ।२।
 उसकी महिमा ।

अहम्	= मैं	ज्ञात्वा	= जानकर
ते	= तेरे लिये	इह	= संसारमें
इदम्	= इस	भूयः	= फिर
सविज्ञानम्	= रहस्यसहित	अन्यत्	= और कुछ भी
ज्ञानम्	= तत्त्वज्ञानको	ज्ञातव्यम्	= जानने योग्य
अशेषतः	= संपूर्णतासे	न	= { शेष नहीं
वक्ष्यामि	= कहूंगा (कि)	अवशिष्यते	= { रहता है
यत्	= जिसको		

हजारों मनुष्यों मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चित्तति सिद्ध्ये ।
 में भगवान्को यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः॥३॥
 तत्त्वसे जानने-
 वालेकी दुर्लभता मनुष्याणाम्, सहस्रेषु, कश्चित्, यतति, सिद्ध्ये,
 का निरूपण । यतताम्, अपि, सिद्धानाम्, कश्चित्, माम्, वेत्ति, तत्त्वतः ।३।

परन्तु—

सहस्रेषु	= हजारों	यतताम्	= उन यत्न करनेवाले
मनुष्याणाम्	= मनुष्योंमें	सिद्धानाम्	= योगियोंमें
कश्चित्	= कोई ही मनुष्य	अपि	= भी
सिद्ध्ये	= मेरीप्राप्तिकेलिये	कश्चित्	= { कोई ही पुरुष
यतति	= यत्न करता है		= { (मेरे परायण
	(और)		हुआ)

माम् = मेरेको

तत्त्वतः = तत्त्वसे

वेत्ति = { जानता है अर्थात्
[यथार्थमर्मसे जानता हैअपरा प्रकृति-
का वर्णन ।

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च ।

अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा ॥४॥

भूमिः, आपः, अनलः, वायुः, खम्, मनः, बुद्धिः, एव, च,

अहंकारः, इति, इयम्, मे, भिन्ना, प्रकृतिः, अष्टधा ॥४॥

और हे अर्जुन—

भूमिः = पृथिवी

आपः = जल

अनलः = अग्नि

वायुः = वायु (और)

खम् = आकाश (तथा)

मनः = मन

बुद्धिः = बुद्धि

च = और

अहंकारः = अहंकार

एव = भी

इति = ऐसे

इयम् = यह

अष्टधा = आठ प्रकारसे

भिन्ना = विभक्त हुई

मे = मेरी

प्रकृतिः = प्रकृति है

परा प्रकृति-
का वर्णन ।

अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम् ।

जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत् ॥५॥

अपरा, इयम्, इतः, तु, अन्याम्, प्रकृतिम्, विद्धि, मे, पराम्,

जीवभूताम्, महाबाहो, यया, इदम्, धार्यते, जगत् ॥५॥

सो—

इयम् = { यह (आठ प्रकार-
के भेदोंवाली)

तु = तो

अपरा = { अपरा है अर्थात्
मेरी जड़ प्रकृति
है (और)

महाबाहो	= हे महाबाहो	प्रकृतिम्	= प्रकृति
इतः	= इससे	विद्वि	= जान (कि)
अन्याम्	= दूसरीको	यया	= जिससे
मे	= मेरी	इदम्	= यह (संपूर्ण)
जीवभूताम्	= जीवरूप	जगत्	= जगत्
पराम्	= { परा अर्थात् चेतन	धार्यते	= { धारण किया जाता है

संसारके कारण एतद्योनीनि भूतानि सर्वाणीत्युपधारय ।
का कथन ।

अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा ॥६॥

एतद्योनीनि, भूतानि, सर्वाणि, इति, उपधारय,
अहम्, कृत्स्नस्य, जगतः, प्रभवः, प्रलयः, तथा ॥ ६ ॥

और हे अर्जुन तू—

इति	= ऐसा	(और)
उपधारय	= समझ (कि)	अहम् = मैं
सर्वाणि	= संपूर्ण	कृत्स्नस्य = संपूर्ण
भूतानि	= भूत	जगतः = जगत्का
एतद्योनीनि	= { इन दोनों प्रकृतियोंसे ही उत्पत्तिवाले हैं	प्रभवः = उत्पत्ति तथा = तथा प्रलयः = प्रलयरूप हूँ—

अर्थात् संपूर्ण जगत्का मूलकारण हूँ ।

परमेश्वर के मत्तः परतरं नान्यत्किंचिदस्ति धनंजय ।
सर्वव्यापी स्व-
रूपका कथन । मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव ॥ ७ ॥

मत्तः, परतरम्, न, अन्यत्, किंचित्, अस्ति, धनंजय,
मयि, सर्वम्, इदम्, प्रोतम्, सूत्रे, मणिगणाः, इव ॥ ७ ॥

इसलिये-

धनंजय	= हे धनंजय	इदम्	= यह
मत्तः	= मेरेसे	सर्वम्	= संपूर्ण (जगत्)
परतरम्	= सिवाय	सूत्रे	= सूत्रमें
किञ्चित्	= किञ्चित्मात्र भी	मणिगणाः	= { (सूत्रके) मणियोंके
अन्यत्	= दूसरी वस्तु	इव	= सदृश
न	= नहीं	मयि	= मेरेमें
अस्ति	= है	प्रोतम्	= गुंथा हुआ है

रसादिरूपसे रसोऽहमप्सु कौन्तेय प्रभास्मि शशिसूर्ययोः ।
 जल आदि में
 भगवान् की प्रणवः सर्ववेदेषु शब्दः खे पौरुषं नृषु ॥८॥
 व्यापकता का
 कथन । रसः, अहम्, अप्सु, कौन्तेय, प्रभा, अस्मि, शशिसूर्ययोः,
 प्रणवः, सर्ववेदेषु, शब्दः, खे, पौरुषम्, नृषु ॥८॥

कैसे कि-

कौन्तेय	= हे अर्जुन	सर्ववेदेषु	= संपूर्ण वेदोंमें
अप्सु	= जलमें	प्रणवः	= ओंकार हूं (तथा)
अहम्	= मैं	खे	= आकाशमें
रसः	= रस हूं (तथा)	शब्दः	= शब्द (और)
शशि- सूर्ययोः	= { चन्द्रमा और सूर्यमें	नृषु	= पुरुषोंमें
प्रभा	= प्रकाश	पौरुषम्	= पुरुषत्व हूं
अस्मि	= हूं (और)		

गन्धादिरूपसे पृथिवी आदिमें भगवान् की व्यापकता का कथन ।

पुण्यो गन्धः पृथिव्यां च तेजश्चास्मि विभावसौ ।
जीवनं सर्वभूतेषु तपश्चास्मि तपस्विषु ॥ ६ ॥

पुण्यः, गन्धः, पृथिव्याम्, च, तेजः, च, अस्मि, विभावसौ,
जीवनम्, सर्वभूतेषु, तपः, च, अस्मि, तपस्विषु ॥ ९ ॥

तथा—

पृथिव्याम् = पृथिवीमें

पुण्यः = पवित्र*

गन्धः = गन्ध

च = और

विभावसौ = अग्निमें

तेजः = तेज

अस्मि = हूं

च = और

सर्वभूतेषु = संपूर्ण भूतोंमें

(उनका)

जीवनम् = { जीवन हूं
अर्थात् जिससे
वे जीते हैं वह
मैं हूं

च = और

तपस्विषु = तपस्वियोंमें

तपः = तप

अस्मि = हूं

बीजादिरूपसे संपूर्ण भूतोंमें भगवान् की व्यापकता का कथन ।

बीजं मां सर्वभूतानां विद्धि पार्थ सनातनम् ।
बुद्धिर्बुद्धिमतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम् ॥ १० ॥

बीजम्, माम्, सर्वभूतानाम्, विद्धि, पार्थ, सनातनम्,
बुद्धिः, बुद्धिमताम्, अस्मि, तेजः, तेजस्विनाम्, अहम् ॥ १० ॥

तथा—

पार्थ = हे अर्जुन (तू)

सर्व-भूतानाम् } = संपूर्ण भूतोंका

सनातनम् = सनातन

बीजम् = कारण

माम् = मेरेको ही

* शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्धसे इस प्रसङ्गमें इनके कारणरूप तन्मात्राओंका ग्रहण है । इस बातको स्पष्ट करनेके लिये उनके साथ पवित्र शब्द जोड़ा गया है ।

विद्धि	= जान	(और)
अहम्	= मैं	तेजस्विनाम् = तेजस्वियोंका
बुद्धिमताम्	= बुद्धिमानोंकी	तेजः = तेज
बुद्धिः	= बुद्धि	अस्मि = हूँ

बलदिरूपसे बलं बलवतां चाहं कामरागविवर्जितम् ।
 भगवान् की धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ ॥११॥
 व्यापकता का
 कथन । बलम्, बलवताम्, च, अहम्, कामरागविवर्जितम्,

धर्माविरुद्धः, भूतेषु, कामः, अस्मि, भरतर्षभ ॥११॥

और—

भरतर्षभ	= हे भरतश्रेष्ठ	च	= और
अहम्	= मैं	भूतेषु	= सब भूतोंमें
बलवताम्	= बलवानोंका	धर्माविरुद्धः	= { धर्मके अनुकूल अर्थात् शास्त्रके अनुकूल
कामराग- विवर्जितम्	= { आसक्ति और कामनाओंसे रहित	कामः	= काम
बलम्	= { बल अर्थात् सामर्थ्य हूँ	अस्मि	= हूँ

परमात्मसत्तासे ये चैव सात्त्विका भावा राजसास्तामसाश्च ये ।
 त्रिगुणमय संपूर्ण मत्त एवेति तान्विद्धि न त्वहं तेषु ते मयि ॥१२॥
 पदार्थोंके होने-
 का कथन । ये, च, एव, सात्त्विकाः, भावाः, राजसाः, तामसाः, च, ये,

मत्तः, एव, इति, तान्, विद्धि, न, तु, अहम्, तेषु, ते, मयि ॥१२॥

तथा—

च = और । एव = भी

ये	= जो	तान्	= उन सबको (तूं)
सात्त्विकाः	= { सत्त्वगुणसे उत्पन्न होने- वाले	मत्तः	= मेरेसे
भावाः	= भाव हैं	एव	= ही (होनेवाले हैं)
च	= और	इति	= ऐसा
ये	= जो	विद्धि	= जान
राजसाः	= रजोगुणसे (तथा)	तु	= परन्तु (वास्तवमें)*
तामसाः	= { तमोगुणसे होनेवाले भाव हैं	तेषु	= उनमें
		अहम्	= मैं (और)
		ते	= वे
		मयि	= मेरेमें
		न	= नहीं हैं

भगवान्को तत्त्व
से न जाननेके
कारणका कथन ।

त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिः सर्वमिदं जगत् ।

मोहितं नाभिजानाति मामेभ्यः परमव्ययम् ॥

त्रिभिः, गुणमयैः, भावैः, एभिः, सर्वम्, इदम्, जगत्,
मोहितम्, न, अभिजानाति, माम्, एभ्यः, परम्, अव्ययम् ॥ १३ ॥

किन्तु-

गुणमयैः	= गुणोंके कार्यरूप (सात्त्विक राजस और तामस)	इदम्	= यह
एभिः	= इन	सर्वम्	= सब
त्रिभिः	= तीनों प्रकारके	जगत्	= संसार
भावैः	= भावोंसे†	मोहितम्	= { मोहित हो रहा है (इसलिये)
		एभ्यः	= इन तीनों गुणोंसे

* गीता अध्याय ९ श्लोक ४-५ में देखना चाहिये ।

† अर्थात् रागद्वेषादि विकारोंसे और संपूर्ण विषयोंसे ।

परम्	= परे	न अभिजानाति = { तत्त्वसे नहीं जानता
माम्	= मुझ	
अव्ययम्	= अविनाशीको	

भगवान्की दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया ।
 दुस्तर मायासे तारनेके लिये मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते ॥१४॥
 सहज उपायका दैवी, हि, एषा, गुणमयी, मम, माया, दुरत्यया,
 कथन । माम्, एव, ये, प्रपद्यन्ते, मायाम्, एताम्, तरन्ति, ते ॥१४॥

हि	= क्योंकि	ये	= जो पुरुष
एषा	= यह	माम्	= मेरेको
दैवी	= { अलौकिक अर्थात् अति अद्भुत	एव	= ही
गुणमयी	= त्रिगुणमयी	प्रपद्यन्ते	= निरन्तर भजते हैं
मम	= मेरी	ते	= वे
माया	= योगमाया	एताम्	= इस
दुरत्यया	= बड़ी दुस्तर है (परन्तु)	मायाम्	= मायाको
		तरन्ति	= { उल्लंघन कर जाते हैं अर्थात् संसार- से तर जाते हैं

पापकर्म करने-
वाले मूढ़ों की
भगवद्भजन में
प्रवृत्ति न होने-
का कथन
न मां दुष्कृतिनो मूढाः प्रपद्यन्ते नराधमाः ।
 माययापहतज्ञाना आसुरं भावमाश्रिताः ॥१५॥
 न, माम्, दुष्कृतिनः, मूढाः, प्रपद्यन्ते, नराधमाः,
 मायया, अपहतज्ञानाः, आसुरम्, भावम्, आश्रिताः ॥१५॥

ऐसा सुगम उपाय होनेपर भी-

मायया	= मायाद्वारा	अपहत- ज्ञानाः	= { हरे हुए ज्ञान- वाले (और)
-------	--------------	------------------	---------------------------------

आसुरम् = आसुरी
भावम् = स्वभावको
आश्रिताः = धारण किये हुए
(तथा)
नराधमाः = मनुष्योंमें नीच
(और)

दुष्कृतिनः = { दूषित कर्म
करनेवाले
मूढाः = मूढ़ लोग (तो)
माम् = मेरेको
न = नहीं
प्रपद्यन्ते = भजते हैं

चार प्रकारके
भक्तोंका वर्णन ।

चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन ।

आर्त्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ ॥१६॥

चतुर्विधाः, भजन्ते, माम्, जनाः, सुकृतिनः, अर्जुन,
आर्त्तः, जिज्ञासुः, अर्थार्थी, ज्ञानी, च, भरतर्षभ ॥१६॥

और-

भरतर्षभ = { हे भरतवंशियों-
में श्रेष्ठ

अर्जुन = अर्जुन

सुकृतिनः = उत्तम कर्मवाले

अर्थार्थी = अर्थार्थी*

आर्त्तः = आर्त्त†

जिज्ञासुः = जिज्ञासु‡

च = और

ज्ञानी = { ज्ञानी अर्थात्
निष्कामी (ऐसे)

चतुर्विधाः = चार प्रकारके

जनाः = भक्तजन

माम् = मेरेको

भजन्ते = भजते हैं

ज्ञानी भक्तके
प्रेमकी प्रशंसा ।

तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते ।

प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं स च मम प्रियः ॥

तेवाम्, ज्ञानी, नित्ययुक्तः, एकभक्तिः, विशिष्यते,

प्रियः, हि, ज्ञानिनः, अत्यर्थम्, अहम्, सः, च, मम, प्रियः ॥१७॥

* सांसारिक पदार्थोंके लिये भजनेवाला ।

† सङ्कटनिवारणके लिये भजनेवाला ।

‡ मेरेको यथार्थरूपसे जाननेकी इच्छासे भजनेवाला ।

तेषाम्	= उनमें (भी)	ज्ञानिनः	= { (मेरेको तत्त्वसे जाननेवाले) ज्ञानीको
नित्ययुक्तः	= { नित्य मेरेमें एकीभावसे स्थित हुआ	अहम्	= मैं
एकभक्तिः	= { अनन्य प्रेम- भक्तिवाला	अत्यथम्	= अत्यन्त
ज्ञानी	= ज्ञानी भक्त	प्रियः	= प्रिय हूं
विशिष्यते	= अति उत्तम है	च	= और
हि	= क्योंकि	सः	= वह ज्ञानी
		मम	= मेरेको (अत्यन्त)
		प्रियः	= प्रिय है

ज्ञानी भक्तकी
विशेष प्रशंसा ।

उदाराः सर्व एवैते ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम् ।

आस्थितः स हि युक्तात्मा मामेवानुत्तमां गतिम् ॥

उदाराः, सर्वे, एव, एते, ज्ञानी, तु, आत्मा, एव, मे, मतम्,

आस्थितः, सः, हि, युक्तात्मा, माम्, एव, अनुत्तमाम्, गतिम् ॥ १८ ॥

यद्यपि—

एते	= यह	ज्ञानी	= ज्ञानी (तो)
सर्वे	= सब		(साक्षात्)
एव	= ही	आत्मा	= मेरा स्वरूप
उदाराः	= { उदार हैं अर्थात् श्रद्धासहित मेरे भजनके लिये समय लगानेवाले होनेसे उत्तम हैं	एव	= ही है (ऐसा)
		मे	= मेरा
		मतम्	= मत है
		हि	= क्योंकि
तु	= परन्तु	सः	= वह

युक्तात्मा	= { स्थिरबुद्धि (ज्ञानी भक्त)	माम्	= मेरेमें
अनुत्तमाम्	= अति उत्तम	एव	= ही
गतिम्	= गतिस्वरूप	आस्थितः	= { अच्छी प्रकार स्थित है

ज्ञानी महात्मा- बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते ।

की दुर्लभताका
कथन ।

वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः ॥१६॥

बहूनाम्, जन्मनाम्, अन्ते, ज्ञानवान्, माम्, प्रपद्यते,

वासुदेवः, सर्वम्, इति, सः, महात्मा, सुदुर्लभः ॥१९॥

और जो-

बहूनाम्	= बहुत	इति	= इस प्रकार
जन्मनाम्	= जन्मोंके	माम्	= मेरेको
अन्ते	= अन्तके जन्ममें	प्रपद्यते	= भजता है
ज्ञानवान्	= { तत्त्वज्ञानको प्राप्त हुआ ज्ञानी	सः	= वह
सर्वम्	= सब कुछ	महात्मा	= महात्मा
वासुदेवः	= वासुदेव ही है*	सुदुर्लभः	= अति दुर्लभ है

अन्य देवताओं-
को भजने में
हेतुका कथन ।

कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्तेऽन्यदेवताः ।

तं तं नियममास्थाय प्रकृत्या नियताः स्वया ॥२०॥

कामैः, तैः, तैः, हृतज्ञानाः, प्रपद्यन्ते, अन्यदेवताः,

तम्, तम्, नियमम्, आस्थाय, प्रकृत्या, नियताः, स्वया ॥२०॥

और हे अर्जुन ! जो विषयासक्त पुरुष हैं वे तो-

स्वया	= अपने	नियताः	= प्रेरें हुए (तथा)
प्रकृत्या	= स्वभावसे	तैः	= उन

* अर्थात् वासुदेवके सिवाय अन्य कुछ है ही नहीं ।

तैः	= उन	आस्थाय	= धारण करके*
कामैः	= { भोगोंकी कामनाद्वारा	अन्यदेवताः	= { अन्य देवताओंको
हृतज्ञानाः	= ज्ञानसे भ्रष्ट हुए		
तम्	= उस		
तम्	= उस	प्रपद्यन्ते	= { भजते हैं अर्थात् पूजते हैं
नियमम्	= नियमको		

अन्य देवताओं-
में श्रद्धा स्थिर
करनेका कथन ।

यो यो यां यां तनुं भक्तः श्रद्धयार्चितुमिच्छति ।

तस्य तस्याचलां श्रद्धां तामेव विदधाम्यहम् ॥

यः, यः, याम्, याम्, तनुम्, भक्तः, श्रद्धया, अर्चितुम्, इच्छति,
तस्य, तस्य, अचलाम्, श्रद्धाम्, ताम्, एव, विदधामि, अहम् १

यः	= जो	इच्छति	= चाहता है
यः	= जो	तस्य	= उस
भक्तः	= सकामी भक्त	तस्य	= उस भक्तकी
याम्	= जिस	अहम्	= मैं
याम्	= जिस	ताम्	= { उसही देवता- के प्रति
तनुम्	= { देवताके स्वरूपको	एव	
श्रद्धया	= श्रद्धासे	श्रद्धाम्	= श्रद्धाको
अर्चितुम्	= पूजना	अचलाम्	= स्थिर
		विदधामि	= करता हूँ

अन्य देवताओं-
की उपासनाका
फल ।

स तया श्रद्धया युक्तस्तस्याराधनमीहते ।

लभते च ततः कामान्मयैव विहितान्हि तान् ॥

* अर्थात् जिस देवताकी पूजाके लिये जो जो नियम लोकमें प्रसिद्ध है
उस उस नियमको धारण करके ।

सः, तथा, श्रद्धया, युक्तः, तस्य, आराधनम्, ईहते,
लभते, च, ततः, कामान्, मया, एव, विहितान्, हि, तान्॥२२॥

तथा—

सः	= वह पुरुष	ततः	= उस देवतासे
तथा	= उस	मया	= मेरे द्वारा
श्रद्धया	= श्रद्धासे	एव	= ही
युक्तः	= युक्त हुआ	विहितान्	= विधान किये हुए
तस्य	= उस देवताके	तान्	= उन
आराधनम्	= पूजनकी	कामान्	= इच्छित भोगोंको
ईहते	= चेष्टा करता है	हि	= निःसन्देह
च	= और	लभते	= प्राप्त होता है

अन्य देवताओं की उपासनाके फलकी निन्दा और भगवद्भक्ति की महिमा । अन्तवत्तु फलं तेषां तद्भवत्यल्पमेधसाम् ।
देवान्देवयजो यान्ति मद्भक्ता यान्ति मामपि॥२३॥
अन्तवत्, तु, फलम्, तेषाम्, तत्, भवति, अल्पमेधसाम्,
देवान्, देवयजः, यान्ति, मद्भक्ताः, यान्ति, माम्, अपि॥२३॥

तु	= परन्तु	देवान्	= देवताओंको
तेषाम्	= उन	यान्ति	= प्राप्त होते हैं (और)
अल्प-	= { अल्प बुद्धि-	मद्भक्ताः	= मेरे भक्त (चाहे जैसे ही भजें शेषमें वे)
मेधसाम्	= { वालोंका	माम्	= मेरेको
तत्	= वह	अपि	= ही
फलम्	= फल	यान्ति	= प्राप्त होते हैं
अन्तवत्	= नाशवान्		
भवति	= है (तथा वे)		
देवयजः	= { देवताओंको पूजनेवाले		

भगवान्को न
जाननेमें हेतुका
कथन ।

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः ।

परं भावमजानन्तो ममाव्ययमनुत्तमम् ॥२४॥

अव्यक्तम्, व्यक्तिम्, आपन्नम्, मन्यन्ते, माम्, अबुद्धयः,
परम्, भावम्, अजानन्तः, मम, अव्ययम्, अनुत्तमम् ॥२४॥

ऐसा होनेपर भी सब मनुष्य मेरा भजन नहीं करते इसका

कारण यह है कि—

अबुद्धयः = बुद्धिहीन पुरुष
मम = मेरे

अनुत्तमम् = { अनुत्तम अर्थात्
जिससे उत्तम
और कुछ भी
नहीं ऐसे

अव्ययम् = अविनाशी

परम् = परम

भावम् = { भावको अर्थात्
अजन्मा अवि-
नाशी हुआ भी
अपनी मायासे
प्रकट होता हूँ
ऐसे प्रभावको

अजानन्तः = { तत्त्वसे न
जानते हुए

अव्यक्तम् = { मन इन्द्रियोंसे
परे

माम् = { मुझ सच्चिदा-
नन्दधन
परमात्माको

(मनुष्यकी भांति
जन्मकर)

व्यक्तिम् = व्यक्तिभावको

आपन्नम् = प्राप्त हुआ

मन्यन्ते = मानते हैं

[„] नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः ।

मूढोऽयं नाभिजानाति लोको मामजमव्ययम् ॥

न, अहम्, प्रकाशः, सर्वस्य, योगमायासमावृतः,

मूढः, अयम्, न, अभिजानाति, लोकः, माम्, अजम्, अव्ययम् २५

तथा-

योगमाया-	{ अपनी	मूढः	= अज्ञानी
समावृतः	= योगमायासे	लोकः	= मनुष्य
	{ छिपा हुआ	माम्	= मुझ
अहम्	= मैं	अजम्	= जन्मरहित
सर्वस्य	= सबके	अव्ययम्	= { अविनाशी
प्रकाशः	= प्रत्यक्ष		{ परमात्माको
न	= नहीं होता हूं		(तत्त्वसे)
	(इसलिये)	न	= नहीं
अयम्	= यह	अभिजानाति	= जानता है-

अर्थात् मेरेको जन्मने मरनेवाला समझता है ।

भगवान्की

वेदाहं समतीतानि वर्तमानानि चार्जुन ।

सर्वज्ञता का
कथन ।

भविष्याणि च भूतानि मां तु वेद न कश्चन ॥२६॥

वेद, अहम्, समतीतानि, वर्तमानानि, च, अर्जुन,
भविष्याणि, च, भूतानि, माम्, तु, वेद, न, कश्चन ॥२६॥

और-

अर्जुन	= हे अर्जुन	अहम्	= मैं
समतीतानि	= पूर्वमें व्यतीत हुए	वेद	= जानता हूं
च	= और	तु	= परन्तु
वर्तमानानि	= वर्तमानमें स्थित	माम्	= मेरेको
च	= तथा	कश्चन	= { कोई भी (श्रद्धाभक्ति-
भविष्याणि	= { आगे होने-		{ रहित पुरुष)
	{ वाले	न	= नहीं
भूतानि	= सब भूतोंको	वेद	= जानता है

इच्छा-द्वेषसे
मोहकी प्राप्ति ।

इच्छाद्वेषसमुत्थेन द्वन्द्वमोहेन भारत ।

सर्वभूतानि संमोहं सर्गे यान्ति परंतप ॥२७॥

इच्छाद्वेषसमुत्थेन, द्वन्द्वमोहेन, भारत,
सर्वभूतानि, संमोहम्, सर्गे, यान्ति, परंतप ॥२७॥

क्योंकि-

भारत = हे भरतवंशी

परंतप = अर्जुन

सर्गे = संसारमें

इच्छाद्वेष-
समुत्थेन = { इच्छा और
द्वेषसे उत्पन्न
हुए

द्वन्द्वमोहेन = { सुखदुःखादि
द्वन्द्वरूप मोहसे

सर्वभूतानि = संपूर्ण प्राणी

संमोहम् = { अति
अज्ञानताको

यान्ति = प्राप्त हो रहे हैं

भगवान्को
भजनेवालों के
लक्षण ।

येषां त्वन्तगतं पापं जनानां पुण्यकर्मणाम् ।

ते द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ता भजन्ते मां दृढव्रताः ॥२८॥

येषाम्, तु, अन्तगतम्, पापम्, जनानाम्, पुण्यकर्मणाम्,
ते, द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ताः, भजन्ते, माम्, दृढव्रताः ॥२८॥

तु = परन्तु

पुण्य-
कर्मणाम् = { (निष्काम-
भावसे) श्रेष्ठ
कर्माँका
आचरण
करनेवाले

येषाम् = जिन

जनानाम् = पुरुषोंका

पापम् = पाप

अन्तगतम् = नष्ट हो गया है

ते = वे

द्वन्द्वमोह-
निर्मुक्ताः = { रागद्वेषादि
द्वन्द्वरूप मोहसे
मुक्त हुए (और)

दृढव्रताः = { दृढ़ निश्चयवाले
पुरुष

माम् = मेरेको

(सब प्रकारसे)

भजन्ते = भजते हैं

ब्रह्म, अध्यात्म जरामरणमोक्षाय मामाश्रित्य यतन्ति ये ।
 और कर्म को ते ब्रह्म तद्विदुः कृत्स्नमध्यात्मं कर्म चाखिलम् ॥
 जाननेमें भगवत् शरण की जरामरणमोक्षाय, माम्, आश्रित्य, यतन्ति, ये,
 प्रधानता । ते, ब्रह्म, तत्, विदुः, कृत्स्नम्, अध्यात्मम्, कर्म, च, अखिलम् २९

और—

ये	= जो	ब्रह्म	= ब्रह्मको
माम्	= मेरे	च	= तथा
आश्रित्य	= शरण होकर	कृत्स्नम्	= संपूर्ण
जरामरण-	= { जरा और मरणसे छूटनेके लिये	अध्यात्मम्	= अध्यात्मको (और)
मोक्षाय		अखिलम्	= संपूर्ण
यतन्ति	= यत्न करते हैं	कर्म	= कर्मको
ते	= वे (पुरुष)	विदुः	= जानते हैं
तत्	= उस		

अधिभूत, साधिभूताधिदैवं मां साधियज्ञं च ये विदुः ।

अधिदैव और प्रयाणकालेऽपि च मां ते विदुर्युक्तचेतसः ॥३०॥
 अधियज्ञ सहित
 भगवान् को साधिभूताधिदैवम्, माम्, साधियज्ञम्, च, ये, विदुः,
 जाननेवालों की प्रयाणकाले, अपि, च, माम्, ते, विदुः, युक्तचेतसः ॥३०॥
 महिमा ।

और—

ये	= जो पुरुष	च	= तथा
साधि-	= { अधिभूत और अधिदैवके सहित	साधि-	= { अधियज्ञके सहित (सबका आत्मरूप)
भूताधि-		यज्ञम्	
दैवम्			

माम्	= मेरेको	अपि	= भी
विदुः	= जानते हैं *	माम्	= मुझको
ते	= वे	च	= ही
युक्तचेतसः	= { युक्त चित्त- वाले पुरुष	विदुः	= { जानते हैं अर्थात् प्राप्त होते हैं
प्रयाणकाले	= अन्तकालमें		

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे
श्रीकृष्णार्जुनसंवादे ज्ञानविज्ञानयोगो नाम सप्तमोऽध्यायः ॥७॥

अथाष्टमोऽध्यायः

प्रधान विषय—१ से ७ तक ब्रह्म, अध्यात्म और कर्मादिके विषयमें
अर्जुनके सात प्रश्न और उनका उत्तर, (८-२२) भक्तियोगका विषय,
(२३-२८) शुक और कृष्णमार्गका विषय ।

अर्जुन उवाच

ब्रह्म, अध्यात्म
और कर्मादिके
विषयमें अर्जुन-
के सात प्रश्न ।

किं तद्ब्रह्म किमध्यात्मं किं कर्म पुरुषोत्तम ।
अधिभूतं च किं प्रोक्तमधिदैवं किमुच्यते ॥१॥

किम्, तत्, ब्रह्म, किम्, अध्यात्मम्, किम्, कर्म, पुरुषोत्तम,
अधिभूतम्, च, किम्, प्रोक्तम्, अधिदैवम्, किम्, उच्यते । १ ।

इस प्रकार भगवान्‌के वचनोंको न समझकर अर्जुन बोला—

पुरुषोत्तम = हे पुरुषोत्तम (जिसका आपने वर्णन किया)
तत् = वह

* अर्थात् जैसे भाफ, बादल, धूम, पानी और बर्फ यह सभी जलस्वरूप
हैं वैसे ही अधिभूत, अधिदैव और अधियज्ञ आदि सब कुछ वासुदेवस्वरूप हैं
ऐसे जो जानते हैं ।

ब्रह्म	= ब्रह्म	अधिभूतम्	= अधिभूत (नामसे)
किम्	= क्या है (और)	किम्	= क्या
अध्यात्मम्	= अध्यात्म	प्रोक्तम्	= कहा गया है (तथा)
किम्	= क्या है (तथा)	अधिदैवम्	= अधिदैव (नामसे)
कर्म	= कर्म	किम्	= क्या
किम्	= क्या है	उच्यते	= कहा जाता है
च	= और		

[„] अधियज्ञः कथं कोऽत्र देहेऽस्मिन्मधुसूदन ।

प्रयाणकाले च कथं ज्ञेयोऽसि नियतात्मभिः ॥

अधियज्ञः, कथम्, कः, अत्र, देहे, अस्मिन्, मधुसूदन,
प्रयाणकाले, च, कथम्, ज्ञेयः, असि, नियतात्मभिः ॥ २॥

और—

मधुसूदन	= हे मधुसूदन	नियता-	= { युक्त चित्तवाले
अत्र	= यहां	त्मभिः	= { पुरुषोंद्वारा
अधियज्ञः	= अधियज्ञ	प्रयाण-	} = अन्त समयमें
कः	= कौन है (और वह)	काले	
अस्मिन्	= इस		(आप)
देहे	= शरीरमें	कथम्	= किस प्रकार
कथम्	= कैसे है	ज्ञेयः असि	= { जाननेमें
च	= और		{ आते हो

श्रीभगवानुवाच

ब्रह्म, अध्यात्म और कर्म के विषयमें अर्जुनके तीन प्रश्नों का उत्तर ।
अक्षरं ब्रह्म परमं स्वभावोऽध्यात्ममुच्यते ।
भूतभावोद्भवकरो विसर्गः कर्मसंज्ञितः ॥ ३॥
अक्षरम्, ब्रह्म, परमम्, स्वभावः, अध्यात्मम्, उच्यते,
भूतभावोद्भवकरो, विसर्गः, कर्मसंज्ञितः ॥ ३॥

इस प्रकार अर्जुनके प्रश्न करनेपर श्रीकृष्ण भगवान् बोले हे अर्जुन—

परमम्	= परम	उच्यते	= कहा जाता है
	{ अक्षर अर्थात्		(तथा)
	{ जिसका कभी	भूतभावोद्भव-	{ भूतोंके भाव-
अक्षरम्	= { नाश नहीं हो	करः	{ को उत्पन्न
	{ ऐसा सच्चिदा-		{ करनेवाला
	{ नन्दवन		{ शास्त्रविहित
	{ परमात्मा तो		{ यज्ञ दान और
ब्रह्म	= ब्रह्म है (और)	विसर्गः	= { होम आदिके
	{ अपना स्वरूप		{ निमित्त जो
स्वभावः	= { अर्थात्		{ द्रव्यादिकोंका
	{ जीवात्मा		{ त्याग है वह
अध्यात्मम्	= अध्यात्म	कर्मसंज्ञितः	= { कर्म नामसे
	(नामसे)		{ कहा गया है

अधिभूत अधि- अधिभूतं क्षरो भावः पुरुषश्चाधिदैवतम् ।
दैव और अधि- अधियज्ञोऽहमेवात्र देहे देहभृतां वर ॥४॥
यज्ञके विषयमें

अर्जुनके तीन अधिभूतम्, क्षरः, भावः, पुरुषः, च, अधिदैवतम्,
प्रश्नोंका उत्तर । अधियज्ञः, अहम्, एव, अत्र, देहे, देहभृताम्, वर ॥४॥

तथा—

क्षरः	} = उत्पत्ति विनाश	पुरुषः	= { हिरण्यमय पुरुष*
भावः		{ धर्मवाले सब पदार्थ	
अधिभूतम्	= अधिभूत हैं	अधि-	} = अधिदैव है (और)
च	= और	दैवतम्	

* जिसको शास्त्रोंमें “सूत्रात्मा” “हिरण्यगर्भ” “प्रजापति” “ब्रह्मा”
इत्यादि नामोंसे कहा है ।

देहभृताम् = { हे देहधारियोंमें	अहम् = मैं वासुदेव
वर = { श्रेष्ठ अर्जुन	एव = ही
अत्र = इस	(विष्णुरूपसे)
देहे = शरीरमें	अधियज्ञः = अधियज्ञ हूँ

अन्तकालमें अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम् ।

भगवत्-स्मरण-
का फल (अर्जुन

यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः ॥

के सातवें प्रश्न- अन्तकाले, च, माम्, एव, स्मरन्, मुक्त्वा, कलेवरम्,
का उत्तर)। यः, प्रयाति, सः, मद्भावम्, याति, न, अस्ति, अत्र, संशयः ॥५॥

च = और	प्रयाति = जाता है
यः = जो पुरुष	सः = वह
अन्तकाले = अन्तकालमें	मद्भावम् = { मेरे (साक्षात्)
माम् = मेरेको	{ स्वरूपको
एव = ही	याति = प्राप्त होता है
स्मरन् = { स्मरण करता	अत्र = इसमें (कुछ भी)
{ हुआ	संशयः = संशय
कलेवरम् = शरीरको	न = नहीं
मुक्त्वा = त्यागकर	अस्ति = है

अन्तकाल- यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम् ।

में भावनानुसार
गति होने का
कथन ।

तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः ॥६॥

यम्, यम्, वा, अपि, स्मरन्, भावम्, त्यजति, अन्ते, कलेवरम्,
तम्, तम्, एव, एति, कौन्तेय, सदा, तद्भावभावितः ॥६॥

कारण कि-

कौन्तेय = हे कुन्तीपुत्र अर्जुन	अन्ते = अन्तकालमें
(यह मनुष्य)	यम् = जिस

यम्	= जिस	तम्	= उसको
वा अपि	= भी	एव	= ही
भावम्	= भावको	एति	= प्राप्त होता है (परन्तु)
स्मरन्	= स्मरण करता हुआ	सदा	= सदा
कलेवरम्	= शरीरको	तद्भाव-	{ उस ही भावको
त्यजति	= त्यागता है	भावितः	{ चिन्तन करता
तम्	= उस		{ हुआ-

क्योंकि सदा जिस भावका चिन्तन करता है अन्तकालमें भी प्रायः उसीका स्मरण होता है ।

निरन्तरभगवत्- तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च ।
चिन्तन करते

हुए युद्ध करनेके मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयम् ॥७॥

लिये आशा तस्मात्, सर्वेषु, कालेषु, माम्, अनुस्मर, युध्य, च,
और उसका फल मयि, अर्पितमनोबुद्धिः, माम्, एव, एष्यसि, असंशयम् ॥७॥

तस्मात् = इसलिये
(हे अर्जुन तू)

सर्वेषु = सब
कालेषु = समयमें (निरन्तर)

माम् = मेरा
अनुस्मर = स्मरण कर

च = और

युध्य = युद्ध भी कर

(इस प्रकार)

मयि = मेरेमें

अर्पित-

मनोबुद्धिः = { अर्पण किये हुए

{ मन बुद्धिसे

{ युक्त हुआ

असंशयम् = निःसन्देह

माम् = मेरेको

एव = ही

एष्यसि = प्राप्त होगा

निरन्तर चिन्तन अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसा नान्यगामिना ।
से परम दिव्य

पुरुषकी प्राप्ति । परमं पुरुषं दिव्यं याति पार्थानुचिन्तयन् ॥८॥

अभ्यासयोगयुक्तेन, चेतसा, नान्यगामिना,
परमम्, पुरुषम्, दिव्यम्, याति, पार्थ, अनुचिन्तयन् ॥ ८ ॥

और—

पार्थ	= हे पार्थ (यह नियम है कि)	अनु-चिन्तयन्	= { निरन्तर चिन्तन करता हुआ पुरुष
अभ्यास-योगयुक्तेन	= { परमेश्वरके ध्यानके अभ्यासरूप योगसे युक्त	परमम्	= परम (स्वप्रकाशस्वरूप)
नान्य-गामिना	= { अन्य तरफ न जानेवाले	दिव्यम्	= दिव्य
चेतसा	= चित्तसे	पुरुषम्	= { पुरुषको अर्थात् परमेश्वरको ही
		याति	= प्राप्त होता है

परम दिव्य
पुरुषके स्वरूप-
का वर्णन और
उसके चिन्तन-
की विधि ।

कविं पुराणमनुशासितार-

मणोरणीयांसमनुस्मरेद्यः ।

सर्वस्य धातारमचिन्त्यरूप-

मादित्यवर्णं तमसः परस्तात् ॥ ९ ॥

कविम्, पुराणम्, अनुशासितारम्, अणोः, अणीयांसम्,
अनुस्मरेत्, यः, सर्वस्य, धातारम्, अचिन्त्यरूपम्,
आदित्यवर्णम्, तमसः, परस्तात् ॥ ९ ॥

इससे—

यः	= जो पुरुष	अनु-	= { सबके नियन्ता*
कविम्	= सर्वज्ञ	शासितारम्	
पुराणम्	= अनादि		

* अन्तर्यामीरूपसे सब प्राणियोंके शुभ और अशुभ कर्मके अनुसार शासन करनेवाला ।

अणोः	= { सूक्ष्मसे भी	आदित्य-	= { सूर्यके सदृश
अणीयांसम्	= { अति सूक्ष्म	वर्णम्	= { नित्य चेतन
सर्वस्य	= सबके	तमसः	= अविद्यासे
धातारम्	= { धारण पोषण	परस्तात्	= { अतिपरे शुद्ध
	= { करनेवाले		= { सच्चिदानन्दघन
अचिन्त्य-	= { अचिन्त्य-	अनुसरेत्	= स्मरण करता है
रूपम्	= { स्वरूप		

[„]

प्रयाणकाले मनसाचलेन

भक्त्या युक्तो योगबलेन चैव ।

भ्रुवोर्मध्ये प्राणमावेश्य सम्यक्

स तं परं पुरुषमुपैति दिव्यम् ॥१०॥

प्रयाणकाले, मनसा, अचलेन, भक्त्या, युक्तः, योगबलेन,
च, एव, भ्रुवोः, मध्ये, प्राणम्, आवेश्य, सम्यक्, सः, तम्,
परम्, पुरुषम्, उपैति, दिव्यम् ॥१०॥

सः	= वह	च	= फिर
भक्त्या	= { भक्तियुक्त	अचलेन	= निश्चल
युक्तः	= { पुरुष	मनसा	= मनसे
प्रयाणकाले	= अन्तकालमें (भी)	(स्मरन्)	= स्मरण करता हुआ
योगबलेन	= योगबलसे	तम्	= उस
भ्रुवोः	= भ्रुकुटीके	दिव्यम्	= दिव्यस्वरूप
मध्ये	= मध्यमें	परम्	= { परम पुरुष
प्राणम्	= प्राणको	पुरुषम्	= { परमात्माको
सम्यक्	= अच्छी प्रकार	एव	= ही
आवेश्य	= स्थापन करके	उपैति	= प्राप्त होता है

अक्षरस्वरूप
परमपद की
प्रशंसा ।

यदक्षरं वेदविदो वदन्ति
विशन्ति यद्यतयो वीतरागाः ।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति
तत्ते पदं संग्रहेण प्रवक्ष्ये ॥११॥

यत्, अक्षरम्, वेदविदः, वदन्ति, विशन्ति, यत्, यतयः,
वीतरागाः, यत्, इच्छन्तः, ब्रह्मचर्यम्, चरन्ति, तत्, ते,
पदम्, संग्रहेण, प्रवक्ष्ये ॥११॥

और हे अर्जुन—

वेदविदः = { वेदके जानने- वाले (विद्वान्)	विशन्ति = प्रवेश करते हैं (तथा)
यत् = { जिस सच्चिदा- नन्दघनरूप	यत् = जिस परमपदको
परमपदको	इच्छन्तः = चाहनेवाले
अक्षरम् = ओंकार (नामसे)	ब्रह्मचर्यम् = ब्रह्मचर्यका
वदन्ति = कहते हैं (और)	चरन्ति = आचरण करते हैं
वीतरागाः = आसक्तिरहित	तत् = उस
यतयः = { यत्नशील महात्माजन	पदम् = परमपदको
यत् = जिसमें	ते = तेरे लिये
	संग्रहेण = संक्षेपसे
	प्रवक्ष्ये = कहूंगा

ध्यानयोगकी
विधिसे ओंकार-
का उच्चारण और
भगवत्स्वरूपका
चिन्तन करते
हुए मरनेवालेकी
परमगति होने-
का कथन ।

सर्वद्वाराणि संयम्य मनो हृदि निरुध्य च ।

मूढ्ण्यर्थाध्यात्मनः प्राणमास्थितो योगधारणाम् ॥

सर्वद्वाराणि, संयम्य, मनः, हृदि, निरुध्य, च,

मूर्ध्नि, आधाय, आत्मनः, प्राणम्, आस्थितः, योगधारणाम् ॥१२॥

हे अर्जुन-

सर्व- = { सत्र इन्द्रियोंके
द्वाराणि = { द्वारोंकोसंयम्य = { रोककर अर्थात्
इन्द्रियोंको
विषयोंसे हटाकर
(तथा)

मनः = मनको

हृदि = हृद्देशमें

निरुध्य = स्थिर करके

च = और

आत्मनः = अपने

प्राणम् = प्राणको

मूर्ध्नि = मस्तकमें

आधाय = स्थापन करके

योग- } = योगधारणामें
धारणाम् }

आस्थितः = स्थित हुआ

[,] ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन् ।

यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम् ॥

ॐ, इति, एकाक्षरम्, ब्रह्म, व्याहरन्, माम्, अनुस्मरन्,

यः, प्रयाति, त्यजन्, देहम्, सः, याति, परमाम्, गतिम् ॥ १३ ॥

यः = जो पुरुष

ॐ = ॐ

इति = ऐसे (इस)

एकाक्षरम् = एक अक्षररूप

ब्रह्म = ब्रह्मको

व्याहरन् = { उच्चारण करता
हुआ(और उसके अर्थ-
स्वरूप)

माम् = मेरेको

अनुस्मरन् = { चिन्तन करता
हुआ

देहम् = शरीरको

त्यजन् = त्यागकर

प्रयाति = जाता है

सः = वह पुरुष

परमाम् = परम

गतिम् = गतिको

याति = प्राप्त होता है

नित्य निरन्तर अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः ।
 भगवत्चिन्तनसे तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः ॥१४॥
 भगवत्-प्राप्तिकी
 सुलभता । अनन्यचेताः, सततम्, यः, माम्, स्मरति, नित्यशः,
 तस्य, अहम्, सुलभः, पार्थ, नित्ययुक्तस्य, योगिनः ॥१४॥
 और-

पार्थ	= हे अर्जुन	स्मरति	= स्मरण करता है
यः	= जो पुरुष	तस्य	= उस
अनन्यचेताः	= { मेरेमें अनन्य चित्तसे स्थित हुआ	नित्य- युक्तस्य	= { निरन्तर मेरेमें युक्त हुए
नित्यशः	= सदा ही	योगिनः	= योगीके (लिये)
सततम्	= निरन्तर	अहम्	= मैं
माम्	= मेरेको	सुलभः	= सुलभ हूँ-

अर्थात् सहज ही प्राप्त हो जाता हूँ ।

भगवत्-प्राप्ति मामुपेत्य पुनर्जन्म दुःखालयमशाश्वतम् ।
 का महत्त्व । नाप्नुवन्ति महात्मानः संसिद्धिं परमां गताः ॥

माम्, उपेत्य, पुनर्जन्म, दुःखालयम्, अशाश्वतम्,
 न, आप्नुवन्ति, महात्मानः, संसिद्धिम्, परमाम्, गताः ॥१५॥
 और वे-

परमाम्	= परम	दुःखालयम्	= { दुःखके स्थानरूप
संसिद्धिम्	= सिद्धिको	अशाश्वतम्	= क्षणभङ्गुर
गताः	= प्राप्त हुए	पुनर्जन्म	= पुनर्जन्मको
महात्मानः	= महात्माजन	न	= नहीं
माम्	= मेरेको	आप्नुवन्ति	= प्राप्त होते हैं
उपेत्य	= प्राप्त होकर		

[„] आब्रह्मभुवनाल्लोकाः पुनरावर्तिनोऽर्जुन ।
 मामुपेत्य तु कौन्तेय पुनर्जन्म न विद्यते ॥१६॥
 आब्रह्मभुवनात्, लोकाः, पुनरावर्तिनः, अर्जुन,
 माम्, उपेत्य, तु, कौन्तेय, पुनर्जन्म, न, विद्यते ॥१६॥

क्योंकि-

अर्जुन	= हे अर्जुन	कौन्तेय	= हे कुन्तीपुत्र
आब्रह्म-	= { ब्रह्मलोकसे	माम्	= मेरेको
भुवनात्	= { लेकर	उपेत्य	= प्राप्त होकर
लोकाः	= सब लोक		(उसका)
पुनरावर्तिनः	= { पुनरावर्ती *	पुनर्जन्म	= पुनर्जन्म
	= { स्वभाववाले हैं	न	= नहीं
तु	= परन्तु	विद्यते	= होता है-

क्योंकि मैं कालातीत हूँ और यह सब ब्रह्मादिकोंके लोक
 काल करके अवधिवाले होनेसे अनित्य हैं ।

ब्रह्माके दिन-
 रात्रिकी अवधि-
 का कथन ।

सहस्रयुगपर्यन्तमहर्षद्ब्रह्मणो विदुः ।
 रात्रिं युगसहस्रान्तां तेऽहोरात्रविदो जनाः ॥१७॥

सहस्रयुगपर्यन्तम्, अहः, यत्, ब्रह्मणः, विदुः,
 रात्रिम्, युगसहस्रान्ताम्, ते, अहोरात्रविदः, जनाः ॥१७॥

हे अर्जुन-

ब्रह्मणः	= ब्रह्माका	सहस्रयुग-	= { हजार चौकड़ी
यत्	= जो	पर्यन्तम्	= { युगतक
अहः	= एक दिन है		= { अवधिवाला
	(उसको)		(और)

* अर्थात् जिनको प्राप्त होकर पीछा संसारमें आना पड़े ऐसे ।

रात्रिम्	= रात्रिको (भी)	विदुः	= { तत्त्वसे जानते हैं *
युग-	= { हजार चौकड़ी युगतक अवधिवाली	ते	= वे
सहस्रान्ताम्		जनाः	= योगीजन
(ये)	= जो पुरुष	अहो-	= { कालके तत्त्वको जाननेवाले हैं
		रात्रिविदः	

ब्रह्मासे संपूर्ण
भूतोंकी वारम्बार
उत्पत्ति और
प्रलयका कथन ।

अव्यक्ताद्व्यक्तयः सर्वाः प्रभवन्त्यहरागमे ।

रात्र्यागमे प्रलीयन्ते तत्रैवाव्यक्तसंज्ञके ॥१८॥

अव्यक्तात्, व्यक्तयः, सर्वाः, प्रभवन्ति, अहरागमे,
रात्र्यागमे, प्रलीयन्ते, तत्र, एव, अव्यक्तसंज्ञके ॥१८॥
इसलिये वे यह भी जानते हैं कि-

सर्वाः	= संपूर्ण	(और)
व्यक्तयः	= { दृश्यमात्र भूतगण	रात्र्यागमे = { ब्रह्माकी रात्रिके प्रवेशकालमें
अहरागमे	= { ब्रह्माके दिनके प्रवेशकालमें	तत्र = उस
अव्यक्तात्	= { अव्यक्तसे अर्थात् ब्रह्माके सूक्ष्म शरीरसे	अव्यक्त- संज्ञके = { अव्यक्त नामक ब्रह्माके सूक्ष्म शरीरमें
प्रभवन्ति	= उत्पन्न होते हैं	एव = ही
		प्रलीयन्ते = लय होते हैं

[„] भूतग्रामः स एवायं भूत्वा भूत्वा प्रलीयते ।

रात्र्यागमेऽवशः पार्थ प्रभवत्यहरागमे ॥१९॥

भूतग्रामः, सः, एव, अयम्, भूत्वा, भूत्वा, प्रलीयते,
रात्र्यागमे, अवशः, पार्थ, प्रभवति, अहरागमे ॥१९॥

* अर्थात् काल करके अवधिवाला होनेसे ब्रह्मलोकको भी अनित्य जानते हैं ।

और—

सः	= वह	रात्र्यागमे	= { रात्रिके प्रवेश-
एव	= ही		{ कालमें
अयम्	= यह	प्रलीयते	= लय होता है
भूतग्रामः	= भूतसमुदाय		(और)
भूत्वा	= { उत्पन्न हो	अहरागमे	= { दिनके प्रवेश-
भूत्वा	= { होकर		{ कालमें (फिर)
अवशः	= { प्रकृतिके	प्रभवति	= उत्पन्न होता है
	= { वशमें हुआ	पार्थ	= हे अर्जुन—

इस प्रकार ब्रह्माके एक सौ वर्ष पूर्ण होनेसे अपने लोक-
सहित ब्रह्मा भी शान्त हो जाता है ।

सनातन अव्यक्त परस्तस्मात्तु भावोऽन्योऽव्यक्तोऽव्यक्तात्सनातनः ।
परमेश्वर के यः स सर्वेषु भूतेषु नश्यत्सु न विनश्यति ॥२०॥
स्वरूपका कथन

परः, तस्मात्, तु, भावः, अन्यः, अव्यक्तः, अव्यक्तात्, सनातनः,
यः, सः, सर्वेषु, भूतेषु, नश्यत्सु, न, विनश्यति ॥२०॥

तु	= परन्तु	भावः	= भाव है
तस्मात्	= उस	सः	= { वह सच्चिदा-
अव्यक्तात्	= अव्यक्तसे भी		= { नन्दघन पूर्ण
परः	= अति परे		{ ब्रह्म परमात्मा
अन्यः	= { दूसरा अर्थात्	सर्वेषु	= सब
	= { विलक्षण	भूतेषु	= भूतोंके
यः	= जो	नश्यत्सु	= नष्ट होनेपर भी
सनातनः	= सनातन	न	= नहीं
अव्यक्तः	= अव्यक्त	विनश्यति	= नष्ट होता है

अव्यक्त, अक्षर
और परमगति
तथा परमधाम-
की एकता ।

अव्यक्तोऽक्षर इत्युक्तस्तमाहुः परमां गतिम् ।

यं प्राप्य न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम ॥२१॥

अव्यक्तः, अक्षरः, इति, उक्तः, तम्, आहुः, परमाम्, गतिम्,
यम्, प्राप्य, न, निवर्तन्ते, तत्, धाम, परमम्, मम ॥२१॥

और जो वह-

अव्यक्तः = अव्यक्त

अक्षरः = अक्षर

इति = ऐसे

उक्तः = कहा गया है

तम् = { उस ही अक्षर
नामक अव्यक्त-
भावको

परमाम् = परम

गतिम् = गति

आहुः = कहते हैं (तथा)

यम् = { जिस सनातन
अव्यक्तभावको

प्राप्य = प्राप्त होकर
(मनुष्य)

न निवर्तन्ते = { पीछे नहीं
आते हैं

तत् = वह

मम = मेरा

परमम् = परम

धाम = धाम है

अनन्यभक्तिसे

पुरुषः स परः पार्थ भक्त्या लभ्यस्त्वनन्यया ।

परम पुरुष
परमेश्वर की
प्राप्ति ।

यस्यान्तःस्थानि भूतानि येन सर्वमिदं ततम् ॥

पुरुषः, सः, परः, पार्थ, भक्त्या, लभ्यः, तु, अनन्यया,
यस्य, अन्तःस्थानि, भूतानि, येन, सर्वम्, इदम्, ततम् ॥२२॥

तु = और

पार्थ = हे पार्थ

यस्य = { जिस
परमात्माके

अन्तःस्थानि = अन्तर्गत

भूतानि = सर्व भूत हैं
(और)

येन = { जिस सच्चि-
दानन्दघन
परमात्मासे

इदम्	= यह	पुरुषः	= पुरुष
सर्वम्	= सब जगत्	अनन्यया	= अनन्य †
तत्	= परिपूर्ण है*	भक्त्या	= भक्तिसे
सः	= { वह सनातन अव्यक्त	लभ्यः	= { प्राप्त होने योग्य है
परः	= परम		

शुक्ल कृष्ण यत्र काले त्वनावृत्तिमावृत्तिं चैव योगिनः ।

मार्गका विषय

कहनेके लिये

भगवान्

प्रतिज्ञा ।

प्रयाता यान्ति तं कालं वक्ष्यामि भरतर्षभ ॥२३॥

की यत्र, काले, तु, अनावृत्तिम्, आवृत्तिम्, च, एव, योगिनः,
प्रयाताः, यान्ति, तम्, कालम्, वक्ष्यामि, भरतर्षभ ॥२३॥

तु	= और	च	= और
भरतर्षभ	= हे अर्जुन	आवृत्तिम्	= { पीछा आने- वाली गतिको
यत्र	= जिस	एव	= भी
काले	= कालमें†	यान्ति	= प्राप्त होते हैं
प्रयाताः	= { शरीर त्याग- कर गये हुए	तम्	= उस
योगिनः	= योगीजन	कालम्	= { कालको अर्थात् मार्गको
अनावृत्तिम्	= { पीछा न आने- वाली गतिको	वक्ष्यामि	= कहूंगा

फलसहित शुक्ल

मार्गका कथन ।

अग्निर्ज्योतिरहः शुक्लः षण्मासा उत्तरायणम् ।

तत्र प्रयाता गच्छन्ति ब्रह्म ब्रह्मविदो जनाः ॥

* गीता अध्याय ९ श्लोक ४ में देखना चाहिये ।

† गीता अध्याय ११ श्लोक ५५ में इसका विस्तार देखना चाहिये ।

‡ यहाँ काल शब्दसे मार्ग समझना चाहिये, क्योंकि आगेके श्लोकोंमें

भगवान् ने इसका नाम “सृति” “गति” ऐसा कहा है ।

अग्निः, ज्योतिः, अहः, शुक्लः, षण्मासाः, उत्तरायणम्,
तत्र, प्रयाताः, गच्छन्ति, ब्रह्म, ब्रह्मविदः, जनाः ॥२४॥

उन दो प्रकारके मार्गोंमेंसे जिस मार्गमें—

ज्योतिः	= ज्योतिर्मय	षण्मासाः	{ उत्तरायणके छ
अग्निः	= { अग्नि अभिमानी देवता है	उत्तरा-	= { महोनोका अभि-
	(और)	यणम्	{ मानी देवता है
		तत्र	= उस मार्गमें
अहः	= { दिनका अभिमानी देवता है	प्रयाताः	= मरकर गये हुए
	(तथा)	ब्रह्मविदः	= ब्रह्मवेत्ता *
		जनाः	= योगीजन (उपरोक्त देवताओंद्वारा क्रमसे ले गये हुए)
शुक्लः	= { शुक्लपक्षका अभि- मानी देवता है	ब्रह्म	= ब्रह्मको
	(और)	गच्छन्ति	= प्राप्त होते हैं

फलसहित कृष्ण
मार्गका कथन ।

धूमो रात्रिस्तथा कृष्णः षण्मासा दक्षिणायनम् ।
तत्र चान्द्रमसं ज्योतिर्योगी प्राप्य निवर्तते ॥२५॥

धूमः, रात्रिः, तथा, कृष्णः, षण्मासाः, दक्षिणायनम्,
तत्र, चान्द्रमसम्, ज्योतिः, योगी, प्राप्य, निवर्तते ॥२५॥

तथा जिस मार्गमें—

धूमः	= { धूमाभिमानी देवता है	रात्रिः	= { रात्रि अभिमानी देवता है
	(और)	तथा	= तथा

* अर्थात् परमेश्वरकी उपासनासे परमेश्वरको परोक्षभावसे जाननेवाले ।

कृष्णः	= { कृष्णपक्षका अ- भिमानी देवता है (और)	(उपरोक्त देवताओंद्वारा क्रमसे ले गया हुआ)
षण्मासाः दक्षिणायनम्	{ दक्षिणायनके छ महीनोंका अभिमानी देवता है	चान्द्रमसम् = चन्द्रमाकी ज्योतिः = ज्योतिको
तत्र	= उस मार्गमें (मरकर गया हुआ)	प्राप्य = प्राप्त होकर (स्वर्गमें अपने शुभकर्मोंका फल भोगकर)
योगी	= { सकाम कर्म- योगी	निवर्तते = पीछा आता है

शुक्ल कृष्ण गति
की अनादिताका
कथन ।

शुक्लकृष्णे गती ह्येते जगतः शाश्वते मते ।

एकया यात्यनावृत्तिमन्ययावर्तते पुनः ॥२६॥

शुक्लकृष्णे, गती, हि, एते, जगतः, शाश्वते, मते,
एकया, याति, अनावृत्तिम्, अन्यया, आवर्तते, पुनः ॥२६॥

हि	= क्योंकि	शाश्वते = सनातन
जगतः	= जगत्के	मते = माने गये हैं (इनमें)
एते	= यह दो प्रकारके	एकया = एकके द्वारा (गया हुआ *)
शुक्लकृष्णे =	{ शुक्ल और कृष्ण अर्थात् देवयान और पितृयान	अना- = { पीछा न आनेवाली वृत्तिम् { परमगतिको
गती	= मार्ग	याति = प्राप्त होता है (और)

* अर्थात् इसी अध्यायके श्लोक २४ के अनुसार अचिमार्गसे गया हुआ योगी ।

अन्यथा = दूसरेद्वारा
(गया हुआ*)

पुनः = पीछा

आवर्तते = आता है अर्थात्
जन्म-मृत्युको
प्राप्त होता है

दोनों मार्गोंको नैते सृती पार्थ जानन्योगी मुह्यति कश्चन ।

जानने वाले तस्मात्सर्वेषु कालेषु योगयुक्तो भवार्जुन ॥२७॥

योगीकी प्रशंसा ।

न, एते, सृती, पार्थ, जानन्, योगी, मुह्यति, कश्चन,
तस्मात्, सर्वेषु, कालेषु, योगयुक्तः, भव, अर्जुन ॥२७॥

और-

पार्थ = हे पार्थ
(इस प्रकार)

एते = इन दोनों

सृती = मार्गोंको

जानन् = { तत्त्वसे जानता
हुआ

कश्चन = कोई भी

योगी = योगी

न मुह्यति = { मोहित नहीं
होता है†

तस्मात् = इस कारण

अर्जुन = हे अर्जुन (तू)

सर्वेषु = सब

कालेषु = कालमें

योगयुक्तः = { समत्वबुद्धिरूप
योगसे युक्त

भव = हो

अर्थात् निरन्तर मेरी प्राप्तिके लिये साधन करनेवाला हो ।

* अर्थात् इसी अध्यायके श्लोक २५ के अनुसार भूममार्गसे गया हुआ
सकाम कर्मयोगी ।

† अर्थात् फिर वह निष्कामभावसे ही साधन करता है, कामनाओंमें
नहीं फँसता ।

तत्त्वसे दोनों
मार्गोंको जानने-
का फल ।

वेदेषु यज्ञेषु तपःसु चैव

दानेषु यत्पुण्यफलं प्रदिष्टम् ।

अत्येति तत्सर्वमिदं विदित्वा

योगी परं स्थानमुपैति चाद्यम् ॥२८॥

वेदेषु, यज्ञेषु, तपःसु, च, एव, दानेषु, यत्, पुण्यफलम्,
प्रदिष्टम्, अत्येति, तत्, सर्वम्, इदम्, विदित्वा, योगी,
परम्, स्थानम्, उपैति, च, आद्यम् ॥२८॥

क्योंकि-

योगी	= योगी पुरुष	प्रदिष्टम्	= कहा है
इदम्	= इस रहस्यको	तत्	= उस
विदित्वा	= तत्त्वसे जानकर	सर्वम्	= सबको
वेदेषु	= वेदोंके पढ़नेमें	एव	= निःसन्देह
च	= तथा	अत्येति	= { उल्लंघन कर जाता है
यज्ञेषु	= यज्ञ	च	= और
तपःसु	= तप (और)	आद्यम्	= सनातन
दानेषु	= { दानादिकोंके करनेमें	परम्	= परम
यत्	= जो	स्थानम्	= पदको
पुण्यफलम्	= पुण्यफल	उपैति	= प्राप्त होता है

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां

योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे अक्षरब्रह्मयोगो

नामाष्टमोऽध्यायः ॥८॥

हरिः ॐ तत्सत् हरिः ॐ तत्सत् हरिः ॐ तत्सत्

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

अथ नवमोऽध्यायः

प्रधान विषय—१ से ६ तक प्रभावसहित ज्ञानका विषय। (७-१०) जगत्की उत्पत्तिका विषय। (११-१५) भगवान्का तिरस्कार करने-वाले आसुरी प्रकृतिवालोंकी निन्दा और दैवी प्रकृतिवालोंके भगवत्-भजनका प्रकार। (१६-१९) सर्वात्मरूपसे प्रभावसहित भगवान्के स्वरूपका वर्णन। (२०-२५) सकाम और निष्काम उपासनाका फल। (२६-३४) निष्काम भगवद्भक्तिकी महिमा।

श्रीभगवानुवाच

विज्ञानसहित इदं तु ते गुह्यतमं प्रवक्ष्याम्यनसूयवे ।
ज्ञानं विज्ञानसहितं यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात् ॥
इदम्, तु, ते, गुह्यतमम्, प्रवक्ष्यामि, अनसूयवे,
ज्ञानम्, विज्ञानसहितम्, यत्, ज्ञात्वा, मोक्ष्यसे, अशुभात् ॥१॥
उसके उपरान्त श्रीकृष्ण भगवान् बोले हे अर्जुन—

ते	= तुझ	प्रवक्ष्यामि	= कहूंगा
अनसूयवे	= { दोषदृष्टिरहित भक्तके लिये	तु	= कि
इदम्	= इस	यत्	= जिसको
गुह्यतमम्	= परम गोपनीय	ज्ञात्वा	= जानकर (तू)
ज्ञानम्	= ज्ञानको	अशुभात्	= { दुःखरूप संसारसे
विज्ञान- सहितम् }	= रहस्यके सहित	मोक्ष्यसे	= मुक्त हो जायगा

विज्ञानसहित राजविद्या राजगुह्यं पवित्रमिदमुत्तमम् ।
 ज्ञानकी महिमा प्रत्यक्षावगमं धर्म्यं सुसुखं कर्तुमव्ययम् ॥२॥

राजविद्या, राजगुह्यम्, पवित्रम्, इदम्, उत्तमम्,
 प्रत्यक्षावगमम्, धर्म्यम्, सुसुखम्, कर्तुम्, अव्ययम् ॥२॥

इदम्	= यह (ज्ञान)	प्रत्यक्षाव-	= { प्रत्यक्ष फल-
राजविद्या	= { सबविद्याओंका	गमम्	= { वाला (और)
	= { राजा (तथा)	धर्म्यम्	= धर्मयुक्त है
राजगुह्यम्	= { सब गोपनीयों-	कर्तुम्	= साधन करनेको
	= { का भी राजा	सुसुखम्	= बड़ा सुगम
	(एवं)		(और)
पवित्रम्	= अति पवित्र	अव्ययम्	= अविनाशी है
उत्तमम्	= उत्तम		

विज्ञानसहित अश्रद्धानाः पुरुषा धर्मस्यास्य परंतप ।
 ज्ञानमें श्रद्धा- अप्राप्य मां निवर्तन्ते मृत्युसंसारवर्त्मनि ॥३॥
 रहित मनुष्योंको
 जन्म मृत्युकी अश्रद्धानाः, पुरुषाः, धर्मस्य, अस्य, परंतप,
 प्राप्ति । अप्राप्य, माम्, निवर्तन्ते, मृत्युसंसारवर्त्मनि ॥३॥

और-

परंतप	= हे परंतप	माम्	= मेरेको
अस्य	= { इस (तत्त्व-	अप्राप्य	= न प्राप्त होकर
	= { ज्ञानरूप)	मृत्युसंसार-	= { मृत्युरूप
धर्मस्य	= धर्ममें	वर्त्मनि	= { संसारचक्रमें
अश्रद्धानाः	= श्रद्धारहित	निवर्तन्ते	= भ्रमण करते हैं
पुरुषाः	= पुरुष		

प्रभावसहित
भगवान्के सर्व-
व्यापी स्वरूपका
कथन ।

मया ततमिदं सर्वं जगदव्यक्तमूर्तिना ।

मत्स्थानि सर्वभूतानि न चाहं तेष्ववस्थितः ॥४॥

मया, ततम्, इदम्, सर्वम्, जगत्, अव्यक्तमूर्तिना,

मत्स्थानि, सर्वभूतानि, न, च, अहम्, तेषु, अवस्थितः ॥४॥

और हे अर्जुन-

मया = मुझ

अव्यक्त- = { सच्चिदानन्दघन
मूर्तिना = { परमात्मासे

इदम् = यह

सर्वम् = सब

जगत् = जगत् (जलसे
वर्षके सदृश)

ततम् = परिपूर्ण है

च = और

सर्वभूतानि = सब भूत

मेरे अन्तर्गत
संकल्पके

मत्स्थानि = आधार स्थित
हैं (इसलिये
वास्तवमें)

अहम् = मैं

तेषु = उनमें

न अवस्थितः = स्थित नहीं हूँ

[„] न च मत्स्थानि भूतानि पश्य मे योगमैश्वरम् ।

भूतभृन्न च भूतस्थो ममात्मा भूतभावनः ॥५॥

न, च, मत्स्थानि, भूतानि, पश्य, मे, योगम्, ऐश्वरम्,

भूतभृत्, न, च, भूतस्थः, मम, आत्मा, भूतभावनः ॥५॥

च = और (वे)

भूतानि = सब भूत

मत्स्थानि = मेरेमें स्थित

न = नहीं हैं (किन्तु)

मे = मेरी

योगम् = योगमाया (और)

ऐश्वरम् = प्रभावको

पश्य = देख (कि)

भूतभृत् = { भूतोंका धारण-
पोषण करनेवाला

	(और)	मम = मेरा
भूतभावनः =	{ भूतोंको उत्पन्न करनेवाला	आत्मा = आत्मा (वास्तवमें)
च	= भी	भूतस्थः = भूतोंमें स्थित
		न = नहीं है

आकाशके दृष्टान्त से भगवान्‌के सर्व-व्यापी स्वरूप-का कथन । यथाकाशस्थितो नित्यं वायुः सर्वत्रगो महान् । तथा सर्वाणि भूतानि मत्स्थानीत्युपधारय ॥६॥ यथा, आकाशस्थितः, नित्यम्, वायुः, सर्वत्रगः, महान्, तथा, सर्वाणि, भूतानि, मत्स्थानि, इति, उपधारय ॥६॥

क्योंकि—

यथा = जैसे (आकाशसे उत्पन्न हुआ)	तथा = वैसे ही (मेरे संकल्पद्वारा उत्पत्तिवाले होनेसे)
सर्वत्रगः = सर्वत्र विचरनेवाला	सर्वाणि = संपूर्ण
महान् = महान्	भूतानि = भूत
वायुः = वायु	मत्स्थानि = मेरेमें स्थित हैं
नित्यम् = सदा ही	इति = ऐसे
आकाश-स्थितः = { आकाशमें स्थित है	उपधारय = जान

सर्वभूतोंकी उत्पत्ति और प्रलयका कथन । सर्वभूतानि कौन्तेय प्रकृतिं यान्ति मामिकाम् । कल्पक्षये पुनस्तानि कल्पादौ विसृजाम्यहम् ॥७॥

सर्वभूतानि, कौन्तेय, प्रकृतिम्, यान्ति, मामिकाम्, कल्पक्षये, पुनः, तानि, कल्पादौ, विसृजामि, अहम् ॥७॥

और—

कौन्तेय = हे अर्जुन	सर्वभूतानि = सब भूत
कल्पक्षये = कल्पके अन्तमें	मामिकाम् = मेरी

प्रकृतिम् = प्रकृतिको	कल्पादौ = कल्पके आदिमें
यान्ति = { प्राप्त होते हैं	तानि = उनको
{ अर्थात् प्रकृतिमें	अहम् = मैं
{ लय होते हैं	पुनः = फिर
(और)	विसृजामि = रचता हूँ

सर्वभूतोंकी प्रकृतिं स्वामवष्टभ्य विसृजामि पुनः पुनः ।
 पुनः पुनः
 उत्पत्तिका कथन भूतग्राममिमं कृत्स्नमवशं प्रकृतेर्वशात् ॥८॥

प्रकृतिम्, स्वाम्, अवष्टभ्य, विसृजामि, पुनः, पुनः,
 भूतग्रामम्, इमम्, कृत्स्नम्, अवशम्, प्रकृतेः, वशात् ॥८॥
 कैसे कि-

स्वाम् = अपनी	इमम् = इस
प्रकृतिम् = { त्रिगुणमयी	कृत्स्नम् = संपूर्ण
{ मायाको	भूतग्रामम् = भूतसमुदायको
अवष्टभ्य = अङ्गीकार करके	पुनः पुनः = बारम्बार
प्रकृतेः = स्वभावके	(उनके कर्मोंके
वशात् = वशसे	अनुसार)
अवशम् = परतन्त्र हुए	विसृजामि = रचता हूँ

भगवान्को कर्म न च मां तानि कर्माणि निबध्नन्ति धनंजय ।
 न बांधनेमें उदासीनवदासीनमसक्तं तेषु कर्मसु ॥९॥
 हेतुका कथन ।

न, च, माम्, तानि, कर्माणि, निबध्नन्ति, धनंजय,
 उदासीनवत्, आसीनम्, असक्तम्, तेषु, कर्मसु ॥९॥

धनंजय = हे अर्जुन	कर्मसु = कर्मोंमें
तेषु = उन	असक्तम् = आसक्तिरहित

च	= और	तानि	= वे
उदासीनवत्	= { उदासीनके सदृश*	कर्माणि	= कर्म
आसीनम्	= स्थित हुए	न	= नहीं
माम्	= मुझ परमात्माको	निबध्नन्ति	= बांधते हैं

भगवान्के मयाध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरम् ।

सकाशसे प्रकृति-

द्वारा चराचर

जगत्की उत्पत्ति

हेतुनानेन कौन्तेय जगद्विपरिवर्तते ॥१०॥

मया, अध्यक्षेण, प्रकृतिः, सूयते, सचराचरम्,
हेतुना, अनेन, कौन्तेय, जगत्, विपरिवर्तते ॥१०॥

और-

कौन्तेय	= हे अर्जुन	सूयते	= रचती है (और)
मया	= मुझ	अनेन	= इस
अध्यक्षेण	= { अधिष्ठाताके सकाशसे (यह मेरी)	हेतुना	= हेतुसे (ही)
प्रकृतिः	= माया	जगत्	= यह संसार
सचराचरम्	= { चराचरसहित सर्व जगत्को	विपरिवर्तते	= { आवागमन- रूप चक्रमें घूमता है

भगवान्का

तिरस्कार करने-

वालोंकी निन्दा।

अवजानन्ति मां मूढा मानुषीं तनुमाश्रितम् ।

परं भावमजानन्तो मम भूतमहेश्वरम् ॥११॥

अवजानन्ति, माम्, मूढाः, मानुषीम्, तनुम्, आश्रितम्,
परम्, भावम्, अजानन्तः, मम, भूतमहेश्वरम् ॥११॥

* जिसके संपूर्ण कार्य कर्तृत्वभावके बिना अपने आप सत्तामात्रसे ही होते हैं उसका नाम उदासीनके सदृश है ।

ऐसा होनेपर भी—

भूत-	= { संपूर्ण भूतोंके	मानुषीम्	= मनुष्यका
महेश्वरम्	= { महान् ईश्वररूप	तनुम्	= शरीर
मम	= मेरे	आश्रितम्	= { धारण
परम्	= परम		= { करनेवाले
भावम्	= भावको *	माम्	= { मुझ
अजानन्तः	= न जाननेवाले		= { परमात्माको
मूढाः	= मूढलोग	अवजानन्ति	= तुच्छ समझते हैं

अर्थात् अपनी योगमायासे संसारके उद्धारके लिये
मनुष्यरूपमें विचरते हुएको साधारण मनुष्य मानते हैं ।

राक्षसी और
आसुरी प्रकृति-
वालोंके लक्षण ।

मोघाशा मोघकर्माणो मोघज्ञाना विचेतसः ।

राक्षसीमासुरीं चैव प्रकृतिं मोहिनीं श्रिताः ॥१२॥

मोघाशाः, मोघकर्माणः, मोघज्ञानाः, विचेतसः,

राक्षसीम्, आसुरीम्, च, एव, प्रकृतिम्, मोहिनीम्, श्रिताः ॥१२॥

जोकि—

मोघाशाः	= वृथा आशा	आसुरीम्	= असुरोंके (जैसे)
मोघ-	= { वृथा कर्म	मोहिनीम्	= { मोहित करने-
कर्माणः	= { (और)		= { वाले (तामसो)
मोघज्ञानाः	= वृथा ज्ञानवाले	प्रकृतिम्	= स्वभावको†
विचेतसः	= अज्ञानीजन	एव	= ही
राक्षसीम्	= राक्षसोंके	श्रिताः	= { धारण किये
च	= और		= { हुए हैं

* गीता अध्याय ७ श्लोक २४ में देखना चाहिये ।

† जिसको आसुरी संपदाके नामसे विस्तारपूर्वक भगवान् ने गीता

अध्याय १६ श्लोक ४ तथा श्लोक ७ से २१ तक कहा है ।

दैवी प्रकृतिवाले महात्मानस्तु मां पार्थ दैवीं प्रकृतिमाश्रिताः ।
महात्माओं को भजन्त्यनन्यमनसो ज्ञात्वा भूतादिमव्ययम् ॥

प्रशंसा ।

महात्मानः, तु, माम्, पार्थ, दैवीम्, प्रकृतिम्, आश्रिताः,
भजन्ति, अनन्यमनसः, ज्ञात्वा, भूतादिम्, अव्ययम् ॥१३॥

तु	= परन्तु	(और)
पार्थ	= हे कुन्तीपुत्र	
दैवीम्	= दैवी	अव्ययम् = { नाशरहित अक्षरस्वरूप
प्रकृतिम्	= प्रकृतिके*	
आश्रिताः	= आश्रित हुए	ज्ञात्वा = जानकर
महात्मानः	= { जो महात्माजन हैं (वे तो)	अनन्य- = { अनन्य मनसे मनसः = { युक्त
माम्	= मेरेको	(सन्तः) = हुए
भूतादिम्	= { सब भूतोंका सनातन कारण	भजन्ति = निरन्तर भजते हैं

उपासनाकी
विधि ।

सततं कीर्तयन्तो मां यतन्तश्च दृढव्रताः ।

नमस्यन्तश्च मां भक्त्या नित्ययुक्ता उपासते ॥१४॥

सततम्, कीर्तयन्तः, माम्, यतन्तः, च, दृढव्रताः,
नमस्यन्तः, च, माम्, भक्त्या, नित्ययुक्ताः, उपासते ॥१४॥

और वे—

दृढव्रताः	= { दृढ़ निश्चयवाले भक्तजन	कीर्तयन्तः = { मेरे नाम और गुणोंका कीर्तन
सततम्	= निरन्तर	{ करते हुए

* इसका विस्तारपूर्वक वर्णन गीता अध्याय १६ श्लोक १-२-३ में
देखना चाहिये ।

च	= तथा (मेरी प्राप्तिके लिये)	नित्ययुक्ताः =	{ सदा मेरे ध्यानमें युक्त हुए
यतन्तः	= यत्न करते हुए		
च	= और	भक्त्या	= अनन्य भक्तिसे
माम्	= मेरेको	माम्	= मुझे
नमस्यन्तः	= { बारम्बार प्रणाम करते हुए	उपासते	= उपासते हैं

उपासनाके ज्ञानयज्ञेन चाप्यन्ये यजन्तो मामुपासते ।

पृथक् पृथक् भेद

एकत्वेन पृथक्त्वेन बहुधा विश्वतोमुखम् ॥१५॥

ज्ञानयज्ञेन, च, अपि, अन्ये, यजन्तः, माम्, उपासते,
एकत्वेन, पृथक्त्वेन, बहुधा, विश्वतोमुखम् ॥१५॥

उनमें कोई तो—

माम्	= मुझ	(उपासते) =	उपासते हैं (और)
विश्वतो-	= { विराट् स्वरूप	अन्ये	= दूसरे
मुखम्	= { परमात्माको	पृथक्त्वेन =	{ पृथक्त्वभावसे अर्थात् स्वामी- सेवकभावसे
ज्ञानयज्ञेन	= ज्ञानयज्ञके द्वारा	च	= और (कोई कोई)
यजन्तः	= पूजन करते हुए	बहुधा	= बहुत प्रकारसे
एकत्वेन	= { एकत्वभावसे अर्थात् जो कुछ है सब वासुदेव ही है इस भावसे	अपि	= भी
		उपासते	= उपासते हैं

यच्चरूपसे अहं क्रतुरहं यज्ञः स्वधाहमहमौषधम् ।

भगवान् के
स्वरूपका कथन

मन्त्रोऽहमहमेवाज्यमहमग्निरहं हुतम् ॥१६॥

अहम्, क्रतुः, अहम्, यज्ञः, स्वधा, अहम्, अहम्, औषधम्,
मन्त्रः, अहम्, अहम्, एव, आज्यम्, अहम्, अग्निः, अहम्, हुतम् ॥

क्योंकि—

क्रतुः = क्रतु अर्थात् श्रौत कर्म	अहम् = मैं हूँ (एवं)
अहम् = मैं हूँ	मन्त्रः = मन्त्र
यज्ञः = { यज्ञ अर्थात् पञ्चमहा- यज्ञादिक स्मार्तकर्म	अहम् = मैं हूँ
अहम् = मैं हूँ	आज्यम् = घृत
स्वधा = { स्वधा अर्थात् पितरोंके निमित्त दिया जानेवाला अन्न	अहम् = मैं हूँ
अहम् = मैं हूँ	अग्निः = अग्नि
औषधम् { औषधि अर्थात् सब वनस्पतियां	अहम् = मैं हूँ (और)
	हुतम् = हवनरूप क्रिया (भी)
	अहम् = मैं
	एव = ही हूँ

पिता मातादि-
रूपसे भगवान्के
स्वरूपका कथन

पिताहमस्य जगतो माता धाता पितामहः ।

वेद्यं पवित्रमोङ्कार ऋक्साम यजुरेव च ॥१७॥

पिता, अहम्, अस्य, जगतः, माता, धाता, पितामहः,

वेद्यम्, पवित्रम्, ओङ्कारः, ऋक्, साम, यजुः, एव, च ॥१७॥

और हे अर्जुन ! मैं ही—

अस्य = इस	पिता = पिता
जगतः = संपूर्ण जगत्का	माता = माता (और)
धाता = { धाता अर्थात् धारण पोषण करनेवाला	पितामहः = पितामह (हूँ)
धाता = { एवं कर्मोंके फलको देनेवाला (तथा)	च = और
	वेद्यम् = जानने योग्य *
	पवित्रम् = पवित्र

* गीता अध्याय १३ श्लोक १२ से लेकर १७ तकमें देखना चाहिये।

ओंकारः = ओंकार (तथा) | यजुः = यजुर्वेद (भी)
 ऋक् = ऋग्वेद | अहम् = मैं
 साम = सामवेद (और) | एव = ही हूँ

प्रभावसहित
 भगवान्के सर्व-
 व्यापी स्वरूपका
 कथन ।

गतिर्भर्ता प्रभुः साक्षी निवासः शरणं सुहृत् ।

प्रभवः प्रलयः स्थानं निधानं बीजमव्ययम् ॥१८॥

गतिः, भर्ता, प्रभुः, साक्षी, निवासः, शरणम्, सुहृत्,

प्रभवः, प्रलयः, स्थानम्, निधानम्, बीजम्, अव्ययम् ॥१८॥

और हे अर्जुन-

गतिः = प्राप्त होने योग्य (तथा)	सुहृत् = प्रति उपकार न चाहकर हित करने- वाला (और)
भर्ता = { भरणपोषण करने- वाला	प्रभवः = उत्पत्ति
प्रभुः = सबका स्वामी	प्रलयः = प्रलयरूप(तथा)
साक्षी = { शुभाशुभका देख- नेवाला	स्थानम् = सबका आधार
निवासः = सबका वासस्थान (और)	निधानम् = निधान*(और)
शरणम् = शरण लेने योग्य (तथा)	अव्ययम् = अविनाशी
	बीजम् = कारण (भी) (अहम् एव) = मैं ही हूँ

[„] तपाम्यहमहं वर्षं निगृह्णाम्युत्सृजामि च ।

अमृतं चैव मृत्युश्च सदसच्चाहमर्जुन ॥१९॥

तपामि, अहम्, अहम्, वर्षम्, निगृह्णामि, उत्सृजामि, च,

अमृतम्, च, एव, मृत्युः, च, सत्, असत्, च, अहम्, अर्जुन ॥

* प्रलयकालमें संपूर्ण भूत सूक्ष्मरूपसे जिसमें लय होते हैं उसका
 नाम निधान है ।

और-

अहम्	= मैं (ही)	अहम्	= मैं (ही)
तपामि	= { सूर्यरूप हुआ तपता हूँ (तथा)	अमृतम्	= अमृत
वर्षम्	= वर्षाको	च	= और
निगृह्णामि	= { आकर्षण करता हूँ	मृत्युः	= मृत्यु (एवं)
च	= और	सत्	= सत्
उत्सृजामि	= वर्षाता हूँ	च	= और
च	= और	असत्	= असत् (भी) (सब कुछ)
अर्जुन	= हे अर्जुन	अहम्	= मैं
		एव	= ही हूँ

सकाम उपासना
का फल ।

त्रैविद्या मां सोमपाः पूतपापा
यज्ञैरिष्टा स्वर्गतिं प्रार्थयन्ते ।
ते पुण्यमासाद्य सुरेन्द्रलोक-

मश्नन्ति दिव्यान्दिवि देवभोगान् ॥२०॥

त्रैविद्याः, माम्, सोमपाः, पूतपापाः, यज्ञैः, इष्ट्वा, स्वर्गतिम्,
प्रार्थयन्ते, ते, पुण्यम्, आसाद्य, सुरेन्द्रलोकम्, अश्नन्ति,
दिव्यान्, दिवि, देवभोगान् ॥२०॥

परन्तु जो-

त्रैविद्याः = {	तीनों वेदोंमें विधान किये हुए सकाम कर्मोंको करनेवाले (और)	सोमपाः = {	सोमरसको पीनेवाले (एवं)
		पूतपापाः = {	पापोंसे पवित्र हुए पुरुष*

* यहाँ स्वर्गप्राप्तिके प्रतिबन्धक देव-क्षणरूप पापसे पवित्र होना
समझना चाहिये ।

माम्	= मेरेको	सुरेन्द्र-	} = इन्द्रलोकको
यज्ञैः	= यज्ञोंके द्वारा	लोकम्	
इष्ट्वा	= पूजकर	आसाद्य	= प्राप्त होकर
स्वर्गतिम्	= स्वर्गकी प्राप्तिको	दिवि	= स्वर्गमें
प्रार्थयन्ते	= चाहते हैं	दिव्यान्	= दिव्य
ते	= वे पुरुष	देवभोगान्	= { देवताओंके
पुण्यम्	= { अपने पुण्योंके	अश्नन्ति	= { भोगोंको
	फलरूप		= भोगते हैं

["]

ते तं भुक्त्वा स्वर्गलोकं विशालं

क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति ।

एवं त्रयीधर्ममनुप्रपन्ना

गतागतं कामकामा लभन्ते ॥२१॥

ते, तम्, भुक्त्वा, स्वर्गलोकम्, विशालम्, क्षीणे, पुण्ये,
मर्त्यलोकम्, विशन्ति, एवम्, त्रयीधर्मम्, अनुप्रपन्नाः,
गतागतम्, कामकामाः, लभन्ते ॥२१॥

और—

ते	= वे	विशन्ति	= प्राप्त होते हैं
तम्	= उस	एवम्	= इस प्रकार (स्वर्ग- के साधनरूप)
विशालम्	= विशाल		{ तीनों वेदोंमें
स्वर्गलोकम्	= स्वर्गलोकको	त्रयीधर्मम्	= { कहे हुए
भुक्त्वा	= भोगकर		{ सकाम कर्मके
पुण्ये	= { पुण्य क्षीण	अनुप्रपन्नाः	= शरण हुए
क्षीणे	= { होनेपर		(और)
मर्त्यलोकम्	= मृत्युलोकको		

कामकामाः = { भोगोंकी कामनावाले पुरुष } गतागतम् = { बारम्बार जाने आनेको लभन्ते = प्राप्त होते हैं

अर्थात् पुण्यके प्रभावसे स्वर्गमें जाते हैं और पुण्य क्षीण होनेसे मृत्युलोकमें आते हैं ।

निष्काम अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते ।

उपासनाका फल तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥२२॥

अनन्याः, चिन्तयन्तः, माम्, ये, जनाः, पर्युपासते,
तेषाम्, नित्याभियुक्तानाम्, योगक्षेमम्, वहामि, अहम् ॥२२॥
और—

ये	= जां	पर्युपासते = { निष्कामभावसे भजते हैं
अनन्याः	= { अनन्यभावसे मेरेमें स्थितहुए	तेषाम् = उन
जनाः	= भक्तजन	नित्याभि- = { नित्य एकीभाव- युक्तानाम् = { से मेरेमें स्थिति- वाले पुरुषोंका
माम्	= { मुझ परमेश्वरको	योगक्षेमम् = योगक्षेम*
चिन्तयन्तः	= { निरन्तर चिन्तन करते हुए	अहम् = मैं स्वयम् वहामि = प्राप्त कर देता हूँ

अन्य देवताओं- येऽप्यन्यदेवता भक्ता यजन्ते श्रद्धयान्विताः ।
की पूजासे भी तेऽपि मामेव कौन्तेय यजन्त्यविधिपूर्वकम् ॥२३॥
अविधि पूर्वक ये, अपि, अन्यदेवताः, भक्ताः, यजन्ते, श्रद्धया, अन्विताः,
भगवत् पूजन ते, अपि, माम्, एव, कौन्तेय, यजन्ति, अविधिपूर्वकम् ॥२३॥
होनेका निरूपण

* भगवत्के स्वरूपकी प्राप्तिका नाम योग है और भगवत्-प्राप्तिके निमित्त किये हुए साधनकी रक्षाका नाम क्षेम है ।

और—

कौन्तेय	= हे अर्जुन	अपि	= भी
अपि	= यद्यपि	माम्	= मेरेको
श्रद्धया	= श्रद्धासे	एव	= ही
अन्विताः	= युक्त हुए	यजन्ति	= पूजते हैं
ये	= जो		(किन्तु उनका
भक्ताः	= सकामी भक्त		वह पूजना)
अन्यदेवताः	= { दूसरे	अविधि-	{ अविधिपूर्वक है
	{ देवताओंको		{ अर्थात् अज्ञान-
यजन्ते	= पूजते हैं	पूर्वकम्	= { पूर्वक है
ते	= वे		

भगवान्को तत्त्व से न जानने-
वालोंका पतन । अहं हि सर्वयज्ञानां भोक्ता च प्रभुरेव च ।
न तु मामभिजानन्ति तत्त्वेनातश्च्यवन्ति ते ॥

अहम्, हि, सर्वयज्ञानाम्, भोक्ता, च, प्रभुः, एव, च,
न, तु, माम्, अभिजानन्ति, तत्त्वेन, अतः, च्यवन्ति, ते, ॥२४॥

हि	= क्योंकि	माम्	= { मुझ अधियज्ञ-
सर्वयज्ञानाम्	= संपूर्ण यज्ञोंका		{ स्वरूप परमेश्वरको
भोक्ता	= भोक्ता	तत्त्वेन	= तत्त्वसे
च	= और	न	= नहीं
प्रभुः	= स्वामी	अभि-	} जानते हैं
च	= भी	जानन्ति	
अहम्	= मैं	अतः	= इसीसे
एव	= ही (हूँ)	च्यवन्ति	= { गिरते हैं अर्थात्
तु	= परन्तु		{ पुनर्जन्मको
ते	= वे		{ प्राप्त होते हैं

उपासनाकेअनु-
सार फलप्राप्ति-
का कथन ।

यान्ति देवव्रता देवान् पितृन्यान्ति पितृव्रताः ।

भूतानि यान्ति भूतेज्या यान्ति मद्याजिनोऽपि माम्
यान्ति, देवव्रताः, देवान्, पितृन्, यान्ति, पितृव्रताः,
भूतानि, यान्ति, भूतेज्याः, यान्ति, मद्याजिनः, अपि, माम् ॥२५॥

कारण यह नियम है कि—

देवव्रताः	= { देवताओंको पूजनेवाले	भूतेज्याः	= { भूतोंकोपूजने- वाले
देवान्	= देवताओंको	भूतानि	= भूतोंको
यान्ति	= प्राप्त होते हैं	यान्ति	= प्राप्त होते हैं (और)
पितृव्रताः	= { पितरोंको पूजनेवाले	मद्याजिनः	= मेरे भक्त
पितृन्	= पितरोंको	माम्	= मेरेको
यान्ति	= प्राप्त होते हैं	अपि	= ही
		यान्ति	= प्राप्त होते हैं—

इसीलिये मेरे भक्तोंका पुनर्जन्म नहीं होता* ।

भक्तिपूर्वक पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति ।
अर्पण किये हुए पत्र-पुष्पादि को तदहं भक्त्युपहतमश्नामि प्रयतात्मनः ॥२६॥
खानेके लिये पत्रम्, पुष्पम्, फलम्, तोयम्, यः, मे, भक्त्या, प्रयच्छति,
भगवान् की तत्, अहम्, भक्त्युपहतम्, अश्नामि, प्रयतात्मनः ॥२६॥
प्रतिशा ।

तथा हे अर्जुन मेरे पूजनमें यह सुगमता भी है कि—

पत्रम्	= पत्र	तोयम्	= जल (इत्यादि)
पुष्पम्	= पुष्प	यः	= जो (कोई भक्त)
फलम्	= फल	मे	= मेरे लिये

* गीता अध्याय ८ श्लोक १६ में देखना चाहिये ।

भक्त्या	= प्रेमसे	तत्	= वह
प्रयच्छति	= अर्पण करता है		(पत्र पुष्पादिक)
प्रयतात्मनः	= { उस शुद्ध बुद्धि निष्काम प्रेमी भक्तकां	अहम्	= मैं (सगुणरूपसे प्रकट होकर प्रीतिसहित)
भक्त्युप-	= { प्रेमपूर्वक अर्पण		
हृतम्	= { किया हुआ	अश्नामि	= खाता हूँ

सर्वकर्म भगवान् यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत् ।

के अर्पण करने-
की आज्ञा ।

यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम् ॥२७॥

यत्, करोषि, यत्, अश्नासि, यत्, जुहोषि, ददासि, यत्,
यत्, तपस्यसि, कौन्तेय, तत्, कुरुष्व, मदर्पणम् ॥२७॥

इसलिये-

कौन्तेय	= हे अर्जुन (तं)	ददासि	= दान देता है
यत्	= जो (कुछ)	यत्	= जो (कुछ)
करोषि	= कर्म करता है	तपस्यसि	= { स्वधर्माचरणरूप तप करता है
यत्	= जो (कुछ)	तत्	= वह (सब)
अश्नासि	= खाता है	मदर्पणम्	= मेरे अर्पण
यत्	= जो (कुछ)	कुरुष्व	= कर
जुहोषि	= हवन करता है		
यत्	= जो (कुछ)		

सर्वकर्म भगवान् शुभाशुभफलैरेवं मोक्ष्यसे कर्मबन्धनैः ।

के अर्पण करनेसे
परमेश्वरकीप्राप्ति

संन्यासयोगयुक्तात्मा विमुक्तो मामुपैष्यसि ॥२८॥

शुभाशुभफलैः, एवम्, मोक्ष्यसे, कर्मबन्धनैः,
संन्यासयोगयुक्तात्मा, विमुक्तः, माम्, उपैष्यसि ॥२८॥

एवम्	= इस प्रकार	कर्मबन्धनैः	= कर्मबन्धनसे
	{ कर्मोंको मेरे	मोक्ष्यसे	= { मुक्त हो
	अर्पणकरने-		{ जायगा
संन्यासयोग-	रूपसंन्यास-		(और उनसे)
युक्तात्मा	= योगसे युक्त-	विमुक्तः	= मुक्त हुआ
	हुए मन-	माम्	= मेरेको (ही)
	वाला (तुं)	उपैष्यसि	= प्राप्त होवेगा
शुभाशुभ-	= { शुभाशुभ		
फलैः	{ फलरूप		

भगवान्के समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः ।

समत्वभाव का कथन और ये भजन्ति तु मां भक्त्या मयि ते तेषु चाप्यहम् ॥

भजनेवालों की समः, अहम्, सर्वभूतेषु, न, मे, द्वेष्यः, अस्ति, न, प्रियः,

महिमा ।

ये, भजन्ति, तु, माम्, भक्त्या, मयि, ते, तेषु, च, अपि, अहम् ॥ २९ ॥

यद्यपि-

अहम्	= मैं	प्रियः	= प्रिय है
सर्वभूतेषु	= सब भूतोंमें	तु	= परन्तु
समः	= { समभावसे	ये	= जो (भक्त)
	{ व्यापक हूँ	माम्	= मेरेको
न	= न (कोई)	भक्त्या	= प्रेमसे
मे	= मेरा	भजन्ति	= भजते हैं
द्वेष्यः	= अप्रिय	ते	= वे
अस्ति	= है (और)	मयि	= मेरेमें
न	= न	च	= और

अहम् = मैं

अपि = भी

तेषु = उनमें

(प्रत्यक्ष प्रकट हूं*)

निरन्तर भगवद्
भजनसे महा-
पापीका भी
उद्धार होनेका
कथन ।

अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक् ।

साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः॥३०॥

अपि, चेत्, सुदुराचारः, भजते, माम्, अनन्यभाक्,

साधुः, एव, सः, मन्तव्यः, सम्यक्, व्यवसितः, हि, सः ॥३०॥

तथा और भी मेरी भक्तिका प्रभाव सुन-

चेत्

= यदि (कोई)

सः

= वह

सुदुराचारः = { अतिशय
दुराचारी

साधुः

= साधु

एव

= ही

अपि

= भी

मन्तव्यः

= मानने योग्य है

अनन्य-

= { अनन्यभावसे

हि

= क्योंकि

भाक्

= { मेरा भक्त हुआ

सः

= वह

माम्

= मेरेको (निरन्तर)

सम्यक्

= { यथार्थ निश्चय-

भजते

= भजता है

व्यवसितः

= { वाला है

अर्थात् उसने भली प्रकार निश्चय कर लिया है कि
परमेश्वरके भजनके समान अन्य कुछ भी नहीं है ।

[॥] क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वच्छान्तिं निगच्छति ।

कौन्तेय प्रति जानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति ॥

क्षिप्रम्, भवति, धर्मात्मा, शश्वत्, शान्तिम्, निगच्छति,

कौन्तेय, प्रति, जानीहि, न, मे, भक्तः, प्रणश्यति ॥३१॥

* जैसे सूक्ष्मरूपसे सब जगह व्यापक हुआ भी अग्नि साधनोंद्वारा
प्रकट करनेसे ही प्रत्यक्ष होता है वैसे ही सब जगह स्थित हुआ भी
परमेश्वर भक्तिसे भजनेवालेके ही अन्तःकरणमें प्रत्यक्षरूपसे प्रकट होता है ।

इसलिये वह—

क्षिप्रम्	= शीघ्र ही	प्रति	= { निश्चयपूर्वक = सत्य
धर्मात्मा	= धर्मात्मा	जानीहि	= जान (कि)
भवति	= हो जाता है (और)	मे	= मेरा
शश्वत्	= सदा रहनेवाली	भक्तः	= भक्त
शान्तिम्	= परमशान्तिको	न	} = नष्ट नहीं होता
निगच्छति	= प्राप्त होता है	प्रणश्यति	
कौन्तेय	= हे अर्जुन (तं)		

भगवान्‌के शरण होनेसे स्त्री, वैश्य, शूद्र और नीच योनिवालों का भी कल्याण

मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपि स्युः पापयोनयः ।
स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति परां गतिम्
माम्, हि, पार्थ, व्यपाश्रित्य, ये, अपि, स्युः, पापयोनयः,
स्त्रियः, वैश्याः, तथा, शूद्राः, ते, अपि, यान्ति, पराम्, गतिम् ॥३२॥

हि	= क्योंकि	स्युः	= होवें
पार्थ	= हे अर्जुन	ते	= वे
स्त्रियः	= स्त्री	अपि	= भी
वैश्याः	= वैश्य (और)	माम्	= मेरे
शूद्राः	= शूद्रादिक	व्यपाश्रित्य	= शरण होकर (तो)
तथा	= तथा	पराम्	= परम
पापयोनयः	= पापयोनिवाले	गतिम्	= गतिको (ही)
अपि	= भी	यान्ति	= प्राप्त होते हैं
ये	= जो कोई		

ब्राह्मण और राज कपि भक्तोंकी प्रशंसा और भगवत्-भजनके लिये आज्ञा ।

किं पुनर्ब्राह्मणाः पुण्या भक्ता राजर्षयस्तथा ।
अनित्यमसुखं लोकमिमं प्राप्य भजस्व माम् ॥
किम्, पुनः, ब्राह्मणाः, पुण्याः, भक्ताः, राजर्षयः, तथा,
अनित्यम्, असुखम्, लोकम्, इमम्, प्राप्य, भजस्व, माम् ॥३३॥

पुनः	= फिर	(यान्ति)	= प्राप्त होते हैं
किम्	= क्या	(अतः)	= इसलिये (तं)
(वक्तव्यम्)	= कहना है (कि)	असुखम्	= सुखरहित (और)
पुण्याः	= पुण्यशील	अनित्यम्	= क्षणभंगुर
ब्राह्मणाः	= ब्राह्मणजन	इमम्	= इस
तथा	= तथा	लोकम्	= मनुष्यशरीरको
राजर्षयः	= राजर्षि	प्राप्य	= प्राप्त होकर
भक्ताः	= भक्तजन	माम्	= { (निरन्तर) मेरा
	(परमगतिको)	भजस्व	= { ही भजन कर

अर्थात् मनुष्यशरीर बड़ा दुर्लभ है, परन्तु है नाशवान् और सुखरहित इसलिये कालका भरोसा न करके तथा अज्ञान-से सुखरूप भासनेवाले विषयभोगोंमें न फँसकर निरन्तर मेरा ही भजन कर ।

भगवान्की मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ।
भक्ति करनेके लिये आज्ञा और उसका फल । मन्मनाः, भव, मद्भक्तः, मद्याजी, माम्, नमस्कुरु,

मामेवैष्यसि युक्तवैवमात्मानं सत्परायणः ॥३४॥

माम्, एव, एष्यसि, युक्त्वा, एवम्, आत्मानम्, सत्परायणः ॥३४॥

मन्मनाः = { केवल मुझ सच्चिदानन्दघन वासुदेव परमात्मामें
ही अनन्यप्रेमसे नित्य निरन्तर अचल मनवाला

भव = हो (और)

मद्भक्तः = { मुझ परमेश्वरको ही श्रद्धाप्रेमसहित निष्कामभावसे
(भव) नाम गुण और प्रभावके श्रवण कीर्तन मनन और
पठनपाठनद्वारा निरन्तर भजनेवाला हो (तथा)

मद्याजी (भव) = मेरा (शङ्ख चक्र गदा पद्म और किरीट कुण्डल आदि भूषणोंसे युक्त पोताम्बर वनमाला और कौस्तुभ-मणिधारी विष्णुका) मन वाणी और शरीरके द्वारा सर्वस्व अर्पण करके अतिशय श्रद्धा भक्ति और प्रेमसे विह्वलतापूर्वक पूजन करनेवाला हो (और)

माम् = मुझ सर्वशक्तिमान् विभूति बल ऐश्वर्य माधुर्य गंभीरता उदारता वात्सल्य और सुहृदता आदि गुणोंसे संपन्न सबके आश्रयरूप वासुदेवको

नमस्कुरु = विनयभावपूर्वक भक्तिसहित साष्टाङ्ग दण्डवत् प्रणाम कर

एवम् = इस प्रकार

मत्परायणः = मेरे शरण हुआ (तू)

आत्मानम् = आत्माको

युक्त्वा = मेरेमें एकीभाव करके

माम् = मेरेको

एव = ही

एष्यसि = प्राप्त होवेगा

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे

श्रीकृष्णार्जुनसंवादे राजविद्याराजगुह्ययोगो नाम

नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

हरिः ॐ तत्सत् हरिः ॐ तत्सत् हरिः ॐ तत्सत्

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

अथ दशमोऽध्यायः

प्रधान विषय—१ से ७ तक भगवान्‌की विभूति और योगशक्तिका कथन तथा उनके जाननेका फल । (८—११) फल और प्रभावसहित भक्तियोगका कथन । (१२—१८) अर्जुनद्वारा भगवान्‌की स्तुति एवं विभूति और योगशक्तिको कहनेके लिये प्रार्थना । (१९—४२) भगवान्‌द्वारा अपनी विभूतियोंका और योगशक्तिका कथन ।

श्रीभगवानुवाच

परम प्रभावयुक्त भूय एव महाबाहो शृणु मे परमं वचः ।

वचन कहनेके

लिये भगवान्‌की

प्रतिज्ञा ।

यत्तेऽहं प्रीयमाणाय वक्ष्यामि हितकाम्यया ॥१॥

भूयः, एव, महाबाहो, शृणु, मे, परमम्, वचः,

यत्, ते, अहम्, प्रीयमाणाय, वक्ष्यामि, हितकाम्यया ॥१॥

भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रजी बोले—

महाबाहो = हे महाबाहो

भूयः = फिर

एव = भी

मे = मेरे

परमम् = परम

(रहस्य और
प्रभावयुक्त)

वचः = वचन

शृणु = श्रवण कर

यत् = जो (कि)

अहम् = मैं

ते = तुझ

प्रीयमाणाय = { अतिशय प्रेम
रखनेवालेके
लिये

हितकाम्यया = { हितकी
इच्छासे

वक्ष्यामि = कहूंगा

सबका आदि न मे विदुः सुरगणाः प्रभवं न महर्षयः ।
 होनेसे मेरी अहमादिर्हि देवानां महर्षीणां च सर्वशः ॥२॥
 उत्पत्ति को न, मे, विदुः, सुरगणाः, प्रभवम्, न, महर्षयः,
 देवादि भी नहीं अहम्, आदिः, हि, देवानाम्, महर्षीणाम्, च, सर्वशः ॥२॥
 जानते इस हे अर्जुन-

विषयमें भगवान्	मे	= मेरी	महर्षयः	= महर्षिजन (ही)
का कथन ।			विदुः	= जानते हैं
	प्रभवम्	= उत्पत्तिको अर्थात् विभूति- सहित लीलासे प्रकट होनेको	हि	= क्योंकि
	न	= न	अहम्	= मैं
	सुरगणाः	= देवतालोग	सर्वशः	= सब प्रकारसे
	(विदुः)	= जानते हैं (और)	देवानाम्	= देवताओंका
	न	= न	च	= और
			महर्षीणाम्	= महर्षियोंका (भी)
			आदिः	= आदि कारण हैं

प्रभावसहित यो मामजमनादिं च वेत्ति लोकमहेश्वरम् ।
 परमेश्वर को असंमूढः स मर्त्येषु सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥३॥
 जाननेका फल । यः, माम्, अजम्, अनादिम्, च, वेत्ति, लोकमहेश्वरम्,
 असंमूढः, सः, मर्त्येषु, सर्वपापैः, प्रमुच्यते ॥ ३ ॥

और-

यः	= जो	अनादिम्	= अनादि*
माम्	= मेरेको	च	= तथा
अजम्	= { अजन्मा अर्थात् वास्तवमें जन्म- रहित (और)	लोक-	= { लोकोंका महान्
		महेश्वरम्	= { ईश्वर

* अनादि उसको कहते हैं कि जो आदिरहित होवे और सबका कारण होवे।

वेत्ति	= तत्त्वसे जानता है	असंमूढः	= ज्ञानवान् (पुरुष)
सः	= वह	सर्वपापैः	= संपूर्ण पापोंसे
मर्त्येषु	= मनुष्योंमें	प्रमुच्यते	= मुक्त हो जाता है

भगवान्से बुद्धि
आदि भावोंकी
उत्पत्तिका कथन

बुद्धिर्ज्ञानमसंमोहः क्षमा सत्यं दमः शमः ।

सुखं दुःखं भवोऽभावो भयं चाभयमेव च ॥४॥

बुद्धिः, ज्ञानम्, असंमोहः, क्षमा, सत्यम्, दमः, शमः,
सुखम्, दुःखम्, भवः, अभावः, भयम्, च, अभयम्, एव, च ॥४॥

और हे अर्जुन—

बुद्धिः	= { निश्चय करनेकी शक्ति (एवं)	(तथा)	सुखम्	= सुख
ज्ञानम्	= तत्त्वज्ञान (और)		दुःखम्	= दुःख
असंमोहः	= अमूढ़ता		भवः	= उत्पत्ति
क्षमा	= क्षमा		च	= और
सत्यम्	= सत्य (तथा)		अभावः	= प्रलय (एवं)
दमः	= { इन्द्रियोंका वशमें करना (और)		भयम्	= भय
शमः	= मनका निग्रह		च	= और
			अभयम्	= अभय
			एव	= भी

[„] अहिंसा समता तुष्टिस्तपो दानं यशोऽयशः ।

भवन्ति भावा भूतानां मत्त एव पृथग्विधाः ॥५॥

अहिंसा, समता, तुष्टिः, तपः, दानम्, यशः, अयशः,
भवन्ति, भावाः, भूतानाम्, मत्तः, एव, पृथग्विधाः ॥५॥

तथा—

अहिंसा = अहिंसा

समता = समता

तुष्टिः	= संतोष	भूतानाम्	= प्राणियोंके
तपः	= तपः*	पृथग्विधाः	= नाना प्रकारके
दानम्	= दान	भावाः	= भाव
यशः	= कीर्ति (और)	मत्तः	= मेरेसे
अयशः	= अपकीर्ति	एव	= ही
(एवम्)	= ऐसे (यह)	भवन्ति	= होते हैं

भगवान्‌के महर्षयः सप्त पूर्वे चत्वारो मनवस्तथा ।
 संकल्पसे सप्तर्षि मद्भावा मानसा जाता येषां लोक इमाः प्रजाः ॥६॥
 और सनका-
 दिकोंकी उत्पत्ति महर्षयः, सप्त, पूर्वे, चत्वारः, मनवः, तथा,
 का कथन । मद्भावाः, मानसाः, जाताः, येषाम्, लोके, इमाः, प्रजाः ॥६॥
 और हे अर्जुन—

सप्त	= सात (तो)	मद्भावाः	= मेरेमें भाववाले
महर्षयः	= महर्षिजन (और)		(सबके सब)
चत्वारः	= चार (उनसे भी)	मानसाः	= { मेरे संकल्पसे
पूर्वे	= { पूर्वमें होनेवाले	जाताः	= { उत्पन्न हुए हैं
	(सनकादि)		(कि)
तथा	= तथा	येषाम्	= जिनकी
मनवः	= { स्वायंभुव आदि	लोके	= संसारमें
	{ चौदह मनु	इमाः	= यह संपूर्ण
(एते)	= यह	प्रजाः	= प्रजा है

भगवान्‌की एतां विभूतिं योगं च मम यो वेत्ति तत्त्वतः ।
 विभूति और सोऽविकम्पेन योगेन युज्यते नात्र संशयः ॥७॥
 योगको तत्त्वसे जाननेका फल ।

* स्वधर्मके आचरणसे इन्द्रियादिको तपाकर शुद्ध करनेका नाम तप है ।

एताम्, विभूतिम्, योगम्, च, मम, यः, वेत्ति, तत्त्वतः,
सः, अविकम्पेन, योगेन, युज्यते, न, अत्र, संशयः ॥७॥

और—

यः	= जो (पुरुष)	(पुरुष)
एताम्	= इस	अविकम्पेन = निश्चल
मम	= मेरी	योगेन = ध्यानयोगद्वारा
विभूतिम्	= { परमैश्वर्यरूप विभूतिको	(मेरेमें ही)
च	= और	युज्यते = { एकीभावसे स्थित होता है
योगम्	= योगशक्तिको	अत्र = इसमें (कुछ भी)
तत्त्वतः	= तत्त्वसे	संशयः = संशय
वेत्ति	= जानता है *	न = नहीं
सः	= वह	(अस्ति) = है

भगवान्‌के प्रभाव अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते ।

को समझकर इति मत्वा भजन्ते मां बुधा भावसमन्विताः ॥८॥

प्रशंसा ।

अहम्, सर्वस्य, प्रभवः, मत्तः, सर्वम् प्रवर्तते,

इति, मत्वा भजन्ते, माम्, बुधाः, भावसमन्विताः ॥८॥

अहम्	= मैं वासुदेव ही	मत्तः	= मेरेसे ही
सर्वस्य	= संपूर्ण जगत्‌की	सर्वम्	= सब जगत्
प्रभवः	= उत्पत्तिका कारण हूँ	प्रवर्तते	= चेष्टा करता है
	(और)	इति	= इस प्रकार

* जो कुछ दृश्यमात्र संसार है सो सब भगवान्‌की माया है और एक वासुदेव भगवान्‌ ही सर्वत्र परिपूर्ण है वह जानना ही तत्त्वसे जानना है ।

मत्वा	= तत्त्वसे समझकर	माम्	= { मुझ
भाव-	{ श्रद्धा और भक्ति-		{ परमेश्वरको
समन्विताः	{ से युक्त हुए		(ही)
बुधाः	= { बुद्धिमान्	भजन्ते	= { निरन्तर
	{ भक्तजन		{ भजते हैं

भगवत्-भक्तों- मच्चित्ता मद्गतप्राणा बोधयन्तः परस्परम् ।
 के लक्षण और कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च ॥१॥
 उनके साथनका मच्चित्ताः, मद्गतप्राणाः, बोधयन्तः, परस्परम्,
 कथन । कथयन्तः, च, माम्, नित्यम्, तुष्यन्ति, च, रमन्ति, च ॥९॥

और वे-

मच्चित्ताः	= { निरन्तर मेरेमें मन	च	= तथा
	{ लगानेवाले(और)		(गुण और
मद्गत-	= { मेरेमें ही प्राणोंको		प्रभावसहित)
प्राणाः	= { अर्पणकरनेवाले*	माम्	= मेरा
	(भक्तजन)	कथयन्तः	= कथन करते हुए
नित्यम्	= सदा ही	च	= ही
	(मेरी भक्तिकी	तुष्यन्ति	= संतुष्ट होते हैं
	चर्चाके द्वारा)	च	= और
परस्परम्	= आपसमें		(मुझवासुदेवमेंही)
बोधयन्तः	= { मेरे प्रभावको	रमन्ति	= { निरन्तर रमण
	{ जनाते हुए		{ करते हैं

प्रीतिपूर्वक तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम् ।
 निरन्तर भजने- ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते ॥१०॥
 का फल ।

* मुझ वासुदेवके लिये ही जिन्होंने अपना जीवन अर्पण कर दिया है
 उनका नाम है मद्गतप्राणाः ।

तेषाम्, सततयुक्तानाम्, भजताम्, प्रीतिपूर्वकम्,
ददामि, बुद्धियोगम्, तम्, येन, माम्, उपयान्ति, ते ॥१०॥

तेषाम्	= उन	तम्	= वह
सतत-	= { निरन्तर मेरे	बुद्धियोगम्	= { तत्त्वज्ञानरूप
युक्तानाम्	= { ध्यानमें लगे हुए		= { योग
	(और)	ददामि	= देता हूँ (कि)
प्रीतिपूर्वकम्	= प्रेमपूर्वक	येन	= जिससे
भजताम्	= { भजनेवाले	ते	= वे
	= { भक्तोंको (मैं)	माम्	= मेरेको (ही)
		उपयान्ति	= प्राप्त होते हैं

[„] तेषामेवानुकम्पार्थमहमज्ञानजं तमः ।

नाशयाम्यात्मभावस्थो ज्ञानदीपेन भास्वता ॥११॥

तेषाम्, एव, अनुकम्पार्थम्, अहम्, अज्ञानजम्, तमः,
नाशयामि, आत्मभावस्थः, ज्ञानदीपेन, भास्वता ॥११॥

और हे अर्जुन-

तेषाम्	= उनके (ऊपर)	अज्ञानजम्	= { अज्ञानसे
अनु-	= { अनुग्रह करनेके		= { उत्पन्न हुए
कम्पार्थम्	= { लिये	तमः	= अन्धकारको
एव	= ही	भास्वता	= प्रकाशमय
अहम्	= मैं स्वयं	ज्ञानदीपेन	= { तत्त्वज्ञानरूप
आत्म-	= { (उनके) अन्तः-		= { दीपकद्वारा
भावस्थः	= { करणमें एकीभाव-	नाशयामि	= नष्ट करता हूँ
	= { से स्थित हुआ		

अर्जुन उवाच

अर्जुनद्वारा

भगवान् की
स्तुति ।

परं ब्रह्म परं धाम पवित्रं परमं भवान् ।

पुरुषं शाश्वतं दिव्यमादिदेवमजं विभुम् ॥१२॥

आहुस्त्वामृषयः सर्वे देवर्षिर्नारदस्तथा ।

असितो देवलो व्यासः स्वयं चैव ब्रवीषि मे ॥१३॥

परम्, ब्रह्म, परम्, धाम, पवित्रम्, परमम्, भवान्,
 पुरुषम्, शाश्वतम्, दिव्यम्, आदिदेवम्, अजम्, विभुम्,
 आहुः, त्वाम्, ऋषयः, सर्वे, देवर्षिः, नारदः, तथा,
 असितः, देवलः, व्यासः, स्वयम्, च, एव, ब्रवीषि, मे । १२-१३ ।

इस प्रकार भगवान् के वचनों को सुनकर अर्जुन बोला हे भगवन्—

भवान्	= आप	आदिदेवम्	= { देवोंका भी आदिदेव
परम्	= परम	अजम्	= अजन्मा (और)
ब्रह्म	= ब्रह्म (और)	विभुम्	= सर्वव्यापी
परम्	= परम	आहुः	= कहते हैं
धाम	= धाम (एवं)	तथा	= वैसे ही
परमम्	= परम	देवर्षिः	= देवऋषि
पवित्रम्	= पवित्र (हैं)	नारदः	= नारद (तथा)
(यतः)	= क्योंकि	असितः	= असित (और)
त्वाम्	= आपको	देवलः	= देवलऋषि (तथा)
सर्वे	= सब	व्यासः	= महर्षि व्यास
ऋषयः	= ऋषिजन	च	= और
शाश्वतम्	= सनातन		
दिव्यम्	= दिव्य		
पुरुषम्	= पुरुष (एवं)		

स्वयम् = स्वयम् आप

एव = भी

मे = मेरे (प्रति)

ब्रवीषि = कहते हैं

अर्जुनद्वारा सर्वमेतद्वत्तं मन्ये यन्मां वदसि केशव ।

भगवान् के
प्रभावका वर्णन ।

न हि ते भगवन्व्यक्तिं विदुर्देवा न दानवाः ॥१४॥

सर्वम्, एतत्, ऋतम्, मन्ये, यत्, माम्, वदसि, केशव,

न, हि, ते, भगवन्, व्यक्तिम्, विदुः, देवाः, न, दानवाः ॥१४॥

और—

केशव = हे केशव

यत् = जो (कुछ भी)

माम् = मेरे प्रति

वदसि = आप कहते हैं

एतत् = इस

सर्वम् = समस्तको (मैं)

ऋतम् = सत्य

मन्ये = मानता हूँ

भगवन् = हे भगवन्

ते = आपके

व्यक्तिम् = { लीलामय*
स्वरूपको

न = न

दानवाः = दानव

विदुः = जानते हैं

(और)

न = न

देवाः = देवता

हि = ही

(विदुः) = जानते हैं

[„] स्वयमेवात्मनात्मानं वेत्थ त्वं पुरुषोत्तम ।

भूतभावन भूतेश देवदेव जगत्पते ॥१५॥

स्वयम्, एव, आत्मना, आत्मानम्, वेत्थ, त्वम्, पुरुषोत्तम,

भूतभावन, भूतेश, देवदेव, जगत्पते ॥ १५ ॥

भूतभावन = { हे भूतोंको
उत्पन्न करनेवाले } भूतेश = { हे भूतोंके
ईश्वर }

* गीता अ० ४ श्लोक ६ में इसका विस्तार देखना चाहिये ।

देवदेव	= हे देवोंके देव	स्वयम्	= स्वयम्
जगत्पते	= { हे जगत्के स्वामी	एव	= ही
पुरुषोत्तम	= हे पुरुषोत्तम	आत्मना	= अपनेसे
त्वम्	= आप	आत्मानम्	= आपको
		वेत्थ	= जानते हैं

भगवान्की वक्तुमर्हस्यशेषेण दिव्या ह्यात्मविभूतयः ।

विभूतियों को याभिर्विभूतिभिर्लोकानिमांस्त्वं व्याप्य तिष्ठसि ॥

जाननेके लिये अर्जुनकी इच्छा वक्तुम्, अर्हसि, अशेषेण, दिव्याः, हि, आत्मविभूतयः,
याभिः, विभूतिभिः, लोकान्, इमान्, त्वम्, व्याप्य, तिष्ठसि ॥

इसलिये हे भगवन्-

त्वम्	= आप	याभिः	= जिन
हि	= ही (उन)	विभूतिभिः	= { विभूतियोंके द्वारा
दिव्याः	= { अपनी दिव्य विभूतियोंको	इमान्	= इन सब
आत्म- विभूतयः		लोकान्	= लोकोंको
अशेषेण	= संपूर्णतासे	व्याप्य	= व्याप्त करके
वक्तुम्	= कहनेके लिये	तिष्ठसि	= स्थित हैं
अर्हसि	= योग्य हैं (कि)		

भगवत्-चिन्तन- कथं विद्यामहं योगिंस्त्वां सदा परिचिन्तयन् ।

के विषय में केषु केषु च भावेषु चिन्त्योऽसि भगवन्मया ॥

अर्जुनका प्रश्न ।

कथम्, विद्याम्, अहम्, योगिन्, त्वाम्, सदा, परिचिन्तयन्,

केषु, केषु, च, भावेषु, चिन्त्यः, असि, भगवन्, मया ॥ १७ ॥

योगिन्	= हे योगेश्वर	कथम्	= किस प्रकार
अहम्	= मैं	सदा	= निरन्तर

परिचिन्तयन् =	{ चिन्तन करता हुआ	केषु = किन केषु = किन
त्वाम् =	आपको	भावेषु = भावोंमें
विद्याम् =	जानूँ	मया = मेरेद्वारा
च =	और	चिन्त्यः = चिन्तन करने योग्य
भगवन् =	हे भगवन् (आप)	असि = हैं

योगशक्ति और विस्तरेणात्मनो योगं विभूतिं च जनार्दन ।

चिभूतियों को भूयः कथय तृप्तिर्हि शृण्वतो नास्ति मेऽमृतम् ॥

विस्तारसे कहने के लिये अर्जुन विस्तरेण, आत्मनः, योगम्, विभूतिम्, च, जनार्दन, की प्रार्थना । भूयः, कथय, तृप्तिः, हि, शृण्वतः, न, अस्ति, मे, अमृतम् । १८।

और—

जनार्दन =	हे जनार्दन	हि =	क्योंकि (आपके)
आत्मनः =	अपनी	अमृतम् =	{ अमृतमय वचनोंको
योगम् =	योगशक्तिको	शृण्वतः =	सुनते हुए
च =	और (परमैश्वर्यरूप)	मे =	मेरी
विभूतिम् =	विभूतिको	तृप्तिः =	तृप्ति
भूयः =	फिर (भी)	न =	नहीं
विस्तरेण =	विस्तारपूर्वक	अस्ति =	होती है
कथय =	कहिये		

अर्थात् सुननेकी उत्कण्ठा बनी ही रहती है ।

श्रीभगवानुवाच

अपनी दिव्य हन्त ते कथयिष्यामि दिव्या ह्यात्मविभूतयः ।

विभूतियों को प्राधान्यतः कुरुश्रेष्ठ नास्त्यन्तो विस्तरस्य मे ॥

कहनेके लिये भगवान् की हन्त, ते, कथयिष्यामि, दिव्याः, हि, आत्मविभूतयः, प्राधान्यतः, कुरुश्रेष्ठ, न, अस्ति, अन्तः, विस्तरस्य, मे ॥ १९॥

इस प्रकार अर्जुनके पूछनेपर श्रीकृष्ण भगवान् बोले—

कुरुश्रेष्ठ	= हे कुरुश्रेष्ठ	कथयिष्यामि	= कहूंगा
हन्त	= अब (मैं)	हि	= क्योंकि
ते	= तेरे लिये	मे	= मेरे
दिव्याः	} = { अपनी दिव्य विभूतियोंको	विस्तरस्य	= विस्तारका
आत्म-		अन्तः	= अन्त
विभूतयः		न	= नहीं
प्राधान्यतः	= प्रधानतासे	अस्ति	= है

सर्वात्मरूपसे अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः ।

भगवान् के अहमादिश्च मध्यं च भूतानामन्त एव च ॥२०॥
स्वरूपका कथन

अहम्, आत्मा, गुडाकेश, सर्वभूताशयस्थितः,

अहम्, आदिः, च, मध्यम्, च, भूतानाम्, अन्तः, एव, च, ॥२०॥

गुडाकेश	= हे अर्जुन	भूतानाम्	= भूतोंका
अहम्	= मैं	आदिः	= आदि
सर्वभूताशय-	} = { सब भूतोंके स्थितः	मध्यम्	= मध्य
		च	= और
आत्मा	} = { सबका आत्मा हूँ	अन्तः	= अन्त
		च	= भी
च	= तथा	अहम्	= मैं
	(संपूर्ण)	एव	= ही हूँ

विष्णु आदि आदित्यानामहं विष्णुर्ज्योतिषां रविरंशुमान् ।
विभूतियों का मरीचिर्मरुतामस्मि नक्षत्राणामहं शशी ॥२१॥
कथन ।

आदित्यानाम्, अहम्, विष्णुः, ज्योतिषाम्, रविः, अंशुमान्,
मरीचिः, मरुताम्, अस्मि, नक्षत्राणाम्, अहम्, शशी ॥२१॥

और हे अर्जुन-

अहम्	= मैं	मरुताम्	= { वायु- देवताओंमें
आदित्या- नाम्	= { अदितिके वारह पुत्रोंमें	मरीचिः	= { मरीचि नामक वायुदेवता
विष्णुः	= { विष्णु अर्थात् वामन अवतार (और)		(और)
ज्योतिषाम्	= ज्योतिषोंमें	नक्षत्राणाम्	= नक्षत्रोंमें
अंशुमान्	= किरणोंवाला	शशी	= { (नक्षत्रोंका अधिपति)
रविः	= सूर्य हूँ (तथा)		{ चन्द्रमा
अहम्	= मैं (उन्चास)	अस्मि	= हूँ

नामवेद आदि
विभूतियों का
कथन ।

वेदानां सामवेदोऽस्मि देवानामस्मि वासवः ।

इन्द्रियाणां मनश्चास्मि भूतानामस्मि चेतना ॥२२॥

वेदानाम्, सामवेदः, अस्मि, देवानाम्, अस्मि, वासवः,

इन्द्रियाणाम्, मनः, च, अस्मि, भूतानाम्, अस्मि, चेतना ॥२२॥

और मैं-

वेदानाम्	= वेदोंमें	इन्द्रियाणाम्	= इन्द्रियोंमें
सामवेदः	= सामवेद	मनः	= मन
अस्मि	= हूँ	अस्मि	= हूँ
देवानाम्	= देवोंमें	भूतानाम्	= भूतप्राणियोंमें
वासवः	= इन्द्र	चेतना	= { चेतनता अर्थात् ज्ञान-
अस्मि	= हूँ		{ शक्ति
च	= और	अस्मि	= हूँ

शंकर आदि
विभूतियों का
कथन ।

रुद्राणां शंकरश्चास्मि वित्तेशो यक्षरक्षसाम् ।

वसूनां पावकश्चास्मि मेरुः शिखरिणामहम् ॥२३॥

रुद्राणाम्, शंकरः, च, अस्मि, वित्तेशः, यक्षरक्षसाम्,

वसूनाम्, पावकः, च, अस्मि, मेरुः, शिखरिणाम्, अहम् ॥२३॥

और मैं-

रुद्राणाम्	= एकादश रुद्रोंमें	च	= और
शंकरः	= शंकर	अहम्	= मैं
अस्मि	= हूं	वसूनाम्	= आठ वसुओंमें
च	= और	पावकः	= अग्नि
यक्षरक्षसाम्	= { यक्ष तथा राक्षसोंमें	अस्मि	= हूं (तथा)
वित्तेशः	= { धनका स्वामी कुबेर हूं	शिखरिणाम्	= { शिखरवाले पर्वतोंमें
		मेरुः	= सुमेरु पर्वत हूं

बृहस्पति आदि
विभूतियों का
कथन ।

पुरोधसां च मुख्यं मां विद्धि पार्थ बृहस्पतिम् ।

सेनानीनामहं स्कन्दः सरसामस्मि सागरः ॥२४॥

पुरोधसाम्, च, मुख्यम्, माम्, विद्धि, पार्थ, बृहस्पतिम्,

सेनानीनाम्, अहम्, स्कन्दः, सरसाम्, अस्मि, सागरः ॥२४॥

और-

पुरोधसाम्	= पुरोहितोंमें	विद्धि	= जान
मुख्यम्	= { मुख्य अर्थात् देवताओंका पुरोहित	च	= तथा
माम्	= मेरेको	पार्थ	= हे पार्थ
बृहस्पतिम्	= बृहस्पति	अहम्	= मैं
सेनानीनाम्	= सेनापतियोंमें	स्कन्दः	= स्वामिकार्तिक

(और)
सरसाम् = जलाशयोंमें सागरः = समुद्र
अस्मि = हूँ

भृगु आदि महर्षीणां भृगुरहं गिरामस्म्येकमक्षरम् ।
विभूतियों का यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि स्थावराणां हिमालयः ॥२५॥
कथन ।

महर्षीणाम्, भृगुः, अहम्, गिराम्, अस्मि, एकम्, अक्षरम्,
यज्ञानाम्, जपयज्ञः, अस्मि, स्थावराणाम्, हिमालयः ॥२५॥

और हे अर्जुन-

अहम्	= मैं	यज्ञानाम्	= { सव प्रकारके यज्ञोंमें
महर्षीणाम्	= महर्षियोंमें	जपयज्ञः	= जपयज्ञ (और)
भृगुः	= भृगु (और)	स्थावराणाम्	= { स्थिर रहने- वालोंमें
गिराम्	= वचनोंमें	हिमालयः	= { हिमालय पहाड़
एकम्	= एक	अस्मि	= हूँ
अक्षरम्	= { अक्षर अर्थात् ओंकार		
अस्मि	= हूँ (तथा)		

अश्वत्थ आदि अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां देवर्षीणां च नारदः ।

विभूतियों का गन्धर्वाणां चित्ररथः सिद्धानां कपिलो मुनिः ॥

अश्वत्थः, सर्ववृक्षाणाम्, देवर्षीणाम्, च, नारदः,
गन्धर्वाणाम्, चित्ररथः, सिद्धानाम्, कपिलः, मुनिः ॥२६॥
और-

सर्ववृक्षाणाम्	= सव वृक्षोंमें	नारदः	= नारदमुनि (तथा)
अश्वत्थः	= पीपलका वृक्ष	गन्धर्वाणाम्	= गन्धर्वोंमें
च	= और	चित्ररथः	= चित्ररथ (और)
देवर्षीणाम्	= देव ऋषियोंमें		

सिद्धानाम् = सिद्धोंमें
कपिलः = कपिल

मुनिः = मुनि
(असि) = हूँ

उच्चैःश्रवा आदि
विभूतियों का
कथन ।

उच्चैःश्रवसमश्वानां विद्धि माममृतोद्भवम् ।

ऐरावतं गजेन्द्राणां नराणां च नराधिपम् ॥२७॥

उच्चैःश्रवसम्, अश्वानाम्, विद्धि, माम्, अमृतोद्भवम्,

ऐरावतम्, गजेन्द्राणाम्, नराणाम्, च, नराधिपम् ॥२७॥

और हे अर्जुन तू—

अश्वानाम् = घोड़ोंमें
अमृतोद्भवम् = { अमृतसे
उत्पन्न होने-
वाला

उच्चैःश्रवसम् = { उच्चैःश्रवा
नामक घोड़ा
(और)

गजेन्द्राणाम् = हाथियोंमें

ऐरावतम् = { ऐरावत
नामक हाथी

च = तथा

नराणाम् = मनुष्योंमें

नराधिपम् = राजा

माम् = मेरेको (ही)

विद्धि = जान

वज्र आदि
विभूतियों का
कथन ।

आयुधानामहं वज्रं धेनूनामस्मि कामधुक् ।

प्रजनश्चास्मि कन्दर्पः सर्पाणामस्मि वासुकिः ॥

आयुधानाम्, अहम्, वज्रम्, धेनूनाम्, अस्मि, कामधुक्,

प्रजनः, च, अस्मि, कन्दर्पः, सर्पाणाम्, अस्मि, वासुकिः ॥२८॥

और हे अर्जुन—

अहम् = मैं
आयुधानाम् = शस्त्रोंमें
वज्रम् = वज्र (और)
धेनूनाम् = गौओंमें

कामधुक् = कामधेनु

अस्मि = हूँ

च = और (शास्त्रोक्त
रीतिसे)

प्रजनः	= { सन्तानकी उत्पत्तिका हेतु	सर्पाणाम्	= सर्पोंमें
कन्दर्पः	= कामदेव	वासुकिः	= { (सर्पराज) वासुकि
अस्मि	= हूँ	अस्मि	= हूँ

अनन्त आदि अनन्तश्चास्मि नागानां वरुणो यादसामहम् ।

विभूतियों का
कथन ।

पितृणामर्यमा चास्मि यमः संयमतामहम् ॥२६॥

अनन्तः, च, अस्मि, नागानाम्, वरुणः, यादसाम्, अहम्,
पितृणाम्, अर्यमा, च, अस्मि, यमः, संयमताम्, अहम् ॥२९॥

तथा—

अहम्	= मैं	च	= और
नागानाम्	= नागोंमें*	पितृणाम्	= पितरोंमें
अनन्तः	= शेषनाग	अर्यमा	= { अर्यमा नामक पित्रेश्वर (तथा)
च	= और	संयमताम्	= { शासन करने- वालोंमें
यादसाम्	= जलचरोमें	यमः	= यमराज
वरुणः	= { (उनका अधि- पति) वरुण- देवता	अहम्	= मैं
अस्मि	= हूँ	अस्मि	= हूँ

प्रह्लाद आदि प्रह्लादश्चास्मि दैत्यानां कालः कलयतामहम् ।

विभूतियों का
कथन ।

मृगाणां च मृगेन्द्रोऽहं वैनतेयश्च पक्षिणाम् ॥३०॥

प्रह्लादः, च, अस्मि, दैत्यानाम्, कालः, कलयताम्, अहम्,
मृगाणाम्, च, मृगेन्द्रः, अहम्, वैनतेयः, च, पक्षिणाम् ॥३०॥
और हे अर्जुन—

अहम् = मैं | दैत्यानाम् = दैत्योंमें

* नाग और सर्प यह दो प्रकारकी सर्पोंकी ही जाति है ।

प्रह्लादः	= प्रह्लाद	मृगाणाम्	= पशुओंमें
च	= और	मृगेन्द्रः	= मृगराज (सिंह)
कलयताम्	= { गिनती करने- वालोंमें	च	= और
कालः	= समय*	पक्षिणाम्	= पक्षियोंमें
अस्मि	= हूँ	वैनतेयः	= गरुड़
च	= तथा	अहम्	= मैं
		(अस्मि)	= हूँ

पवन आदि पवनः पवतामस्मि रामः शस्त्रभृतामहम् ।
विभूतियों का झषाणां मकरश्चास्मि स्रोतसामस्मि जाह्नवी ॥३१॥
कथन ।

पवनः, पवताम्, अस्मि, रामः, शस्त्रभृताम्, अहम्,
झषाणाम्, मकरः, च, अस्मि, स्रोतसाम्, अस्मि, जाह्नवी ॥३१॥

और—

अहम्	= मैं	च	= तथा
पवताम्	= { पवित्र करने- वालोंमें	झषाणाम्	= मछलियोंमें
पवनः	= वायु (और)	मकरः	= मगरमच्छ
शस्त्रभृताम्	= शस्त्रधारियोंमें	अस्मि	= हूँ (और)
रामः	= राम	स्रोतसाम्	= नदियोंमें
अस्मि	= हूँ	जाह्नवी	= श्रीमागीरथी गङ्गा
		अस्मि	= हूँ

भगवान्की योग-सर्गाणामादिरन्तश्च मध्यं चैवाहमर्जुन ।
शक्तिका और अध्यात्म-विद्या अध्यात्मविद्या विद्यानां वादः प्रवदतामहम् ॥३२॥
आदि विभूति-सर्गाणाम्, आदिः, अन्तः, च, मध्यम्, च, एव, अहम्, अर्जुन,
योंका कथन । अध्यात्मविद्या, विद्यानाम्, वादः, प्रवदताम्, अहम् ॥३२॥

* क्षण-घड़ी-दिन-पक्ष-मास आदिमें जो समय है सो मैं हूँ ।

और—

अर्जुन	= हे अर्जुन	अध्यात्म-	= { अध्यात्मविद्या
सर्गाणाम्	= सृष्टियोंका	विद्या	= { अर्थात् ब्रह्मविद्या
आदिः	= आदि		(एवं)
अन्तः	= अन्त		
च	= और	प्रवदताम्	= { परस्परमें विवाद
मध्यम्	= मध्य		= { करनेवालोंमें
च	= भी		
अहम्	= मैं	वादः	= { तत्त्वनिर्णयके
एव	= ही हूं (तथा)		= { लिये किया
अहम्	= मैं		= { जानेवाला वाद
विद्यानाम्	= विद्याओंमें	(अस्मि) = हूं	

अकार आदि
विभूतियों का
कथन ।

अक्षराणामकारोऽस्मि द्वन्द्वः सामासिकस्य च ।

अहमेवाक्षयः कालो धाताहं विश्वतोमुखः ॥

अक्षराणाम्, अकारः, अस्मि, द्वन्द्वः, सामासिकस्य, च,

अहम्, एव, अक्षयः, कालः, धाता, अहम्, विश्वतोमुखः ॥ ३३ ॥

तथा—

अहम्	= मैं	अस्मि	= हूं (तथा)
अक्षराणाम्	= अक्षरोंमें	अक्षयः	= अक्षय
अकारः	= अकार		
च	= और	कालः	= { काल अर्थात्
सामासिकस्य	= समासोंमें		= { कालका भी
द्वन्द्वः	= { द्वन्द्व नामक		= { महाकाल
	= { समास		(और)

विश्वतोमुखः	= विराट्स्वरूप	अहम्	= मैं
धाता	= { सबका धारण पोषण करने- वाला (भी) }	एव	= ही
		(अस्मि)	= हूँ

मृत्यु आदि
विभूतियों का
कथन ।

मृत्युः सर्वहरश्चाहमुद्भवश्च भविष्यताम् ।

कीर्तिः श्रीर्वाक्च नारीणां स्मृतिर्मेधा धृतिः क्षमा ॥

मृत्युः, सर्वहरः, च, अहम्, उद्भवः, च, भविष्यताम्,
कीर्तिः, श्रीः, वाक्, च, नारीणाम्, स्मृतिः, मेधा, धृतिः, क्षमा । ३४।

हे अर्जुन—

अहम्	= मैं	नारीणाम्	= स्त्रियोंमें
सर्वहरः	= { सबका नाश करनेवाला }	कीर्तिः	= कीर्ति*
		श्रीः	= श्री
मृत्युः	= मृत्यु	वाक्	= वाक्
च	= और	स्मृतिः	= स्मृति
भविष्यताम्	= { आगे होने- वालोंकी }	मेधा	= मेधा
		धृतिः	= धृति
उद्भवः	= { उत्पत्तिका कारण (हूँ) }	च	= और
		क्षमा	= क्षमा
च	= तथा	(अस्मि)	= हूँ

बृहत्साम आदि
विभूतियों का
कथन ।

बृहत्साम तथा साम्नां गायत्री छन्दसामहम् ।

मासानां मार्गशीर्षोऽहमृतूनां कुसुमाकरः ॥३५॥

* कीर्ति आदि यह सात देवताओंकी स्त्रियां और स्त्रीवाचक नामवाले
गुण भी प्रसिद्ध हैं इसलिये दोनों प्रकारसे ही भगवान्की विभूतियां हैं ।

बृहत्साम, तथा, साम्नाम्, गायत्री, छन्दसाम्, अहम्,
मासानाम्, मार्गशीर्षः, अहम्, ऋतूनाम्, कुसुमाकरः ॥३५॥

तथा	= तथा	मासानाम्	= महीनोंमें
अहम्	= मैं	मार्गशीर्षः	= { मार्गशीर्षका महीना (और)
साम्नाम्	= { गायन करने योग्य श्रुतियोंमें	ऋतूनाम्	= ऋतुओंमें
बृहत्साम	= बृहत्साम (और)	कुसुमाकरः	= वसन्त ऋतु
छन्दसाम्	= छन्दोंमें	अहम्	= मैं
गायत्री	= गायत्री छन्द (तथा)	(अस्मि)	= हूँ

द्युत आदि द्यूतं छलयतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम् ।

विभूतियों का
कथन ।

जयोऽस्मि व्यवसायोऽस्मि सत्त्वं सत्त्ववतामहम् ॥

द्युतम्, छलयताम्, अस्मि, तेजः, तेजस्विनाम्, अहम्,
जयः, अस्मि, व्यवसायः, अस्मि, सत्त्वम्, सत्त्ववताम्, अहम् ३६

हे अर्जुन—

अहम्	= मैं	जयः	= विजय
छलयताम्	= { छल करने- वालोंमें	अस्मि	= हूँ (और)
द्युतम्	= जुवा (और)	(व्यव- सायिनाम्)	= { निश्चय करने- वालोंका
तेजस्विनाम्	= { प्रभावशाली पुरुषोंका	व्यवसायः	= निश्चय (एवं)
तेजः	= प्रभाव	सत्त्ववताम्	= { सात्त्विक पुरुषोंका
अस्मि	= हूँ (तथा)	सत्त्वम्	= सात्त्विकभाव
अहम्	= मैं	अस्मि	= हूँ
(जेतृणाम्)	= जीतनेवालोंका		

वासुदेव आदि
विभूतियों का
कथन ।

वृष्णीनां वासुदेवोऽस्मि पाण्डवानां धनंजयः ।

मुनीनामप्यहं व्यासः कवीनामुशना कविः ॥

वृष्णीनाम्, वासुदेवः, अस्मि, पाण्डवानाम्, धनंजयः,

मुनीनाम्, अपि, अहम्, व्यासः, कवीनाम्, उशना, कविः ॥३७॥

और—

वृष्णीनाम्	= { वृष्णि- वंशियोंमें*	मुनीनाम्	= { एवं) मुनियोंमें
वासुदेवः	= { वासुदेव अर्थात् मैं स्वयम् तुम्हारा सखा (और)	व्यासः	= वेदव्यास (और)
पाण्डवानाम्	= पाण्डवोंमें	कवीनाम्	= कवियोंमें
धनंजयः	= { धनंजय अर्थात् तं	उशना	= शुक्राचार्य
		कविः	= कवि
		अपि	= भी
		अहम्	= मैं (ही)
		अस्मि	= हूँ

दण्ड आदि
विभूतियों का
कथन ।

दण्डो दमयतामस्मि नीतिरस्मि जिगीषताम् ।

मौनं चैवास्मि गुह्यानां ज्ञानं ज्ञानवतामहम् ॥३८॥

दण्डः, दमयताम्, अस्मि, नीतिः, अस्मि, जिगीषताम्,

मौनम्, च, एव, अस्मि, गुह्यानाम्, ज्ञानम्, ज्ञानवताम्, अहम् ॥

च	= और	अस्मि	= हूँ
दमयताम्	= दमन करनेवालोंका	जिगीषताम्	= { जीतनेकी इच्छावालोंकी
दण्डः	= { दण्ड अर्थात् दमन करनेकी शक्ति	नीतिः	= नीति
		अस्मि	= हूँ (और)

* यादवोंके ही अन्तर्गत एक वृष्णिवंश भी था ।

गुह्यानाम्	=	गोपनीयोंमें	अस्मि	= हूँ (तथा)
		अर्थात् गुप्त	ज्ञानवताम्	= ज्ञानवानोंका
		रखने योग्य	ज्ञानम्	= तत्त्वज्ञान
		भावोंमें	अहम्	= मैं
मौनम्	= मौन		एव	= ही (हूँ)

सर्वरूपसे प्रभाव-
सहित भगवान्-
के स्वरूप का
कथन ।

यच्चापि सर्वभूतानां बीजं तदहमर्जुन ।

न तदस्ति विना यत्स्यान्मया भूतं चराचरम् ॥३६॥

यत्, च, अपि, सर्वभूतानाम्, बीजम्, तत्, अहम्, अर्जुन,
न, तत्, अस्ति, विना, यत्, स्यात्, मया, भूतम्, चराचरम् ॥

च	= और	(यतः)	= क्योंकि (ऐसा)
अर्जुन	= हे अर्जुन	तत्	= वह
यत्	= जो	चराचरम्	= चर और अचर (कोई भी)
सर्वभूतानाम्	= सब भूतोंकी	भूतम्	= भूत
बीजम्	= { उत्पत्तिका कारण है	न	= नहीं
तत्	= वह	अस्ति	= है (कि)
अपि	= भी	यत्	= जो
अहम्	= मैं	मया	= मेरेसे
(एव)	= ही (हूँ)	विना	= रहित
		स्यात्	= होवे

इसलिये सब कुछ मेरा ही स्वरूप है ।

भगवत्-विभूति- नान्तोऽस्ति मम दिव्यानां विभूतीनां परंतप ।

योंकी अनन्तता

का कथन ।

एष तूद्देशतः प्रोक्तो विभूतेर्विस्तरो मया ॥४०॥

न, अन्तः, अस्ति, मम, दिव्यानाम्, विभूतीनाम्, परंतप,
एषः, तु, उद्देशतः, प्रोक्तः, विभूतेः, विस्तरः, मया ॥४०॥

परंतप	= हे परंतप	तु	= तो
मम	= मेरी	मया	= मैंने (अपनी)
दिव्यानाम्	= दिव्य	विभूतेः	= विभूतियोंका
विभूतीनाम्	= विभूतियोंका	विस्तरः	= विस्तार
अन्तः	= अन्त		(तेरे लिये)
न	= नहीं	उद्देशतः	= { एकदेशसे अर्थात्
अस्ति	= है		{ संक्षेपसे
एषः	= यह	प्रोक्तः	= कहा है

भगवान्‌के तेज-
के अंशसे संपूर्ण

वस्तुओं की
उत्पत्ति का
कथन ।

यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा ।

तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोऽशसंभवम् ॥४१॥

यत्, यत्, विभूतिमत्, सत्त्वम्, श्रीमत्, ऊर्जितम्, एव, वा,

तत्, तत्, एव, अवगच्छ, त्वम्, मम, तेजोऽशसंभवम् ॥४१॥

इसलिये हे अर्जुन—

यत्	= जो	श्रीमत्	= कान्तियुक्त
यत्	= जो	वा	= और
एव	= भी	ऊर्जितम्	= शक्तियुक्त
विभूतिमत्	= { विभूतियुक्त	सत्त्वम्	= वस्तु है
	{ अर्थात् ऐश्वर्य-	तत्	= उस
	{ युक्त (एवं)	तत्	= उसको

त्वम् = तू

मम = मेरे

तेजोऽश- = { तेजके अंशसे
संभवम् एव = { ही उत्पन्न हुई
अवगच्छ = जान

भगवान्की योग अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन ।

शक्तिके एक विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत् ॥

अंशसे संपूर्ण जगत्की स्थिति- अथवा, बहुना, एतेन, किम्, ज्ञातेन, तव, अर्जुन,

का कथन । विष्टभ्य, अहम्, इदम्, कृत्स्नम्, एकांशेन, स्थितः, जगत् ॥४२॥

अथवा = अथवा

अर्जुन = हे अर्जुन

एतेन = इस

बहुना = बहुत

ज्ञातेन = जाननेसे

तव = तेरा

किम् = क्या प्रयोजन है

अहम् = मैं

इदम् = इस

कृत्स्नम् = संपूर्ण

जगत् = जगत्को

(अपनी
योगमायाके)

एकांशेन = एक अंशमात्रसे

विष्टभ्य = धारण करके

स्थितः = स्थित हूँ—

इसलिये मेरेको ही तत्त्वसे जानना चाहिये ।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां

योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे विभूतियोगो नाम

दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

हरिः ॐ तत्सत् हरिः ॐ तत्सत् हरिः ॐ तत्सत्

ॐ श्रोपरमात्मने नमः

अथैकादशोऽध्यायः

प्रधान विषय—१ से ४ तक विश्वरूपका दर्शन करानेके लिये अर्जुनकी प्रार्थना । (५-८) भगवान्द्वारा अपने विश्वरूपका वर्णन । (९-१४) धृतराष्ट्रके प्रति संजयद्वारा विश्वरूपका वर्णन । (१५-३१) अर्जुनद्वारा भगवान्के विश्वरूपका देखा जाना और उनकी स्तुति करना । (३२-३४) भगवान्द्वारा अपने प्रभावका वर्णन और युद्धके लिये अर्जुनको उत्साहित करना । (३५-४६) भयभीत हुए अर्जुनद्वारा भगवान्की स्तुति और चतुर्भुजरूपका दर्शन करानेके लिये प्रार्थना । (४७-५०) भगवान्द्वारा अपने विश्वरूपके दर्शनकी महिमाका कथन तथा चतुर्भुज और सौन्यरूपका दिखाया जाना । (५१-५५) बिना अनन्यभक्तिके चतुर्भुजरूपके दर्शनकी दुर्लभताका और फलसहित अनन्य भक्तिका कथन ।

अर्जुन उवाच

अपने मोहकी निवृत्ति मानते हुए अर्जुनद्वारा भगवत्वचनोंकी प्रशंसा ।

मदनुग्रहाय परमं गुह्यमध्यात्मसंज्ञितम् ।
यत्त्वयोक्तं वचस्तेन मोहोऽयं विगतो मम ॥१॥
मदनुग्रहाय, परमम्, गुह्यम्, अध्यात्मसंज्ञितम्,
यत्, त्वया, उक्तम्, वचः, तेन, मोहः, अयम्, विगतः, मम ॥१॥

इस प्रकार भगवान्के वचन सुनकर अर्जुन बोला हे भगवन्—

मदनुग्रहाय =	{ मेरेपर अनुग्रह करनेके लिये	त्वया	= आपके द्वारा
परमम्	= परम	यत्	= जो
गुह्यम्	= गोपनीय	उक्तम्	= कहा गया
अध्यात्म-	= { अध्यात्म-	तेन	= उससे
संज्ञितम्	= { विषयक	मम	= मेरा
वचः	= { वचन अर्थात् उपदेश	अयम्	= यह
		मोहः	= अज्ञान
		विगतः	= नष्ट हो गया है

भगवत्द्वारा सुने भवाप्ययौ हि भूतानां श्रुतौ विस्तरशो मया ।
 हुए माहात्म्यको त्वत्तः कमलपत्राक्ष माहात्म्यमपि चाव्ययम् ॥२॥
 अर्जुन का भवाप्ययौ, हि, भूतानाम्, श्रुतौ, विस्तरशः, मया,
 स्वीकार करना त्वत्तः, कमलपत्राक्ष, माहात्म्यम्, अपि, च, अव्ययम् ॥२॥
 देखनेके लिये हि = क्योंकि त्वत्तः = आपसे
 इच्छा प्रगट कमलपत्राक्ष = हे कमलनेत्र विस्तरशः = विस्तारपूर्वक
 करना । मया = मैंने श्रुतौ = सुने हैं
 च = तथा (आपका)
 अव्ययम् = अविनाशी
 माहात्म्यम् = प्रभाव
 अपि = भी (सुना है)

[„] एवमेतद्यथात्थ त्वमात्मानं परमेश्वर ।
 द्रष्टुमिच्छामि ते रूपमैश्वरं पुरुषोत्तम ॥ ३ ॥

एवम्, एतत्, यथा, आत्थ, त्वम्, आत्मानम्, परमेश्वर,
 द्रष्टुम्, इच्छामि, ते, रूपम्, ऐश्वरम्, पुरुषोत्तम ॥३॥

परमेश्वर	= हे परमेश्वर	ते	= आपके
त्वम्	= आप	ऐश्वरम्	= { ज्ञान ऐश्वर्य
आत्मानम्	= अपनेको		{ शक्ति बल वीर्य
यथा	= जैसा		{ और तेजयुक्त
आत्थ	= कहते हो	रूपम्	= रूपको
एतत्	= यह (ठीक)		(प्रत्यक्ष)
एवम्	= ऐसा	द्रष्टुम्	= देखना
(एव)	= ही है (परन्तु)	इच्छामि	= चाहता हूँ
पुरुषोत्तम	= हे पुरुषोत्तम		

विश्वरूपका
दर्शन करानेके
लिये अर्जुनकी
प्रार्थना ।

मन्यसे यदि तच्छक्यं मया द्रष्टुमिति प्रभो ।

योगेश्वर ततो मे त्वं दर्शयात्मानमव्ययम् ॥ ४ ॥

मन्यसे, यदि, तत्, शक्यम्, मया, द्रष्टुम्, इति, प्रभो,
योगेश्वर, ततः, मे, त्वम्, दर्शय, आत्मानम्, अव्ययम् ॥४॥

इसलिये—

प्रभो	= हे प्रभो *	मन्यसे	= मानते हैं
मया	= मेरेद्वारा	ततः	= तो
तत्	= वह (आपका रूप)	योगेश्वर	= हे योगेश्वर
द्रष्टुम्	= देखा जाना	त्वम्	= आप (अपने)
शक्यम्	= शक्य है	अव्ययम्	= अविनाशी
इति	= ऐसा	आत्मानम्	= स्वरूपका
यदि	= यदि	मे	= मुझे
		दर्शय	= दर्शन कराइये

श्रीभगवानुवाच

विश्वरूपको
देखनेके लिये
अर्जुनके प्रति
भगवान् का
कथन ।

पश्य मे पार्थ रूपाणि शतशोऽथ सहस्रशः ।

नानाविधानि दिव्यानि नानावर्णाकृतीनि च ॥

पश्य, मे, पार्थ, रूपाणि, शतशः, अथ, सहस्रशः,

नानाविधानि, दिव्यानि, नानावर्णाकृतीनि, च ॥ ५ ॥

इस प्रकार अर्जुनके प्रार्थना करनेपर श्रोक्वण भगवान् बोले—

पार्थ	= हे पार्थ	अथ	= तथा
मे	= मेरे	सहस्रशः	= हजारों
शतशः	= सैकड़ों	नानाविधानि	= नाना प्रकारके

* उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय तथा अन्तर्धामीरूपसे शासन करनेवाला होनेसे भगवान् का नाम प्रभु है ।

च	= और	दिव्यानि	= अलौकिक
नानावर्णा-	= { नाना वर्ण तथा कृतीनि = { आकृतिवाले	रूपाणि	= रूपोंको
		पश्य	= देख

[„] पश्यादित्यान्वसून् रुद्रानश्विनौ मरुतस्तथा ।

बहून्यदृष्टपूर्वाणि पश्याश्चर्याणि भारत ॥ ६ ॥

पश्य, आदित्यान्, वसून्, रुद्रान्, अश्विनौ, मरुतः, तथा,
बहूनि, अदृष्टपूर्वाणि, पश्य, आश्चर्याणि, भारत ॥ ६ ॥

और-

भारत	= { हे भरतवंशी अर्जुन (मेरेमें)	(और)	
आदित्यान्	= { आदित्योंको अर्थात् अदितिके द्वादश पुत्रोंको (और)	मरुतः	= { उन्चास मरुद्गणोंको
वसून्	= आठ वसुओंको	पश्य	= देख
रुद्रान्	= { एकादश रुद्रोंको (तथा)	तथा	= तथा (और भी)
अश्विनौ	= { दोनों अश्विनी- कुमारोंको	बहूनि	= बहुतसे
		अदृष्ट- पूर्वाणि	= { पहिले न देखे हुए
		आश्चर्याणि	= { आश्चर्यमय रूपोंको
		पश्य	= देख

विश्वरूपके एक इहैकस्थं जगत्कृत्स्नं पश्याद्य सचराचरम् ।

अंशमें संपूर्ण मम देहे गुडाकेश यच्चान्यद्द्रष्टुमिच्छसि ॥ ७ ॥

जगत्को देखने- के लिये भगवान् इह, एकस्थम्, जगत्, कृत्स्नम्, पश्य, अद्य, सचराचरम्,
का कथन । मम, देहे, गुडाकेश, यत्, च, अन्यत्, द्रष्टुम्, इच्छसि ॥ ७ ॥

और-

गुडाकेश	= हे अर्जुन*	कृत्स्नम्	= संपूर्ण
अद्य	= अब	जगत्	= जगत्को
इह	= इस	पश्य	= देख (तथा)
मम	= मेरे	अन्यत्	= और
देहे	= शरीरमें	च	= भी
एकस्थम्	= { एक जगह स्थित हुए	यत्	= जो (कुछ)
		द्रष्टुम्	= देखना
सचराचरम्	= { चराचर- सहित	इच्छसि	= चाहता है (सो देख)

विश्वरूपको न तु मां शक्यसे द्रष्टुमनेनैव स्वचक्षुषा ।

देखनेके लिये अर्जुनके प्रति दिव्यं ददामि ते चक्षुः पश्य मे योगमैश्वरम् ॥८॥

भगवत् द्वारा न, तु, माम्, शक्यसे, द्रष्टुम्, अनेन, एव, स्वचक्षुषा,
दिव्य नेत्रोंका दिव्यम्, ददामि, ते, चक्षुः, पश्य, मे, योगम्, ऐश्वरम् ॥८॥
प्रदान ।

तु	= परन्तु	दिव्यम्	= { दिव्य अर्थात् अलौकिक
माम्	= मेरेको	चक्षुः	= चक्षु
अनेन	= इन	ददामि	= देता हूँ
स्वचक्षुषा	= { अपने प्राकृत नेत्रोंद्वारा	(तेन)	= उससे (तू)
द्रष्टुम्	= देखनेको	मे	= मेरे
एव	= निःसन्देह	ऐश्वरम्	= प्रभावको (और)
न शक्यसे	= समर्थ नहीं है	योगम्	= योगशक्तिको
(अतः)	= इसीसे (मैं)	पश्य	= देख
ते	= तेरे लिये		

* निद्राको जीतनेवाला होनेसे अर्जुनका नाम गुडाकेश हुआ था ।

संजय उवाच

अर्जुनके प्रति एवमुक्त्वा ततो राजन्महायोगेश्वरो हरिः ।
 भगवान् द्वारा दर्शयामास पार्थाय परमं रूपमैश्वरम् ॥ ६ ॥
 अपने विस्वरूप-
 का दिखाया एवम्, उक्त्वा, ततः, राजन्, महायोगेश्वरः, हरिः,
 जाना । दर्शयामास, पार्थाय, परमम्, रूपम्, ऐश्वरम् ॥ ९ ॥

संजय बोला-

राजन्	= हे राजन्	उक्त्वा	= कहकर
महायोगेश्वरः	= महायोगेश्वर (और)	ततः	= उसके उपरान्त
		पार्थाय	= अर्जुनके लिये
हरिः	= { सब पापोंके नाश करने- वाले भगवान् ने	परमम्	= परम
		ऐश्वरम्	= ऐश्वर्ययुक्त
		रूपम्	= दिव्य स्वरूप
एवम्	= इस प्रकार	दर्शयामास	= दिखाया

संजयद्वारा विश्व-
रूपका वर्णन । अनेकवक्त्रनयनमनेकाद्भुतदर्शनम् ।

अनेकदिव्याभरणं दिव्यानेकोद्यतायुधम् ॥ १० ॥

अनेकवक्त्रनयनम्, अनेकाद्भुतदर्शनम्,
 अनेकदिव्याभरणम्, दिव्यानेकोद्यतायुधम् ॥ १० ॥

और उस-

अनेकवक्त्र- नयनम्	= { अनेक मुख और नेत्रोंसे युक्त (तथा)	अनेक- दिव्या- भरणम्	= { बहुतसे दिव्य भूषणोंसे युक्त (और)
अनेकाद्भुत- दर्शनम्	= { अनेक अद्भुत दर्शनोंवाले (एवं)	दिव्यानेको- द्यतायुधम्	= { बहुतसे दिव्य शस्त्रोंको हाथों- में उठाये हुए

[॥] दिव्यमाल्याम्बरधरं दिव्यगन्धानुलेपनम् ।
 सर्वाश्चर्यमयं देवमनन्तं विश्वतोमुखम् ॥११॥
 दिव्यमाल्याम्बरधरम्, दिव्यगन्धानुलेपनम्,
 सर्वाश्चर्यमयम्, देवम्, अनन्तम्, विश्वतोमुखम् ॥११॥

तथा—

दिव्य-	{ दिव्यमाला और वस्त्रोंको धारण किये हुए (और)	सर्वाश्चर्य-	{ सब प्रकारके आश्चर्योंसे युक्त अनन्तम् = सीमारहित
माल्याम्बर-		मयम्	
धरम्	{ दिव्य गन्धका अनुलेपन किये हुए (एवं)	विश्वतोमुखम् =	विश्वतोमुखम् =
दिव्यगन्धा-		विश्वतोमुखम् =	विश्वतोमुखम् =
नुलेपनम्	{ परमदेव परमेश्वरको (अपश्यत्) = अर्जुनने देखा	देवम्	देवम्

विश्वरूपके दिवि सूर्यसहस्रस्य भवेद्युगपदुत्थिता ।

प्रकाश की
महिमा।

यदि भाः सदृशी सा स्याद्भासस्तस्य महात्मनः ॥

दिवि, सूर्यसहस्रस्य, भवेत्, युगपत्, उत्थिता,
 यदि, भाः, सदृशी, सा, स्यात्, भासः, तस्य, महात्मनः ॥१२॥

और हे राजन्—

दिवि	= आकाशमें	सा	= वह (भी)
सूर्यसहस्रस्य	= हजार सूर्योंके	तस्य	= उस
युगपत्	= एक साथ	महात्मनः	= { विश्वरूप परमात्माके
उत्थिता	= { उदय होनेसे उत्पन्न हुआ (जो)	भासः	= प्रकाशके
भाः	= प्रकाश	सदृशी	= सदृश
भवेत्	= होवे	यदि	= कदाचित् ही
		स्यात्	= होवे

अर्जुनका विश्व-
रूपमें संपूर्ण
जगत्को एक
जगह स्थित
देखना।

तत्रैकस्थं जगत्कृत्स्नं प्रविभक्तमनेकधा ।

अपश्यद्देवदेवस्य शरीरे पाण्डवस्तदा ॥१३॥

तत्र, एकस्थम्, जगत्, कृत्स्नम्, प्रविभक्तम्, अनेकधा,

अपश्यत्, देवदेवस्य, शरीरे, पाण्डवः, तदा ॥१३॥

ऐसे आश्चर्यमय रूपको देखते हुए-

पाण्डवः	= { पाण्डुपुत्र अर्जुनने	तत्र	= उस
तदा	= उस कालमें	देवदेवस्य	= { देवोंके देव श्रीकृष्ण भगवान्के
अनेकधा	= अनेक प्रकारसे	शरीरे	= शरीरमें
प्रविभक्तम्	= { विभक्त हुए अर्थात् पृथक् पृथक् हुए	एकस्थम्	= { एक जगह स्थित
कृत्स्नम्	= संपूर्ण	अपश्यत्	= देखा
जगत्	= जगत्को		

विश्वरूपका
दर्शन करके
अर्जुन का
विसित होना।

ततः स विस्मयाविष्टो हृष्टरोमा धनंजयः ।

प्रणम्य शिरसा देवं कृताञ्जलिरभाषत ॥१४॥

ततः, सः, विस्मयाविष्टः, हृष्टरोमा, धनंजयः,

प्रणम्य, शिरसा, देवम्, कृताञ्जलिः, अभाषत ॥१४॥

और-

ततः	= { उसके अनन्तर	हृष्टरोमा	= { हर्षित रोमोंवाला
सः	= वह	धनंजयः	= अर्जुन
विस्मया-	= { आश्चर्यसे	देवम्	= { विश्वरूप परमात्माको
विष्टः	= { युक्त हुआ		

(श्रद्धामक्तिसहित) कृतोज्जलिः = हाथ जोड़े हुए
 शिरसा = सिरसे
 प्रणम्य = प्रणाम करके
 अभाषत = बोला

अर्जुन उवाच

विश्वरूपमें देवता
 और ऋषि आदि
 को देखना ।

पश्यामि देवांस्तव देव देहे

सर्वास्तथा भूतविशेषसंघान् ।

ब्रह्माणमीशं कमलासनस्थ-

मृषींश्च सर्वानुरगांश्च दिव्यान् ॥१५॥

पश्यामि, देवान्, तव, देव, देहे, सर्वान्, तथा,
 भूतविशेषसंघान्, ब्रह्माणम्, ईशम्, कमलासनस्थम्,
 ऋषीन्, च, सर्वान्, उरगान्, च, दिव्यान् ॥१५॥

देव = हे देव

तव = आपके

देहे = शरीरमें

सर्वान् = संपूर्ण

देवान् = देवोंको

तथा = तथा

भूतविशेष- = { अनेक भूतोंके
 संघान् = { समुदायोंको

(और)

कमला- = { कमलके आसनपर
 सनस्थम् = { बैठे हुए

ब्रह्माणम् = ब्रह्माको (तथा)

ईशम् = महादेवको

च = और

सर्वान् = संपूर्ण

ऋषीन् = ऋषियोंको

च = तथा

दिव्यान् = दिव्य

उरगान् = सर्पोंको

पश्यामि = देखता हूँ

विश्वरूपको
अनेक बाहु और
उदर आदिसे
युक्त देखना ।

अनेकबाहुदरवक्त्रनेत्रं

पश्यामि त्वां सर्वतोऽनन्तरूपम् ।

नान्तं न मध्यं न पुनस्तवादिं

पश्यामि विश्वेश्वर विश्वरूप ॥१६॥

अनेकबाहुदरवक्त्रनेत्रम्, पश्यामि, त्वाम्, सर्वतः, अनन्तरूपम्,
न, अन्तम्, न, मध्यम्, न, पुनः, तव, आदिम्, पश्यामि,
विश्वेश्वर, विश्वरूप ॥१६॥

और—

विश्वेश्वर	= { हे संपूर्ण विश्व- के स्वामिन्	विश्वरूप	= हे विश्वरूप
त्वाम्	= आपको	तव	= आपके
अनेक-	= { अनेक हाथ पेट	न	= न
बाहुदर-	= { मुख और	अन्तम्	= अन्तको (देखता हूँ)
वक्त्रनेत्रम्	= { नेत्रोंसे युक्त (तथा)	न	= न
सर्वतः	= सब ओरसे	मध्यम्	= मध्यको
अनन्त-	= { अनन्त	पुनः	= और
रूपम्	= { रूपोंवाला	न	= न
पश्यामि	= देखता हूँ	आदिम्	= आदिको (ही)
		पश्यामि	= देखता हूँ

विश्वरूपको
किरीट गदा
और चक्र आदि-
से युक्त देखना ।

किरीटिनं गदिनं चक्रिणं च

तेजोराशिं सर्वतो दीप्तिमन्तम् ।

पश्यामि त्वां दुर्निरीक्ष्यं समन्ता-

द्दीप्तानलार्कद्युतिमप्रमेयम्

॥१७॥

किरीटिनम्, गदिनम्, चक्रिणम्, च, तेजोराशिम्, सर्वतः,
दीप्तिमन्तम्, पश्यामि, त्वाम्, दुर्निरीक्ष्यम्, समन्तात्,
दीप्तानलार्कद्युतिम्, अप्रमेयम् ॥१७॥

और हे विष्णो-

त्वाम्	= आपको (मैं)	दीप्तानलार्क- द्युतिम्	{ प्रज्वलित अग्नि और सूर्यके सदृश ज्योतियुक्त
किरीटिनम्	= मुकुटयुक्त		
गदिनम्	= गदायुक्त		
च	= और	दुर्निरीक्ष्यम्	{ देखनेमें अति गहन (और)
चक्रिणम्	= चक्रयुक्त(तथा)		
सर्वतः	= सब ओरसे	अप्रमेयम्	{ अप्रमेय- स्वरूप
दीप्तिमन्तम्	= प्रकाशमान		
तेजोराशिम्	= तेजका पुञ्ज	समन्तात्	= सब ओरसे
		पश्यामि	= देखता हूँ

विश्वरूपको
सूति ।

त्वमक्षरं परमं वेदितव्यं

त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम् ।

त्वमव्ययः शाश्वतधर्मगोप्ता

सनातनस्त्वं पुरुषो मतो मे ॥१८॥

त्वम्, अक्षरम्, परमम्, वेदितव्यम्, त्वम्, अस्व, विश्वस्य,
परम्, निधानम्, त्वम्, अव्ययः, शाश्वतधर्मगोप्ता, सनातनः,
त्वम्, पुरुषः, मतः, मे ॥१८॥

इसलिये हे भगवन्—

त्वम्	= आप (ही)	निधानम्	= आश्रय हैं (तथा)
वेदितव्यम्	= जानने योग्य	त्वम्	= आप (ही)
परमम्	= परम	शाश्वत-	= { अनादि धर्म-
अक्षरम्	= { अक्षर हैं अर्थात् परब्रह्म परमात्मा हैं (और)	धर्मगोप्ता	= { के रक्षक हैं (और)
त्वम्	= आप (ही)	त्वम्	= आप (ही)
अस्य	= इस	अव्ययः	= अविनाशी
विश्वस्य	= जगत्के	सनातनः	= सनातन
परम्	= परम	पुरुषः	= पुरुष हैं (ऐसा)
		मे	= मेरा
		मतः	= मत है

अनन्त सामर्थ्य
और प्रभावयुक्त
विश्वरूप का
दर्शन ।

अनादिमध्यान्तमनन्तवीर्य-

मनन्तबाहुं शशिसूर्यनेत्रम् ।

पश्यामि त्वां दीप्तहुताशवक्त्रं

स्वतेजसा विश्वमिदं तपन्तम् ॥ १६ ॥

अनादिमध्यान्तम्, अनन्तवीर्यम्, अनन्तबाहुम्,
शशिसूर्यनेत्रम्, पश्यामि, त्वाम्, दीप्तहुताशवक्त्रम्,
स्वतेजसा, विश्वम्, इदम्, तपन्तम् ॥ १९ ॥

हे परमेश्वर मैं—

त्वाम्	= आपको	अनन्त-	= { अनन्त सामर्थ्यसे
अनादि-	= { आदि अन्त	वीर्यम्	= { युक्त (और)
मध्यान्तम्	= { और मध्यसे रहित (तथा)	अनन्त-	= { अनन्त
		बाहुम्	= { हाथोंवाला

शशिसूर्य- नेत्रम् = { (तथा) चन्द्रसूर्यरूप नेत्रोंवाला (और)	(तथा) स्वतेजसा = अपने तेजसे इदम् = इस
दीप्तहुताश- वक्त्रम् = { प्रज्वलित अग्निरूप मुखवाला	विश्वम् = जगत्को तपन्तम् = { तपायमान करता हुआ पश्यामि = देखता हूँ

अद्भुत विराट्
रूपसे संपूर्ण
जगत्को व्याप्त
देखना ।

द्यावापृथिव्योरिदमन्तरं हि

व्याप्तं त्वयैकेन दिशश्च सर्वाः ।

दृष्ट्वाद्भुतं रूपमुग्रं तवेदं

लोकत्रयं प्रव्यथितं महात्मन् ॥ २० ॥

द्यावापृथिव्योः, इदम्, अन्तरम्, हि, व्याप्तम्, त्वया, एकेन,
दिशः, च, सर्वाः, दृष्ट्वा, अद्भुतम्, रूपम्, उग्रम्, तव, इदम्,
लोकत्रयम्, प्रव्यथितम्, महात्मन् ॥ २० ॥

और-

महात्मन् = हे महात्मन्	एकेन = एक
इदम् = यह	त्वया = आपसे
द्यावा- = { स्वर्ग और	हि = ही
पृथिव्योः = { पृथिवीके	व्याप्तम् = परिपूर्ण हैं (तथा)
अन्तरम् = { बीचका संपूर्ण	तव = आपके
= { आकाश	इदम् = इस
च = तथा	अद्भुतम् = अलौकिक
सर्वाः = सब	(और)
दिशः = दिशायें	उग्रम् = भयंकर

रूपम् = रूपको
दृष्ट्वा = देखकर
लोकत्रयम् = तीनों लोक

प्रव्यथितम् = { अतिव्यथाको
प्राप्त हो रहे हैं

विश्वरूपमें प्रवेश
करते हुए देवा-
दिकोंका और
स्तुति करते हुए
महर्षि आदिकों-
का दर्शन।

अमी हि त्वां सुरसंघा विशन्ति

केचिद्धीताः प्राञ्जलयो गृणन्ति ।

स्वस्तीत्युक्त्वा महर्षिसिद्धसंघाः

स्तुवन्ति त्वां स्तुतिभिः पुष्कलाभिः ॥२१॥

अमी, हि, त्वाम्, सुरसंघाः, विशन्ति, केचित्, भीताः,
प्राञ्जलयः, गृणन्ति, स्वस्ति, इति, उक्त्वा, महर्षिसिद्धसंघाः,
स्तुवन्ति, त्वाम्, स्तुतिभिः, पुष्कलाभिः ॥ २१ ॥

और हे गोविन्द-

अमी = वे (सब)

सुरसंघाः = { देवताओंके
समूह

त्वाम् = आपमें

हि = ही

विशन्ति = प्रवेश करते हैं
(और)

केचित् = कई एक

भीताः = भयभीत होकर

प्राञ्जलयः = हाथ जोड़े हुए
(आपके नाम
और गुणोंका)

गृणन्ति = उच्चारण करते हैं
(तथा)

महर्षि-
सिद्धसंघाः = { महर्षि और
सिद्धोंके
समुदाय

स्वस्ति = कल्याण होवे

इति = ऐसा

उक्त्वा = कहकर

पुष्कलाभिः = उत्तम उत्तम

स्तुतिभिः = स्तोत्रोंद्वारा

त्वाम् = आपकी

स्तुवन्ति = स्तुति करते हैं

विश्वरूपको
देखते हुए
विस्मययुक्तरुद्रा-
दिकोंका दर्शन ।

रुद्रादित्या वसवो ये च साध्या
विश्वेऽश्विनौ मरुतश्चोष्मपाश्च ।

गन्धर्वयक्षासुरसिद्धसंघा

वीक्षन्ते त्वां विस्मिताश्चैव सर्वे ॥ २२ ॥

रुद्रादित्याः, वसवः, ये, च, साध्याः, विश्वे, अश्विनौ, मरुतः,
च, ऊष्मपाः, च, गन्धर्वयक्षासुरसिद्धसंघाः, वीक्षन्ते, त्वाम्,
विस्मिताः, च, एव, सर्वे ॥ २२ ॥

और हे परमेश्वर—

ये	= जो	च	= तथा
रुद्रा- दित्याः	= { एकादश रुद्र और द्वादश आदित्य	गन्धर्व- यक्षासुर- सिद्धसंघाः	= { गन्धर्व यक्ष राक्षस और सिद्धगणोंके समुदाय हैं
च	= तथा	(ते)	= वे
वसवः	= आठ वसु (और)	सर्वे	= सब
साध्याः	= साध्यगण	एव	= ही
विश्वे	= विश्वेदेव (तथा)	विस्मिताः	= विस्मित हुए
अश्विनौ	= अश्विनीकुमार	त्वाम्	= आपको
च	= और	वीक्षन्ते	= देखते हैं
मरुतः	= मरुद्गण		
च	= और		
ऊष्मपाः	= पितरोंका समुदाय		

भगवान्के
भयंकर रूपको
देखकर अर्जुन-
का भयभीत
होना ।

रूपं महत्ते बहुवक्त्रनेत्रं
महाबाहो बहुबाहूरुपादम् ।
बहूदरं बहुदंष्ट्राकरालं
दृष्ट्वा लोकाः प्रव्यथितास्तथाहम् ॥ २३ ॥

रूपम्, महत्, ते, बहुवक्त्रनेत्रम्, महाबाहो, बहुबाहूरुपादम्,
बहूदरम्, बहुदंष्ट्राकरालम्, दृष्ट्वा, लोकाः, प्रव्यथिताः,
तथा, अहम् ॥ २३ ॥

और-

महाबाहो	= हे महाबाहो	बहुदंष्ट्रा-	= { बहुतसी
ते	= आपके	करालम्	= { विकराल
बहुवक्त्र-	= { बहुत मुख		= { जाड़ोंवाले
नेत्रम्	= { और नेत्रोंवाले	महत्	= महान्
	(तथा)	रूपम्	= रूपको
बहुबाहूरु-	= { बहुत हाथ	दृष्ट्वा	= देखकर
पादम्	= { जंघा और	लोकाः	= सब लोक
	= { पैरोंवाले	प्रव्यथिताः	= { व्याकुल हो
	(और)		= { रहे हैं
बहूदरम्	= { बहुत	तथा	= तथा
	= { उदरोंवाले	अहम्	= मैं
	(तथा)	(अपि)	= भी
			(व्याकुल हो रहा हूँ)

[„]

नभःस्पृशं दीप्तमनेकवर्णं

व्यात्ताननं दीप्तविशालनेत्रम् ।

दृष्ट्वा हि त्वां प्रव्यथितान्तरात्मा

धृतिं न विन्दामि शमं च विष्णो ॥ २४ ॥

नभःस्पृशम्, दीप्तम्, अनेकवर्णम्, व्यात्ताननम्,

दीप्तविशालनेत्रम्, दृष्ट्वा, हि, त्वाम्, प्रव्यथितान्तरात्मा,

धृतिम्, न, विन्दामि, शमम्, च, विष्णो ॥ २४ ॥

हि	= क्योंकि	दीप्तविशाल-	= { प्रकाशमान
विष्णो	= हे विष्णो	नेत्रम्	{ विशाल
			{ नेत्रोंसे युक्त
नभःस्पृशम्	= { आकाशके	त्वाभ्	= आपको
	{ साथ स्पर्श	दृष्ट्वा	= देखकर
	{ किये हुए	प्रव्यथिता-	{ भयभीत
दीप्तम्	= देदीप्यमान	न्तरात्मा	= { अन्तःकरण-
			{ वाला (मैं)
अनेकवर्णम्	= { अनेक	धृतिम्	= धीरज
	{ रूपोंसे युक्त	च	= और
	(तथा)	शमम्	= शान्तिको
व्यात्ताननम्	= { फैलाये हुए	न	= नहीं
	{ मुख (और)	विन्दामि	= प्राप्त होता हूँ

[„]

दंष्ट्राकरालानि च ते मुखानि

दृष्ट्वैव कालानलसन्निभानि ।

दिशो न जाने न लभे च शर्म

प्रसीद देवेश जगन्निवास ॥ २५ ॥

दंष्ट्राकरालानि, च, ते, मुखानि, दृष्ट्वा, एव, कालानलसन्निभानि,
दिशः, न, जाने, न, लभे, च, शर्म, प्रसीद, देवेश, जगन्निवास ॥

और हे भगवन्-

ते	= आपके	च	= और
दंष्ट्रा-		कालानल-	{ प्रलयकालकी
करालानि	= { विकराल	सन्निभानि	= { अग्निके समान
	{ जाड़ोंवाले		{ प्रज्वलित

मुखानि	= मुखोंको
दृष्ट्वा	= देखकर
दिशः	= दिशाओंको
न	= नहीं
जाने	= जानता हूँ
च	= और
शर्म	= सुखको
एव	= भी

न	= नहीं
लभे	= प्राप्त होता हूँ
(अतः)	= इसलिये
देवेश	= हे देवेश
जगन्निवास	= हे जगन्निवास
	(आप)
प्रसीद	= प्रसन्न होवें

दोनों सेनाओंके
योधाओं को
विराट् स्वरूपके
मुखमें प्रवेश हो-
कर नष्ट होते
हुए देखना ।

अमी च त्वां धृतराष्ट्रस्य पुत्राः

सर्वे सहैवावनिपालसंघैः ।

भीष्मो द्रोणः सूतपुत्रस्तथासौ

सहास्मदीयैरपि योधमुख्यैः ॥ २६ ॥

अमी, च, त्वाम्, धृतराष्ट्रस्य, पुत्राः, सर्वे, सह, एव,
अवनिपालसंघैः, भीष्मः, द्रोणः, सूतपुत्रः, तथा, असौ,
सह, अस्मदीयैः, अपि, योधमुख्यैः ॥ २६ ॥
और मैं देखता हूँ कि—

अमी	= वे
सर्वे	= सब
एव	= ही
धृतराष्ट्रस्य	= धृतराष्ट्रके
पुत्राः	= पुत्र
अवनि-	= { राजाओंके
पालसंघैः	= { समुदाय
सह	= सहित

त्वाम्	= आपमें
(विशन्ति)	= प्रवेश करते हैं
च	= और
भीष्मः	= भीष्मपितामह
द्रोणः	= द्रोणाचार्य
तथा	= तथा
असौ	= वह
सूतपुत्रः	= कर्ण (और)

अस्सदीयैः = हमारे पक्षके

योधमुख्यैः = प्रधान योधाओंके

सह

= सहित

(सबके सब)

अपि = भी

[„]

वक्त्राणि ते त्वरमाणा विशन्ति

दंष्ट्राकरालानि भयानकानि ।

केचिद्विलग्ना दशनान्तरेषु

संदृश्यन्ते चूर्णितैरुत्तमाङ्गैः ॥ २७ ॥

वक्त्राणि, ते, त्वरमाणाः, विशन्ति, दंष्ट्राकरालानि,

भयानकानि, केचित्, विलग्नाः, दशनान्तरेषु, संदृश्यन्ते,

चूर्णितैः, उत्तमाङ्गैः ॥ २७ ॥

त्वरमाणाः = वेगयुक्त हुए

ते = आपके

दंष्ट्रा-
करालानि = { विकराल
जाड़ोंवाले

भयानकानि = भयानक

वक्त्राणि = मुखोंमें

विशन्ति = प्रवेश करते हैं
(और)

केचित् = कई एक

चूर्णितैः = चूर्ण हुए

उत्तमाङ्गैः = सिरोंसहित
(आपके)दशनान्तरेषु = { दांतोंके
बीचमें

विलग्नाः = लगे हुए

संदृश्यन्ते = दीखते हैं

नदी और

समुद्रके दृष्टान्तसे

प्रवेशके दृश्यका

कथन ।

यथा नदीनां बहवोऽम्बुवेगाः

समुद्रमेवाभिमुखा द्रवन्ति ।

तथा तवामी नरलोकवीरा

विशन्ति वक्त्राण्यभिविज्वलन्ति ॥ २८ ॥

यथा, नदीनाम्, बहवः, अम्बुवेगाः, समुद्रम्, एव,
अभिमुखाः, द्रवन्ति, तथा, तव, अमी, नरलोकवीराः,
विशन्ति, वक्त्राणि, अभिविज्वलन्ति ॥ २८ ॥

और हे विश्वमूर्ते—

यथा	= जैसे	तथा	= वैसे ही
नदीनाम्	= नदियोंके	अमी	= वे
बहवः	= बहुतसे	नरलोक-	{ शूरवीर
अम्बुवेगाः	= जलके प्रवाह	वीराः	{ मनुष्योंके
समुद्रम्	= समुद्रके		{ समुदाय(भी)
एव	= ही	तव	= आपके
अभिमुखाः	= सन्मुख	अभि-	} = प्रज्वलित हुए
	{ दौड़ते हैं	विज्वलन्ति	
द्रवन्ति	= { अर्थात् समुद्रमें	वक्त्राणि	= मुखोंमें
	{ प्रवेश करते हैं	विशन्ति	= प्रवेश करते हैं

दीपक और पतङ्ग
के दृष्टान्तसे नाश
के दृश्यका कथन

यथा प्रदीप्तं ज्वलनं पतङ्गा
विशन्ति नाशाय समृद्धवेगाः ।
तथैव नाशाय विशन्ति लोका-
स्तवापि वक्त्राणि समृद्धवेगाः ॥ २९ ॥

यथा, प्रदीप्तम्, ज्वलनम्, पतङ्गाः, विशन्ति, नाशाय,
समृद्धवेगाः, तथा, एव, नाशाय, विशन्ति, लोकाः, तव,
अपि, वक्त्राणि, समृद्धवेगाः ॥ २९ ॥

अथवा—

यथा	= जैसे	(मोहके वश होकर)
पतङ्गाः	= पतङ्ग	नाशाय = नष्ट होनेके लिये

प्रदीप्तम्	= प्रज्वलित	अपि	= भी
ज्वलनम्	= अग्निमें	नाशाय	= { अपने नाशके
समृद्धवेगाः	= { अति वेगसे	तव	= आपके
विशन्ति	= प्रवेश करते हैं	वक्त्राणि	= मुखोंमें
तथा	= वैसे	समृद्धवेगाः	= { अति वेगसे
एव	= ही	विशन्ति	= प्रवेश करते हैं
लोकाः	= यह सब लोग		

सब लोकोंको
ग्रसन करते हुए
तेजोमयभयानक
विश्वरूपका
वर्णन ।

लेलिह्यसे ग्रसमानः समन्ता-

लोकान्समग्रान्वदनैर्ज्वलद्भिः ।

तेजोभिरापूर्य जगत्समग्रं

भासस्तवोग्राः प्रतपन्ति विष्णो ॥ ३० ॥

लेलिह्यसे, ग्रसमानः, समन्तात्, लोकान्, समग्रान्, वदनैः,
ज्वलद्भिः, तेजोभिः, आपूर्य, जगत्, समग्रम्, भासः, तव,
उग्राः, प्रतपन्ति, विष्णो ॥ ३० ॥

और आप उन-

समग्रान्	= संपूर्ण	उग्राः	= उग्र
लोकान्	= लोकोंको	भासः	= प्रकाश
ज्वलद्भिः	= प्रज्वलित	समग्रम्	= संपूर्ण
वदनैः	= मुखोंद्वारा	जगत्	= जगत्को
ग्रसमानः	= ग्रसन करते हुए	तेजोभिः	= तेजके द्वारा
समन्तात्	= सब ओरसे	आपूर्य	= परिपूर्ण करके
लेलिह्यसे	= चाट रहे हैं	प्रतपन्ति	= { तपायमान
विष्णो	= हे विष्णो		{ करता है
तव	= आपका		

उग्ररूपधारी
भगवान्‌को तत्त्व-
से जानने के
लिये अर्जुनका
प्रश्न ।

आख्याहि मे को भवानुग्ररूपो
नमोऽस्तु ते देववर प्रसीद ।
विज्ञातुमिच्छामि भवन्तमाद्यं
न हि प्रजानामि तव प्रवृत्तिम् ॥३१॥

आख्याहि, मे, कः, भवान्, उग्ररूपः, नमः, अस्तु, ते, देववर,
प्रसीद, विज्ञातुम्, इच्छामि, भवन्तम्, आद्यम्, न, हि,
प्रजानामि, तव, प्रवृत्तिम् ॥ ३१ ॥

हे भगवन् ! कृपा करके—

मे	= मेरे प्रति	आद्यम्	= आदिस्वरूप
आख्याहि	= कहिये (कि)	भवन्तम्	= आपको (मैं)
भवान्	= आप	विज्ञातुम्	= तत्त्वसे जानना
उग्ररूपः	= उग्ररूपवाले	इच्छामि	= चाहता हूँ
कः	= कौन हैं	हि	= क्योंकि
देववर	= हे देवोंमें श्रेष्ठ	तव	= आपकी
ते	= आपको	प्रवृत्तिम्	= प्रवृत्तिको (मैं)
नमः	= नमस्कार	न	= नहीं
अस्तु	= होवे (आप)	प्रजानामि	= जानता
प्रसीद	= प्रसन्न होइये		

श्रीभगवानुवाच

लोकोँको नष्ट
करनेके लिये
प्रवृत्त हुआ मैं
महाकाल हूँ
इत्यादि वचनोंसे
भगवान् का
उत्तर ।

कालोऽस्मि लोकक्षयकृत्प्रवृद्धो
लोकान्समार्हर्तुमिह प्रवृत्तः ।
ऋतेऽपि त्वां न भविष्यन्ति सर्वे
येऽवस्थिताः प्रत्यनीकेषु योधाः ॥३२॥

कालः, अस्मि, लोकक्षयकृत्, प्रवृद्धः, लोकान्, समाहर्तुम्, इह, प्रवृत्तः, ऋते, अपि, त्वाम्, न, भविष्यन्ति, सर्वे, ये, अवस्थिताः, प्रत्यनीकेषु, योधाः ॥ ३२ ॥

इस प्रकार अर्जुनके पूछनेपर श्रीकृष्ण भगवान् बोले हे अर्जुन ! मैं—

लोक-	= { लोकोंका नाश	प्रत्यनीकेषु = { प्रतिपक्षियोंकी
क्षयकृत्	= { करनेवाला	सेनामें
प्रवृद्धः	= बड़ा हुआ	अवस्थिताः = स्थित हुए
कालः	= महाकाल	योधाः = योधालोग हैं
अस्मि	= हूँ	(ते) = वे
इह	= इस समय (इन)	सर्वे = सब
लोकान्	= लोकोंको	त्वाम् = तेरे
समाहर्तुम्	= नष्ट करनेके लिये	ऋते = बिना
प्रवृत्तः	= प्रवृत्त हुआ हूँ	अपि = भी
	(इसलिये)	न = नहीं
ये	= जो	भविष्यन्ति = रहेंगे—

अर्थात् तेरे युद्ध न करनेसे भी इन सबका नाश हो जायगा ।

निमित्तमात्र
होकर युद्ध करने
के लिये अर्जुन-
के प्रति भगवान्
की आश ।

तस्मात्त्वमुत्तिष्ठ यशो लभस्व
जित्वा शत्रून्भुङ्क्ष्व राज्यं समृद्धम् ।
मयैवैते निहताः पूर्वमेव
निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन् ॥ ३३ ॥

तस्मात्, त्वम्, उत्तिष्ठ, यशः, लभस्व, जित्वा, शत्रून्, भुङ्क्ष्व,
राज्यम्, समृद्धम्, मया, एव, एते, निहताः, पूर्वम्, एव,
निमित्तमात्रम्, भव, सव्यसाचिन् ॥ ३३ ॥

तस्मात् = इससे । त्वम् = तू

उत्तिष्ठ = खड़ा हो (और)	एव = ही
यशः = यशको	मया = मेरेद्वारा
लभस्व = प्राप्त कर (तथा)	निहताः = मारे हुए हैं
शत्रून् = शत्रुओंको	सव्यसाचिन् = { हे सव्य-
जित्वा = जीतकर	साचिन्* (तूं तो)
समृद्धम् = धनधान्यसे सम्पन्न	निमित्त- = { केवल
राज्यम् = राज्यको	मात्रम् = { निमित्तमात्र
भुङ्क्ष्व = भोग (और)	एव = ही
एते = यह सब (शूरवीर)	भव = हो जा
पूर्वम् = पहिलेसे	

[„]

द्रोणं च भीष्मं च जयद्रथं च

कर्णं तथान्यानपि योधवीरान् ।

मया हतांस्त्वं जहि मा व्यथिष्ठा

युध्यस्व जेतासि रणे सपत्नान् ॥ ३४ ॥

द्रोणम्, च, भीष्मम्, च, जयद्रथम्, च, कर्णम्, तथा,
अन्यान्, अपि, योधवीरान्, मया, हतान्, त्वम्, जहि,
मा, व्यथिष्ठाः, युध्यस्व, जेतासि, रणे, सपत्नान् ॥ ३४ ॥

तथा इत-

द्रोणम् = द्रोणाचार्य	जयद्रथम् = जयद्रथ
च = और	च = और
भीष्मम् = भीष्मपितामह	कर्णम् = कर्ण
च = तथा	तथा = तथा

* वार्ये हाथसे भी बाण चलानेका अभ्यास होनेसे अर्जुनका नाम
सव्यसाची हुआ था ।

अन्यान्	= { और भी	सा व्यथिष्ठाः	= भय मत कर
अपि	= { बहुतसे	रणे	= { (निःसन्देह
मया	= मेरेद्वारा		= { तूं) युद्धमें
हतान्	= मारे हुए	सपत्नान्	= वैरियोंको
योधवीरान्	= { शूरवीर	जेतासि	= जीतेगा
	= { योधाओंको	(अतः)	= इसलिये
त्वम्	= तूं	युध्यस्व	= युद्ध कर
जहि	= मार (और)		

संजय उवाच

भगवान्‌के
वचनोंको सुनकर
अर्जुनका भय-
भीत और गद्गद
होना ।

एतच्छ्रुत्वा वचनं केशवस्य
कृताञ्जलिर्वेपमानः किरीटी ।

नमस्कृत्वा भूय एवाह कृष्णं

सगद्गदं भीतभीतः प्रणम्य ॥ ३५ ॥

एतत्, श्रुत्वा, वचनम्, केशवस्य, कृताञ्जलिः, वेपमानः,
किरीटी, नमस्कृत्वा, भूयः, एव, आह, कृष्णम्, सगद्गदम्,
भीतभीतः, प्रणम्य ॥ ३५ ॥

इसके उपरान्त संजय बोला कि हे राजन्—

केशवस्य	= { केशव	कृताञ्जलिः	= हाथ जोड़े हुए
	= { भगवान्‌के	वेपमानः	= कांपता हुआ
एतत्	= इस	नमस्कृत्वा	= नमस्कार करके
वचनम्	= वचनको	भूयः	= फिर
श्रुत्वा	= सुनकर	एव	= भी
किरीटी	= { मुकुटधारी	भीतभीतः	= भयभीत हुआ
	= { अर्जुन	प्रणम्य	= प्रणाम करके

कृष्णम् = { भगवान् | सगद्गदम् = गद्गद वाणीसे
 { श्रीकृष्णके प्रति | आह = बोला
 अर्जुन उवाच

भगवान्‌के
 महत्त्वका वर्णन

स्थाने हृषीकेश तव प्रकीर्त्या

जगत्प्रहृष्यत्यनुरज्यते च ।

रक्षांसि भीतानि दिशो द्रवन्ति

सर्वे नमस्यन्ति च सिद्धसंघाः ॥ ३६ ॥

स्थाने, हृषीकेश, तव, प्रकीर्त्या, जगत्, प्रहृष्यति, अनुरज्यते,
 च, रक्षांसि, भीतानि, दिशः, द्रवन्ति, सर्वे, नमस्यन्ति,
 च, सिद्धसंघाः ॥ ३६ ॥

कि-

हृषीकेश	= हे अन्तर्यामिन्	(तथा)
स्थाने	= यहयोग्यही है (कि)	भीतानि = भयभीत हुए
(यत्)	= जो	रक्षांसि = राक्षसलोग
तव	= आपके	दिशः = दिशाओंमें
प्रकीर्त्या	= { नामऔरप्रभाव- के कीर्तनसे	द्रवन्ति = भागते हैं
जगत्	= जगत्	च = और
प्रहृष्यति	= अतिहर्षित होता है	सर्वे = सब
च	= और	सिद्धसंघाः = { सिद्धगणोंके समुदाय
अनुरज्यते	= { अनुरागको भी प्राप्त होता है	नमस्यन्ति = नमस्कार करते हैं

[॥]

कस्माच्च ते न नमेरन्महात्मन्
 गरीयसे ब्रह्मणोऽप्यादिकर्त्रे ।
 अनन्त देवेश जगन्निवास
 त्वमक्षरं सदसत्तत्परं यत् ॥ ३७ ॥

कस्मात्, च, ते, न, नमेरन्, महात्मन्, गरीयसे, ब्रह्मणः,
 अपि, आदिकर्त्रे, अनन्त, देवेश, जगन्निवास, त्वम्, अक्षरम्,
 सत्, असत्, तत्परम्, यत् ॥ ३७ ॥

महात्मन्	= हे महात्मन्	देवेश	= हे देवेश
ब्रह्मणः	= ब्रह्माके	जगन्निवास	= हे जगन्निवास
अपि	= भी	यत्	= जो
आदिकर्त्रे	= आदिकर्ता	सत्	= सत्
च	= और	असत्	= असत् (और)
गरीयसे	= सबसे बड़े	तत्परम्	= उनसे परे
ते	= आपके लिये (वे)	अक्षरम्	= { अक्षर अर्थात् सच्चिदानन्द- घन ब्रह्म है
कस्मात्	= कैसे	(तत्)	= वह
न	= { नमस्कार नहीं	त्वम्	= आप ही हैं
नमेरन्	= { करें (क्योंकि)		
अनन्त	= हे अनन्त		

अनन्तरूप

परमेश्वर की
 स्तुति और
 बारम्बार नम-
 स्कार ।

त्वमादिदेवः पुरुषः पुराण-

स्त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम् ।

वेत्तासि वेद्यं च परं च धाम

त्वया ततं विश्वमनन्तरूप ॥ ३८ ॥

त्वम्, आदिदेवः, पुरुषः, पुराणः, त्वम्, अस्य, विश्वस्य, परम्, निधानम्, वेत्ता, असि, वेद्यम्, च, परम्, च, धाम, त्वया, ततम्, विश्वम्, अनन्तरूप ॥३८॥

और हे प्रभो-

त्वम्	= आप	(तथा)
आदिदेवः	= आदिदेव (और)	वेद्यम् = जानने योग्य
पुराणः	= सनातन	च = और
पुरुषः	= पुरुष हैं	परम् = परम
त्वम्	= आप	धाम = धाम
अस्य	= इस	असि = हैं
विश्वस्य	= जगत्के	अनन्तरूप = हे अनन्तरूप
परम्	= परम	त्वया = आपसे (यह सब)
निधानम्	= आश्रय	विश्वम् = जगत्
च	= और	ततम् = { व्याप्त अर्थात्
वेत्ता	= जाननेवाले	{ परिपूर्ण है

[,,]

वायुर्यमोऽग्निर्वरुणः शशाङ्कः

प्रजापतिस्त्वं प्रपितामहश्च ।

नमो नमस्तेऽस्तु सहस्रकृत्वः

पुनश्च भूयोऽपि नमो नमस्ते ॥३९॥

वायुः, यमः, अग्निः, वरुणः, शशाङ्कः, प्रजापतिः, त्वम्, प्रपितामहः, च, नमः, नमः, ते, अस्तु, सहस्रकृत्वः, पुनः, च, भूयः, अपि, नमः, नमः, ते ॥३९॥

और हे हरे-

त्वम् = आप | वायुः = वायु

यमः	= यमराज	सहस्रकृत्वः	= हजारों बार
अग्निः	= अग्नि	नमः	= नमस्कार
वरुणः	= वरुण	नमः	= नमस्कार
शशाङ्कः	= चन्द्रमा (तथा)	अस्तु	= होवे
प्रजापतिः	= { प्रजाके स्वामी ब्रह्मा	ते	= आपके लिये
च	= और	भूयः	= फिर
प्रपितामहः	= ब्रह्माके भी पिता	अपि	= भी
(असि)	= हैं	पुनः च	= बारम्बार
ते	= आपके लिये	नमः	= नमस्कार
		नमः	= नमस्कार (होवे)

सर्व ओरसे
भगवान् को
नमस्कार और
उनकी अनन्त
सामर्थ्यका कथन

नमः पुरस्तादथ पृष्ठतस्ते
नमोऽस्तु ते सर्वत एव सर्व ।

अनन्तवीर्यामितविक्रमस्त्वं

सर्वं समाप्नोषि ततोऽसि सर्वः ॥४०॥

नमः, पुरस्तात्, अथ, पृष्ठतः, ते, नमः, अस्तु, ते, सर्वतः,
एव, सर्व, अनन्तवीर्य, अमितविक्रमः, त्वम्, सर्वम्,
समाप्नोषि, ततः, असि, सर्वः ॥४०॥

और—

अनन्तवीर्यं	= { हे अनन्त सामर्थ्यवाले	नमः	= नमस्कार होवे
ते	= आपके लिये	सर्व	= हे सर्वात्मन्
पुरस्तात्	= आगेसे	ते	= आपके लिये
अथ	= और	सर्वतः	= सब ओरसे
पृष्ठतः	= पीछेसे भी	एव	= ही
		नमः	= नमस्कार

अस्तु	= होवे (क्योंकि)	समाप्नोषि	= { व्याप्त किये हुए हैं
अमित-	= { अनन्त	ततः	= इससे (आप ही)
विक्रमः	= { पराक्रमशाली	सर्वः	= सर्वरूप
त्वम्	= आप	असि	= हैं
सर्वम्	= सब संसारको		

अपराधक्षमाके
लिये अर्जुनकी
प्रार्थना ।

सखेति मत्वा प्रसभं यदुक्तं

हे कृष्ण हे यादव हे सखेति ।

अजानता महिमानं तवेदं

मया प्रमादात्प्रणयेन वापि ॥४१॥

सखा, इति, मत्वा, प्रसभम्, यत्, उक्तम्, हे कृष्ण,
हे यादव, हे सखे, इति, अजानता, महिमानम्, तव,
इदम्, मया, प्रमादात्, प्रणयेन, वा, अपि ॥४१॥

हे परमेश्वर-

सखा	= सखा	वा	= अथवा
इति	= ऐसे	प्रमादात्	= प्रमादसे
मत्वा	= मानकर	अपि	= भी
तव	= आपके	हे कृष्ण	= हे कृष्ण
इदम्	= इस	हे यादव	= हे यादव
महिमानम्	= प्रभावको	हे सखे	= हे सखे
अजानता	= न जानते हुए	इति	= इस प्रकार
मया	= मेरेद्वारा	यत्	= जो (कुछ)
प्रणयेन	= प्रेमसे	प्रसभम्	= हठपूर्वक
		उक्तम्	= कहा गया है

[„]

यच्चावहासार्थमसत्कृतोऽसि

विहारशय्यासनभोजनेषु ।

एकोऽथवाप्यच्युत तत्समक्षं

तत्क्षामये त्वामहमप्रमेयम् ॥४२॥

यत्, च, अवहासार्थम्, असत्कृतः, असि,
 विहारशय्यासनभोजनेषु, एकः, अथवा, अपि, अच्युत,
 तत्समक्षम्, तत्, क्षामये, त्वाम्, अहम्, अप्रमेयम् ॥४२॥

च = और

अपि = भी

अच्युत = हे अच्युत

यत् = जो (आप)

असत्कृतः = { अपमानित
किये गयेअव-
हासार्थम् } = हंसीके लिये

असि = हैं

{ विहार
शय्या
आसन
भोजनेषु } = { विहार शय्या
आसन और
भोजनादिकोंमें

तत् = वह (सब अपराध)

अप्रमेयम् = { अप्रमेयस्वरूप
अर्थात् अचिन्त्य
प्रभाववाले

एकः = अकेले

अथवा = अथवा

त्वाम् = आपसे

तत्समक्षम् = { उन सखाओं-
के सामने

अहम् = मैं

क्षामये = क्षमा कराता हूँ

भगवान्के
अतिशय प्रभाव-
का कथन ।

पितासि लोकस्य चराचरस्य

त्वमस्य पूज्यश्च गुरुर्गरीयान् ।

न त्वत्समोऽस्त्यभ्यधिकः कुतोऽन्यो

लोकत्रयेऽप्यप्रतिमप्रभाव

॥४३॥

पिता, असि, लोकस्य, चराचरस्य, त्वम्, अस्य, पूज्यः, च, गुरुः, गरीयान्, न, त्वत्समः, अस्ति, अभ्यधिकः, कुतः, अन्यः, लोकत्रये, अपि, अप्रतिमप्रभाव ॥ ४३ ॥

हे विश्वेश्वर—

त्वम्	= आप	अप्रतिम-	= { हे अतिशय
अस्य	= इस	प्रभाव	= { प्रभाववाले
चराचरस्य	= चराचर	लोकत्रये	= तीनों लोकोंमें
लोकस्य	= जगत्के	त्वत्समः	= आपके समान
पिता	= पिता	अपि	= भी
च	= और	अन्यः	= दूसरा कोई
गरीयान्	= गुरुसे भी बड़े	न	= नहीं
गुरुः	= गुरु (एवं)	अस्ति	= है (फिर)
पूज्यः	= अति पूजनीय	अभ्यधिकः	= अधिक
असि	= हैं	कुतः	= कैसे (होवे)

प्रसन्न होनेके
लिये और
अपराध सहनेके
लिये अर्जुनकी
प्रार्थना ।

तस्मात्प्रणम्य प्रणिधाय कायं

प्रसादये त्वामहमीशमीड्यम् ।

पितेव पुत्रस्य सखेव सख्युः

प्रियः प्रियायार्हसि देव सोढुम् ॥ ४४ ॥

तस्मात्, प्रणम्य, प्रणिधाय, कायम्, प्रसादये, त्वाम्, अहम्, ईशम्, ईड्यम्, पिता, इव, पुत्रस्य, सखा, इव, सख्युः, प्रियः, प्रियायाः, अर्हसि, देव, सोढुम् ॥ ४४ ॥

तस्मात्	= इससे (हे प्रभो)	प्रणिधाय=	{ अच्छी प्रकार
अहम्	= मैं		{ चरणोंमें रखके
कायम्	= शरीरको		(और)

प्रणम्य	= प्रणाम करके	सखा	= सखा
ईड्यम्	= स्तुति करने योग्य	इव	= जैसे
त्वाम्	= आप	सख्युः	= सखाके (और)
ईशम्	= ईश्वरको	प्रियः	= पति
प्रसादये	= { प्रसन्न होनेके लिये प्रार्थना करता हूँ	(इव)	= जैसे
देव	= हे देव	प्रियायाः	= प्रिय स्त्रीके (वैसेही आप भी)
पिता	= पिता	(मम)	= मेरे
इव	= जैसे	(अपराधम्)	= अपराधको
पुत्रस्य	= पुत्रके (और)	सोढुम्	= सहन करनेकेलिये
		अर्हसि	= योग्य हैं

चतुर्भुजरूप
दिखानेके लिये
अर्जुनकी प्रार्थना

अदृष्टपूर्वं हृषितोऽस्मि दृष्ट्वा
भयेन च प्रव्यथितं मनो मे ।
तदेव मे दर्शय देव रूपं
प्रसीद देवेश जगन्निवास ॥४५॥

अदृष्टपूर्वम्, हृषितः, अस्मि, दृष्ट्वा, भयेन, च, प्रव्यथितम्,
मनः, मे, तत्, एव, मे, दर्शय, देव, रूपम्, प्रसीद,
देवेश, जगन्निवास ॥ ४५ ॥

हे विश्वमूर्ते मैं—

अदृष्ट-	= { पहिलेन देखे हुए	अस्मि	= हूँ (और)
पूर्वम्	= { आश्चर्यमय आपके	मे	= मेरा
	= इस रूपको	मनः	= मन
दृष्ट्वा	= देखकर	भयेन	= भयसे
हृषितः	= हर्षित हो रहा		

प्रव्यथितम् =	{ अति व्याकुल	एव	= ही
च	{ भी हो रहा है	मे	= मेरे लिये
(अतः)	= इसलिये	दर्शय	= दिखाइये
देव	= हे देव (आप)	देवेश	= हे देवेश
तत्	= उस	जगन्निवास	= हे जगन्निवास
	(अपने चतुर्भुज)	प्रसीद	= प्रसन्न होइये
रूपम्	= रूपको		

[„]

किरीटिनं गदिनं चक्रहस्त-

मिच्छामि त्वां द्रष्टुमहं तथैव ।

तेनैव रूपेण चतुर्भुजेन

सहस्रबाहो भव विश्वमूर्ते ॥ ४६ ॥

किरीटिनम्, गदिनम्, चक्रहस्तम्, इच्छामि, त्वाम्, द्रष्टुम्, अहम्, तथा, एव, तेन, एव, रूपेण, चतुर्भुजेन, सहस्रबाहो, भव, विश्वमूर्ते ॥ ४६ ॥

और हे विष्णो-

अहम्	= मैं	इच्छामि	= चाहता हूँ
तथा	= वैसे	(अतः)	= इसलिये
एव	= ही	विश्वमूर्ते	= हे विश्वस्वरूप
त्वाम्	= आपको	सहस्रबाहो	= हे सहस्रबाहो
			(आप)
किरीटिनम्	= { मुकुट धारण	तेन	= उस
	{ किये हुए (तथा)	एव	= ही
गदिनम्	= { गदा और चक्र	चतुर्भुजेन	= चतुर्भुज
चक्रहस्तम्	= { हाथमें लिये हुए	रूपेण	= रूपसे (युक्त)
द्रष्टुम्	= देखना	भव	= होइये

श्रीभगवानुवाच

भगवान्के
द्वारा अपने विश्व
रूपकी प्रशंसा।

मया प्रसन्नेन तवार्जुनेदं
रूपं परं दर्शितमात्मयोगात् ।

तेजोमयं विश्वमनन्तमाद्यं

यन्मे त्वदन्येन न दृष्टपूर्वम् ॥ ४७ ॥

मया, प्रसन्नेन, तव, अर्जुन, इदम्, रूपम्, परम्, दर्शितम्,
आत्मयोगात्, तेजोमयम्, विश्वम्, अनन्तम्, आद्यम्, यत्,
मे, त्वदन्येन, न, दृष्टपूर्वम् ॥ ४७ ॥

इस प्रकार अर्जुनकी प्रार्थनाको सुनकर श्रीकृष्ण भगवान् बोले-

अर्जुन	= हे अर्जुन	(और)
प्रसन्नेन	= अनुग्रहपूर्वक	अनन्तम् = सीमारहित
मया	= मैंने	विश्वम् = विराट्
आत्मयोगात्	= { अपनी योगशक्तिके प्रभावसे	रूपम् = रूप
इदम्	= यह	तव = तेरेको
मे	= मेरा	दर्शितम् = दिखाया है
परम्	= परम	यत् = जो (कि)
तेजोमयम्	= तेजोमय	त्वदन्येन = { तेरे सिवाय दूसरेसे
आद्यम्	= सबका आदि	न = { पहिले नहीं दृष्टपूर्वम् = { देखा गया

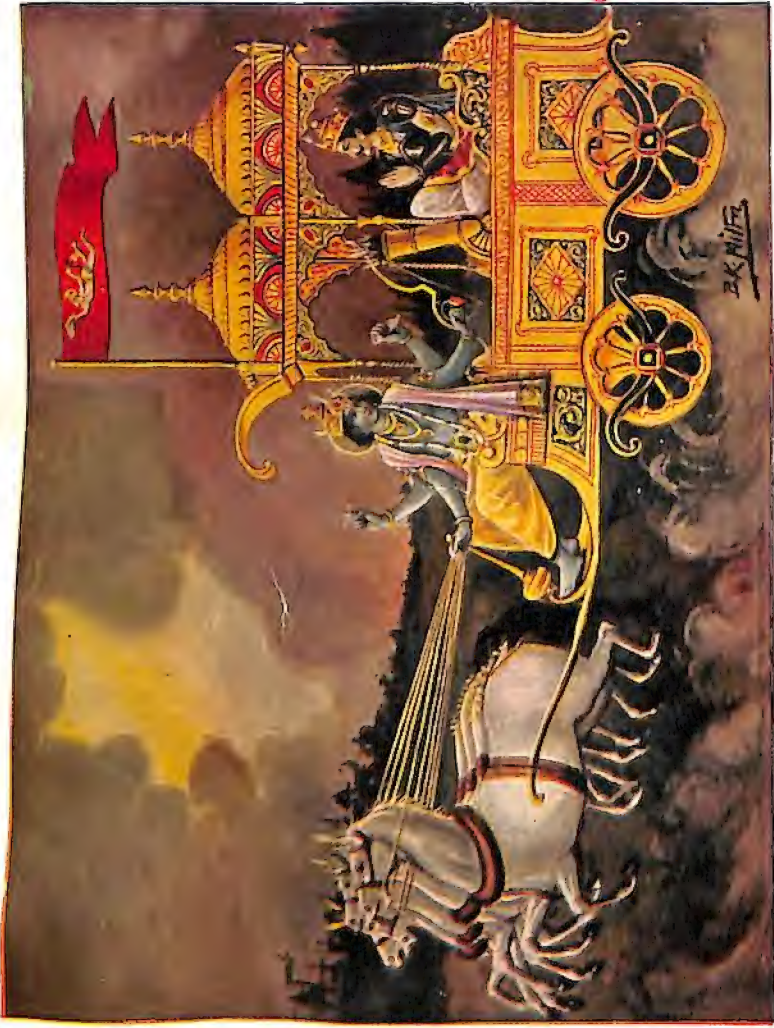
[, ,]

न वेदयज्ञाध्ययनैर्न दानै-
र्न च क्रियाभिर्न तपोभिरुग्रैः ।

एवंरूपः शक्य अहं नृलोके

द्रष्टुं त्वदन्येन कुरुप्रवीर ॥ ४८ ॥

भक्त्या त्वनन्यया शक्य अहमेवाविधोऽर्जुन । ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परंतप ॥



मत्कर्मकृन्मत्परमो मद्भक्तः सङ्गवर्जितः । निर्वरः सर्वभूतेषु यः स मामेति पाण्डव ॥

न, वेदयज्ञाध्ययनैः, न, दानैः, न, च, क्रियाभिः, न, तपोभिः,
उग्रैः, एवंरूपः, शक्यः, अहम्, नृलोके, द्रष्टुम्,
त्वदन्येन, कुरुप्रवीर ॥४८॥

कुरुप्रवीर	= हे अर्जुन	न	= न
नृलोके	= मनुष्यलोकमें	क्रियाभिः	= क्रियाओंसे
एवंरूपः	= { इस प्रकार विश्वरूपवाला	च	= और
अहम्	= मैं	न	= न
न	= न	उग्रैः	= उग्र
वेद-	= { वेद और यज्ञों- के अध्ययनसे (तथा)	तपोभिः	= तपोंसे (ही)
यज्ञाध्ययनैः		त्वदन्येन	= { तेरे सिवाय दूसरेसे
न	= न	द्रष्टुम्	= देखा जानेको
दानैः	= दानसे (और)	शक्यः	= शक्य हूँ

अर्जुनको धीरज
देकर अपना
चतुर्भुज रूप
दिखाना ।

मा ते व्यथा मा च विमूढभावो
दृष्ट्वा रूपं घोरमीदृजमेदम् ।
व्यपेतभीः प्रीतमनाः पुनस्त्वं
तदेव मे रूपमिदं प्रपश्य ॥४९॥

मा, ते, व्यथा, मा, च, विमूढभावः, दृष्ट्वा, रूपम्, घोरम्,
ईदृक्, मम, इदम्, व्यपेतभीः, प्रीतमनाः, पुनः, त्वम्, तत्,
एव, मे, रूपम्, इदम्, प्रपश्य ॥४९॥

ईदृक्	= इस प्रकारके	घोरम्	= विकराल
मम	= मेरे	रूपम्	= रूपको
इदम्	= इस	दृष्ट्वा	= देखकर

ते	= तेरेको	तत्	= उस
व्यथा	= व्याकुलता	एव	= ही
मा	= न होवे	मे	= मेरे
च	= और	इदम्	= इस
विमूढभावः	= मूढ़भाव (भी)	रूपम्	= { (शङ्ख चक्र गदा पद्मसहित चतुर्भुज) रूपको
मा	= न होवे (और)	पुनः	= फिर
व्यपेतभीः	= भयरहित	प्रपश्य	= देख
प्रीतमनाः	= { प्रीतियुक्त मनवाला		
त्वम्	= तू		

संजय उवाच

चतुर्भुजरूप
दिखाने के
उपरान्त सौम्य-
रूप होकर
अर्जुनको पुनः
धीरज देना ।

इत्यर्जुनं वासुदेवस्तथोक्त्वा
स्वकं रूपं दर्शयामास भूयः ।
आश्वासयामास च भीतमेनं
भूत्वा पुनः सौम्यवपुर्महात्मा ॥५०॥

इति, अर्जुनम्, वासुदेवः, तथा, उक्त्वा, स्वकम्, रूपम्,
दर्शयामास, भूयः, आश्वासयामास, च, भीतम्, एनम्,
भूत्वा, पुनः, सौम्यवपुः, महात्मा ॥५०॥

उसके उपरान्त संजय बोला हे राजन्—

वासुदेवः	= { वासुदेव भगवान्ने	भूयः	= फिर
अर्जुनम्	= अर्जुनके प्रति	तथा	= वैसे ही
इति	= इस प्रकार	स्वकम्	= अपने
उक्त्वा	= कहकर	रूपम्	= चतुर्भुजरूपको
		दर्शयामास	= दिखाया

च	= और	एनम्	= इस
पुनः	= फिर	भीतम्	= { भयभीत हुए
महात्मा	= महात्मा कृष्णने	अर्जुनको	
सौम्यवपुः	= सौम्यमूर्ति	आश्वास-	} = धीरज दिया
भूत्वा	= होकर	यामास	

अर्जुन उवाच

भगवान्के मनुष्यरूप को देखकर अर्जुन-का शान्त चित्त होना ।
 दृष्ट्वेदं मानुषं रूपं तव सौम्यं जनार्दन ।
 इदानीमस्मि संवृत्तः सचेताः प्रकृतिं गतः ॥५१॥
 दृष्ट्वा, इदम्, मानुषम्, रूपम्, तव, सौम्यम्, जनार्दन,
 इदानीम्, अस्मि, संवृत्तः, सचेताः, प्रकृतिम्, गतः ॥५१॥

उसके उपरान्त अर्जुन बोला-

जनार्दन	= हे जनार्दन	इदानीम्	= अब (मैं)
तव	= आपके	सचेताः	= शान्तचित्त
इदम्	= इस	संवृत्तः	= हुआ
सौम्यम्	= अतिशान्त	प्रकृतिम्	= { अपने
मानुषम्	= मनुष्य		स्वभावको
रूपम्	= रूपको	गतः	= प्राप्त हो गया
दृष्ट्वा	= देखकर	अस्मि	= हैं

श्रीभगवानुवाच

चतुर्भुजरूपके सुदुर्दर्शमिदं रूपं दृष्टवानसि यन्मम ।
 दर्शन की देवा अप्यस्य रूपस्य नित्यं दर्शनकाङ्क्षिणः ॥५२॥
 दुर्लभता और सुदुर्दर्शम्, इदम्, रूपम्, दृष्टवानसि, यत्, मम,
 प्रभावका कथना देवाः, अपि, अस्य, रूपस्य, नित्यम्, दर्शनकाङ्क्षिणः ॥५२॥

इस प्रकार अर्जुनके वचनको सुनकर श्रीकृष्ण भगवान् बोले हे अर्जुन—

मम	= मेरा	(यतः)	= क्योंकि
इदम्	= यह	देवाः	= देवता
रूपम्	= (चतुर्भुज) रूप	अपि	= भी
सुदुर्दर्शम्	= { देखनेको अति दुर्लभ है (कि)	नित्यम्	= सदा
यत्	= जिसको (तुमने)	अस्य	= इस
दृष्टवानसि	= देखा है	रूपस्य	= रूपके
		दर्शन-	= { दर्शन करनेकी
		काङ्क्षिणः	= { इच्छावाले हैं

। ,] नाहं वेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया ।

शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा ॥५३॥

न, अहम्, वेदैः, न, तपसा, न, दानेन, न, च, इज्यया,
शक्यः, एवंविधः, द्रष्टुम्, दृष्टवानसि, माम्, यथा ॥५३॥

और हे अर्जुन—

न	= न	एवंविधः	= { इस प्रकार चतुर्भुज रूपवाला
वेदैः	= वेदोंसे	अहम्	= मैं
न	= न	द्रष्टुम्	= देखा जानेको
तपसा	= तपसे	शक्यः	= शक्य हूँ (कि)
न	= न	यथा	= जैसे
दानेन	= दानसे	माम्	= मेरेको
च	= और	(त्वम्)	= तुमने
न	= न	दृष्टवानसि	= देखा है
इज्यया	= यज्ञसे		

अनन्यभक्तिसे भक्त्या त्वनन्यया शक्य अहमेवंविधोऽर्जुन ।
 भगवत्-प्राप्तिकी ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परंतप ॥
 सुलभता का भक्त्या, तु, अनन्यया, शक्यः, अहम्, एवंविधः, अर्जुन,
 कथन । ज्ञातुम्, द्रष्टुम्, च, तत्त्वेन, प्रवेष्टुम्, च, परंतप ॥५४॥

परन्तु—

परंतप	= हे श्रेष्ठ तपवाले	तत्त्वेन	= तत्त्वसे
अर्जुन	= अर्जुन	ज्ञातुम्	= जाननेके लिये
अनन्यया	= अनन्य*	च	= तथा
भक्त्या	= भक्तिकरके		
तु	= तो		
एवंविधः	= { इस प्रकार चतुर्भुज रूपवाला	प्रवेष्टुम्	= { प्रवेश करनेके लिये अर्थात् एकीभावसे प्राप्त होनेके लिये
अहम्	= मैं	च	= भी
द्रष्टुम्	= { प्रत्यक्ष देखनेके लिये (और)	शक्यः	= शक्य हूं

अनन्यभक्तके मत्कर्मकृन्मत्परमो मद्भक्तः सङ्गवर्जितः ।
 लक्षण और निर्वैरः सर्वभूतेषु यः स मामेति पाण्डव ॥
 उसको परमात्मा की प्राप्तिका मत्कर्मकृत्, मत्परमः, मद्भक्तः, सङ्गवर्जितः,
 कथन । निर्वैरः, सर्वभूतेषु, यः, सः, माम्, एति, पाण्डव ॥५५॥

पाण्डव = हे अर्जुन | यः = जो पुरुष

❀ अनन्यभक्तिका भाव अगले श्लोकमें विस्तारपूर्वक कहा है ।

मत्कर्मकृत् = { केवल मेरे ही लिये (सब कुछ मेरा समझता हुआ)
यज्ञ दान और तप आदि संपूर्ण कर्तव्यकर्मोंको
करनेवाला है (और)

मत्परमः = { मेरे परायण है अर्थात् मेरेको परम आश्रय और
परम गति मानकर मेरो प्राप्तिके लिये तत्पर
है (तथा)

मद्भक्तः = { मेरा भक्त है अर्थात् मेरे नाम गुण प्रभाव और
रहस्यके श्रवण कीर्तन मनन ध्यान और पठन-
पाठनका प्रेमसहित निष्कामभावसे निरन्तर
अभ्यास करनेवाला है (और)

सङ्गवर्जितः = { आसक्तिरहित है अर्थात् स्त्री पुत्र और धनादि
संपूर्ण सांसारिक पदार्थोंमें स्नेहरहित है (और)

सर्वभूतेषु = संपूर्ण भूतप्राणियोंमें

निर्वैरः = वैरभावसे रहित है* (ऐसा)

सः = वह (अनन्य भक्तिवाला पुरुष)

माम् = मेरेको (ही)

एति = प्राप्त होता है

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां
योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे विश्वरूपदर्शन-
योगो नामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

हरिः ॐ तत्सत् हरिः ॐ तत्सत् हरिः ॐ तत्सत्

* सर्वत्र भगवत्तुद्धि हो जानेसे उस पुरुषका अति अपराध करनेवालेमें
भी वैरभाव नहीं होता है फिर औरोंमें तो कहना ही क्या है ।

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

अथ द्वादशोऽध्यायः

प्रधान विषय—१ से १२ तक साकार और निराकारके उपासकोंकी उत्तमताका निर्णय और भगवत्-प्राप्तिके उपायका विषय । (१३-२०)
भगवत्-प्राप्तिवाले पुरुषोंके लक्षण ।

अर्जुन उवाच

साकार और निराकार के उपासकोंमें कौन श्रेष्ठ है यह जाननेके लिये अर्जुनका प्रश्न ।
एवं सततयुक्ता ये भक्तास्त्वां पर्युपासते ।
ये चाप्यक्षरमव्यक्तं तेषां के योगवित्तमाः ॥ १ ॥
एवम्, सततयुक्ताः, ये, भक्ताः, त्वाम्, पर्युपासते,
ये, च, अपि, अक्षरम्, अव्यक्तम्, तेषाम्, के, योगवित्तमाः ॥ १ ॥
इस प्रकार भगवान्‌के वचनोंको सुनकर अर्जुन बोला हे मनमोहन—

ये	= जो	च	= और
भक्ताः	= { अनन्यप्रेमी भक्तजन	ये	= जो
एवम्	= { इस पूर्वोक्त प्रकारसे	अक्षरम्	= { अविनाशी सच्चिदानन्दघन
सततयुक्ताः	= { निरन्तर आप- के भजन ध्यान- में लगे हुए	अव्यक्तम्	= निराकारको
त्वाम्	= { आप सगुण- रूप परमेश्वरको	अपि	= ही (उपासते हैं)
पर्युपासते	= { अति श्रेष्ठभाव- से उपासते हैं	तेषाम्	= { उन दोनों प्रकारके भक्तोंमें
		योग- वित्तमाः	= { अति उत्तम योगवेत्ता
		के	= कौन हैं

श्रीभगवानुवाच

भगवान्के सगुण
रूपकी उपासना
करनेवालों की
श्रेष्ठताका कथन

मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते ।

श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्ततमा मताः ॥ २ ॥

मयि, आवेश्य, मनः, ये, माम्, नित्ययुक्ताः, उपासते,

श्रद्धया, परया, उपेताः, ते, मे, युक्ततमाः, मताः ॥ २ ॥

इस प्रकार अर्जुनके पूछनेपर श्रीकृष्ण भगवान् बोले हे अर्जुन—

मयि	= मेरेमें	उपेताः	= युक्त हुए
मनः	= मनको	माम्	= { मुझ सगुणरूप
आवेश्य	= एकाग्र करके		= { परमेश्वरको
नित्ययुक्ताः	= { निरन्तर मेरे	उपासते	= भजते हैं
	= { भजन ध्यानमें	ते	= वे
	= { लगे हुए*	मे	= मेरेको
ये	= जो भक्तजन	युक्ततमाः	= { योगियोंमें भी
परया	= अतिशय श्रेष्ठ		= { अति उत्तम योगी
श्रद्धया	= श्रद्धासे	मताः	= मान्य हैं—

अर्थात् उनको मैं अति श्रेष्ठ मानता हूँ ।

निराकार ब्रह्मके
स्वरूपका कथन
और उसकी
उपासना से
भगवत्-प्राप्ति ।

ये त्वक्षरमनिर्देश्यमव्यक्तं पर्युपासते ।

सर्वत्रगमचिन्त्यं च कूटस्थमचलं ध्रुवम् ॥ ३ ॥

संनियम्येन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः ।

ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतहिते रताः ॥ ४ ॥

* अर्थात् गीता अध्याय ११ श्लोक ५५ में लिखे हुए प्रकारसे निरन्तर मेरेमें लगे हुए ।

ये, तु, अक्षरम्, अनिर्देश्यम्, अव्यक्तम्, पर्युपासते,
 सर्वत्रगम्, अचिन्त्यम्, च, कूटस्थम्, अचलम्, ध्रुवम् ॥३॥
 संनियम्य, इन्द्रियग्रामम्, सर्वत्र, समबुद्धयः,
 ते, प्राप्नुवन्ति, माम्, एव, सर्वभूतहिते, रताः ॥४॥

तु	= और	अक्षरम्	= { अविनाशी सच्चिदानन्दघन ब्रह्मको
ये	= जो पुरुष	पर्युपासते	= { निरन्तर एकी- भावसे ध्यान करते हुए उपासते हैं
इन्द्रिय- ग्रामम्	= { इन्द्रियोंके समुदायको	ते	= वे
संनियम्य	= { अच्छी प्रकार वशमें करके	सर्वभूत- हिते रताः	= { संपूर्ण भूतोंके हितमें रत हुए (और)
अचिन्त्यम्	= मन बुद्धिसे परे	सर्वत्र	= सबमें
सर्वत्रगम्	= सर्वव्यापी	समबुद्धयः	= { समानभाववाले योगी (भी)
अनिर्देश्यम्	= { अकथनीय स्वरूप	माम्	= मेरेको
च	= और	एव	= ही
कूटस्थम्	= { सदा एकरस रहनेवाले	प्राप्नुवन्ति	= प्राप्त होते हैं
ध्रुवम्	= नित्य		
अचलम्	= अचल		
अव्यक्तम्	= निराकार		

निराकारकी
उपासना में
कठिन्ता का
कथन ।

क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम् ।

अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्विरवाप्यते ॥ ५ ॥

क्लेशः, अधिकतरः, तेषाम्, अव्यक्तासक्तचेतसाम्,
अव्यक्ता, हि, गतिः, दुःखम्, देहवद्भिः, अवाप्यते ॥५॥

किन्तु—

तेषाम्	= उन	क्लेशः	= { क्लेश अर्थात् परिश्रम
अव्यक्तासक्त- चेतसाम्	= { सच्चिदा- नन्दधन निराकार ब्रह्ममें आसक्त हुए चित्तवाले पुरुषोंके	अधिकतरः	= विशेष है
		हि	= क्योंकि
		देहवद्भिः	= { देहाभि- मानियोंसे
		अव्यक्ता	= अव्यक्तविषयक
		गतिः	= गति
		दुःखम्	= दुःखपूर्वक
	(साधनमें)	अवाप्यते	= प्राप्त की जाती है—

अर्थात् जबतक शरीरमें अभिमान रहता है तबतक शुद्ध
सच्चिदानन्दधन निराकार ब्रह्ममें स्थिति होना कठिन है ।

भगवान्‌के

सगुणरूप की

उपासना का

कथन ।

ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि संन्यस्य मत्पराः ।

अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते ॥ ६ ॥

ये, तु, सर्वाणि, कर्माणि, मयि, संन्यस्य, मत्पराः,

अनन्येन, एव, योगेन, माम्, ध्यायन्तः, उपासते ॥६॥

तु	= और	सर्वाणि	= संपूर्ण
ये	= जो	कर्माणि	= कर्मोंको
मत्पराः	= { मेरे परायण हुए भक्तजन	मयि	= मेरेमें
		संन्यस्य	= अर्पण करके

माम् = { मुझ सगुणरूप
परमेश्वरको

एव = ही

अनन्येन = { (तैलधाराके
सदृश) अनन्य

योगेन = ध्यानयोगसे

ध्यायन्तः = { निरन्तर चिन्तन
करते हुए

उपासते = भजते हैं*

अपने भक्तोंका

शीघ्र उद्धार

करनेके लिये

भगवान् की

प्रतिज्ञा ।

तेषामहं समुद्धर्त्ता मृत्युसंसारसागरात् ।

भवामि नचिरात्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम् ॥७॥

तेषाम्, अहम्, समुद्धर्त्ता, मृत्युसंसारसागरात्,

भवामि, नचिरात्, पार्थ, मयि, आवेशितचेतसाम् ॥ ७ ॥

पार्थ = हे अर्जुन

तेषाम् = उन

मयि = मेरेमें

आवेशित = { चित्तको

चेतसाम् = { लगानेवाले

{ प्रेमी भक्तोंका

अहम् = मैं

नचिरात् = शीघ्र ही

मृत्युसंसार- = { मृत्युरूप
सागरात् = { संसारसमुद्रसे

समुद्धर्त्ता = { उद्धार
करनेवाला

भवामि = होता हूँ

ध्यानसे

भगवत्-प्राप्ति ।

मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय ।

निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशयः ॥८॥

मयि, एव, मनः, आधत्स्व, मयि, बुद्धिम्, निवेशय,

निवसिष्यसि, मयि, एव, अतः, ऊर्ध्वम्, न, संशयः ॥ ८ ॥

इसलिये हे अर्जुन ! तू-

मयि = मेरेमें

मनः = मनको

* इस श्लोकका विशेष भाव जाननेके लिये गीता अध्याय ११ श्लोक

५५ देखना चाहिये ।

आधत्स्व = लगा (और)	मयि = मेरेमें
मयि = मेरेमें	एव = ही
एव = ही	निवासिष्यसि = निवास करेगा
बुद्धिम् = बुद्धिको	अर्थात् मेरेको
निवेशय = लगा	ही प्राप्त होगा
अतः = इसके	(अत्र) = इसमें (कुछ भी)
ऊर्ध्वम् = उपरान्त (तूं)	संशयः = संशय
	न = नहीं है

अभ्यासयोगसे अथ चित्तं समाधातुं न शक्नोषि मयि स्थिरम् ।
भगवत्-प्राप्ति ।

अभ्यासयोगेन ततो मामिच्छाप्तुं धनंजय ॥६॥

अथ, चित्तम्, समाधातुम्, न, शक्नोषि, मयि, स्थिरम्,
अभ्यासयोगेन, ततः, माम्, इच्छ, आप्तुम्, धनंजय ॥ ९ ॥

और—

अथ = यदि (तूं)	ततः = तो
चित्तम् = मनको	धनंजय = हे अर्जुन
मयि = मेरेमें	अभ्यास- = { अभ्यासरूप*
स्थिरम् = अचल	योगेन = { योगके द्वारा
समाधातुम् = { स्थापन	माम् = मेरेको
{ करनेके लिये	आप्तुम् = प्राप्त होनेके लिये
न शक्नोषि = समर्थ नहीं है	इच्छ = इच्छा कर

* भगवान्के नाम और गुणोंका श्रवण कीर्तन मनन तथा श्वासके द्वारा
जप और भगवत्-प्राप्ति-विषयक शास्त्रोंका पठनपाठन इत्यादिक चेष्टायें
भगवत्-प्राप्तिके लिये बारम्बार करनेका नाम अभ्यास है ।

भगवान्‌के लिये
कर्म करनेसे
भगवत्‌-प्राप्ति ।

अभ्यासेऽप्यसमर्थोऽसि मत्कर्मपरमो भव ।

मदर्थमपि कर्माणि कुर्वन्सिद्धिमवाप्स्यसि ॥

अभ्यासे, अपि, असमर्थः, असि, मत्कर्मपरमः, भव,
मदर्थम्, अपि, कर्माणि, कुर्वन्, सिद्धिम्, अवाप्स्यसि ॥१०॥

और यदि तू—

अभ्यासे = { ऊपर कहे हुए अभ्यासमें	भव = हो (इस प्रकार)
अपि = भी	मदर्थम् = मेरे अर्थ
असमर्थः = असमर्थ	कर्माणि = कर्मोंको
असि = है	कुर्वन् = करता हुआ
(तर्हि) = तो	अपि = भी
मत्कर्म- = { केवल मेरे लिये कर्म	सिद्धिम् = { मेरी प्राप्तिरूप सिद्धिको (ही)
परमः = { करनेकेहीपरायण*	अवाप्स्यसि = प्राप्त होगा

सर्व कर्मोंके फल
त्यागसे भगवत्‌-
प्राप्ति ।

अथैतदप्यशक्तोऽसि कर्तुं मद्योगमाश्रितः ।

सर्वकर्मफलत्यागं ततः कुरु यतात्मवान् ॥११॥

अथ, एतत्, अपि, अशक्तः, असि, कर्तुम्, मद्योगम्, आश्रितः,

सर्वकर्मफलत्यागम्, ततः, कुरु, यतात्मवान् ॥११॥

और—

अथ = यदि	अपि = भी
एतत् = इसको	कर्तुम् = करनेके लिये

* स्वार्थको त्यागकर तथा परमेश्वरको ही परम आश्रय और परम गति
समझकर निष्काम प्रेमभावसे सती-शिरोमणि पतिव्रता स्त्रीकी भांति मन,
वाणी और शरीरद्वारा परमेश्वरके ही लिये यज्ञ, दान और तपादि संपूर्ण
कर्तव्य कर्मोंके करनेका नाम “भगवत्‌-अर्थ कर्म करनेके परायण होना” है ।

अशक्तः = असमर्थ	आश्रितः = शरण हुआ
असि = है	
ततः = तो	सर्वकर्म- = { सब कर्मोंके
यतात्म- = { जीते हुए	फलत्यागम् = { फलका मेरे
वान् = { मनवाला (और)	{ लिये त्याग *
मद्योगम् = मेरी प्राप्तिरूप योगके	कुरु = कर

सर्वकर्म-फल
त्यागकी प्रशंसा।

श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासाज्ज्ञानाद्ध्यानं विशिष्यते ।

ध्यानात्कर्मफलत्यागस्त्यागाच्छान्तिरनन्तरम् ॥

श्रेयः, हि, ज्ञानम्, अभ्यासात्, ज्ञानात्, ध्यानम्, विशिष्यते,
ध्यानात्, कर्मफलत्यागः, त्यागात्, शान्तिः, अनन्तरम् ॥ १२ ॥

हि = क्योंकि	ध्यानात् = ध्यानसे भी
(मर्मको न जान-	{ सब कर्मोंके
कर किये हुए)	कर्मफल- = { फलका मेरे
अभ्यासात् = अभ्याससे	त्यागः = { लिये त्याग
ज्ञानम् = परोक्षज्ञान†	{ करना†
श्रेयः = श्रेष्ठ है (और)	(विशिष्यते) = श्रेष्ठ है (और)
ज्ञानात् परोक्षज्ञानसे	त्यागात् = त्यागसे
ध्यानम् = { मुझ परमेश्वरके	अनन्तरम् = तत्काल ही
{ स्वरूपका ध्यान	शान्तिः = { परम शान्ति
विशिष्यते = श्रेष्ठ है (तथा)	{ होती है

* गीता अध्याय ९ श्लोक २७ में इसका विस्तार देखना चाहिये ।

† सुनने और शास्त्रपठन करनेसे परमेश्वरके स्वरूपका जो अनुमान ज्ञान होता है उसीका नाम परोक्षज्ञान है ।

‡ केवल भगवत्-अर्थ कर्म करनेवाले पुरुषका भगवत्में प्रेम और श्रद्धा तथा भगवत्का चिन्तन भी बना रहता है इसलिये ध्यानसे कर्मफलका त्याग श्रेष्ठ कहा है ।

सब भूतोंमें द्वेष
भावसे रहित
और मैत्री आदि
गुणोंसेयुक्तप्रिय
भक्तके लक्षण ।

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च ।

निर्ममो निरहंकारः समदुःखसुखः क्षमी ॥१३॥

अद्वेष्टा, सर्वभूतानाम्, मैत्रः, करुणः, एव, च,
निर्ममः, निरहंकारः, समदुःखसुखः, क्षमी ॥१३॥

इस प्रकार शान्तिको प्राप्त हुआ जो पुरुष-

सर्वभूतानाम् = सब भूतोंमें

अद्वेष्टा = { द्वेषभावसे
रहित (एवं)

मैत्रः = { स्वार्थरहित
सबका प्रेमी

च = और

करुणः = { हेतुरहित
दयालु है
(तथा)

एव = *

निर्ममः = ममतासेरहित (एवं)

निरहंकारः = अहंकारसे रहित

समदुःख- = { सुख दुःखोंकी
सुखः = { प्राप्तिमें सम (और)

क्षमावान् है अर्थात्
अपराध करने-
वालेको भी अभय
देनेवाला है

[„] संतुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चयः ।

मय्यर्पितमनोबुद्धिर्यो मद्भक्तः स मे प्रियः ॥१४॥

संतुष्टः, सततम्, योगी, यतात्मा, दृढनिश्चयः,
मयि, अर्पितमनोबुद्धिः, यः, मद्भक्तः, सः, मे, प्रियः ॥१४॥

तथा-

यः = जो

योगी = { ध्यानयोगमें
युक्त हुआ

सततम् = निरन्तर

संतुष्ट = { लाभ हानिमें
संतुष्ट है (तथा)

यतात्मा = { मन और इन्द्रियों-
सहित शरीरको
वशमें किये हुए

*“एव”शब्द यहाँ सब गुणोंका समुच्चय करनेके लिये समझना चाहिये ।

दृढनिश्चयः = { मेरेमें दृढ़ निश्चयवाला है	अर्पित- = { अर्पण किये हुए मनोबुद्धिः = { मन बुद्धिवाला
सः = वह	मद्भक्तः = मेरा भक्त
मयि = मेरेमें	मे = मेरेको
	प्रियः = प्रिय है

हर्षादि विकारों- यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः ।
से रहित और
सबको अभय हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः ॥१५॥
देनेवाले प्रिय यस्मात्, न, उद्विजते, लोकः, लोकात्, न, उद्विजते, च, यः,
भक्तके लक्षण । हर्षामर्षभयोद्वेगैः, मुक्तः, यः, सः, च, मे, प्रियः ॥१५॥

तथा-

यस्मात् = जिससे	च = तथा
लोकः = कोई भी जीव	यः = जो
न = { उद्वेगको प्राप्त उद्विजते = { नहीं होता है	{ हर्ष = हर्ष अमर्ष = अमर्ष*
च = और	भय = भय (और)
यः = जो (स्वयम् भी)	उद्वेगैः = उद्वेगादिकोंसे
लोकात् = किसी जीवसे	मुक्तः = रहित है
न = { उद्वेगको प्राप्त उद्विजते = { नहीं होता है	सः = वह भक्त
	मे = मेरेको
	प्रियः = प्रिय है

निःस्पृहादि अनपेक्षः शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः ।

गुणोंसे युक्त सर्वत्यागी प्रिय सर्वारम्भपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः ॥१६॥

भक्तके लक्षण ।

* दूसरेकी उन्नतिको देखकर संताप होनेका नाम अमर्ष है ।

अनपेक्षः, शुचिः, दक्षः, उदासीनः, गतव्यथः,
सर्वारम्भपरित्यागी, यः, मद्भक्तः, सः, मे, प्रियः ॥१६॥

और-

यः	= जो पुरुष	उदा-	= { पक्षपातसे रहित
अनपेक्षः	= { आकाङ्क्षासे रहित (तथा)	सीनः	= { (और)
शुचिः	= { बाहर भीतरसे शुद्ध* (और)	गतव्यथः	= { दुःखोंसे छूटा हुआ है
दक्षः	= { चतुर है अर्थात् जिस कामके लिये आया था उसको पूरा कर चुका है (एवं)	सः	= वह
		सर्वारम्भ-	= { सर्व आरम्भों-
		परित्यागी	= { का त्यागी†
		मद्भक्तः	= मेरा भक्त
		मे	= मेरेको
		प्रियः	= प्रिय है

हर्षशोकादि यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न काङ्क्षति ।

विकारोंसे रहित
निष्कामी प्रिय
भक्तके लक्षण ।

शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान्यः स मे प्रियः ॥१७॥

यः, न, हृष्यति, न, द्वेष्टि, न, शोचति, न, काङ्क्षति,
शुभाशुभपरित्यागी, भक्तिमान्, यः, सः, मे, प्रियः ॥१७॥

और-

यः	= जो	न	= न
न	= न (कभी)	द्वेष्टि	= द्वेष करता है
हृष्यति	= हर्षित होता है	न	= न

* गीता अ० १३ श्लोक ७ की टिप्पणीमें इसका विस्तार देखना चाहिये ।

† अर्थात् मन, वाणी और शरीरद्वारा प्रारब्धसे होनेवाले संपूर्ण
स्वाभाविक कर्मोंमें कर्तापनके अभिमानका त्यागी ।

शोचति = शोच करता है

न = न

काङ्क्षति = { कामना करता है (तथा)

यः = जो

शुभाशुभ-परित्यागी = { शुभ और अशुभ संपूर्ण कर्मों के फल का त्यागी है

सः = वह
भक्तिमान् = भक्तियुक्त पुरुष
मे = मेरे को

प्रियः = प्रिय है

शत्रु मित्रादिमें समभाव वाले स्थिरबुद्धि प्रिय भक्तके लक्षण । समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः ।

शीतोष्णसुखदुःखेषु समः सङ्गविवर्जितः ॥१८॥

समः, शत्रौ, च, मित्रे, च, तथा, मानापमानयोः,

शीतोष्णसुखदुःखेषु, समः, सङ्गविवर्जितः ॥१८॥

और जो पुरुष-

शत्रौ = शत्रु
मित्रे = मित्रमें
च = और

मानापमानयोः = { मान अपमानमें

समः = सम है

तथा = तथा

शीतोष्ण-सुख-दुःखेषु = { सर्दी गर्मी और सुखदुःखादिक द्वन्द्वोंमें

समः = सम है

च = और (सब संसारमें)

सङ्ग-विवर्जितः = { आसक्तिसे रहित है

[„] तुल्यनिन्दास्तुतिमौनी संतुष्टो येन केनचित् ।

अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमान्मे प्रियो नरः ॥१९॥

तुल्यनिन्दास्तुतिः, मौनी, संतुष्टः, येन, केनचित्,

अनिकेतः, स्थिरमतिः, भक्तिमान्, मे, प्रियः, नरः ॥१९॥

तथा जो—

तुल्य-	निन्दा स्तुति-	संतुष्टः	= सदा ही संतुष्ट है
	को समान	(और)	!
निन्दास्तुतिः	= { समझनेवाला	अनिकेतः	= { रहनेके स्थानमें
	(और)		{ ममतासेरहित है
मौनी	= { मननशील	(सः)	= वह
	है* (एवं)	स्थिरमतिः	= स्थिर बुद्धिवाला
येन	= { जिस किस	भक्तिमान्	= भक्तिमान्
केनचित्	= { प्रकारसे भी	नरः	= पुरुष
	शरीरका	मे	= मेरेको
	{ निर्वाह होनेमें	प्रियः	= प्रिय है

ऊपरोक्त गुणोंका
संवन करनेवाले
भक्तोंकी महिमा

ये तु धर्म्यामृतमिदं यथोक्तं पर्युपासते ।

श्रद्धधाना मत्परमा भक्तास्तेऽतीव मे प्रियाः॥२०॥

ये, तु, धर्म्यामृतम्, इदम्, यथा, उक्तम्, पर्युपासते,

श्रद्धधानाः, मत्परमाः, भक्ताः, ते, अतीव, मे, प्रियाः॥२०॥

तु	= और	श्रद्धधानाः	= { श्रद्धायुक्तः
ये	= जो		{ पुरुष
मत्परमाः	= { मेरे परायण	इदम्	= इस
	{ हुए†	यथा उक्तम्	= ऊपर कहे हुए

* अर्थात् ईश्वरके स्वरूपका निरन्तर मनन करनेवाला है ।

† अर्थात् मेरेको परम आश्रय और परम गति एवं सबका आत्मरूप और सबसे परे परम पूज्य समझकर विशुद्ध प्रेमसे मेरी प्राप्तिके लिये तत्पर हुए ।

‡ वेद शास्त्र महात्मा और गुरुजनोंके तथा परमेश्वरके वचनोंमें प्रत्यक्षके सदृश विश्वासका नाम श्रद्धा है ।

धर्म्यामृतम्	= { धर्ममय अमृतको	भक्ताः	= भक्त
पर्युपासते	= { निष्काम भावसे सेवन करते हैं	मे	= मेरेको
ते	= वे	अतीव	= अतिशय
		प्रियाः	= प्रिय हैं

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां
योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे भक्तियोगो नाम
द्वादशोऽध्यायः ॥१२॥

अथ त्रयोदशोऽध्यायः

प्रधान विषय—१ से १८ तक ज्ञानसहित क्षेत्रक्षेत्रज्ञका विषय ।
(१९-३४) ज्ञानसहित प्रकृति-पुरुषका विषय ।

श्रीभगवानुवाच

क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ
के स्वरूप का
कथन ।

इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रमित्यभिधीयते ।
एतद्यो वेत्ति तं प्राहुः क्षेत्रज्ञ इति तद्विदः ॥ १ ॥

इदम्, शरीरम्, कौन्तेय, क्षेत्रम्, इति, अभिधीयते,
एतत्, यः, वेत्ति, तम्, प्राहुः, क्षेत्रज्ञः, इति, तद्विदः ॥१॥

उसके उपरान्त श्रीकृष्ण भगवान् फिर बोले—

कौन्तेय	= हे अर्जुन	शरीरम्	= शरीर
इदम्	= यह	क्षेत्रम्	= क्षेत्र है*

* जैसे खेतमें बोये हुए बीजोंका उनके अनुरूप फल समयपर प्रकट होता है वैसे ही इसमें बोये हुए कर्मोंके संस्काररूप बीजोंका फल समयपर प्रकट होता है इसलिये इसका नाम क्षेत्र ऐसा कहा है ।

इति = ऐसे
 अभिधीयते = कहा जाता है
 (और)
 एतत् = इसको
 यः = जो
 वेत्ति = जानता है
 तम् = उसको

क्षेत्रज्ञः = क्षेत्रज्ञ
 इति = ऐसा
 तद्विदः = { उनके तत्त्वको
 जाननेवाले
 ज्ञानीजन
 प्राहुः = कहते हैं

जीवात्मा और परमात्मा की एकता का निरूपण ।
 क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत ।
 क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानं यत्तज्ज्ञानं मतं मम ॥ २ ॥
 क्षेत्रज्ञम्, च, अपि, माम्, विद्धि, सर्वक्षेत्रेषु, भारत,
 क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोः, ज्ञानम्, यत्, तत्, ज्ञानम्, मतम्, मम ॥ २ ॥

च = और
 भारत = हे अर्जुन (तू)
 सर्वक्षेत्रेषु = सब क्षेत्रोंमें
 क्षेत्रज्ञम् = { क्षेत्रज्ञ अर्थात्
 जीवात्मा
 अपि = भी
 माम् = मेरेको ही
 विद्धि = जान *
 (और)

क्षेत्र क्षेत्रज्ञका
 क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोः = { अर्थात् विकार-
 सहित प्रकृतिका
 और पुरुषका
 यत् = जो
 ज्ञानम् = तत्त्वसे जानना है †
 तत् = वह
 ज्ञानम् = ज्ञान है
 (इति) = ऐसा
 मम = मेरा
 मतम् = मत है

* गीता अध्याय १५ श्लोक ७ और उसकी टिप्पणी देखनी चाहिये ।

† गीता अध्याय १३ श्लोक ३ और उसकी टिप्पणी देखनी चाहिये ।

विकारसहित
क्षेत्र और प्रभाव-
सहित क्षेत्रज्ञका
स्वरूप सुननेके
लिये भगवान्की
आज्ञा ।

तत्क्षेत्रं यच्च यादृक्च यद्विकारि यतश्च यत् ।

स च यो यत्प्रभावश्च तत्समासेन मे शृणु ॥ ३ ॥

तत्, क्षेत्रम्, यत्, च, यादृक्, च, यद्विकारि, यतः, च, यत्,
सः, च, यः, यत्प्रभावः, च, तत्, समासेन, मे, शृणु ॥ ३ ॥

इसलिये—

तत्	= वह	च	= तथा
क्षेत्रम्	= क्षेत्र	सः	= वह (क्षेत्रज्ञ)
यत्	= जो है	च	= भी
च	= और	यः	= जो है (और)
यादृक्	= जैसा है	यत्प्रभावः	= { जिस प्रभाव- वाला है
च	= तथा	तत्	= वह सब
यद्विकारि	= { जिन विकारों- वाला है	समासेन	= संक्षेपसे
च	= और	मे	= मेरेसे
यतः	= जिस कारणसे	शृणु	= सुन
यत्	= जो हुआ है		

क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ-
के विषय में
ऋषि, वेद और
ब्रह्मसूत्र का
प्रमाण ।

ऋषिभिर्बहुधा गीतं छन्दोभिर्विविधैः पृथक् ।

ब्रह्मसूत्रपदैश्चैव हेतुमद्भिर्विनिश्चितैः ॥ ४ ॥

ऋषिभिः, बहुधा, गीतम्, छन्दोभिः, विविधैः, पृथक्,
ब्रह्मसूत्रपदैः, च, एव, हेतुमद्भिः, विनिश्चितैः ॥ ४ ॥

यह क्षेत्र और क्षेत्रज्ञका तत्त्व—

ऋषिभिः	= ऋषियोंद्वारा	(च)	= और
बहुधा	= { बहुत प्रकारसे कहा गया है अर्थात्	विविधैः	= नाना प्रकारके
गीतम्	= { समझाया गया है	छन्दोभिः	= वेदमन्त्रोंसे
		पृथक्	= विभागपूर्वक

(गीतम्) = कहा गया है	हेतुमद्भिः = युक्तियुक्त
च = तथा	ब्रह्मसूत्रपदैः = { ब्रह्मसूत्रके पदोंद्वारा
विनिश्चितैः = { अच्छी प्रकार निश्चय किये हुए	एव = भी (वैसे ही कहा गया है)

क्षेत्रके स्वरूप-
का कथन ।

महाभूतान्यहंकारो बुद्धिरव्यक्तमेव च ।

इन्द्रियाणि दशैकं च पञ्च चेन्द्रियगोचराः ॥५॥

महाभूतानि, अहंकारः, बुद्धिः, अव्यक्तम्, एव, च,

इन्द्रियाणि, दश, एकम्, च, पञ्च, च, इन्द्रियगोचराः ॥५॥

और हे अर्जुन ! वही मैं तेरे लिये कहता हूँ कि-

महाभूतानि = { पांच महाभूत*	च = तथा
अहंकारः = अहंकार	दश = दस
बुद्धिः = बुद्धि	इन्द्रियाणि = इन्द्रियां†
च = और	एकम् = एक मन
	च = और
अव्यक्तम् = { मूल प्रकृति अर्थात् त्रिगुणमयी माया	पञ्च = पांच
एव = भी	इन्द्रिय- गोचराः = { इन्द्रियोंके विषय अर्थात् शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध

क्षेत्रके विकारों-
का कथन ।

इच्छा द्वेषः सुखं दुःखं संघातश्चेतना धृतिः ।

एतत्क्षेत्रं समासेन सविकारमुदाहृतम् ॥६॥

* अर्थात् आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथिवीका सूक्ष्मभाव ।

† अर्थात् श्रोत्र, त्वचा, नेत्र, रसना और घ्राण एवं वाक्, हस्त, पाद,
उपस्थ और गुदा ।

इच्छा, द्वेषः, सुखम्, दुःखम्, संघातः, चेतना, धृतिः,
एतत्, क्षेत्रम्, समासेन, सविकारम्, उदाहृतम् ॥६॥

तथा—

इच्छा	= इच्छा	धृतिः	= धृति †
द्वेषः	= द्वेष		(इस प्रकार)
सुखम्	= सुख	एतत्	= यह
दुःखम्	= दुःख (और)	क्षेत्रम्	= क्षेत्र
संघातः	= { स्थूल देहका पिण्ड (एवं)	सविकारम्	= { विकारोंके सहित ‡
चेतना	= चेतनता* (और)	समासेन	= संक्षेपसे
		उदाहृतम्	= कहा गया

ज्ञानके साधनोंमें
अमानित्वादि ९
गुणोंका कथन ।

अमानित्वमदम्भित्वमहिंसा क्षान्तिरार्जवम् ।

आचार्योपासनं शौचं स्थैर्यमात्मविनिग्रहः ॥७॥

अमानित्वम्, अदम्भित्वम्, अहिंसा, क्षान्तिः, आर्जवम्,

आचार्योपासनम्, शौचम्, स्थैर्यम्, आत्मविनिग्रहः ॥७॥

और हे अर्जुन—

अमानित्वम् = { श्रेष्ठताके अभिमानका अभाव	अहिंसा = { प्राणीमात्रको किसी प्रकार भी न सताना (और)
अदम्भित्वम् = { दम्भाचरण- का अभाव	क्षान्तिः = क्षमाभाव

* शरीर और अन्तःकरणकी एक प्रकारकी चेतनशक्ति ।

† गीता अध्याय १८ श्लोक ३३-३४-३५ में देखना चाहिये ।

‡ पांचवें श्लोकमें कहा हुआ तो क्षेत्रका स्वरूप समझना चाहिये
और इस श्लोकमें कहे हुए इच्छादि क्षेत्रके विकार समझने चाहिये ।

(तथा)			
आर्जवम्	= { मन वाणीकी सरलता	शौचम्	= { बाहर भीतर- की शुद्धि*
आचार्यो- पासनम्	= { श्रद्धा भक्ति- सहित गुरुकी सेवा	स्थैर्यम्	= { अन्तःकरण- की स्थिरता
		आत्म- विनिग्रहः	= { मन और इन्द्रि- यों सहित शरीरका निग्रह

ज्ञानके साधनों- इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहंकार एव च ।
में अहंकार के जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम् ॥ ८ ॥
अभावका और इन्द्रियार्थेषु, वैराग्यम्, अनहंकारः, एव, च,
वैराग्यका कथन जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम् ॥ ८ ॥

तथा:-

		(एवं)	
इन्द्रियार्थेषु	= { इस लोक और परलोकके संपूर्ण भोगोंमें	जन्म	= जन्म
वैराग्यम्	= { आसक्तिका अभाव	मृत्यु	= मृत्यु
च	= और	जरा	= जरा (और)
अनहंकारः	= { अहंकारका भी अभाव	व्याधि	= रोग आदिमें
एव		दुःख	= दुःख
		दोष	= दोषोंका
		अनु-	= { बारम्बार
		दर्शनम्	= { विचार करना

* सत्यतापूर्वक शुद्ध व्यवहारसे द्रव्यकी और उसके अन्नसे आहारकी तथा यथायोग्य बर्तावसे आचरणोंकी और जल-मृत्तिकादिसे शरीरकी शुद्धिको बाहरकी शुद्धि कहते हैं तथा राग-द्वेष और कपट आदि विकारोंका नाश होकर अन्तःकरणका स्वच्छ हो जाना भीतरकी शुद्धि कही जाती है।

ज्ञानके साधनोंमें आसक्ति के अभावका और चित्तकी समता-का कथन । असक्तिरनभिष्वङ्गः पुत्रदारगृहादिषु । नित्यं च समचित्तत्वमिष्टानिष्टोपपत्तिषु ॥ ९ ॥ असक्तिः, अनभिष्वङ्गः, पुत्रदारगृहादिषु, नित्यम्, च, समचित्तत्वम्, इष्टानिष्टोपपत्तिषु ॥ ९ ॥

तथा-

पुत्रदार- गृहादिषु	= { पुत्र स्त्री घर और धनादिमें	च	= तथा
असक्तिः	= { आसक्तिका अभाव(और)	इष्टानिष्टोप- पत्तिषु	= { प्रियअप्रिय- की प्राप्तिमें
अनभिष्वङ्गः	= { ममताका न होना	नित्यम्	= सदा ही
		समचित्तत्वम्	= { चित्तका समरहना-

अर्थात् मनके अनुकूल तथा प्रतिकूलके प्राप्त होनेपर हर्ष शोकादि विकारोंका न होना ।

ज्ञानके साधनोंमें अव्यभिचारिणी भक्तिका और एकान्तदेश के सेवनका कथन । मयि चानन्ययोगेन भक्तिरव्यभिचारिणी । विविक्तदेशसेवित्वमरतिर्जनसंसदि ॥ १० ॥ मयि, च, अनन्ययोगेन, भक्तिः, अव्यभिचारिणी, विविक्तदेशसेवित्वम्, अरतिः, जनसंसदि ॥ १० ॥

और-

मयि	= मुझ परमेश्वरमें	अव्यभि- चारिणी	} = अव्यभिचारिणी
अनन्य- योगेन	= { एकीभावसे स्थितिरूप ध्यान- योगके द्वारा	भक्तिः	
		च	= तथा

* केवल एक सर्वशक्तिमान् परमेश्वरको ही अपना स्वामी मानते हुए स्वार्थ और अभिमानका त्याग करके श्रद्धा और भावके सहित परम प्रेमसे भगवान्का निरन्तर चिन्तन करना अव्यभिचारिणी भक्ति है ।

विविक्त- देश- सेवित्वम्	= { एकान्त और शुद्ध देशमें रहनेका स्वभाव (और)	जनसंसदि- अरतिः	= { विषयासक्त मनुष्योंके समुदायमें =प्रेमका न होना
-------------------------------	--	-------------------	---

ज्ञानके साधनोंमें अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं तत्त्वज्ञानार्थदर्शनम् ।
निदिध्यासनका
कथन और ज्ञान एतज्ज्ञानमिति प्रोक्तमज्ञानं यदतोऽन्यथा ॥११॥
साधनों से अध्यात्मज्ञाननित्यत्वम्, तत्त्वज्ञानार्थदर्शनम्,
विपरीत गुणोंको एतत्, ज्ञानम्, इति, प्रोक्तम्, अज्ञानम्, यत्, अतः, अन्यथा ११
अज्ञान बताना ।

तथा-

अध्यात्म- ज्ञान- नित्यत्वम्	= { अध्यात्म- ज्ञानमें* नित्य स्थिति (और)	ज्ञानम् = ज्ञान है † (और) यत् = जो अतः = इससे
तत्त्व- ज्ञानार्थ- दर्शनम्	= { तत्त्वज्ञानके अर्थरूप परमात्माको सर्वत्र देखना	अन्यथा = विपरीत है (तत्) = वह अज्ञानम् = अज्ञान है ‡ इति = ऐसे
एतत्	= यह सब (तो)	प्रोक्तम् = कहा है

* जिस ज्ञानके द्वारा आत्मवस्तु और अनात्मवस्तु जानी जाय उस ज्ञानका नाम अध्यात्मज्ञान है ।

† इस अध्यायके श्लोक ७ से लेकर यहांतक जो साधन कहे हैं वे सब तत्त्वज्ञानकी प्राप्तिमें हेतु होनेसे ज्ञान नामसे कहे गये हैं ।

‡ ऊपर कहे हुए ज्ञानके साधनोंसे विपरीत जो मान, दम्भ, हिंसा आदि हैं वे अज्ञानकी वृद्धिमें हेतु होनेसे अज्ञान नामसे कहे गये हैं ।

जाननेयोग्य

ज्ञेयं यत्तत्प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वामृतमश्नुते ।

परमात्मा के

स्वरूपका वर्णन

अनादिमत्परं ब्रह्म न सत्तन्नासदुच्यते ॥१२॥

करनेकी प्रतिज्ञा ज्ञेयम्, यत्, तत्, प्रवक्ष्यामि, यत्, ज्ञात्वा, अमृतम्, अश्नुते,
और उसके अनादिमत्, परम्, ब्रह्म, न, सत्, तत्, न, असत्, उच्यते ॥१२॥

निर्गुणस्वरूपका

और हे अर्जुन-

वर्णन ।

यत्	= जो	तत्	= वह
ज्ञेयम्	= जाननेके योग्य है	अनादिमत्	= आदिरहित
(च)	= तथा	परम्	= परम
यत्	= जिसको	ब्रह्म	= ब्रह्म
ज्ञात्वा	= जानकर		(अकथनीय होनेसे)
	(मनुष्य)	न	= न
अमृतम्	= परमानन्दको	सत्	= सत्
अश्नुते	= प्राप्त होता है		(कहा जाता है और)
तत्	= उसको	न	= न
प्रवक्ष्यामि =	{ अच्छी प्रकार	असत्	= असत् ही
	{ कहूंगा	उच्यते	= कहा जाता है

परमात्माके

सर्वतःपाणिपादं तत्सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम् ।

विश्वरूप का

कथन ।

सर्वतःश्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति ॥१३॥

सर्वतःपाणिपादम्, तत्, सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम्,

सर्वतःश्रुतिमत्, लोके, सर्वम्, आवृत्य, तिष्ठति ॥१३॥

परन्तु-

तत्	= वह	सर्वतोऽक्षि-	{ सब ओरसे
सर्वतः-	{ सब ओरसे	शिरोमुखम्	{ नेत्र सिर और
पाणिपादम्	= { हाथ पैरवाला		{ मुखवाला
	(एवं)		(तथा)

सर्वतः-	{ सब ओरसे	लोके	= संसारमें
श्रुतिमत =	{ श्रोत्रवाला	सर्वम्	= सबको
(अस्ति) = है		आवृत्य	= व्याप्त करके
(यतः) = क्योंकि (वह)		तिष्ठति	= स्थित है*

परमेश्वरके सगुण और निगुण स्वरूपकी एकताका कथन ।

सर्वेन्द्रियगुणाभासं सर्वेन्द्रियविवर्जितम् ।
 असक्तं सर्वभृच्चैव निर्गुणं गुणभोक्तृ च ॥१४॥

सर्वेन्द्रियगुणाभासम्, सर्वेन्द्रियविवर्जितम्,
 असक्तम्, सर्वभृत्, च, एव, निर्गुणम्, गुणभोक्तृ, च ॥१४॥

और-

सर्वेन्द्रिय-गुणाभासम् =	{ संपूर्ण इन्द्रियों-के विषयोंको जाननेवाला है (परन्तु वास्तवमें)	निर्गुणम्	= गुणोंसे अतीत (हुआ)
सर्वेन्द्रिय-विवर्जितम् =	{ सब इन्द्रियोंसे रहित है	एव	= { भी (अपनी योगमायासे)
च	= तथा	सर्वभृत्	= { सबको धारण पोषण करनेवाला
असक्तम्	= आसक्तिरहित (और)	च	= और
		गुणभोक्तृ	= { गुणोंको भोगनेवाला है

सर्वात्मरूपसे परमात्मा की व्यापकता का कथन ।

बहिरन्तश्च भूतानामचरं चरमेव च ।
 सूक्ष्मत्वात्तद्विज्ञेयं दूरस्थं चान्तिके च तत् ॥१५॥

बहिः, अन्तः, च, भूतानाम्, अचरम्, चरम्, एव, च,
 सूक्ष्मत्वात्, तत्, अविज्ञेयम्, दूरस्थम्, च, अन्तिके, च, तत् ॥

* आकाश जिस प्रकार वायु, अग्नि, जल और पृथिवीका कारणरूप होनेसे उनको व्याप्त करके स्थित है वैसे ही परमात्मा भी सबका कारणरूप होनेसे संपूर्ण चराचर जगत्को व्याप्त करके स्थित है ।

तथा वह परमात्मा—

भूतानाम् = { चराचर सब	तत् = वह
भूतोंके	सूक्ष्मत्वात् = सूक्ष्म होनेसे
वहिः = बाहर	अविज्ञेयम् = अविज्ञेय है*
अन्तः = भीतर परिपूर्ण है	च = तथा
च = और	अन्तिके = अति समीपमें†
चरम् = चर	च = और
अचरम् = अचररूप	दूरस्थम् = दूरमें भी स्थित‡
एव = भी (वही) है	तत् = वही है
च = और	

उत्पत्ति, पालन

और संहार

करनेवाले परमे-

श्वरकेसर्वव्यापी

स्वरूपका कथना

अविभक्तं च भूतेषु विभक्तमिव च स्थितम् ।

भूतभर्तृ च तज्ज्ञेयं ग्रसिष्णु प्रभविष्णु च ॥१६॥

अविभक्तम्, च, भूतेषु, विभक्तम्, इव, च, स्थितम्,

भूतभर्तृ, च, तत्, ज्ञेयम्, ग्रसिष्णु, प्रभविष्णु, च ॥१६॥

च = और (वह)

च = भी

अविभक्तम् = { विभागरहित एक-
रूपसे आकाश-
के सदृश
परिपूर्ण हुआ

भूतेषु = { चराचर संपूर्ण
भूतोंमें
विभक्तम् = पृथक् पृथक्के
इव = सदृश

* जैसे सूर्यकी किरणोंमें स्थित हुआ जल सूक्ष्म होनेसे साधारण मनुष्योंके जाननेमें नहीं आता है वैसे ही सर्वव्यापी परमात्मा भी सूक्ष्म होनेसे साधारण मनुष्योंके जाननेमें नहीं आता है ।

† वह परमात्मा सर्वत्र परिपूर्ण और सर्वका आत्मा होनेसे अत्यन्त समीप है ।

‡ श्रद्धारहित अज्ञानी पुरुषोंके लिये न जाननेके कारण बहुत दूर है ।

स्थितम् = { स्थित* (प्रतीत होता है तथा)	च = और
तत् = वह	प्रसिष्णु = { रुद्ररूपसे संहार करनेवाला
ज्ञेयम् = { जानने योग्य परमात्मा	च = तथा
भूतभर्तृ = { विष्णुरूपसे भूतोंको धारण पोषण करने-वाला	प्रभविष्णु = { ब्रह्मारूपसे सबका उत्पन्न करनेवाला है

ज्ञानद्वारा प्राप्त होने योग्य परमात्माके परम प्रकाश मय स्वरूपका कथन । ज्योतिषामपि तज्ज्योतिस्तमसः परमुच्यते । ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्वस्य विष्ठितम् ॥ ज्योतिषाम्, अपि, तत्, ज्योतिः, तमसः, परम्, उच्यते, ज्ञानम्, ज्ञेयम्, ज्ञानगम्यम्, हृदि, सर्वस्य, विष्ठितम् ॥ १७ ॥

और—

तत् = वह ब्रह्म	(तथा वह परमात्मा)
ज्योतिषाम् = ज्योतिर्योका	ज्ञानम् = बोधस्वरूप (और)
अपि = भी	ज्ञेयम् = { जाननेके योग्य है (एवं)
ज्योतिः = ज्योति† (एवं)	ज्ञानगम्यम् = { तत्त्वज्ञानसे प्राप्त होनेवाला
तमसः = मायासे	
परम् = अति परे	
उच्यते = कहा जाता है	

* जैसे महाकाश विभागरहित स्थित हुआ भी घड़ोंमें पृथक् पृथक्के सदृश प्रतीत होता है वैसे ही परमात्मा सब भूतोंमें एकरूपसे स्थित हुआ भी पृथक् पृथक्की भांति प्रतीत होता है ।

† गीता अध्याय १५ श्लोक १२ में देखना चाहिये ।

(और)

सर्वस्य = सबके

हृदि = हृदयमें

विष्ठितम् = स्थित है

क्षेत्र, ज्ञान और इति क्षेत्रं तथा ज्ञानं ज्ञेयं चोक्तं समासतः ।

ज्ञेयका तत्त्व मद्भक्त एतद्विज्ञाय मद्भावायोपपद्यते ॥१८॥

ज्ञानने से भगवत् प्राप्ति इति, क्षेत्रम्, तथा, ज्ञानम्, ज्ञेयम्, च, उक्तम्, समासतः, होनेका कथन । मद्भक्तः, एतत्, विज्ञाय, मद्भावाय, उपपद्यते ॥१८॥

हे अर्जुन-

इति = इस प्रकार

क्षेत्रम् = क्षेत्र*

तथा = तथा

ज्ञानम् = ज्ञान†

च = और

ज्ञेयम् = { जानने योग्य
परमात्माका
स्वरूप‡

समासतः = संक्षेपसे

उक्तम् = कहा गया

एतत् = इसको

विज्ञाय = तत्त्वसे जानकर

मद्भक्तः = मेरा भक्त

मद्भावाय = मेरे स्वरूपको

उपपद्यते = प्राप्त होता है

प्रकृति पुरुषकी प्रकृतिं पुरुषं चैव विद्वयनादौ उभावपि ।

अनादिता तथा विकारांश्च गुणांश्चैव विद्धि प्रकृतिसंभवान् ॥१९॥

प्रकृतिसे विकार प्रकृतिम्, पुरुषम्, च, एव, विद्धि, अनादी, उभौ, अपि,

और गुणोंकी विकारान्, च, गुणान्, च, एव, विद्धि, प्रकृतिसंभवान् ॥१९॥

और हे अर्जुन-

प्रकृतिम् = { प्रकृति अर्थात् त्रि- च = और
गुणमयी मेरी माया पुरुषम् = जीवात्मा अर्थात् क्षेत्रज्ञ

* श्लोक ५-६ में विकारसहित क्षेत्रका स्वरूप कहा है ।

† श्लोक ७ से ११ तक ज्ञान अर्थात् ज्ञानका साधन कहा है ।

‡ श्लोक १२ से १७ तक ज्ञेयका स्वरूप कहा है ।

उभौ	= इन दोनोंको	गुणान्	= { त्रिगुणात्मक संपूर्ण पदार्थोंको
एव	= ही (तू)	अपि	= भी
अनादी	= अनादि	प्रकृति-	} प्रकृतिसे ही उत्पन्न हुए
विद्धि	= जान	संभवान्	
च	= और	एव	
विकारान्	= { रागद्वेषादि विकारोंको	विद्धि	= जान
च	= तथा		

कार्य-करणकी उत्पत्तिमें प्रकृति की और सुख-दुःखोंके भोगने-में पुरुष की कार्यकरणकर्तृत्वे हेतुः प्रकृतिरुच्यते ।
 पुरुषः सुखदुःखानां भोक्तृत्वे हेतुरुच्यते ॥२०॥
 कार्यकरणकर्तृत्वे, हेतुः, प्रकृतिः उच्यते,
 हेतुताका कथना पुरुषः, सुखदुःखानाम्, भोक्तृत्वे, हेतुः, उच्यते ॥२०॥

क्योंकि—

कार्यकरण-	{ कार्य और करणके * उत्पन्न करनेमें	पुरुषः	= जीवात्मा
कर्तृत्वे		सुखदुः- खानाम् }	= सुखदुःखोंके
हेतुः	= हेतु	भोक्तृत्वे	= { भोक्तापनमें अर्थात् भोगनेमें
प्रकृतिः	= प्रकृति	हेतुः	= हेतु
उच्यते	= कही जाती है (और)	उच्यते	= कहा जाता है

* आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथिवी तथा शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध इनका नाम कार्य है । बुद्धि, अहंकार और मन तथा श्रोत्र, त्वचा, रसना, नेत्र और घ्राण एवं वाक्, हस्त, पाद, उपस्थ और गुदा इन १३ का नाम करण है ।

प्रकृतिके सङ्गसे पुरुषः प्रकृतिस्थो हि भुङ्क्ते प्रकृतिजान्गुणान् ।
 पुरुषको भोग कारणं गुणसङ्गोऽस्य सदसद्योनिजन्मसु ॥२१॥
 और नाना को पुरुषः प्रकृतिस्थः, हि, भुङ्क्ते, प्रकृतिजान्, गुणान्,
 योनियों को कारणम्, गुणसङ्गः, अस्य सदसद्योनिजन्मसु ॥२१॥
 प्राप्ति ।

परन्तु-

प्रकृतिस्थः = { प्रकृतिमें*	(और इन)
स्थित हुआ	गुणसङ्गः = गुणोंका सङ्ग
हि = ही	(एव) = ही
पुरुषः = पुरुष	अस्य = इस जीवात्माके
प्रकृति- = { प्रकृतिसे	सदसद्योनि- = { अच्छी बुरी
जान् = { उत्पन्न हुए	योनियोंमें
गुणान् = { त्रिगुणात्मक	जन्मसु = { जन्म लेनेमें
सब पदार्थोंको	
भुङ्क्ते = भोगता है	कारणम् = कारण है†

पुरुषके स्वरूप-
का निरूपण ।

उपद्रष्टानुमन्ता च भर्ता भोक्ता महेश्वरः ।

परमात्मेति चाप्युक्तो देहेऽस्मिन्पुरुषः परः ॥२२॥

उपद्रष्टा, अनुमन्ता, च, भर्ता, भोक्ता, महेश्वरः,

परमात्मा, इति, च, अपि, उक्तः, देहे, अस्मिन्, पुरुषः, परः ॥२२॥

वास्तवमें तो यह-

पुरुषः = पुरुष | अस्मिन् = इस

* प्रकृति शब्दका अर्थ गीता अ० ७ श्लो० १४ में कही हुई भगवान्की त्रिगुणमयी माया समझना चाहिये ।

† सत्त्वगुणके सङ्गसे देवयोनियों एवं रजोगुणके सङ्गसे मनुष्ययोनियों और तमोगुणके सङ्गसे पशु-पक्षी आदि नीच योनियोंमें जन्म होता है ।

देहे	= देहमें	भर्ता	= { सबको धारण करनेवाला होनेसे भर्ता
(स्थितः)	= स्थित हुआ	भोक्ता	= { जीवरूपसे भोक्ता (तथा)
अपि	= भी	महेश्वरः	= { ब्रह्मादिकोंका भी स्वामी होनेसे महेश्वर
परः	= पर*	च	= और
(एव)	= ही है (केवल)	परमात्मा	= { शुद्ध सच्चिदानन्दघन होनेसे परमात्मा
उपद्रष्टा	= { साक्षी होनेसे उपद्रष्टा	इति	= ऐसा
च	= और	उक्तः	= कहा गया है
अनुमन्ता	= { यथार्थ सम्मति देनेवाला होनेसे अनुमन्ता (एवं)		

प्रकृति पुरुषको तत्त्वसे जाननेका फल । य एवं वेत्ति पुरुषं प्रकृतिं च गुणैः सह ।
सर्वथा वर्तमानोऽपि न स भूयोऽभिजायते ॥२३॥

यः, एवम्, वेत्ति, पुरुषम्, प्रकृतिम्, च, गुणैः, सह,
सर्वथा, वर्तमानः, अपि, न, सः, भूयः, अभिजायते ॥२३॥

एवम्	= इस प्रकार	सह	= सहित
पुरुषम्	= पुरुषको	प्रकृतिम्	= प्रकृतिको
च	= और	यः	= जो मनुष्य
गुणैः	= गुणोंके	वेत्ति	= तत्त्वसे जानता है†

* अर्थात् त्रिगुणमयी मायासे सर्वथा अतीत ।

† दृश्यमात्र संपूर्ण जगत् मायाका कार्य होनेसे क्षणभंगुर, नाशवान्, जड़ और

सः = वह
 सर्वथा = सब प्रकारसे
 वर्तमानः = वर्तता हुआ
 अपि = भी
 भूयः = फिर
 न = नहीं

अभिजायते = { जन्मता है
 अर्थात्
 पुनर्जन्मको
 नहीं प्राप्त
 होता है

ध्यानयोग, ज्ञान-
 योग और कर्म-
 योगसे भगवत्-
 प्राप्तिका कथन। ध्यानेनात्मनि पश्यन्ति केचिदात्मानमात्मना ।
 अन्ये सांख्येन योगेन कर्मयोगेन चापरे ॥२४॥

ध्यानेन, आत्मनि, पश्यन्ति, केचित्, आत्मानम्, आत्मना,
 अन्ये, सांख्येन, योगेन, कर्मयोगेन, च, अपरे ॥२४॥
 हे अर्जुन उस परमपुरुष-

आत्मानम् = परमात्माको	ध्यानेन = ध्यानके द्वारा*
केचित् = { कितने ही	आत्मनि = हृदयमें
= { मनुष्य तो	पश्यन्ति = देखते हैं (तथा)
आत्मना = { शुद्ध हुई	अन्ये = अन्य (कितने ही)
= { सूक्ष्म बुद्धिसे	सांख्येन = ज्ञान†

अनित्य है तथा जीवात्मा नित्य, चेतन, निर्विकार और अविनाशी एवं शुद्ध
 बोधस्वरूप सच्चिदानन्दधन परमात्माका ही सनातन अंश है इस प्रकार
 समझकर संपूर्ण मायिक पदार्थोंके सङ्गका सर्वथा त्याग करके परमपुरुष
 परमात्मामें ही एकीभावसे नित्य स्थित रहनेका नाम उनको तत्त्वसे जानना है।

* जिसका वर्णन गीता अ० ६ में श्लोक ११ से ३२ तक
 विस्तारपूर्वक किया है।

† जिसका वर्णन गीता अ० २ में श्लोक ११ से ३० तक
 विस्तारपूर्वक किया है।

योगेन = योगके द्वारा (देखते हैं) | कर्मयोगेन = { निष्काम कर्म-
च = और { योगके द्वारा*
अपरे = अपर (कितने ही) | (पश्यन्ति) = देखते हैं

महान्पुरुषों- अन्ये त्वेवमजानन्तः श्रुत्वान्येभ्य उपासते ।

के कथनानुसार
उपासना करने-
से भगवत्-प्राप्ति
का कथन ।

तेऽपि चातितरन्त्येव मृत्युं श्रुतिपरायणाः ॥२५॥

अन्ये, तु, एवम्, अजानन्तः, श्रुत्वा, अन्येभ्यः, उपासते,
ते, अपि, च, अतितरन्ति, एव, मृत्युम्, श्रुतिपरायणाः ॥२५॥

तु	= परन्तु	उपासते	= { उपासना करते हैं †
अन्ये	= { इनसे दूसरे	च	= और
	= { अर्थात् जोमन्द बुद्धिवाले पुरुष हैं वे (स्वयम्)	ते	= वे
एवम्	= इस प्रकार	श्रुति-	= { सुननेके परायण
अजानन्तः	= न जानते हुए	परायणाः	= { हुए पुरुष
अन्येभ्यः	= { दूसरोंसे अर्थात्	अपि	= भी
	= { तत्त्वके जानने-वाले पुरुषोंसे	मृत्युम्	= { मृत्युरूप संसार-सागरको
श्रुत्वा	= सुनकर ही	अतितरन्ति	= { निःसन्देह
		एव	= { तर जाते हैं

क्षेत्रक्षेत्रज्ञके यावत्संजायते किञ्चित्सत्त्वं स्थावरजङ्गमम् ।

संयोगसे जगत्-
की उत्पत्तिकी
कथन ।

क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात्तद्विद्धि भरतर्षभ ॥२६॥

* जिसका वर्णन गीता अ० २ श्लोक ४० से अध्यायसमाप्तिपर्यन्त

विस्तारपूर्वक किया है ।

† अर्थात् उन पुरुषोंके कहनेके अनुसार ही श्रद्धासहित तत्पर
हुए साधन करते हैं ।

यावत्, संजायते, किञ्चित्, सत्त्वम्, स्थावरजङ्गमम्,
क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात्, तत्, विद्धि, भरतर्षभ ॥२६॥

भरतर्षभ	= हे अर्जुन	तत्	= उस संपूर्णको (तू)
यावत्	= यावन्मात्र		
किञ्चित्	= जो कुछ भी	क्षेत्रक्षेत्रज्ञ- संयोगात्	= { क्षेत्र और क्षेत्रज्ञके संयोगसे ही (उत्पन्न हुई)
स्थावरजङ्गमम्	= { स्थावर जङ्गम		
सत्त्वम्	= वस्तु		
संजायते	= उत्पन्न होती है	विद्धि	= जान-

अर्थात् प्रकृति और पुरुषके परस्परके सम्बन्धसे ही संपूर्ण
जगत्की स्थिति है, वास्तवमें तो संपूर्ण जगत् नाशवान्
और क्षणभङ्गुर होनेसे अनित्य है ।

अविनाशी समं सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्तं परमेश्वरम् ।

परमेश्वर को
सर्वत्र समभावसे
विनश्यत्स्वविनश्यन्तं यः पश्यति स पश्यति ॥२७॥

स्थित देखने- समम्, सर्वेषु, भूतेषु, तिष्ठन्तम्, परमेश्वरम्,
वालेकी प्रशंसा । विनश्यत्सु, अविनश्यन्तम्, यः, पश्यति, सः, पश्यति ॥२७॥

इस प्रकार जानकर-

यः	= जो पुरुष	परमेश्वरम्	= परमेश्वरको
विनश्यत्सु	= नष्ट होते हुए	समम्	= समभावसे
सर्वेषु	= सब	तिष्ठन्तम्	= स्थित
भूतेषु	= { चराचर भूतोंमें	पश्यति	= देखता है
अविनश्यन्तम्	= नाशरहित	सः	= वही
		पश्यति	= देखता है

परमेश्वरको समं पश्यन्हि सर्वत्र समवस्थितमीश्वरम् ।
 सर्वत्र समभाव- न हिनस्त्यात्मनात्मानं ततो याति परां गतिम् ॥२८॥
 से स्थित देखने- समम्, पश्यन्, हि, सर्वत्र, समवस्थितम्, ईश्वरम्, न,
 का फल । हिनस्ति, आत्मना, आत्मानम्, ततः, याति, पराम्, गतिम् ॥२८॥

हि	= क्योंकि (वह पुरुष)	आत्मना	= अपनेद्वारा
सर्वत्र	= सबमें	आत्मानम्	= आपको
समवस्थितम्	= { समभावसे स्थित हुए	न	= { नष्ट नहीं करता है*
ईश्वरम्	= परमेश्वरको	हिनस्ति	= { करता है*
समम्	= समान	ततः	= इससे (वह)
पश्यन्	= देखता हुआ	पराम्	= परम
		गतिम्	= गतिको
		याति	= प्राप्त होता है

आत्मा को प्रकृत्यैव च कर्माणि क्रियमाणानि सर्वशः ।
 अकर्ता देखने- यः पश्यति तथात्मानमकर्तारं स पश्यति ॥२९॥
 वालेकी प्रशंसा । प्रकृत्या, एव, च, कर्माणि, क्रियमाणानि, सर्वशः,

यः	= जो	प्रकृत्या	= प्रकृतिसे
च	= और	एव	= ही
कर्माणि	= संपूर्ण कर्मोंको	प्रकृत्या	= प्रकृतिसे
सर्वशः	= सब प्रकारसे	एव	= ही
प्रकृत्या	= प्रकृतिसे		
एव	= ही		

क्रियमाणानि	= किये हुए
(पश्यति)	= देखता है†
तथा	= तथा
आत्मानम्	= आत्माको
अकर्तारम्	= अकर्ता
पश्यति	= देखता है

* अर्थात् शरीरका नाश होनेसे अपने आत्माका नाश नहीं मानता है ।

† अर्थात् इस बातको तत्त्वसे समझ लेता है कि प्रकृतिसे उत्पन्न हुए
 संपूर्ण गुण ही गुणोंमें वर्तते हैं ।

सः = वही | पश्यति = देखता है

संसारको यदा भूतपृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति ।

परमात्मा में तत एव च विस्तारं ब्रह्म संपद्यते तदा ॥३०॥

स्थित और यदा, भूतपृथग्भावम्, एकस्थम्, अनुपश्यति,

परमात्मासे ही ततः, एव, च, विस्तारम्, ब्रह्म, संपद्यते, तदा ॥३०॥

उत्पन्न हुआ देखनेका फल । और यह पुरुष-

यदा	= जिस कालमें	ततः	= { उस परमात्माके
भूत-	= { भूतोंके न्यारे	एव	= { संकल्पसे
पृथग्भावम्	= { न्यारे भावको		= ही
एकस्थम्	= { एक परमात्माके	विस्तारम्	= { संपूर्णभूतोंका
	= { संकल्पके	(पश्यति)	= { विस्तार
	= { आधार स्थित	तदा	= { देखता है
अनुपश्यति	= देखता है	ब्रह्म	= { उस कालमें
च	= तथा	संपद्यते	= { सच्चिदानन्द-
			= { घन ब्रह्मको
			= प्राप्त होता है

अविनाशी अनादित्वान्निर्गुणत्वात्परमात्मायमव्ययः ।

परमात्मा गुणा- शरीरस्थोऽपि कौन्तेय न करोति न लिप्यते ॥३१॥

तीत होनेसे न कर्ता है और अनादित्वात्, निर्गुणत्वात्, परमात्मा, अयम्, अव्ययः,

न लिप्यायमान शरीरस्थः, अपि, कौन्तेय, न, करोति, न, लिप्यते ॥३१॥

होता है इस कौन्तेय = हे अर्जुन

विषयका कथना अनादित्वात् = { अनादि

{ होनेसे

(और)

निर्गुणत्वात् = { गुणातीत

{ होनेसे

अयम् = यह

अव्ययः = अविनाशी

परमात्मा	= परमात्मा	न	= न
शरीरस्थः	= { शरीरमें स्थित हुआ	करोति	= करता है (और)
अपि	= भी (वास्तवमें)	न	= न
		लिप्यते	= { लिपायमान होता है

आकाश के यथा सर्वगतं सौक्ष्म्यादाकाशं नोपलिप्यते ।
 दृष्टान्तसे आत्मा सर्वत्रावस्थितो देहे तथात्मा नोपलिप्यते ॥३२॥
 की निलेपताका यथा, सर्वगतम्, सौक्ष्म्यात्, आकाशम्, न, उपलिप्यते,
 कथन । सर्वत्र, अवस्थितः, देहे, तथा, आत्मा, न, उपलिप्यते ॥३२॥

यथा	= जिस प्रकार	सर्वत्र	= सर्वत्र
सर्वगतम्	= { सर्वत्र व्याप्त हुआ (भी)	देहे	= देहमें
आकाशम्	= आकाश	अवस्थितः	= स्थित हुआ (भी)
सौक्ष्म्यात्	= { सूक्ष्म होनेके कारण	आत्मा	= आत्मा
न	= { लिपायमान		(गुणातीत होनेके कारण देहके गुणोंसे)
उपलिप्यते	= { नहीं होता है	न	= { लिपायमान
तथा	= वैसे ही	उपलिप्यते	= { नहीं होता है

सूर्यके दृष्टान्तसे यथा प्रकाशयत्येकः कृत्स्नं लोकमिमं रविः ।
 प्रकाश-स्वरूप क्षेत्रं क्षेत्री तथा कृत्स्नं प्रकाशयति भारत ॥३३॥
 आत्माके अकर्ता- यथा, प्रकाशयति, एकः, कृत्स्नम्, लोकम्, इमम्, रविः,
 पनका कथन । क्षेत्रम्, क्षेत्री, तथा, कृत्स्नम्, प्रकाशयति, भारत ॥३३॥

भारत	= हे अर्जुन	एकः	= एक ही
यथा	= जिस प्रकार	रविः	= सूर्य

इमम्	= इस	क्षेत्री	= एक ही आत्मा
कृत्स्नम्	= संपूर्ण	कृत्स्नम्	= संपूर्ण
लोकम्	= ब्रह्माण्डको	क्षेत्रम्	= क्षेत्रको
प्रकाशयति	= प्रकाशित करता है	प्रकाशयति	= { प्रकाशित करता है—
तथा	= उसी प्रकार		

अर्थात् नित्य बोधस्वरूप एक आत्माकी ही सत्तासे संपूर्ण जड़वर्ग प्रकाशित होता है ।

क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ भूतक्षेत्रज्ञयोरेवमन्तरं ज्ञानचक्षुषा ।
 के भेदको तथा भूतप्रकृतिमोक्षं च ये विदुर्यान्ति ते परम् ॥३४॥
 प्रकृतिसे छूटनेके क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोः, एवम्, अन्तरम्, ज्ञानचक्षुषा,
 उपायको जानने भूतप्रकृतिमोक्षम्, च, ये, विदुः, यान्ति, ते, परम् ॥३४॥
 का फल ।

एवम्	= इस प्रकार	ये	= जो पुरुष
क्षेत्र-	= { क्षेत्र और	ज्ञानचक्षुषा	= ज्ञाननेत्रोंद्वारा
क्षेत्रज्ञयोः	= { क्षेत्रज्ञके	विदुः	= तत्त्वसे जानते हैं
अन्तरम्	= भेदको*	ते	= वे महात्माजन
च	= तथा	परम्	= { परब्रह्म परमात्माको
भूतप्रकृति-	= { विकारसहित	यान्ति	= प्राप्त होते हैं
मोक्षम्	= { प्रकृतिसे छूटने- के उपायको		

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योग-
 शास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे क्षेत्रक्षेत्रज्ञविभागयोगो
 नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

* क्षेत्रको जड़, विकारी, क्षणिक और नाशवान् तथा क्षेत्रज्ञको नित्य,
 चेतन, अविकारी और अविनाशी जानना ही उनके भेदको जानना है ।

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

अथ चतुर्दशोऽध्यायः

प्रधान विषय—१ से ४ तक ज्ञानकी महिमा और प्रकृति-पुरुषसे जगत्की उत्पत्ति । (५-१८) सत्, रज, तम तीनों गुणोंका विषय । (१९-२७) भगवत्-प्राप्तिका उपाय और गुणातीत पुरुषके लक्षण ।

श्रीभगवानुवाच

अति उत्तम परं भूयः प्रवक्ष्यामि ज्ञानानां ज्ञानमुत्तमम् ।
परम ज्ञानको यज्ज्ञात्वा मुनयः सर्वे परां सिद्धिमितो गताः ॥१॥
कथन करनेकी प्रतिष्ठा और परम्, भूयः, प्रवक्ष्यामि, ज्ञानानाम्, ज्ञानम्, उत्तमम्,
उसकी महिमा यत्, ज्ञात्वा, मुनयः, सर्वे, पराम्, सिद्धिम्, इतः, गताः ॥१॥

उसके उपरान्त श्रीकृष्ण भगवान् बोले हे अर्जुन—

ज्ञानानाम् = ज्ञानोंमें भी	ज्ञात्वा = जानकर
उत्तमम् = अति उत्तम	सर्वे = सब
परम् = परम	मुनयः = मुनिजन
ज्ञानम् = ज्ञानको (मैं)	इतः = इस संसारसे
भूयः = फिर (भी)	(मुक्त होकर)
(तेरे लिये)	पराम् = परम
प्रवक्ष्यामि = कहूंगा (कि)	सिद्धिम् = सिद्धिको
यत् = जिसको	गताः = प्राप्त हो गये हैं

[„] इदं ज्ञानमुपाश्रित्य मम साधर्म्यमागताः ।
सर्गेऽपि नोपजायन्ते प्रलये न व्यथन्ति च ॥२॥
इदम्, ज्ञानम्, उपाश्रित्य, मम, साधर्म्यम्, आगताः,
सर्गे, अपि, न, उपजायन्ते, प्रलये, न, व्यथन्ति, च ॥२॥

हे अर्जुन-

इदम्	= इस	सर्गे	= { सृष्टिके
ज्ञानम्	= ज्ञानको		= { आदिमें (पुनः)
उपाश्रित्य	= { आश्रय करके	न	= { उत्पन्न नहीं
	= { अर्थात् धारण	उपजायन्ते	= { होते हैं
	= { करके	च	= और
मम	= मेरे	प्रलये	= प्रलयकालमें
साधर्म्यम्	= स्वरूपको	अपि	= भी
आगताः	= प्राप्त हुए पुरुष	न	= { व्याकुल
		व्यथन्ति	= { नहीं होते हैं-

क्योंकि उनकी दृष्टिमें मुझ वासुदेवसे भिन्न कोई वस्तु है ही नहीं ।

प्रकृति-पुरुषके
संयोगसे सर्व-
भूतोंकी उत्पत्ति-
का कथन ।

मम योनिर्महद्ब्रह्म तस्मिन्गर्भं दधाम्यहम् ।

संभवः सर्वभूतानां ततो भवति भारत ॥३॥

मम, योनिः, महत्, ब्रह्म, तस्मिन्, गर्भम्, दधामि, अहम्,

संभवः, सर्वभूतानाम्, ततः, भवति, भारत ॥ ३ ॥

भारत	= हे अर्जुन	अहम्	= मैं
मम	= मेरी	तस्मिन्	= उस योनिमें
महत्	= { महत् ब्रह्मरूप	गर्भम्	= { चेतनरूप
ब्रह्म	= { प्रकृति अर्थात्		= { बीजको
	= { त्रिगुणमयी माया	दधामि	= स्थापन करता हूं
	= { (संपूर्ण भूतोंकी)	ततः	= { उसजड़चेतन-
	= { योनि है अर्थात्		= { के संयोगसे
योनिः	= { गर्भाधानका	सर्वभूता-	= सब भूतोंकी
	= { स्थान है (और)	नाम् }	

[॥] संभवः = उत्पत्ति | भवति = होती है
 सर्वयोनिषु कौन्तेय मूर्तयः संभवन्ति याः ।
 तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता ॥ ४ ॥
 सर्वयोनिषु, कौन्तेय, मूर्तयः, संभवन्ति, याः,
 तासाम्, ब्रह्म, महत्, योनिः, अहम्, बीजप्रदः, पिता ॥ ४ ॥
 तथा-

कौन्तेय = हे अर्जुन	महद्ब्रह्म = त्रिगुणमयीमाया (तो)
सर्वयोनिषु = { (नानाप्रकारकी) सब योनियोंमें	योनिः = { गर्भको धारण करनेवाली माता है (और)
याः = जितनी	अहम् = मैं
मूर्तयः = { मूर्तियां अर्थात् शरीर	बीजप्रदः = { बीजको स्थापन करनेवाला
संभवन्ति = उत्पन्न होते हैं	पिता = पिता हूँ
तासाम् = उन सबकी	

प्रकृतिसे उत्पन्न सत्त्वं रजस्तम इति गुणाः प्रकृतिसंभवाः ।
 हुए तीनों गुणों- निबध्नन्ति महाबाहो देहे देहिनमव्ययम् ॥ ५ ॥
 द्वारा जीवात्माके
 बांधे जानेका सत्त्वम्, रजः, तमः, इति, गुणाः, प्रकृतिसंभवाः,
 कथन । निबध्नन्ति, महाबाहो, देहे, देहिनम्, अव्ययम् ॥ ५ ॥
 तथा-

महाबाहो = हे अर्जुन	प्रकृति- = { प्रकृतिसे
सत्त्वम् = सत्त्वगुण	संभवाः = { उत्पन्न हुए
रजः = रजोगुण (और)	गुणाः = तीनों गुण
तमः = तमोगुण	अव्ययम् = (इस) अविनाशी
इति = ऐसे (यह)	देहिनम् = जीवात्माको

देहे = शरीरमें | निबध्नन्ति = बांधते हैं

सत्त्वगुणद्वारा
जीवात्माके बांधे
जानेका प्रकार।

तत्र सत्त्वं निर्मलत्वात्प्रकाशकमनामयम् ।

सुखसङ्गेन बध्नाति ज्ञानसङ्गेन चानघ ॥ ६ ॥

तत्र, सत्त्वम्, निर्मलत्वात्, प्रकाशकम्, अनामयम्,

सुखसङ्गेन, बध्नाति, ज्ञानसङ्गेन, च, अनघ ॥ ६ ॥

अनघ = हे निष्पाप

तत्र = उन तीनों गुणोंमें

प्रकाशकम् = प्रकाश करनेवाला

अनामयम् = निर्विकार

सत्त्वम् = सत्त्वगुण (तो)

निर्मल- = { निर्मल होनेके

त्वात् = { कारण

सुख-

सङ्गेन

च

ज्ञान-

सङ्गेन

बध्नाति

= { सुखकी
आसक्तिसे

= और

= { ज्ञानकी आसक्ति-
से अर्थात् ज्ञानके
अभिमानसे

बध्नाति = बांधता है

रजोगुणद्वारा
जीवात्माके बांधे
जानेका प्रकार।

रजो रागात्मकं विद्धि तृष्णासङ्गसमुद्भवम् ।

तन्निबध्नाति कौन्तेय कर्मसङ्गेन देहिनम् ॥ ७ ॥

रजः, रागात्मकम्, विद्धि, तृष्णासङ्गसमुद्भवम्,

तत्, निबध्नाति, कौन्तेय, कर्मसङ्गेन, देहिनम् ॥ ७ ॥

तथा-

कौन्तेय = हे अर्जुन

रागात्मकम् = रागरूप

रजः = रजोगुणको

तृष्णासङ्ग- = { कामना और
समुद्भवम् = { आसक्तिसे
उत्पन्न हुआ

विद्धि = जान

तत् = वह

देहिनम् = { (इस)
जीवात्माको

कर्मसङ्गेन = { कर्मोंकी और
उनके फलकी
आसक्तिसे

निबध्नाति = बांधता है

तमोगुणद्वारा
जीवात्माके बांधे
जानेका प्रकार।

तमस्त्वज्ञानजं विद्धि मोहनं सर्वदेहिनाम् ।
प्रमादालस्यनिद्राभिस्तन्निबध्नाति भारत ॥८॥
तमः, तु, अज्ञानजम्, विद्धि, मोहनम्, सर्वदेहिनाम्,
प्रमादालस्यनिद्राभिः, तत्, निबध्नाति, भारत ॥८॥

तु	= और	विद्धि	= जान
भारत	= हे अर्जुन	तत्	= वह
सर्वदेहिनाम् =	{ सर्वदेहाभि- मानियोंके	(देहिनम्) =	इस जीवात्माको
मोहनम्	= मोहनेवाले	प्रमादाल-	{ प्रमाद*
तमः	= तमोगुणको	स्यनिद्राभिः =	{ आलस्य† और निद्रा- के द्वारा
अज्ञानजम् =	{ अज्ञानसे उत्पन्न हुआ	निबध्नाति	= बांधता है

सुख, कर्म और सत्त्वं सुखे संजयति रजः कर्मणि भारत ।
प्रमादमें तीनों ज्ञानमावृत्य तु तमः प्रमादे संजयत्युत ॥९॥
गुणों द्वारा सत्त्वम्, सुखे, संजयति, रजः, कर्मणि, भारत,
जीवात्मा का ज्ञानम्, आवृत्य, तु, तमः, प्रमादे, संजयति, उत ॥९॥

व्योंकि—

भारत	= हे अर्जुन	कर्मणि	= कर्ममें (लगाता है)
सत्त्वम्	= सत्त्वगुण	(तथा)	
सुखे	= सुखमें	तमः	= तमोगुण
संजयति	= लगाता है (और)	तु	= तो
रजः	= रजोगुण	ज्ञानम्	= ज्ञानको

* इन्द्रियां और अन्तःकरणकी व्यर्थ चेष्टाओंका नाम प्रमाद है ।

† कर्तव्यकर्ममें अप्रवृत्तिरूप निरुधमताका नाम आलस्य है ।

आवृत्य = { आच्छादन करके } उत = भी
 { अर्थात् ढकके }
 प्रमादे = प्रमादमें संजयति = लगाता है

दो गुणोंको रजस्तमश्चाभिभूय सत्त्वं भवति भारत ।
 दवाकर एक रजः सत्त्वं तमश्चैव तमः सत्त्वं रजस्तथा ॥१०॥
 गुणके बढ़नेका
 कथन । रजः, तमः, च, अभिभूय, सत्त्वम्, भवति, भारत,
 रजः, सत्त्वम्, तमः, च, एव, तमः, सत्त्वम्, रजः, तथा ॥१०॥

च	= और	सत्त्वम्	= सत्त्वगुणको
भारत	= हे अर्जुन	(अभिभूय)	= दवाकर
रजः	= रजोगुण (और)	तमः	= तमोगुण
तमः	= तमोगुणको		(बढ़ता है)
अभिभूय	= दवाकर	तथा	= वैसे
सत्त्वम्	= सत्त्वगुण	एव	= ही
भवति	= { होता है अर्थात् } { बढ़ता है }	तमः	= तमोगुण (और)
च	= तथा	सत्त्वम्	= सत्त्वगुणको
रजः	= रजोगुण (और)	(अभिभूय)	= दवाकर
		रजः	= रजोगुण (बढ़ता है)

सत्त्वगुणको सर्वद्वारेषु देहेऽस्मिन्प्रकाश उपजायते ।
 वृद्धिके लक्षण ।

ज्ञानं यदा तदा विद्याद्विवृद्धं सत्त्वमित्युत ॥११॥

सर्वद्वारेषु, देहे, अस्मिन्, प्रकाशः, उपजायते,
 ज्ञानम्, यदा, तदा, विद्यात्, विवृद्धम्, सत्त्वम्, इति, उत ॥११॥

इसलिये—

यदा = जिस कालमें | अस्मिन् = इस

देहे	= देहमें (तथा)	तदा	= उस कालमें
सर्वद्वारेषु	= { अन्तःकरण और इन्द्रियोंमें	इति	= ऐसा
प्रकाशः	= चेतनता	विद्यात्	= जानना चाहिये
(च)	= और	उत	= कि
ज्ञानम्	= बोधशक्ति	सत्त्वम्	= सत्त्वगुण
उपजायते	= उत्पन्न होती है	विवृद्धम्	= बढ़ा है

रजोगुणकी वृद्धिके लक्षण । लोभः प्रवृत्तिरारम्भः कर्मणामशमः स्पृहा ।
रजस्येतानि जायन्ते विवृद्धे भरतर्षभ ॥१२॥

लोभः, प्रवृत्तिः, आरम्भः, कर्मणाम्, अशमः, स्पृहा,
रजसि, एतानि, जायन्ते, विवृद्धे, भरतर्षभ ॥१२॥
और—

भरतर्षभ	= हे अर्जुन	(स्वार्थबुद्धिसे)
रजसि	= रजोगुणके	आरम्भः = आरम्भ (एवं)
विवृद्धे	= बढ़नेपर	अशमः = { अशान्ति अर्थात् मनकी चञ्चलता
लोभः	= लोभ (और)	(और)
प्रवृत्तिः	= { प्रवृत्ति अर्थात् सांसारिक चेष्टा (तथा)	स्पृहा = { विषय-भोगोंकी लालसा
कर्मणाम्	= { सब प्रकारके कर्मोंका	एतानि = यह सब
		जायन्ते = उत्पन्न होते हैं

तमोगुणकी वृद्धिके लक्षण । अप्रकाशोऽप्रवृत्तिश्च प्रमादो मोह एव च ।
तमस्येतानि जायन्ते विवृद्धे कुरुनन्दन ॥१३॥

अप्रकाशः, अप्रवृत्तिः, च, प्रमादः, मोहः, एव, च,
तमसि, एतानि, जायन्ते, विवृद्धे, कुरुनन्दन ॥१३॥

तथा—

कुरुनन्दन	= हे अर्जुन	प्रमादः	= { प्रमाद अर्थात्
तमसि	= तमोगुणके		{ व्यर्थ चेष्टा
विवृद्धे	= बढ़नेपर	च	= और
	(अन्तःकरण		{ निद्रादि अन्तः-
	और इन्द्रियोंमें)	मोहः	= { करणकी मोहिनी
अप्रकाशः	= अप्रकाश (एवं)		{ वृत्तियां
अप्रवृत्तिः	= { कर्तव्यकर्मोंमें	एतानि	= यह सब
	{ अप्रवृत्ति	एव	= ही
च	= और	जायन्ते	= उत्पन्न होते हैं

सत्त्वगुणकी वृद्धिमें मरनेका फल। यदा सत्त्वे प्रवृद्धे तु प्रलयं याति देहभृत् ।
तदोत्तमविदां लोकानमलान्प्रतिपद्यते ॥१४॥

यदा, सत्त्वे, प्रवृद्धे, तु, प्रलयम्, याति, देहभृत् ,
तदा, उत्तमविदाम्, लोकान्, अमलान्, प्रतिपद्यते ॥१४॥

और हे अर्जुन—

यदा	= जब	तु	= तो
देहभृत्	= यह जीवात्मा	उत्तम-	= { उत्तम कर्म
सत्त्वे	= सत्त्वगुणकी	विदाम्	= { करनेवालोंके
प्रवृद्धे	= वृद्धिमें	अमलान्	= { मलरहित अर्थात्
प्रलयम्	= मृत्युको		{ दिव्य स्वर्गादि
याति	= प्राप्त होता है	लोकान्	= लोकोंको
तदा	= तब	प्रतिपद्यते	= प्राप्त होता है

रजोगुण और रजसि प्रलयं गत्वा कर्मसङ्गिषु जायते ।
तमोगुणकी वृद्धि तथा प्रलीनस्तमसि मूढयोनिषु जायते ॥१५॥
में मरनेका फल

रजसि, प्रलयम्, गत्वा, कर्मसङ्गिषु, जायते,
तथा, प्रलीनः, तमसि, मूढयोनिषु, जायते ॥१५॥

और—

रजसि	= { रजोगुण के वढ़नेपर*	तथा	= तथा
प्रलयम्	= मृत्युको	तमसि	= { तमोगुण के वढ़नेपर
गत्वा	= प्राप्त होकर	प्रलीनः	= मरा हुआ पुरुष (कीटपशु आदि)
कर्म-	= { कर्मोंकी आसक्ति-	मूढयोनिषु	= मूढयोनियोंमें
सङ्गिषु	= { वाले मनुष्योंमें	जायते	= उत्पन्न होता है
जायते	= उत्पन्न होता है		

सात्त्विक, राजस
और तामस
कर्मोंका फल ।

कर्मणः सुकृतस्याहुः सात्त्विकं निर्मलं फलम् ।

रजसस्तु फलं दुःखमज्ञानं तमसः फलम् ॥१६॥

कर्मणः, सुकृतस्य, आहुः, सात्त्विकम्, निर्मलम्, फलम्,
रजसः, तु, फलम्, दुःखम्, अज्ञानम्, तमसः, फलम् ॥१६॥

क्योंकि—

सुकृतस्य	= सात्त्विक	आहुः	= कहा है (और)
कर्मणः	= कर्मका	रजसः	= राजस कर्मका
तु	= तो	फलम्	= फल
सात्त्विकम्	= { सात्त्विक अर्थात् सुख ज्ञान और वैराग्यादि	दुःखम्	= दुःख (एवं)
निर्मलम्	= निर्मल	तमसः	= तामस कर्मका
फलम्	= फल	फलम्	= फल
		अज्ञानम्	= अज्ञान (कहा है)

* अर्थात् जिस कालमें रजोगुण बढ़ता है उस कालमें ।

सत्त्वगुणसे ज्ञान सत्त्वात्संजायते ज्ञानं रजसो लोभ एव च ।
 और रजोगुणसे प्रमादमोहौ तमसो भवतोऽज्ञानमेव च ॥१७॥
 लोभ तथा तमो-
 गुणसे प्रमाद, सत्त्वात्, संजायते, ज्ञानम्, रजसः, लोभः, एव, च,
 मोह और अज्ञान- प्रमादमोहौ, तमसः, भवतः, अज्ञानम्, एव, च ॥१७॥
 की उत्पत्ति ।

तथा—

सत्त्वात्	= सत्त्वगुणसे	च	= तथा
ज्ञानम्	= ज्ञान	तमसः	= तमोगुणसे
संजायते	= उत्पन्न होता है	प्रमादमोहौ	= { प्रमाद*और मोह†
च	= और	भवतः	= उत्पन्न होते हैं (और)
रजसः	= रजोगुणसे	अज्ञानम्	= अज्ञान
एव	= निःसन्देह	एव	= भी (होता है)
लोभः	= लोभ (उत्पन्न होता है)		

सात्त्विक, ऊर्ध्व गच्छन्ति सत्त्वस्था मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः ।
 राजस और
 तामस पुरुषोंकी जघन्यगुणवृत्तिस्था अधो गच्छन्ति तामसाः ॥
 गतिका कथन । ऊर्ध्वम्, गच्छन्ति, सत्त्वस्थाः, मध्ये, तिष्ठन्ति, राजसाः,
 जघन्यगुणवृत्तिस्थाः, अधः, गच्छन्ति, तामसाः ॥१८॥

इसलिये—

सत्त्वस्थाः	= { सत्त्वगुणमें स्थित हुए पुरुष	राजसाः	= { रजोगुणमें स्थित राजस पुरुष
ऊर्ध्वम्	= { स्वर्गादि उच्च लोकोंको	मध्ये	= { मध्यमें अर्थात् मनुष्यलोकमें ही
गच्छन्ति	= जाते हैं (और)	तिष्ठन्ति	= रहते हैं (एवं)

*† इसी अध्यायके श्लोक १३ में देखना चाहिये ।

जघन्य- गुण- वृत्तिस्थाः	= { तमोगुणके कार्य- रूप निद्रा प्रमाद और आलस्यादिमें स्थित हुए	अधः = { अधोगतिको अर्थात् कीट पशु आदि नीच योनियोंको
-------------------------------	---	---

तामसाः = तामस पुरुष गच्छन्ति = प्राप्त होते हैं

आत्माको नान्यं गुणेभ्यः कर्तारं यदा द्रष्टानुपश्यति।

अकर्ता और
गुणातीत जानने
से भगवत् प्राप्ति

गुणेभ्यश्च परं वेत्ति मद्भावं सोऽधिगच्छति ॥१६॥

न, अन्यम्, गुणेभ्यः, कर्तारम्, यदा, द्रष्टा, अनुपश्यति,
गुणेभ्यः, च, परम्, वेत्ति, मद्भावम्, सः, अधिगच्छति ॥१९॥

और हे अर्जुन-

यदा	= जिस कालमें	च	= और
द्रष्टा	= द्रष्टा*	गुणेभ्यः	= तीनों गुणोंसे
गुणेभ्यः	= { तीनों गुणोंके सिवाय	परम्	= { अति परेसच्चिदा- नन्दघनस्वरूप मुझ परमात्माको
अन्यम्	= अन्य किसीको	वेत्ति	= तत्त्वसे जानता है
कर्तारम्	= कर्ता	(तदा)	= उस कालमें
न	= नहीं	सः	= वह पुरुष
अनुपश्यति	= देखता है	मद्भावम्	= मेरे स्वरूपको
	अर्थात् गुण ही	अधि-	} = प्राप्त होता है
	गुणोंमें वर्तते हैं†	गच्छति	
	ऐसा देखता है		

* अर्थात् समष्टिचेतनमें एकीभावे स्थित हुआ साक्षी पुरुष।

† त्रिगुणमयी भावासे उत्पन्न हुए अन्तःकरणके सहित इन्द्रियोंका अपने
अपने विषयोंमें विचरना ही गुणोंका गुणोंमें वर्तना है।

[„] गुणानेतानतीत्य त्रीन्देही देहसमुद्भवान् ।

जन्ममृत्युजरादुःखैर्विमुक्तोऽमृतमश्नुते ॥२०॥

गुणान्, एतान्, अतीत्य, त्रीन्, देही, देहसमुद्भवान्,

जन्ममृत्युजरादुःखैः, विमुक्तः, अमृतम्, अश्नुते ॥२०॥

तथा यह—

देही	= पुरुष	जन्म मृत्यु
एतान्	= इन	जन्ममृत्यु- = बृद्धावस्था और
देह-	= स्थूल*शरीरकी उत्पत्तिके कारणरूप	जरादुःखैः = सब प्रकारके
समुद्भवान्		दुःखोंसे
त्रीन्	= तीनों	विमुक्तः = मुक्त हुआ
गुणान्	= गुणोंको	अमृतम् = परमानन्दको
अतीत्य	= उल्लंघन करके	अश्नुते = प्राप्त होता है

अर्जुन उवाच

गुणातीत पुरुषके
विषयमें अर्जुन-
के तीन प्रश्न ।

कैलिङ्गैस्त्रीन्गुणानेतानतीतो भवति प्रभो ।

किमाचारः कथं चैतांस्त्रीन्गुणानतिवर्तते ॥२१॥

कैः, लिङ्गैः, त्रीन्, गुणान्, एतान्, अतीतः, भवति, प्रभो,
किमाचारः, कथम्, च, एतान्, त्रीन्, गुणान्, अतिवर्तते ॥२१॥

इस प्रकार भगवान्के रहस्ययुक्त वचनोंको सुनकर अर्जुनने
पूछा कि हे पुरुषोत्तम—

एतान् = इन

त्रीन् = तीनों

* बुद्धि, अहंकार और मन तथा पांच ज्ञानेन्द्रियां, पांच कर्मेन्द्रियां,
पांच भूत, पांच इन्द्रियोंके विषय, इस प्रकार इन २३ तत्त्वोंका पिण्डरूप यह
स्थूल शरीर प्रकृतिसे उत्पन्न होनेवाले गुणोंका ही कार्य है इसलिये इन
तीनों गुणोंको इसकी उत्पत्तिका कारण कहा है ।

गुणान् = गुणोंसे	(भवति) = होता है (तथा)
अतीतः = अतीत हुआ पुरुष	प्रभो = हे प्रभो (मनुष्य)
कैः = { किन किन	कथम् = किस उपायसे
लिङ्गैः = { लक्षणोंसे (युक्त)	एतान् = इन
भवति = होता है	त्रीन् = तीनों
च = और	गुणान् = गुणोंसे
किमा- = { किस प्रकारके	अतिवर्तते = अतीत होता है
चारः = { आचरणोंवाला	

श्रीभगवानुवाच

पहिले और प्रकाशं च प्रवृत्तिं च मोहमेव च पाण्डव ।

दूसरे प्रश्नके उत्तरमें गुणातीत न द्वेष्टि संप्रवृत्तानि न निवृत्तानि काङ्क्षति ॥२२॥

पुरुषके लक्षणों-का और आचरणों का न, द्वेष्टि, संप्रवृत्तानि, न, निवृत्तानि, काङ्क्षति ॥२२॥
इस प्रकार अर्जुनके पूछनेपर श्रीकृष्ण भगवान् बोले-

पाण्डव = हे अर्जुन (जो पुरुष)	मोहम् = { तमोगुणके कार्य- रूप मोहको }
प्रकाशम् = { सत्त्वगुणके कार्य- रूप प्रकाशको }	एव = भी
च = और	न = न (तो)
प्रवृत्तिम् = { रजोगुणके कार्य- रूप प्रवृत्तिको }	संप्रवृत्तानि = प्रवृत्त होनेपर
च = तथा	द्वेष्टि = बुरा समझता है
	च = और
	न = न

* अन्तःकरण और इन्द्रियादिकोंमें आलस्यका अभाव होकर जो एक प्रकारकी चेतनता होती है उसका नाम प्रकाश है ।

+ निद्रा और आलस्य आदिकी बहुलतासे अन्तःकरण और इन्द्रियोंमें चेतनशक्तिके लय होनेको यहां मोह नामसे समझना चाहिये ।

निवृत्तानि = निवृत्त होनेपर
(उनकी)

काङ्क्षति = { आकाङ्क्षा
करता है*

[„] उदासीनवदासीनो गुणैर्यो न विचाल्यते ।

गुणा वर्तन्ते इत्येव योऽवतिष्ठति नेङ्गते ॥२३॥

उदासीनवत्, आसीनः, गुणैः, यः, न, विचाल्यते,
गुणाः, वर्तन्ते, इति, एव, यः, अवतिष्ठति, न, इङ्गते ॥२३॥

तथा—

यः	= जो	इति	= ऐसा (समझता हुआ)
उदासीनवत्	= साक्षीके सदृश	यः	= जो
आसीनः	= स्थित हुआ		(सच्चिदानन्दधन पर-
गुणैः	= गुणोंके द्वारा		मात्मामें एकीभावसे)
न	= { विचलित	अव-	} = स्थित रहता है (एवं)
विचाल्यते	= { नहीं किया जा सकता है (और)	तिष्ठति	
गुणाः एव	= गुण ही गुणोंमें	न	} = { उस स्थितिसे चलायमान नहीं होता है
वर्तन्ते	= वर्तते हैं†	इङ्गते	

[„] समदुःखसुखः स्वस्थः समलोष्टाश्मकाञ्चनः ।

तुल्यप्रियाप्रियो धीरस्तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः ॥२४॥

* जो पुरुष एक सच्चिदानन्दधन परमात्मामें ही नित्य एकीभावसे स्थित हुआ इस त्रिगुणमयी मायाके प्रपञ्चरूप संसारसे सर्वथा अतीत हो गया है उस गुणातीत पुरुषके अभिमानरहित अन्तःकरणमें तीनों गुणोंके कार्यरूप प्रकाश प्रवृत्ति और मोहादि वृत्तियोंके प्रकट होने और न होनेपर किसी कालमें भी इच्छा द्वेष आदि विकार नहीं होते हैं यही उसके गुणोंसे अतीत होनेके प्रधान लक्षण है ।

† इसी अध्यायके श्लोक १९ की टिप्पणीमें देखना चाहिये ।

समदुःखसुखः, स्वस्थः, समलोष्टाश्मकाञ्चनः,
तुल्यप्रियाप्रियः, धीरः, तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः ॥२४॥

और जो-

स्वस्थः	= { निरन्तर आत्म- भावमें स्थित हुआ	धीरः	= धैर्यवान् है (तथा) { जो प्रिय और
समदुःख- सुखः	= { दुःखसुखको समान समझने- वाला है (तथा)	तुल्य- प्रियाप्रियः	= { अप्रियको बराबर समझता है (और)
सम- लोष्टाश्म- काञ्चनः	= { मिट्टी पत्थर और सुवर्णमें समान भाव- वाला (और)	तुल्य- निन्दात्म- संस्तुतिः	= { अपनी निन्दा स्तुतिमें भी स- मान भाववाला है

[,] मानापमानयोस्तुल्यस्तुल्यो मित्रारिपक्षयोः ।

सर्वारम्भपरित्यागी गुणातीतः स उच्यते ॥२५॥

मानापमानयोः, तुल्यः, तुल्यः, मित्रारिपक्षयोः,

सर्वारम्भपरित्यागी, गुणातीतः, सः, उच्यते ॥२५॥

तथा जो-

मानापमानयोः	= { मान और अपमानमें	सः	= वह { संपूर्ण आरम्भों- में कर्तापनके
तुल्यः	= सम है (एवं)	सर्वारम्भ- परित्यागी	= { अभिमानसे रहित हुआ पुरुष
मित्रारिपक्षयोः	= { मित्र और वैरीके पक्षमें (भी)	गुणातीतः	= गुणातीत उच्यते = कहा जाता है
तुल्यः	= सम है		

तीसरे प्रश्नके मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते ।
 उत्तरमें भगवान् स गुणान्समतीत्यैतान्ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥२६॥
 की अनन्यभक्ति-
 से गुणातीत माम्, च, यः, अव्यभिचारेण, भक्तियोगेन, सेवते,
 होनेका वर्णन । सः, गुणान्, समतीत्य, एतान्, ब्रह्मभूयाय, कल्पते ॥२६॥

च	= और	एतान्	= इन तीनों
यः	= जो पुरुष	गुणान्	= गुणोंको
अव्यभि- चारेण }	= अव्यभिचारी	समतीत्य	= { अच्छी प्रकार उल्लंघन करके
भक्ति- योगेन	= { भक्तिरूप योगके द्वारा*	ब्रह्मभूयाय	= { सच्चिदानन्द- धनब्रह्ममें एकी-
माम्	= मेरेको		भाव होनेके
सेवते	= निरन्तरभजताहै		लिये
सः	= वह	कल्पते	= योग्य होता है

भगवत्स्वरूप-
की महिमा ।

ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाहममृतस्याव्ययस्य च ।
 शाश्वतस्य च धर्मस्य सुखस्यैकान्तिकस्य च ॥२७॥

ब्रह्मणः, हि, प्रतिष्ठा, अहम्, अमृतस्य, अव्ययस्य, च,
 शाश्वतस्य, च, धर्मस्य, सुखस्य, ऐकान्तिकस्य, च ॥२७॥
 तथा हे अर्जुन ! उस-

अव्ययस्य	= अविनाशी	च	= तथा
ब्रह्मणः	= परब्रह्मका	शाश्वतस्य	= नित्य
च	= और	धर्मस्य	= धर्मका
अमृतस्य	= अमृतका	च	= और

* केवल एक सर्वशक्तिमान् परमेश्वर वासुदेव भगवान्को ही अपना
 स्वामी मानता हुआ स्वार्थ और अभिमानको त्यागकर श्रद्धा और भावके
 सहित परम प्रेमसे निरन्तर चिन्तन करनेको अव्यभिचारी भक्तियोग कहते हैं ।

ऐकान्तिकस्य = { अखण्ड
एकरस
सुखस्य = आनन्दका

अहम् = मैं
हि = ही
प्रतिष्ठा = आश्रय हूँ—

अर्थात् उपरोक्त ब्रह्म, अमृत, अव्यय और शाश्वतधर्म तथा ऐकान्तिक सुख, यह सब मेरे ही नाम हैं इसलिये इनका मैं परम आश्रय हूँ।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे गुणत्रयविभागयोगो नाम चतुर्दशोऽध्यायः

अथ पञ्चदशोऽध्यायः

प्रधान विषय—१ से ६ तक संसारवृक्षका कथन और भगवत्-प्राप्तिका उपाय। (७-११) जीवात्माका विषय। (१२-१५) प्रभावसहित परमेश्वरके स्वरूपका विषय। (१६-२०) क्षर अक्षर पुरुषोत्तमका विषय।

श्रीभगवानुवाच

वृक्षरूपसे संसार का वर्णन और उसके जानने-वालेकी महिमा। ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम् ।
छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित् ॥१॥

ऊर्ध्वमूलम्, अधःशाखम्, अश्वत्थम्, प्राहुः, अव्ययम्, छन्दांसि, यस्य, पर्णानि, यः, तम्, वेद, सः, वेदवित् ॥१॥

उसके उपरान्त श्रीकृष्ण भगवान् फिर बोले कि हे अर्जुन—

ऊर्ध्व-मूलम् = { आदिपुरुष
परमेश्वररूप
मूलवाले* (और)

अधः-शाखम् = { ब्रह्मारूप मुख्य
शाखावाले†
(जिस)

* आदिपुरुष नारायण वासुदेव भगवान् ही नित्य और अनन्त तथा सबके आधार होनेके कारण और सबसे ऊपर नित्यधाममें सगुणरूपसे वास करनेके कारण ऊर्ध्वनामसे कहे गये हैं और वे मायापति सर्वशक्तिमान् परमेश्वर ही इस संसाररूप वृक्षके कारण हैं, इसलिये इस संसारवृक्षको ऊर्ध्वमूलवाला कहते हैं।

† उस आदिपुरुष परमेश्वरसे उत्पत्तिवाला होनेके कारण तथा नित्य-

अश्वत्थम् = { संसाररूप पीपलके वृक्षको	तम् = { उस संसाररूप वृक्षको
अव्ययम् = अविनाशी*	यः = जो पुरुष (मूलसहित)
ग्राहुः = कहते हैं (तथा)	वेद = तत्त्वसे जानता है
यस्य = जिसके	सः = वह
छन्दांसि = वेद†	वेदवित् = { वेदके तात्पर्यको जाननेवाला है‡
पर्णानि = पत्ते (कहे गये हैं)	

संसारवृक्षका
विस्तार और
उसको असंग
शस्त्रसे छेदन
करनेके लिये
कथन ।

अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखा

गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः ।

अधश्च मूलान्यनुसंततानि

कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके ॥ २ ॥

अधः, च, ऊर्ध्वम्, प्रसृताः, तस्य, शाखाः, गुणप्रवृद्धाः,
विषयप्रवालाः, अधः, च, मूलानि, अनुसंततानि,
कर्मानुबन्धीनि, मनुष्यलोके ॥ २ ॥

धामसे नीचे ब्रह्मलोकमें वास करनेके कारण हिरण्यगर्भरूप ब्रह्माको परमेश्वर-
की अपेक्षा अधः कहा है और वही इस संसारका विस्तार करनेवाला होनेसे
इसकी मुख्य शाखा है इसलिये इस संसारवृक्षको अधःशाखावाला कहते हैं ।

* इस वृक्षका मूल कारण परमात्मा अविनाशी है तथा अनादिकालसे
इसकी परम्परा चली आती है इसलिये इस संसारवृक्षको अविनाशी कहते हैं ।

† इस वृक्षकी शाखारूप ब्रह्मासे प्रकट होनेवाले और यज्ञादिक कर्मोंके
द्वारा इस संसारवृक्षकी रक्षा और वृद्धिके करनेवाले एवं शोभाको बढ़ानेवाले
होनेसे वेद पत्ते कहे गये हैं ।

‡ भगवान्की योगमायासे उत्पन्न हुआ संसार क्षणभङ्गुर, नाशवान्
और दुःखरूप है, इसके चिन्तनको त्यागकर केवल परमेश्वरका ही नित्य
निरन्तर अनन्य प्रेमसे चिन्तन करना वेदके तात्पर्यको जानना है ।

और हे अर्जुन-

तस्य	= उस संसारवृक्षकी	मनुष्य- लोके	= मनुष्ययोनिमें †
गुण-	{ तीनों गुणरूप	कर्मानु-	{ कर्मोंके अनुसार
प्रवृद्धाः	{ जलके द्वारा बढ़ी हुई (एवं)	बन्धीनि	{ बांधनेवाली
विषय-	{ विषय*भोगरूप	मूलानि	{ अहंता ममता और वासनारूप जड़ें
प्रवालाः	{ कोपलोंवाली	(अपि)	= भी
शाखाः	{ देव मनुष्य और तिर्यक् आदि योनि- रूप शाखायें†	अधः	= नीचे
अधः	= नीचे	च	= और
च	= और	(ऊर्ध्वम्)	= ऊपर
ऊर्ध्वम्	= ऊपर सर्वत्र	अनु-	{ सभी लोकोंमें
प्रसृताः	= फैली हुई हैं (तथा)	संततानि	= { व्याप्त हो रही हैं

* शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध यह पांचों स्थूल देह और इन्द्रियोंकी अपेक्षा सूक्ष्म होनेके कारण उन शाखाओंकी कोपलोंके रूपमें कहे गये हैं।

† मुख्य शाखारूप ब्रह्मासे संपूर्ण लोकोंके सहित देव, मनुष्य और तिर्यक् आदि योनियोंकी उत्पत्ति और विस्तार हुआ है इसलिये उनका यहां शाखाओंके रूपमें वर्णन किया है।

‡ अहंता ममता और वासनारूप मूलोंको केवल मनुष्ययोनिमें कर्मोंके अनुसार बांधनेवाली कहनेका कारण यह है कि अन्य सब योनियोंमें तो केवल पूर्वकृत कर्मोंके फलको भोगनेका ही अधिकार है और मनुष्ययोनिमें नवीन कर्मोंके करनेका भी अधिकार है।

[, ,]

न रूपमस्येह तथोपलभ्यते

नान्तो न चादिर्न च संप्रतिष्ठा ।

अश्वत्थमेनं सुविरूढमूल-

मसङ्गशस्त्रेण दृढेन छित्त्वा ॥ ३ ॥

न, रूपम्, अस्य, इह, तथा, उपलभ्यते, न, अन्तः, न,
च, आदिः, न, च, संप्रतिष्ठा, अश्वत्थम्, एनम्,
सुविरूढमूलम्, असङ्गशस्त्रेण, दृढेन, छित्त्वा ॥ ३ ॥

परन्तु-

अस्य	= इस संसारवृक्षका	आदिः	= आदि है †
रूपम्	= स्वरूप (जैसा कहा है)	च	= और
तथा	= वैसा	न	= न
इह	= यहां (विचारकालमें)	अन्तः	= अन्त है †
न	= नहीं	च	= तथा
उप-	= { पाया जाता है *	न	= न
लभ्यते		संप्रतिष्ठा	= { अच्छी प्रकारसे
(यतः)	= क्योंकि		{ स्थिति ही है §
न	= न (तो इसका)		

* इस संसारका जैसा स्वरूप शास्त्रोंमें वर्णन किया गया है और जैसा देखा सुना जाता है वैसा तत्त्वज्ञान होनेके उपरान्त नहीं पाया जाता जिस प्रकार आंख खुलनेके उपरान्त स्वप्नका संसार नहीं पाया जाता ।

† इसका आदि नहीं है यह कहनेका प्रयोजन यह है कि इसकी परम्परा कबसे चली आती है इसका कोई पता नहीं है ।

‡ इसका अन्त नहीं है यह कहनेका प्रयोजन यह है कि इसकी परम्परा कबतक चलती रहेगी इसका कोई पता नहीं है ।

§ इसकी अच्छी प्रकार स्थिति भी नहीं है यह कहनेका यह प्रयोजन है कि वास्तवमें यह क्षणभंगुर और नाशवान् है ।

(अतः) = इसलिये

एनम् = इस

सुविरूढ-
मूलम् = { अहंता ममता
और वासनारूप
अति दृढ़ मूलों-
वाले

अश्वत्थम् = { संसाररूप
पीपलके वृक्षको

दृढेन = दृढ़

असङ्ग- = { वैराग्यरूप*

शस्त्रेण = { शस्त्रद्वारा

छित्त्वा = काटकर†

परमपदकी

प्राप्तिके निमित्त

भगवान्‌के शरण

होनेके लिये

प्रेरणा ।

ततः पदं तत्परिमार्गितव्यं

यस्मिन्गता न निवर्तन्ति भूयः ।

तमेव चाद्यं पुरुषं प्रपद्ये

यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी ॥ ४ ॥

ततः, पदम्, तत्, परिमार्गितव्यम्, यस्मिन्, गताः, न,
निवर्तन्ति, भूयः, तम्, एव, च, आद्यम्, पुरुषम्, प्रपद्ये,
यतः, प्रवृत्तिः, प्रसृता, पुराणी ॥ ४ ॥

ततः = उसके उपरान्त

तत् = उस

पदम् = { परमपदरूप
परमेश्वरको

परिमार्गि-
तव्यम् = { अच्छी प्रकार
खोजना चाहिये

(कि)

यस्मिन् = जिसमें

गताः = गये हुए पुरुष

भूयः = फिर

न = { पीछे संसारमें
निवर्तन्ति = { नहीं आते हैं

* ब्रह्मलोकतकके भोग क्षणिक और नाशवान् हैं ऐसा समझकर इस संसारके समस्त विषयभोगोंमें सत्ता, सुख, प्रीति और रमणीयताका न भासना ही दृढ़ वैराग्यरूप शस्त्र है ।

† स्थावर जङ्गमरूप यावन्मात्र संसारके चिन्तनका तथा अनादिकालसे अज्ञानके द्वारा दृढ़ हुई अहंता, ममता और वासनारूप मूलोंका त्याग करना ही संसारवृक्षका अवान्तर मूलोंके सहित काटना है ।

च = और	तम् = उस
यतः = जिस परमेश्वरसे (यह)	एव = ही
पुराणी = पुरातन	आद्यम् = आदि
प्रवृत्तिः = { संसारवृक्षकी प्रवृत्ति	पुरुषम् = पुरुष नारायणके (मैं)
प्रसृता = { विस्तारको प्राप्त हुई है	प्रपद्ये = शरण हूँ (इस प्रकार दृढ़ निश्चय करके)

भगवत्प्राप्तिवाले
पुरुषोंके लक्षण।

निर्मानमोहा जितसङ्गदोषा
अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः ।
द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसंज्ञै-
र्गच्छन्त्यमूढाः पदमव्ययं तत् ॥ ५ ॥

निर्मानमोहाः, जितसङ्गदोषाः, अध्यात्मनित्याः,
विनिवृत्तकामाः, द्वन्द्वैः, विमुक्ताः, सुखदुःखसंज्ञैः,
गच्छन्ति, अमूढाः, पदम्, अव्ययम्, तत् ॥ ५ ॥

निर्मान- मोहाः = { नष्ट हो गया है मान और मोह जिनका (तथा)	विनिवृत्त- कामाः = { अच्छी प्रकारसे नष्ट हो गयी है कामना जिनकी (ऐसे वे)
जितसङ्ग- दोषाः = { जीत लिया है आसक्तिरूप दोष जिनने (और)	सुखदुःख- संज्ञैः = { सुखदुःख नामक
अध्यात्म- नित्याः = { परमात्माके स्व- रूपमें है निरन्तर स्थिति जिनकी (तथा)	द्वन्द्वैः = द्वन्द्वोंसे विमुक्ताः = विमुक्त हुए अमूढाः = ज्ञानीजन तत् = उस

अव्ययम् = अविनाश

पदम् = परमपदको

गच्छन्ति = प्राप्त होते हैं

परमपदके लक्षण

और उसकी

महिमा ।

न तद्भासयते सूर्यो न शशाङ्को न पावकः ।

यद्वत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम ॥६॥

न, तत्, भासयते, सूर्यः, न, शशाङ्कः, न, पावकः,

यत्, गत्वा, न, निवर्तन्ते, तत्, धाम, परमम्, मम ॥६॥

और—

तत्	= { उस (स्वयम् प्रकाश मय परमपदको)	(भासयते) { प्रकाशित कर सकता है (तथा)
न	= न	यत् = जिस परमपदको
सूर्यः	= सूर्य	गत्वा = प्राप्त होकर (मनुष्य)
भासयते	= { प्रकाशित कर सकता है	न निवर्तन्ते = { पीछे संसारमें नहीं आते हैं
न	= न	तत् = वही
शशाङ्कः	= चन्द्रमा (और)	मम = मेरा
न	= न	परमम् = परम
पावकः	= अग्नि ही	धाम = धाम है*

जीवात्माके

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः ।

स्वरूपका कथन।

मनःषष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति ॥७॥

मम, एव, अंशः, जीवलोके, जीवभूतः, सनातनः,

मनःषष्ठानि, इन्द्रियाणि, प्रकृतिस्थानि, कर्षति ॥७॥

और है अर्जुन—

जीवलोके	= इस देहमें	मम	= मेरा
जीवभूतः	= यह जीवात्मा	एव	= ही

* परमधामका अर्थ गीता अ० ८ श्लो० २१ में देखना चाहिये ।

सनातनः = सनातन	मनः = { मनसहित
अंशः = अंश है*	पष्ठानि = { पांचों
(और वही इन)	इन्द्रियाणि = इन्द्रियोंको
प्रकृति- = { त्रिगुणमयी	कर्षति = { आकर्षण
स्थानि = { मायामें स्थित हुई	करता है

वायुके दृष्टान्तसे
जीवात्मा के
गमनका विषय।

शरीरं यदवाप्नोति यच्चाप्युत्क्रामतीश्वरः ।

गृहीत्वैतानि संयाति वायुर्गन्धानिवाशयात् ॥८॥

शरीरम्, यत्, अवाप्नोति, यत्, च, अपि, उत्क्रामति, ईश्वरः,
गृहीत्वा, एतानि, संयाति, वायुः, गन्धान्, इव, आशयात् ॥८॥

कैसे कि-

वायुः = वायु	उत्क्रामति = त्यागता है
आशयात् = गन्धके स्थानसे	(तस्मात्) = उससे
गन्धान् = गन्धको	एतानि = { इन मनसहित
इव = जैसे	इन्द्रियोंको
(ग्रहण करके ले	गृहीत्वा = ग्रहण करके
जाता है वैसे ही)	च = फिर
ईश्वरः = { देहादिकोंका	यत् = जिस
स्वामी जीवात्मा	शरीरम् = शरीरको
अपि = भी	अवाप्नोति = प्राप्त होता है
यत् = { जिस पहिले	(तस्मिन्) = उसमें
(शरीरम्) = { शरीरको	संयाति = जाता है

* जैसे विभागरहित स्थित हुआ भी महाकाश घटोंमें पृथक् पृथक्की भांति प्रतीत होता है वैसे ही सब भूतोंमें एकीरूपसे स्थित हुआ भी परमात्मा पृथक् पृथक्की भांति प्रतीत होता है इसीसे देहमें स्थित जीवात्माको भगवान् ने अपना सनातन अंश कहा है ।

मन इन्द्रियों-
द्वारा जीवात्माके
विषय-सेवनका
कथन ।

श्रोत्रं चक्षुः स्पर्शनं च रसनं घ्राणमेव च ।

अधिष्ठाय मनश्चायं विषयानुपसेवते ॥६॥

श्रोत्रम्, चक्षुः, स्पर्शनम्, च, रसनम्, घ्राणम्, एव, च,
अधिष्ठाय, मनः, च, अयम्, विषयान्, उपसेवते ॥६॥

और उस शरीरमें स्थित हुआ-

अयम् = यह जीवात्मा

श्रोत्रम् = श्रोत्र

चक्षुः = चक्षु

च = और

स्पर्शनम् = त्वचाको

च = तथा

रसनम् = रसना

घ्राणम् = घ्राण

च = और

मनः = मनको

अधिष्ठाय = { आश्रय करके
अर्थात् इन
सबके सहारेसे

एव = ही

विषयान् = विषयोंको

उपसेवते = सेवन करता है

सर्व अवस्थामें स्थित आत्माको मूढ़ नहीं जानते और ज्ञानी उत्क्रामन्तम्, स्थितम्, वा, अपि, भुञ्जानम्, वा, गुणान्वितम्, जानते हैं इस विमूढाः, न, अनुपश्यन्ति, पश्यन्ति, ज्ञानचक्षुषः ॥१०॥ विषयका कथन ।

उत्क्रामन्तं स्थितं वापि भुञ्जानं वा गुणान्वितम् ।

विमूढा नानुपश्यन्ति पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषः ॥१०॥

उत्क्रामन्तम्, स्थितम्, वा, अपि, भुञ्जानम्, वा, गुणान्वितम्,
जानते हैं इस विमूढाः, न, अनुपश्यन्ति, पश्यन्ति, ज्ञानचक्षुषः ॥१०॥

परन्तु-

उत्- = { शरीर छोड़कर

क्रामन्तम् = { जाते हुएको

वा = अथवा

स्थितम् = { शरीरमें स्थित
हुएको (और)

भुञ्जानम् = { विषयोंको
भोगते हुएको

वा = अथवा

गुणा- = { तीनों गुणोंसे
न्वितम् = { युक्त हुएको

अपि = भी

विमूढाः = अज्ञानीजन

न = नहीं

अनुपश्यन्ति = जानते हैं (केवल)

ज्ञान- = { ज्ञानरूप
चक्षुषः = { नेत्रोंवाले

(ज्ञानीजन ही)

पश्यन्ति = तत्त्वसे जानते हैं

[, ,] यतन्तो योगिनश्चैनं पश्यन्त्यात्मन्यवस्थितम् ।

यतन्तोऽप्यकृतात्मानो नैनं पश्यन्त्यचेतसः ॥

यतन्तः, योगिनः, च, एनम्, पश्यन्ति, आत्मनि, अवस्थितम्,
यतन्तः, अपि, अकृतात्मानः, न, एनम्, पश्यन्ति, अचेतसः । ११।

क्योंकि-

योगिनः = योगीजन (भी)

आत्मनि = अपने हृदयमें

अवस्थितम् = स्थित हुए

एनम् = इस आत्माको

यतन्तः = यत्न करते हुए ही

पश्यन्ति = तत्त्वसे जानते हैं

च = और

अकृतात्मानः = { जिन्होंने अपने
अन्तःकरणको
शुद्ध नहीं किया
है (ऐसे)

अचेतसः = अज्ञानीजन (तो)

यतन्तः = यत्न करते हुए

अपि = भी

एनम् = इस आत्माको

न = नहीं

पश्यन्ति = जानते हैं

परमेश्वरके तेज-
की महिमा ।

यदादित्यगतं तेजो जगद्भासयतेऽखिलम् ।

यच्चन्द्रमसि यच्चाग्नौ तत्तेजो विद्धि मामकम् ॥

यत्, आदित्यगतम्, तेजः, जगत्, भासयते, अखिलम्,

यत्, चन्द्रमसि, यत्, च, अग्नौ, तत्, तेजः, विद्धि, मामकम् १२

और हे अर्जुन-

यत् = जो

तेजः = तेज

आदित्य- = { सूर्यमें स्थित
गतम् = { हुआ

अखिलम् = संपूर्ण	यत् = जो (तेज) .
जगत् = जगत्को	अग्नौ = अग्निमें (स्थित है)
भासयते = प्रकाशित करता है	तत् = उसको (तं)
च = तथा	मामकम् = मेरा ही
यत् = जो (तेज)	तेजः = तेज
चन्द्रमसि = चन्द्रमामें स्थित है	विद्धि = जान
(और)	

संपूर्ण जगत्को गामाविश्य च भूतानि धारयाम्यहमोजसा ।

पृथिवी रूपसे पुष्णामि चौषधीः सर्वाः सोमो भूत्वा रसात्मकः ॥

धारण करनेवाले गाम्, आविश्य, च, भूतानि, धारयामि, अहम्, ओजसा,
और चन्द्ररूपसे पुष्णामि, च, ओषधीः, सर्वाः, सोमः, भूत्वा, रसात्मकः ॥ १३ ॥

परमेश्वर केच = और
प्रभावका कथन अहम् = मैं (हो)
गाम् = पृथिवीमें
आविश्य = प्रवेश करके
ओजसा = अपनी शक्तिसे
भूतानि = सब भूतोंको
धारयामि = धारण करता हूं
च = और

रसात्मकः = { रसस्वरूप अर्थात्
अमृतमय
सोमः = चन्द्रमा
भूत्वा = होकर
सर्वाः = संपूर्ण
ओषधीः = { ओषधियोंको
अर्थात्
वनस्पतियोंको
पुष्णामि = पुष्ट करता हूं

वैश्वानररूपसे अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः ।

संपूर्ण प्राणियोंके प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधम् ॥ १४ ॥

शरीर में प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधम् ॥ १४ ॥
परमात्मा की अहम्, वैश्वानरः, भूत्वा, प्राणिनाम्, देहम्, आश्रितः,
व्यापकता का प्राणापानसमायुक्तः, पचामि, अन्नम्, चतुर्विधम् ॥ १४ ॥
कथन ।

तथा—

अहम्	= मैं (ही)	प्राणापान-	{ प्राण और
प्राणिनाम्	= सब प्राणियोंके	समायुक्तः	{ अपानसे
देहम्	= शरीरमें		{ युक्त हुआ
आश्रितः	= स्थित हुआ	चतुर्विधम्	= चार*प्रकारके
वैश्वानरः	= वैश्वानर अग्निरूप	अन्नम्	= अन्नको
भूत्वा	= होकर	पचामि	= पचाता हूँ

प्रभावसहित
भगवान् के
स्वरूपका कथन

सर्वस्य चाहं हृदि संनिविष्टो

मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च ।

वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो

वेदान्तकृद्वेदविदेव चाहम् ॥१५॥

सर्वस्य, च, अहम्, हृदि, संनिविष्टः, मत्तः, स्मृतिः,

ज्ञानम्, अपोहनम्, च, वेदैः, च, सर्वैः, अहम्, एव,

वेद्यः, वेदान्तकृत्, वेदवित्, एव, च, अहम् ॥१५॥

च	= और	(तथा)
अहम्	= मैं (ही)	मत्तः = मेरेसे ही
सर्वस्य	= सब प्राणियोंके	स्मृतिः = स्मृति
हृदि	= हृदयमें	ज्ञानम् = ज्ञान
संनिविष्टः	= { अन्तर्यामी- रूपसे स्थित हूँ	च = और

* भक्ष्य, भोज्य, लेह्य और चोष्य ऐसे चार प्रकारके अन्न होते हैं, उनमें जो चवाकर खाया जाता है वह भक्ष्य है जैसे रोटी आदि और जो निगला जाता है वह भोज्य है जैसे दूध आदि तथा जो चाया जाता है वह लेह्य है जैसे चटनी आदि और जो चूसा जाता है वह चोष्य है जैसे ऊख आदि ।

अपोहनम् = अपोहन*	वेद्यः = {जाननेके
(भवति) = होता है	{योग्यतां हूं (तथा)
च = और	वेदान्तकृत् = वेदान्तका कर्ता
सर्वैः = सब	च = और
वेदैः = वेदोंद्वारा	वेदवित् = {वेदोंको
अहम् = मैं	{जाननेवाला (भी)
एव = ही	अहम् = मैं
	एव = ही (हूं)

क्षर और अक्षर द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च ।

के स्वरूपका
कथन ।

क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते ॥१६॥

द्रौ, इमौ, पुरुषौ, लोके, क्षरः, च, अक्षरः, एव, च,
क्षरः, सर्वाणि, भूतानि, कूटस्थः, अक्षरः, उच्यते ॥१६॥

तथा हे अर्जुन—

लोके = इस संसारमें	एव = भी
क्षरः = नाशवान्	इमौ = यह
च = और	द्रौ = दो प्रकारके †
अक्षरः = अविनाशी	पुरुषौ = पुरुष हैं (उनमें)

* विचारके द्वारा बुद्धिमें रहनेवाले संशय, विपर्यय आदि दोषोंको हटानेका नाम अपोहन है ।

† सर्व वेदोंका तात्पर्य परमेश्वरको जानानेका है इसलिये सब वेदोंद्वारा जाननेके योग्य एक परमेश्वर ही है ।

‡ गीता अध्याय ७ श्लोक ४-५ में जो अपरा और परा प्रकृतिके नामसे कहे गये हैं तथा अध्याय १३ श्लोक १ में जो क्षेत्र और क्षेत्रज्ञके नामसे कहे गये हैं उन्हीं दोनोंको यहाँ क्षर और अक्षरके नामसे वर्णन किया है ।

सर्वाणि = संपूर्ण	च = और
भूतानि = { भूतप्राणियोंके शरीर तो	कूटस्थः = जीवात्मा
क्षरः = नाशवान्	अक्षरः = अविनाशी
	उच्यते = कहा जाता है

पुरुषोत्तमके स्वरूपका कथन उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः ।

यो लोकत्रयमाविश्य बिभर्त्यव्यय ईश्वरः ॥१७॥

उत्तमः, पुरुषः, तु, अन्यः, परमात्मा, इति, उदाहृतः,

यः, लोकत्रयम्, आविश्य, बिभर्ति, अव्ययः, ईश्वरः ॥१७॥

तथा उन दोनोंसे—

उत्तमः = उत्तम	बिभर्ति = { सबका धारण पोषण करता है (एवं)
पुरुषः = पुरुष	अव्ययः = अविनाशी
तु = तो	ईश्वरः = परमेश्वर (और)
अन्यः = अन्य ही है (कि)	परमात्मा = परमात्मा
यः = जो	इति = ऐसे
लोकत्रयम् = तीनों लोकोंमें	उदाहृतः = कहा गया है
आविश्य = प्रवेश करके	

पुरुषोत्तमकी महिमा । यस्मात्क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तमः ।

अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः ॥१८॥

यस्मात्, क्षरम्, अतीतः, अहम्, अक्षरात्, अपि, च, उत्तमः,

अतः, अस्मि, लोके, वेदे, च, प्रथितः, पुरुषोत्तमः ॥१८॥

यस्मात् = क्योंकि	क्षरम् = { नाशवान् जड़वर्ग क्षेत्रसे तो
अहम् = मैं	

अतीतः = सर्वथा अतीत हूँ	लोके = लोकमें
च = और (मायामें स्थित)	च = और
अक्षरात् = { अविनाशी जीवात्मासे	वेदे = वेदमें (भी)
अपि = भी	पुरुषोत्तमः = पुरुषोत्तम (नामसे)
उत्तमः = उत्तम हूँ	प्रथितः = प्रसिद्ध
अतः = इसलिये	अस्मि = हूँ

भगवान्- यो मामेवमसंमूढो जानाति पुरुषोत्तमम् ।
को पुरुषोत्तम
जाननेवाले की
महिमा । स सर्वविद्भजति मां सर्वभावेन भारत ॥१६॥
यः, माम्, एवम्, असंमूढः, जानाति, पुरुषोत्तमम्,

सः, सर्ववित्, भजति, माम्, सर्वभावेन, भारत ॥१९॥

भारत = हे भारत	सः = वह
एवम् = इस प्रकार तत्त्वसे	सर्ववित् = सर्वज्ञ पुरुष
यः = जो	सर्वभावेन = { सब प्रकारसे निरन्तर
असंमूढः = ज्ञानी पुरुष	
माम् = मेरेको	माम् = { मुझ वासुदेव परमेश्वरको ही
पुरुषोत्तमम् = पुरुषोत्तम	भजति = भजता है
जानाति = जानता है	

इस अध्यायमें इति गुह्यतमं शास्त्रमिदमुक्तं मयानघ ।

कहे हुए उपदेश
का तत्त्व समझने
से भगवत्प्राप्ति । एतद्बुद्ध्वा बुद्धिमान्स्यात्कृतकृत्यश्च भारत ॥२०॥

इति, गुह्यतमम्, शास्त्रम्, इदम्, उक्तम्, मया, अनघ,

एतत्, बुद्ध्वा, बुद्धिमान्, स्यात्, कृतकृत्यः, च, भारत ॥२०॥

अनघ = हे निष्पाप | भारत = अर्जुन

इति	= ऐसे	एतत्	= इसको
इदम्	= यह	बुद्ध्वा	= { तत्त्वसे जान- कर (मनुष्य)
गुह्यतमम्	= { अति रहस्ययुक्त गोपनीय	बुद्धिमान्	= ज्ञानवान्
शास्त्रम्	= शास्त्र	च	= और
मया	= मेरेद्वारा	कृतकृत्यः	= कृतार्थ
उक्तम्	= कहा गया	स्यात्	= हो जाता है—

अर्थात् उसको और कुछ भी करना शेष नहीं रहता ।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां

योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे पुरुषोत्तम-

योगो नाम पञ्चदशोऽध्यायः ॥१५॥

इस अध्यायमें भगवान् ने अपना परम गोपनीय प्रभाव भली प्रकारसे कहा है । जो मनुष्य उक्त प्रकारसे भगवान् को सर्वोत्तम समझ लेता है फिर उसका मन एक क्षण भी भगवान् के चिन्तनका त्याग नहीं कर सकता । क्योंकि जिस वस्तुको मनुष्य उत्तम समझता है उसीमें उसका प्रेम होता है और जिसमें प्रेम होता है उसीका चिन्तन होता है । अतएव सबका मुख्य कर्तव्य है कि भगवान् के परम गोपनीय प्रभावको भली प्रकार समझनेके लिये नाशवान् क्षणभङ्गुर संसारकी आसक्तिका सर्वथा त्याग करके एवं परमात्माके शरण होकर भजन और सत्सङ्गकी ही विशेष चेष्टा करें ।

हरिः ॐ तत्सत् हरिः ॐ तत्सत् हरिः ॐ तत्सत्

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

अथ षोडशोऽध्यायः

प्रधान विषय—१ से ५ तक फलसहित दैवी और आसुरी संपदाका कथन । (६-२०) आसुरी संपदावालोंके लक्षण और उनकी अधोगतिका कथन । (२१-२४) शास्त्रविपरीत आचरणोंको त्यागने और शास्त्रके अनुकूल आचरण करनेके लिये प्रेरणा ।

श्रीभगवानुवाच

दैवी संपदाके
अभय आदि ९
गुणोंका कथन ।

अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः ।

दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम् ॥ १ ॥

अभयम्, सत्त्वसंशुद्धिः, ज्ञानयोगव्यवस्थितिः,

दानम्, दमः, च, यज्ञः, च, स्वाध्यायः, तपः, आर्जवम् ॥ १ ॥

उसके उपरान्त श्रीकृष्ण भगवान् फिर बोले, हे अर्जुन ! दैवी संपदा जिन पुरुषोंको प्राप्त है तथा जिनको आसुरी संपदा प्राप्त है उनके लक्षण पृथक् पृथक् कहता हूँ, उनमेंसे—

अभयम् = सर्वथा भयका अभाव

सत्त्वसंशुद्धिः = अन्तःकरणकी अच्छी प्रकारसे स्वच्छता

ज्ञानयोग-
व्यवस्थितिः = { तत्त्वज्ञानके लिये ध्यानयोगमें निरन्तर
दृढ़ स्थिति*

च = और

दानम् = सात्त्विक दान † (तथा)

* परमात्माके स्वरूपको तत्त्वसे जाननेके लिये सच्चिदानन्दधन परमात्माके स्वरूपमें एकीभावसे ध्यानकी निरन्तर ग्राहस्थितिका ही नाम ज्ञानयोगव्यवस्थिति समझना चाहिये ।

† गीता अध्याय १७ श्लोक २० में जिसका विस्तार किया है ।

दमः	= इन्द्रियोंका दमन
यज्ञः	= { भगवत्पूजा और अग्निहोत्रादि उत्तम कर्मोंका आचरण (एवं)
स्वाध्यायः	= { वेद शास्त्रोंके पठनपाठनपूर्वक भगवत्के नाम और गुणोंका कीर्तन
च	= तथा
तपः	= स्वधर्मपालनके लिये कष्ट सहन करना (एवं)
आर्जवम्	= { शरीर और इन्द्रियोंके सहित अन्तःकरणकी सरलता

दैवी संपदाके अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम् ।
अहिंसा आदि दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम् ॥२॥
११ गुणोंका कथन ।

अहिंसा, सत्यम्, अक्रोधः, त्यागः, शान्तिः, अपैशुनम्,
दया, भूतेषु, अलोलुप्त्वम्, मार्दवम्, ह्रीः, अचापलम् ॥२॥

तथा—

अहिंसा	= { मन वाणी और शरीरसे किसी प्रकार भी किसीको कष्ट न देना (तथा)
सत्यम्	= यथार्थ और प्रिय भाषण*
अक्रोधः	= अपना अपकार करनेवालेपर भी क्रोधका न होना
त्यागः	= कर्मोंमें कर्तापनके अभिमानका त्याग (एवं)
शान्तिः	= { अन्तःकरणकी उपरामता अर्थात् चित्तकी चञ्चलताका अभाव (और)
अपैशुनम्	= किसीकी भी निन्दादि न करना (तथा)
भूतेषु	= सब भूतप्राणियोंमें

* अन्तःकरण और इन्द्रियोंके द्वारा जैसा निश्चय किया हो वैसेका
वैसा ही प्रिय शब्दोंमें कहनेका नाम सत्यभाषण है ।

दया	= हेतुरहित दया
अलोलुप्त्वम्	= { इन्द्रियोंका विषयोंके साथ संयोग होनेपर भी आसक्तिका न होना (और)
मार्दवम्	= कोमलता (तथा)
हीः	= लोक और शास्त्रसे विरुद्ध आचरणमें लज्जा (और)
अचापलम्	= व्यर्थ चेष्टाओंका अभाव

देवी संपदाके
तेज आदि ६
गुणोंका कथन।

तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता ।

भवन्ति संपदं दैवीमभिजातस्य भारत ॥३॥

तेजः, क्षमा, धृतिः, शौचम्, अद्रोहः, नातिमानिता,
भवन्ति, संपदम्, दैवीम्, अभिजातस्य, भारत ॥ ३ ॥

तथा—

तेजः	= तेज*	नाति-	= { अपनेमें पूज्यताके
क्षमा	= क्षमा	मानिता	= { अभिमानका
धृतिः	= धैर्य		= { अभाव (यहसबतो)
	(और)	भारत	= हे अर्जुन
शौचम्	= { बाहर भीतरकी	दैवीम्	= दैवी
	शुद्धि† (एवं)	संपदम्	= संपदाको
अद्रोहः	= { किसीमें भी शत्रु-	अभि-	= { प्राप्त हुए पुरुषके
	भावका न होना	जातस्य	= { लक्षण
	(और)	भवन्ति	= हैं

* श्रेष्ठ पुरुषोंकी उस शक्तिका नाम तेज है कि जिसके प्रभावसे उनके सामने विषयासक्त और नीच प्रकृतिवाले मनुष्य भी प्रायः अन्यायाचरणसे रुककर उनके कथनानुसार श्रेष्ठ कर्मोंमें प्रवृत्त हो जाते हैं ।

† गीता अध्याय १३ श्लोक ७ की टिप्पणी देखनी चाहिये ।

संक्षेपसे आसुरी
संपदाका कथन ।

दम्भो दर्पोऽभिमानश्च क्रोधः पारुष्यमेव च ।

अज्ञानं चाभिजातस्य पार्थ संपदमासुरीम् ॥४॥

दम्भः, दर्पः, अभिमानः, च, क्रोधः, पारुष्यम्, एव, च,
अज्ञानम्, च, अभिजातस्य, पार्थ, संपदम्, आसुरीम् ॥४॥

और-

पार्थ	= हे पार्थ	पारुष्यम्	= कठोर वाणी
दम्भः	= पाखण्ड		(एवं)
दर्पः	= घमण्ड	अज्ञानम्	= अज्ञान
च	= और	एव	= भी (यह सब)
अभिमानः	= अभिमान	आसुरीम्	= आसुरी
च	= तथा	संपदम्	= संपदाको
क्रोधः	= क्रोध	अभि-	= { प्राप्त हुए पुरुषके
च	= और	जातस्य	= { (लक्षण हैं)

दैवी और आसुरी
संपदाका फल ।

दैवी संपद्विमोक्षाय निबन्धायासुरी मता ।

मा शुचः संपदं दैवीमभिजातोऽसि पाण्डव ॥५॥

दैवी, संपत्, विमोक्षाय, निबन्धाय, आसुरी, मता,

मा, शुचः, संपदम्, दैवीम्, अभिजातः, असि, पाण्डव ॥५॥

उन दोनों प्रकारकी संपदाओंमें-

दैवी संपत्	= दैवी संपदा (तो)	मा शुचः	= शोक मत कर
विमोक्षाय	= मुक्तिके लिये (और)	(यतः)	= क्योंकि (तूं)
आसुरी	= आसुरी (संपदा)	दैवीम्	= दैवी
निबन्धाय	= बांधनेके लिये	संपदम्	= संपदाको
मता	= मानी गई है	अभिजातः	= प्राप्त हुआ
(अतः)	= इसलिये	असि	= है
पाण्डव	= हे अर्जुन (तूं)		

विस्तारसे द्वौ भूतसर्गौ लोकेऽस्मिन्दैव आसुर एव च ।
 आसुरी स्वभाव-
 वाले पुत्रोंके दैवो विस्तरशः प्रोक्त आसुरं पार्थ मे शृणु ॥६॥
 लक्षण सुननेके द्वौ, भूतसर्गौ, लोके, अस्मिन्, दैवः, आसुरः, एव, च,
 लिये भगवान्की दैवः, विस्तरशः, प्रोक्तः, आसुरम्, पार्थ, मे, शृणु ॥६॥
 आज्ञा ।

और—

पार्थ	= हे अर्जुन	दैवः	= देवोंका स्वभाव
अस्मिन्	= इस	एव	= ही
लोके	= लोकमें	विस्तरशः	= विस्तारपूर्वक
भूतसर्गौ	= भूतोंके स्वभाव	प्रोक्तः	= कहा गया है
द्वौ	= दो प्रकारके	(अतः)	= इसलिये (अब)
(मर्तौ)	= माने गये हैं (एक तो)		[असुरोंके
दैवः	= देवोंके जैसा	आसुरम्	= स्वभावको (भी)
च	= और (दूसरा)		[विस्तारपूर्वक
आसुरः	= असुरोंके जैसा	मे	= मेरेसे
(उनमें)		शृणु	= सुन

आसुरी संपदा- प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च जना न विदुरासुराः ।
 वालोंमें सदाचार
 के अभाव का न शौचं नापि चाचारो न सत्यं तेषु विद्यते ॥७॥
 कथन । प्रवृत्तिम्, च, निवृत्तिम्, च, जनाः, न, विदुः, आसुराः,
 न, शौचम्, न, अपि, च, आचारः, न, सत्यम्, तेषु, विद्यते ॥७॥

हे अर्जुन—

आसुराः	= आसुरी स्वभाववाले	च	= और
जनाः	= मनुष्य	निवृत्तिम्	= { अकर्तव्य कार्यसे
प्रवृत्तिम्	= { कर्तव्य कार्यमें		{ निवृत्त होनेको
	{ प्रवृत्त होनेको	च	= भी

न = नहीं
विदुः = जानते हैं
(इसलिये)

तेषु = उनमें
न = न (तो)

शौचम् = { बाहर भीतरकी
शुद्धि है

न = न
आचारः = श्रेष्ठ आचरण है
च = और
न = न
सत्यम् = सत्यभाषण
अपि = ही
विद्यते = है

आसुरी संपदा-
वालों की
नास्तिकता का
कथन ।

असत्यमप्रतिष्ठं ते जगदाहुरनीश्वरम् ।

अपरस्परसंभूतं किमन्यत्कामहैतुकम् ॥८॥

असत्यम्, अप्रतिष्ठम्, ते, जगत्, आहुः, अनीश्वरम्,

अपरस्परसंभूतम्, किम्, अन्यत्, कामहैतुकम् ॥८॥

तथा-

ते	= { वे आसुरीप्रकृति- वाले मनुष्य	अपरस्पर- संभूतम्	= { अपने आप स्त्री- पुरुषके संयोगसे उत्पन्न हुआ है
आहुः	= कहते हैं (कि)	(अतः)	= इसलिये
जगत्	= जगत्	काम-	= { केवल भोगोंको
अप्रतिष्ठम्	= आश्रयरहित(और)	हैतुकम्	= { भोगनेके लिये
असत्यम्	= सर्वथा झूठा (एवं)	(एव)	= ही (है)
अनीश्वरम्	= बिना ईश्वरके	अन्यत्	= इसके सिवाय और
		किम्	= क्या है

आसुरी प्रकृति-
वालोंके दुराचार
का वर्णन ।

एतां दृष्टिमवष्टभ्य नष्टात्मानोऽल्पबुद्धयः ।

प्रभवन्त्युग्रकर्माणः क्षयाय जगतोऽहिताः ॥९॥

एताम्, दृष्टिम्, अवष्टभ्य, नष्टात्मानः, अल्पबुद्धयः,

प्रभवन्ति, उग्रकर्माणः, क्षयाय, जगतः, अहिताः ॥९॥

इस प्रकार-

एताम्	= इस	अहिताः	= { सबका अपकार करनेवाले
दृष्टिम्	= मिथ्या ज्ञानको	उग्र-	} = क्रूरकर्मी मनुष्य
अवष्टभ्य	= अवलम्बन करके	कर्माणः	
नष्टात्मानः	= { नष्ट हो गया है स्वभाव (जिनका तथा)	जगतः	= जगत्का
अल्पबुद्धयः	= { मन्द है बुद्धि (जिनकी (ऐसे वे)	क्षयाय	= { नाश करनेके लिये ही
		प्रभवन्ति	= उत्पन्न होते हैं

[,] काममाश्रित्य दुष्पूरं दम्भमानमदान्विताः ।

मोहाद्गृहीत्वासद्ग्राहान्प्रवर्तन्तेऽशुचिव्रताः॥१०॥

कामम्, आश्रित्य, दुष्पूरम्, दम्भमानमदान्विताः,
मोहात्, गृहीत्वा, असद्ग्राहान्, प्रवर्तन्ते, अशुचिव्रताः ॥१०॥

और वे मनुष्य-

दम्भमान-	= { दम्भ मान और मदसे युक्त हुए किसी प्रकार भी	अस-	= { मिथ्या द्वाहान्
मदान्विताः		गृहीत्वा	
दुष्पूरम्	= { न पूर्ण होनेवाली	अशुचि-	= { भ्रष्ट आचरणोंसे युक्त हुए
कामम्	= कामनाओंका	व्रताः	
आश्रित्य	= आसरा लेकर (तथा)	प्रवर्तन्ते	= वर्तते हैं
मोहात्	= अज्ञानसे		

- [„] चिन्तामपरिमेयां च प्रलयान्तामुपाश्रिताः ।
 कामोपभोगपरमा एतावदिति निश्चिताः ॥११॥
 चिन्ताम्, अपरिमेयाम्, च, प्रलयान्ताम्, उपाश्रिताः,
 कामोपभोगपरमाः, एतावत्, इति, निश्चिताः ॥११॥

तथा चे-

प्रलयान्ताम् = { मरणपर्यन्त रहनेवाली	कामोप- भोग- परमाः = { विषय भोगोंके भोगनेमें तत्पर हुए (एवं)
अपरिमेयाम् = अनन्त	एतावत् = { इतना मात्र ही आनन्द है
चिन्ताम् = चिन्ताओंको	इति = ऐसे
उपाश्रिताः = { आश्रय किये हुए	निश्चिताः = माननेवाले हैं
च = और	

- [„] आशापाशशतैर्बद्धाः कामक्रोधपरायणाः ।
 ईहन्ते कामभोगार्थमन्यायेनार्थसञ्चयान् ॥१२॥

आशापाशशतैः, बद्धाः, कामक्रोधपरायणाः,
 ईहन्ते, कामभोगार्थम्, अन्यायेन, अर्थसञ्चयान् ॥१२॥

इसलिये-

आशा- पाशशतैः = { आशारूप सैकड़ों फांसियोंसे	काम- भोगार्थम् = { विषय भोगोंकी पूर्तिके लिये
बद्धाः = बंधे हुए (और)	अन्यायेन = अन्यायपूर्वक
कामक्रोध- परायणाः = { काम क्रोधके परायण हुए	अर्थ- सञ्चयान् = { धनादिक बहुतसे पदार्थोंको (संग्रह करनेकी)
	ईहन्ते = चेष्टा करते हैं

आसुरी प्रकृति-
बालोंके ममता
और अहंकार-
युक्त अनेक
मनोरथों का
वर्णन ।

इदमद्य मया लब्धमिमं प्राप्स्ये मनोरथम् ।

इदमस्तीदमपि मे भविष्यति पुनर्धनम् ॥१३॥

इदम्, अद्यः, मया, लब्धम्, इमम्, प्राप्स्ये, मनोरथम्,

इदम्, अस्ति, इदम्, अपि, मे, भविष्यति, पुनः, धनम् ॥१३॥

और उन पुरुषोंके विचार इस प्रकारके होते हैं कि-

मया	= मैंने	मे	= मेरे पास
अद्य	= आज	इदम्	= यह (इतना)
इदम्	= यह (तो)	धनम्	= धन
लब्धम्	= पाया है (और)	अस्ति	= है (और)
इमम्	= इस	पुनः	= फिर
मनोरथम्	= मनोरथको	अपि	= भी
प्राप्स्ये	= प्राप्त होऊंगा	इदम्	= यह
	(तथा)	भविष्यति	= होवेगा

[„] असौ मया हतः शत्रुर्हनिष्ये चापरानपि ।

ईश्वरोऽहमहं भोगी सिद्धोऽहं बलवान्सुखी ॥१४॥

असौ, मया, हतः, शत्रुः, हनिष्ये, च, अपरान्, अपि,

ईश्वरः, अहम्, अहम्, भोगी, सिद्धः, अहम्, बलवान्, सुखी । १४।

तथा-

असौ	= वह	हनिष्ये	= मारूंगा (तथा)
शत्रुः	= शत्रु	अहम्	= मैं
मया	= मेरे द्वारा	ईश्वरः	= ईश्वर
हतः	= मारा गया (और)	च	= और
अपरान्	= दूसरे शत्रुओंको	भोगी	= { ऐश्वर्यको भोगने- वाला हूँ (और)
अपि	= भी	अहम्	= मैं
अहम्	= मैं		

सिद्धः = { सब सिद्धियोंसे युक्त (एवं) बलवान् = बलवान् (और) सुखी = सुखी हूँ

[„] आढ्योऽभिजनवानस्मि कोऽन्योऽस्ति सदृशो मया यक्ष्ये दास्यामि मोदिष्ये इत्यज्ञानविमोहिताः ॥

आढ्यः, अभिजनवान्, अस्मि, कः, अन्यः, अस्ति, सदृशः, मया, यक्ष्ये, दास्यामि, मोदिष्ये, इति, अज्ञानविमोहिताः ॥ १५ ॥

तथा मैं—

आढ्यः	= बड़ा धनवान् (और)	अस्ति	= है (मैं)
अभि-जनवान्	} = बड़े कुटुम्बवाला	यक्ष्ये	= यज्ञ करूंगा
अस्मि		दास्यामि	= दान देऊंगा
मया	= मेरे	मोदिष्ये	= { हर्षको प्राप्त होऊंगा
सदृशः	= समान	इति	= इस प्रकारके
अन्यः	= दूसरा	अज्ञान-	= { अज्ञानसे विमोहिताः = { मोहित हैं
कः	= कौन	विमोहिताः	

आसुरी प्रकृति-
वालोंको घोर
नरककी प्राप्ति।

अनेकचित्तविभ्रान्ता मोहजालसमावृताः ।

प्रसक्ताः कामभोगेषु पतन्ति नरकेऽशुचौ ॥ १६ ॥

अनेकचित्तविभ्रान्ताः, मोहजालसमावृताः,
प्रसक्ताः, कामभोगेषु, पतन्ति, नरके, अशुचौ ॥ १६ ॥

इसलिये वे—

अनेक-	{ अनेक प्रकारसे भ्रमित हुए चित्तवाले (अज्ञानीजन)	मोहजाल-	{ मोहरूप जालमें फंसे हुए (एवं)
चित्त-		समावृताः	

च	= और	आत्म-	= { अपने और
क्रोधम्	= क्रोधादिके	परदेहेषु	= { दूसरोंके
संश्रिताः	= परायण हुए (एवं)		{ शरीरमें (स्थित)
अभ्य-	= { दूसरोंकी निन्दा	माम्	= मुझ अन्तर्यामीसे
सूयकाः	= { करनेवाले पुरुष	प्रद्विषन्तः	= द्वेष करनेवाले हैं

द्वेष करनेवाले तानहं द्विषतः क्रूरान्संसारेषु नराधमान् ।
 नराधमों को क्षिपाम्यजस्रमशुभानासुरीष्वेव योनिषु ॥१६॥
 आसुरी योनिकी प्राप्ति । तान्, अहम्, द्विषतः, क्रूरान्, संसारेषु, नराधमान्,

क्षिपामि, अजस्रम्, अशुभान्, आसुरीषु, एव, योनिषु ॥१९॥

ऐसे—

तान्	= उन	संसारेषु	= संसारमें
द्विषतः	= द्वेष करनेवाले	अजस्रम्	= बारम्बार
अशुभान्	= पापाचारी (और)	आसुरीषु	= आसुरी
क्रूरान्	= क्रूरकर्मी	योनिषु	= योनियोंमें
नराधमान्	= नराधमोंको	एव	= ही
अहम्	= मैं	क्षिपामि	= गिराता हूँ—

अर्थात् शूकर कूकर आदि नीच योनियोंमें ही उत्पन्न

करता हूँ ।

पुनः आसुरी आसुरीं योनिमापन्ना मूढा जन्मनि जन्मनि ।

स्वभाववालोंको मामप्राप्यैव कौन्तेय ततो यान्त्यधमां गतिम् ॥

अधोगति की आसुरीम्, योनिम्, आपन्नाः, मूढाः, जन्मनि, जन्मनि,
 प्राप्ति । माम्, अप्राप्य, एव, कौन्तेय, ततः, यान्ति, अधमाम्, गतिम् ॥२०॥

इसलिये—

कौन्तेय = हे अर्जुन | मूढाः = वे मूढ़ पुरुष

जन्मनि	= जन्म	ततः	= उससे भी
जन्मनि	= जन्ममें	अधमाम्	= अति नीच
आसुरीम्	= आसुरी	गतिम्	= गतिको
योनिम्	= योनिको	एव	= ही
आपन्नाः	= प्राप्त हुए	यान्ति	= प्राप्त होते हैं अर्थात्
माम्	= मेरेको		घोर नरकोंमें
अप्राप्य	= न प्राप्त होकर		पड़ते हैं

काम, क्रोध त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः ।

और लोभरूप

नरकके तीन

द्वारोंका कथन ।

कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत् ॥

त्रिविधम्, नरकस्य, इदम्, द्वारम्, नाशनम्, आत्मनः,

कामः, क्रोधः, तथा, लोभः, तस्मात्, एतत्, त्रयम्, त्यजेत् ॥२॥

और हे अर्जुन-

कामः	= काम	आत्मनः	= आत्माका
क्रोधः	= क्रोध	नाशनम्	= { नाश करनेवाले हैं
तथा	= तथा		{ अर्थात् अधोगतिमें
लोभः	= लोभ		{ ले जानेवाले हैं
इदम्	= यह	तस्मात्	= इससे
त्रिविधम्	= तीन प्रकारके	एतत्	= इन
नरकस्य	= नरकके	त्रयम्	= तीनोंको
द्वारम्	= द्वार*	त्यजेत्	= त्याग देना चाहिये

श्रेयसाधनसे एतैर्विमुक्तः कौन्तेय तमोद्वारैस्त्रिभिर्नरः ।

परमगति की

प्राप्ति ।

आचरत्यात्मनः श्रेयस्ततो याति परां गतिम् ॥

* सर्व अनर्थोंके मूल और नरककी प्राप्तिमें हेतु होनेसे यहाँ काम, क्रोध और लोभको नरकका द्वार कहा है ।

एतैः, विमुक्तः, कौन्तेय, तमोद्वारैः, त्रिभिः, नरः,
आचरति, आत्मनः, श्रेयः, ततः, याति, पराम्, गतिम्॥२२॥

क्योंकि—

कौन्तेय = हे अर्जुन
एतैः = इन
त्रिभिः = तीनों
तमोद्वारैः = नरकके द्वारोंसे
विमुक्तः = मुक्त हुआ*
नरः = पुरुष
आत्मनः = अपने
श्रेयः = कल्याणका

आचरति = { आचरण
करता है †
ततः = इससे (वह)
पराम् = परम
गतिम् = गतिको
याति = जाता है अर्थात्
मेरेको प्राप्त
होता है

शास्त्रविधिको यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः ।
त्यागकर इच्छा- न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम्॥२३॥
नुकूल वर्तने-
वालोक की निन्दा यः, शास्त्रविधिम्, उत्सृज्य, वर्तते, कामकारतः,
न, सः, सिद्धिम्, अवाप्नोति, न, सुखम्, न, पराम्, गतिम्॥२३॥

और—

यः	= जो पुरुष	वर्तते	= वर्तता है
शास्त्र-	= { शास्त्रकी विधिको	सः	= वह
विधिम्		न	= न (तो)
उत्सृज्य	= त्यागकर	सिद्धिम्	= सिद्धिको
कामकारतः	= अपनी इच्छासे	अवाप्नोति	= प्राप्त होता है

* अर्थात् काम, क्रोध और लोभ आदि विकारोंसे छूटा हुआ ।

† अपने उद्धारके लिये भगवत्-आशानुसार वर्तना ही अपने
कल्याणका आचरण करना है ।

	(और)	न	= न
न	= न	सुखम्	= सुखको (ही)
पराम्	= परम		(प्राप्त होता है)
गतिम्	= गतिको (तथा)		

शास्त्रके अनुकूल तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ ।

कर्म करनेके
लिये प्रेरणा ।

ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्तुमिहार्हसि ॥२४॥

तस्मात्, शास्त्रम्, प्रमाणम्, ते, कार्याकार्यव्यवस्थितौ,
ज्ञात्वा, शास्त्रविधानोक्तम्, कर्म, कर्तुम्, इह, अर्हसि ॥२४॥

तस्मात्	= इससे	(एवम्)	= ऐसा
ते	= तेरे लिये	ज्ञात्वा	= जानकर (तूं)
इह	= इस	शास्त्र-	{ शास्त्रविधिसे
कार्याकार्य-	{ कर्तव्य और	विधानोक्तम्	{ नियत किये
व्यवस्थितौ	{ अकर्तव्यकी		{ हुए
	{ व्यवस्थामें	कर्म	= कर्मको (ही)
शास्त्रम्	= शास्त्र (ही)	कर्तुम्	= करनेके लिये
प्रमाणम्	= प्रमाण है	अर्हसि	= योग्य है

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां

योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे दैवासुरसंपद्विभाग-

योगो नाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

हरिः ॐ तत्सत् हरिः ॐ तत्सत् हरिः ॐ तत्सत्

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

अथ सप्तदशोऽध्यायः

प्रधानविषय—१ से ६ तक श्रद्धाका और शास्त्रविपरीत घोर तप करने-
वालोंका विषय । (७—२२) आहार, यज्ञ, तप और दानके पृथक् पृथक्
भेद । (२३—२८) ॐ तत्सत्के प्रयोगकी व्याख्या ।

अर्जुन उवाच

शास्त्रविधिको ये शास्त्रविधिमुत्सृज्य यजन्ते श्रद्धयान्विताः ।
त्यागकर श्रद्धा- तेषां निष्ठा तु का कृष्ण सत्त्वमाहो रजस्तमः ॥ १ ॥
से पूजन करने- वाले पुरुषोंकी ये, शास्त्रविधिम्, उत्सृज्य, यजन्ते, श्रद्धया, अन्विताः,
निष्ठाके विषयमें तेषाम्, निष्ठा, तु, का, कृष्ण, सत्त्वम्, आहो, रजः, तमः ॥ १ ॥
अर्जुनका प्रश्न । इस प्रकार भगवान्के वचनोंको सुनकर अर्जुन बोला—

कृष्ण	= हे कृष्ण	तेषाम्	= उनकी
ये	= जो मनुष्य	निष्ठा	= स्थिति
शास्त्र- विधिम् }	= शास्त्रविधिको	तु	= फिर
उत्सृज्य	= त्यागकर (केवल)	का	= कौनसी है (क्या)
श्रद्धया	= श्रद्धासे	सत्त्वम्	= सात्त्विकी है
अन्विताः	= युक्त हुए	आहो	= अथवा
यजन्ते	= { देवादिकोंका पूजन करते हैं }	रजः	= राजसी (किंवा)
		तमः	= तामसी है

श्रीभगवानुवाच

गुणोंके अनुसार त्रिविधा भवति श्रद्धा देहिनां सा स्वभावजा ।
तीन प्रकारकी सात्त्विकी राजसी चैव तामसी चेति तां शृणु ॥
स्वाभाविक श्रद्धा का कथन ।

त्रिविधा, भवति, श्रद्धा, देहिनाम्, सा, स्वभावजा,
सात्त्विकी, राजसी, च, एव, तामसी, च, इति, ताम्, शृणु ॥२॥

इस प्रकार अर्जुनके पूछनेपर श्रीकृष्ण भगवान् बोले, हे अर्जुन-

देहिनाम् = मनुष्योंकी	राजसी = राजसी
सा = वह (बिना शास्त्रीय संस्कारोंके केवल)	च = तथा
स्वभावजा = { स्वभावसे उत्पन्न हुई *	तामसी = तामसी
श्रद्धा = श्रद्धा	इति = ऐसे
सात्त्विकी = सात्त्विकी	त्रिविधा = तीनों प्रकारकी
च = और	एव = ही
	भवति = होती है
	ताम् = उसको (तूं)
	(मत्तः) = मेरेसे
	शृणु = सुन

श्रद्धाके अनुसार सत्त्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत ।

पुरुषकी स्थिति-
का कथन ।

श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः ॥३॥

सत्त्वानुरूपा, सर्वस्य, श्रद्धा, भवति, भारत,
श्रद्धामयः, अयम्, पुरुषः, यः, यच्छ्रद्धः, सः, एव, सः ॥३॥

भारत = हे भारत	भवति = होती है (तथा)
सर्वस्य = सभी मनुष्योंकी	अयम् = यह
श्रद्धा = श्रद्धा	पुरुषः = पुरुष
सत्त्वानु- रूपा = { उनके अन्तः- करणके अनुरूप	श्रद्धामयः = श्रद्धामय है (अतः) = इसलिये यः = जो पुरुष

* अनन्त जन्मोंमें किये हुए कर्मोंके सञ्चित संस्कारोंसे उत्पन्न हुई

श्रद्धा स्वभावजा श्रद्धा कही जाती है ।

यच्छूद्रः = जैसी श्रद्धावाला है | एव = भी
 सः = वह स्वयम् | सः = वही है

अर्थात् जैसी जिसकी श्रद्धा है वैसा ही उसका स्वरूप है ।

देव, यक्ष और यजन्ते सात्त्विका देवान्यक्षरक्षांसि राजसाः ।

प्रेतादिके पूजन- प्रेतान्भूतगणांश्चान्ये यजन्ते तामसा जनाः ॥

से त्रिविध श्रद्धा- युक्त पुरुषोंकी यजन्ते, सात्त्विकाः, देवान्, यक्षरक्षांसि, राजसाः,

पहिचान । प्रेतान्, भूतगणान्, च, अन्ये, यजन्ते, तामसाः, जनाः ॥४॥

उनमें-

सात्त्विकाः = सात्त्विक पुरुष	(तथा)
(तो)	अन्ये = अन्य (जो)
देवान् = देवोंको	तामसाः = तामस
यजन्ते = पूजते हैं (और)	जनाः = मनुष्य हैं (वे)
राजसाः = राजस पुरुष	प्रेतान् = प्रेत
यक्षरक्षांसि = { यक्ष और	च = और
{ राक्षसोंको	भूतगणान् = भूतगणोंको
(पूजते हैं)	यजन्ते = पूजते हैं

शास्त्रसे विरुद्ध अशास्त्रविहितं घोरं तप्यन्ते ये तपो जनाः ।

घोर तप करने- दम्भाहंकारसंयुक्ताः कामरागबलान्विताः ॥५॥

वालोंकी निन्दा। अशास्त्रविहितम्, घोरम्, तप्यन्ते, ये, तपः, जनाः,
 दम्भाहंकारसंयुक्ताः, कामरागबलान्विताः ॥ ५ ॥

और हे अर्जुन-

ये = जो	(केवल मनोकल्पित)
जनाः = मनुष्य	घोरम् = घोर
अशास्त्र-	तपः = तपको
विहितम् = { शास्त्रविधिसे	तप्यन्ते = तपते हैं (तथा)
{ रहित	

दम्भाहंकार-
संयुक्ताः = { दम्भ और
अहंकारसे
युक्त
(एवं)

कामराग-
बलान्विताः = { कामना,
आसक्ति
और बलके
अभिमानसे
भी युक्त हैं

[„] कर्षयन्तः शरीरस्थं भूतग्राममचेतसः ।

मां चैवान्तःशरीरस्थं तान्विद्ध्यासुरनिश्चयान् ॥

कर्षयन्तः, शरीरस्थम्, भूतग्रामम्, अचेतसः, माम्,
च, एव, अन्तःशरीरस्थम्, तान्, विद्धि, आसुरनिश्चयान् ॥६॥

तथा जो-

शरीरस्थम् = शरीररूपसे स्थित

भूतग्रामम् = भूतसमुदायको*

च = और

अन्तः- = { अन्तःकरणमें

शरीरस्थम् = { स्थित

माम् = मुझ अन्तर्यामीको

एव = भी

कर्षयन्तः = कृश करनेवाले हैं†

तान् = उन

अचेतसः = अज्ञानियोंको (तूं)

आसुर-निश्चयान् = { आसुरी स्वभाव-
वाले

विद्धि = जान

आहार, यज्ञ, आहारस्त्वपि सर्वस्य त्रिविधो भवति प्रियः ।

तप और दानके यज्ञस्तपस्तथा दानं तेषां भेदमिमं शृणु ॥७॥

भेदोंको सुननेके आहारः, तु, अपि, सर्वस्य, त्रिविधः, भवति, प्रियः,

लिये भगवान्की आज्ञा । यज्ञः, तपः, तथा, दानम्, तेषाम्, भेदम्, इमम्, शृणु ॥७॥

* अर्थात् शरीर, मन और इन्द्रियादिकोंके रूपमें परिणत हुए आकाशादि पांच भूतोंको ।

† शास्त्रसे विरुद्ध उपवासादि घोर आचरणोंद्वारा शरीरको सुखाना एवं भगवान्के अंशस्वरूप जीवात्माको क्लेश देना भूतसमुदायको और अन्तर्यामी परमात्माको कृश करना है ।

और हे अर्जुन ! जैसे श्रद्धा तीन प्रकारकी होती है वैसे ही—

आहारः= भोजन	यज्ञः = यज्ञ
अपि = भी	तपः = तप (और)
सर्वस्य = सबको (अपनी अपनी प्रकृतिके अनुसार)	दानम् = दान भी (तीन तीन प्रकारके होते हैं)
त्रिविधः= तीन प्रकारका	तेषाम् = उनके
प्रियः = प्रिय	इमम् = इस
भवति = होता है	भेदम् = न्यारे न्यारे भेदको (तूं मेरेसे)
तु = और	शृणु = सुन
तथा = वैसे ही	

सात्त्विक आहार
के लक्षण ।

आयुःसत्त्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः ।

रस्याः स्निग्धाः स्थिरा हृद्या आहाराः सात्त्विकप्रियाः

आयुःसत्त्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः,

रस्याः, स्निग्धाः, स्थिराः, हृद्याः, आहाराः, सात्त्विकप्रियाः॥८॥

आयुः = आयु	स्थिराः = स्थिर रहनेवाले* (तथा)
सत्त्व = बुद्धि	
बल = बल	हृद्याः = { स्वभावसे ही मन- को प्रिय (ऐसे)
आरोग्य = आरोग्य	
सुख = सुख (और)	आहाराः = { आहार अर्थात् भोजन करनेके पदार्थ (तो)
प्रीति = प्रीतिको	
विवर्धनाः= बढ़ानेवाले (एवं)	सात्त्विक- = { सात्त्विक पुरुष- प्रियाः = { को प्रिय होते हैं
रस्याः = रसयुक्त	
स्निग्धाः = चिकने (और)	

* जिस भोजनका सार शरीरमें बहुत कालतक रहता है उसको स्थिर रहनेवाला कहते हैं ।

राजस आहार-
के लक्षण ।

कट्वम्ललवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः ।

आहारा राजसस्येष्टा दुःखशोकामयप्रदाः ॥६॥

कट्वम्ललवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः,

आहाराः, राजसस्य, इष्टाः, दुःखशोकामयप्रदाः ॥९॥

और-

कटु	= कडुवे	दुःखशोका-	{ दुःख चिन्ता
अम्ल	= खट्टे	मयप्रदाः	{ और रोगोंको
लवण	= लवणयुक्त (और)		{ उत्पन्न करने-
अत्युष्ण	= अति गरम (तथा)	आहाराः	{ आहार अर्थात्
तीक्ष्ण	= तीक्ष्ण		{ भोजन करने-
रूक्ष	= रूखे (और)	राजसस्य	{ के पदार्थ
विदाहिनः	= दाहकारक (एवं)	इष्टाः	{ राजस पुरुषको
			{ प्रिय होते हैं

तामस आहारके
लक्षण ।

यातयामं गतरसं पूति पर्युषितं च यत् ।

उच्छिष्टमपि चामेध्यं भोजनं तामसप्रियम् ॥१०॥

यातयामम्, गतरसम्, पूति, पर्युषितम्, च, यत्,

उच्छिष्टम्, अपि, च, अमेध्यम्, भोजनम्, तामसप्रियम् ॥१०॥

तथा-

यत्	= जो	पूति	= दुर्गन्धयुक्त (एवं)
भोजनम्	= भोजन	पर्युषितम्	= बासी (और)
यातयामम्	= अधपका	उच्छिष्टम्	= उच्छिष्ट है
गतरसम्	= रसरहित	च	= तथा (जो)
च	= और	अमेध्यम्	= अपवित्र

अपि = भी है | तामस- = { तामस पुरुषको
(तत्) = वह (भोजन) | प्रियम् = { प्रिय होता है

सात्त्विक यज्ञके अफलाकाङ्क्षिभिर्यज्ञो विधिदृष्टो य इज्यते ।

लक्षण ।

यष्टव्यमेवेति मनः समाधाय स सात्त्विकः ॥११॥

अफलाकाङ्क्षिभिः, यज्ञः, विधिदृष्टः, यः, इज्यते,

यष्टव्यम्, एव, इति, मनः, समाधाय, सः, सात्त्विकः ॥११॥

और हे अर्जुन-

यः	= जो	मनः	= मनको
यज्ञः	= यज्ञ	समाधाय	= समाधान करके
विधिदृष्टः	= { शास्त्रविधिसे नियत किया हुआ है (तथा)	अफला- काङ्क्षिभिः	= { फलको न चाहनेवाले पुरुषोंद्वारा
यष्टव्यम्	= { करना ही कर्तव्य है	इज्यते	= किया जाता है
एव	=	सः	= वह (यज्ञ तो)
इति	= ऐसे	सात्त्विकः	= सात्त्विक है

राजस यज्ञके अभिसन्धाय तु फलं दम्भार्थमपि चैव यत् ।

लक्षण ।

इज्यते भरतश्रेष्ठ तं यज्ञं विद्धि राजसम् ॥१२॥

अभिसन्धाय, तु, फलम्, दम्भार्थम्, अपि, च, एव, यत्,

इज्यते, भरतश्रेष्ठ, तम्, यज्ञम्, विद्धि, राजसम् ॥१२॥

तु	= और	च	= अथवा
भरतश्रेष्ठ	= हे अर्जुन	फलम्	= फलको
यत्	= जो (यज्ञ)	अपि	= भी
दम्भार्थम्	= { केवल दम्भा- चरणके ही लिये	अभिसन्धाय	= उद्देश्य रखकर
एव	=	इज्यते	= किया जाता है

तम् = उस

राजसम् = राजस

यज्ञम् = यज्ञको (तुं)

विद्धि = जान

तामस यज्ञके विधिहीनमसृष्टान्नं मन्त्रहीनमदक्षिणम् ।

लक्षण ।

श्रद्धाविरहितं यज्ञं तामसं परिचक्षते ॥१३॥

विधिहीनम्, असृष्टान्नम्, मन्त्रहीनम्, अदक्षिणम्,

श्रद्धाविरहितम्, यज्ञम्, तामसम्, परिचक्षते ॥१३॥

तथा—

विधिहीनम् = { शास्त्रविधिसे
हीन (और)

(और)

श्रद्धा- = { विना श्रद्धाके
विरहितम् = { किये हुएअसृष्टान्नम् = { अन्नदानसे
रहित (एवं)

यज्ञम् = यज्ञको

मन्त्रहीनम् = विना मन्त्रोंके

तामसम् = तामस (यज्ञ)

अदक्षिणम् = विना दक्षिणाके

परिचक्षते = कहते हैं

शारीरिक तपके देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनं शौचमार्जवम् ।

लक्षण ।

ब्रह्मचर्यमहिंसा च शारीरं तप उच्यते ॥१४॥

देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनम्, शौचम्, आर्जवम्,

ब्रह्मचर्यम्, अहिंसा, च, शारीरम्, तपः, उच्यते ॥१४॥

तथा हे अर्जुन—

देव = देवता

शौचम् = पवित्रता

द्विज = ब्राह्मण

आर्जवम् = सरलता

गुरु = गुरु* (और)

ब्रह्मचर्यम् = ब्रह्मचर्य

प्राज्ञ = ज्ञानीजनोंका

च = और

पूजनम् = पूजन (एवं)

अहिंसा = अहिंसा

* यहाँ गुरु शब्दसे माता, पिता, आचार्य और वृद्ध एवं अपनेसे जो किसी प्रकार भी बड़े हों, उन सबको समझना चाहिये ।

(यह) तपः = तप
 शरीरम् = शरीरसंबन्धी उच्यते = कहा जाता है

वाणीसंबन्धी तप अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत् ।
 के लक्षण ।

स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते ॥१५॥

अनुद्वेगकरम्, वाक्यम्, सत्यम्, प्रियहितम्, च, यत्,
 स्वाध्यायाभ्यसनम्, च, एव, वाङ्मयम्, तपः, उच्यते ॥१५॥

च	= तथा	स्वाध्याया- भ्यसनम्	= { वेद शास्त्रोंके पढ़नेका एवं परमेश्वरके नाम जपनेका अभ्यास है
यत्	= जो		
अनुद्वेग-	= { उद्वेगको न करनेवाला		
करम्			
प्रियहितम्	= { प्रिय और हितकारक		
	(एवं)	(तत्)	= वह
सत्यम्	= यथार्थ	एव	= निःसन्देह
वाक्यम्	= भाषण है *	वाङ्मयम्	= वाणीसंबन्धी
च	= और (जो)	तपः	= तप
		उच्यते	= कहा जाता है

मानसिक तपके मनःप्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः ।

लक्षण ।

भावसंशुद्धिरित्येतत्तपो मानसमुच्यते ॥१६॥

मनःप्रसादः, सौम्यत्वम्, मौनम्, आत्मविनिग्रहः,
 भावसंशुद्धिः, इति, एतत्, तपः, मानसम्, उच्यते ॥१६॥

तथा-

मनः-	= { मनकी प्रसन्नता	(और)
प्रसादः		सौम्यत्वम् = शान्तभाव(एवं)

* मन और इन्द्रियोंद्वारा जैसा अनुभव किया हो, ठीक वैसा ही कहनेका नाम यथार्थ भाषण है ।

मौनम्	= { भगवत्-चिन्तन करनेका स्वभाव	इति	= ऐसे
आत्म-	= { मनका निग्रह	एतत्	= यह
विनिग्रहः	= { (और)	मानसम्	= मनसंबन्धी
भाव-	= { अन्तःकरणकी	तपः	= तप
संशुद्धिः	= { पवित्रता	उच्यते	= कहा जाता है

सात्त्विक तपके लक्षण । श्रद्धया परया तप्तं तपस्तत्त्रिविधं नरैः ।

अफलाकाङ्क्षिभिर्युक्तैः सात्त्विकं परिचक्षते ॥१७॥

श्रद्धया, परया, तप्तम्, तपः, तत्, त्रिविधम्, नरैः,

अफलाकाङ्क्षिभिः, युक्तैः, सात्त्विकम्, परिचक्षते ॥१७॥

परन्तु हे अर्जुन -

अफला-	= { फलको न	तप्तम्	= किये हुए
काङ्क्षिभिः	= { चाहनेवाले	तत्	= उस (पूर्वोक्त)
युक्तैः	= निष्कामी योगी	त्रिविधम्	= तीन प्रकारके
नरैः	= पुरुषोंद्वारा	तपः	= तपको (तो)
परया	= परम	सात्त्विकम्	= सात्त्विक
श्रद्धया	= श्रद्धासे	परिचक्षते	= कहते हैं

राजस तपके लक्षण । सत्कारमानपूजार्थं तपो दम्भेन चैव यत् ।

क्रियते तदिह प्रोक्तं राजसं चलमध्रुवम् ॥१८॥

सत्कारमानपूजार्थम्, तपः, दम्भेन, च, एव, यत्,

क्रियते, तत्, इह, प्रोक्तम्, राजसम्, चलम्, अध्रुवम् ॥१८॥

च	= और	सत्कार-	= { सत्कार,
यत्	= जो	मानपूजार्थम्	= { मान और
तपः	= तप		= { पूजाके लिये

(वा)	= अथवा	चलम्	= क्षणिक फलवाला
दम्भेन	= केवल पाखण्डसे		(तप)
एव	= ही	इह	= यहां
क्रियते	= किया जाता है	राजसम्	= राजस
तत्	= वह	प्रोक्तम्	= कहा गया है
अध्रुवम्	= अनिश्चित* (और)		

तामस तपके लक्षण । मूढग्राहेणात्मनो यत्पीडया क्रियते तपः ।

परस्योत्सादनार्थं वा तत्तामसमुदाहृतम् ॥१६॥

मूढग्राहेण, आत्मनः, यत्, पीडया, क्रियते, तपः,

परस्य, उत्सादनार्थम्, वा, तत्, तामसम्, उदाहृतम् ॥१९॥

और-

यत्	= जो	परस्य	= दूसरेका
तपः	= तप	उत्साद-	= { अनिष्ट करनेके
मूढग्राहेण	= मूढतापूर्वक हठसे	नार्थम्	= { लिये
आत्मनः	= { मन, वाणी	क्रियते	= किया जाता है
	{ और शरीरकी	तत्	= वह (तप)
पीडया	= पीड़ाके सहित	तामसम्	= तामस
वा	= अथवा	उदाहृतम्	= कहा गया है

सात्त्विक दान के लक्षण । दातव्यमिति यद्दानं दीयतेऽनुपकारिणे ।

देशे काले च पात्रे च तद्दानं सात्त्विकं स्मृतम् ॥

दातव्यम्, इति, यत्, दानम्, दीयते, अनुपकारिणे,

देशे, काले, च, पात्रे, च, तत्, दानम्, सात्त्विकम्, स्मृतम् ॥२०॥

* अनिश्चित फलवाला उसको कहते हैं कि जिसका फल होने न होनेमें शङ्का हो ।

च	= और (हे अर्जुन)	पात्रे	= { पात्रके प्राप्ति होनेपर
दातव्यम्	= { दान देना ही कर्तव्य है	अनुप- कारिणे	= { प्रत्युपकार न करनेवालेके लिये
इति	= ऐसे भावसे	दीयते	= दिया जाता है
यत्	= जो	तत्	= वह
दानम्	= दान	दानम्	= दान (तो)
देशे	= देश*	सात्त्विकम्	= सात्त्विक
काले	= काल †	स्मृतम्	= कहा गया है
च	= और		

राजस दानके यत्तु प्रत्युपकारार्थं फलमुद्दिश्य वा पुनः ।

लक्षण ।

दीयते च परिक्लिष्टं तद्दानं राजसं स्मृतम् ॥२१॥

यत्, तु, प्रत्युपकारार्थम्, फलम्, उद्दिश्य, वा, पुनः,
दीयते, च, परिक्लिष्टम्, तत्, दानम्, राजसम्, स्मृतम् ॥

तु	= और	च	= तथा
यत्	= जो दान	प्रत्युप- कारार्थम्	= { प्रत्युपकारके प्रयोजनसे X
परिक्लिष्टम्	= क्लेशपूर्वकः		

*-† जिस देश-कालमें जिस वस्तुका अभाव हो वही देश-काल उस वस्तुद्वारा प्राणियोंकी सेवा करनेके लिये योग्य समझा जाता है ।

‡ भूखे, अनाथ, दुःखी, रोगी और असमर्थ तथा भिक्षुक आदि तो अन्न, वस्त्र और ओषधि एवं जिस वस्तुका जिसके पास अभाव हो उस वस्तुद्वारा सेवा करनेके लिये योग्य पात्र समझे जाते हैं और श्रेष्ठ आचरणों-वाले विद्वान् ब्राह्मणजन धनादि सब प्रकारके पदार्थोंद्वारा सेवा करनेके लिये योग्य पात्र समझे जाते हैं ।

§ जैसे प्रायः वर्तमान समयके चन्दे चिट्टे आदिमें धन दिया जाता है ।

X अर्थात् बदलेमें अपना सांसारिक कार्य सिद्ध करनेकी आशासे ।

वा	= अथवा	तत्	= वह
फलम्	= फलको	दानम्	= दान
उद्दिश्य	= उद्देश्य रखकर*	राजसम्	= राजस
पुनः	= फिर	स्मृतम्	= कहा गया है
दीयते	= दिया जाता है		

तामस दान अदेशकाले यदानमपात्रेभ्यश्च दीयते ।

के लक्षण ।

असत्कृतमवज्ञातं तत्तामसमुदाहृतम् ॥२२॥

अदेशकाले, यत्, दानम्, अपात्रेभ्यः, च, दीयते,

असत्कृतम्, अवज्ञातम्, तत्, तामसम्, उदाहृतम् ॥२२॥

च	= और	अदेशकाले =	{ अयोग्य
यत्	= जो		{ देश-कालमें
दानम्	= दान	अपात्रेभ्यः =	कुपात्रोंके लिये†
असत्कृतम् =	{ बिना सत्कार	दीयते	= दिया जाता है
	{ किये	तत्	= वह (दान)
(वा)	= अथवा	तामसम्	= तामस
अवज्ञातम् =	तिरस्कारपूर्वक	उदाहृतम्	= कहा गया है

ॐ तत्सत्की ॐ तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः ।

महिमा ।

ब्राह्मणास्तेन वेदाश्च यज्ञाश्च विहिताः पुरा ॥

ॐ तत्सत्, इति, निर्देशः, ब्रह्मणः, त्रिविधः, स्मृतः,

ब्राह्मणाः, तेन, वेदाः, च, यज्ञाः, च, विहिताः, पुरा ॥२३॥

* अर्थात् मान, बड़ाई, प्रतिष्ठा और स्वर्गादिकी प्राप्तिके लिये अथवा रोगादिकी निवृत्तिके लिये ।

† अर्थात् मद्य-मांसादि अभक्ष्य वस्तुओंके खानेवालों एवं चोरी जारी आदि नीचकर्म करनेवालोंके लिये ।

और हे अर्जुन-

ॐ	= ॐ	तेन	= उसीसे
तत्	= तत्	पुरा	= { सृष्टिके
सत्	= सत्		{ आदिकालमें
इति	= ऐसे (यह)	ब्राह्मणाः	= ब्राह्मण
त्रिविधः	= तीन प्रकारका	च	= और
ब्रह्मणः	= { सच्चिदानन्दधन	वेदाः	= वेद
	{ ब्रह्मका	च	= तथा
निर्देशः	= नाम	यज्ञाः	= यज्ञादिक
स्मृतः	= कहा है	विहिताः	= रचे गये हैं

ओंकारके प्रयोग
की व्याख्या ।

तस्मादोमित्युदाहृत्य यज्ञदानतपःक्रियाः ।

प्रवर्तन्ते विधानोक्ताः सततं ब्रह्मवादिनाम् ॥२४॥

तस्मात्, ॐ, इति, उदाहृत्य, यज्ञदानतपःक्रियाः,

प्रवर्तन्ते, विधानोक्ताः, सततम्, ब्रह्मवादिनाम् ॥२४॥

तस्मात्	= इसलिये	सततम्	= सदा
ब्रह्म-	{ वेदको कथन	ॐ	= ॐ
वादिनाम्	{ करनेवाले	इति	= ऐसे
	{ श्रेष्ठ पुरुषोंकी		(इस परमात्माके
विधानोक्ताः	{ शास्त्रविधिसे		नामको)
	{ नियत की हुई	उदाहृत्य	= उच्चारण करके
यज्ञदान-	{ यज्ञ, दान और		(ही)
तपःक्रियाः	{ तप रूपक्रियायें	प्रवर्तन्ते	= आरम्भ होती हैं

तत् शब्दके
प्रयोगकी व्याख्या

तदित्यनभिसंधाय फलं यज्ञतपःक्रियाः ।

दानक्रियाश्च विविधाः क्रियन्ते मोक्षकाङ्क्षिभिः ॥

तत्, इति, अनभिसंधाय, फलम्, यज्ञतपःक्रियाः,
दानक्रियाः, च, विविधाः, क्रियन्ते, मोक्षकाङ्क्षिभिः ॥२५॥

और—

तत्	= { तत् अर्थात् तत् नामसे कहे जाने- वाले परमात्माका ही यह सब है	यज्ञतपः- क्रियाः	= { यज्ञ तपरूप क्रियायें
इति	= ऐसे (इस भावसे)	च	= तथा
फलम्	= फलको	दानक्रियाः	= { दानरूप क्रियायें
अनभि- संधाय }	= न चाहकर	मोक्ष- काङ्क्षिभिः	= { कल्याणकी इच्छावाले पुरुषोंद्वारा
विविधाः	= नाना प्रकारकी	क्रियन्ते	= की जाती हैं

सत् शब्दके
प्रयोग की
व्याख्या ।

सद्भावे साधुभावे च सदित्येतत्प्रयुज्यते ।

प्रशस्ते कर्मणि तथा सच्छब्दः पार्थ युज्यते ॥२६॥

सद्भावे, साधुभावे, च, सत्, इति, एतत्, प्रयुज्यते,
प्रशस्ते, कर्मणि, तथा, सत्, शब्दः, पार्थ, युज्यते ॥२६॥

और—

सत्	= सत्	प्रयुज्यते=	{ प्रयोग किया जाता है
इति	= ऐसे	तथा	= तथा
एतत्	= यह (परमात्माका नाम)	पार्थ	= हे पार्थ
सद्भावे	= सत्यभावमें	प्रशस्ते	= उत्तम
च	= और	कर्मणि	= कर्ममें (भो)
साधुभावे	= श्रेष्ठभावमें	सत्	= सत्

शब्दः = शब्द । युज्यते = प्रयोग किया जाता है

[„] यज्ञे तपसि दाने च स्थितिः सदिति चोच्यते ।

कर्म चैव तदर्थीयं सदित्येवाभिधीयते ॥२७॥

यज्ञे, तपसि, दाने, च, स्थितिः, सत्, इति, च, उच्यते,
कर्म, च, एव, तदर्थीयम्, सत्, इति, एव, अभिधीयते ॥२७॥

च = तथा

यज्ञे = यज्ञ

तपसि = तप

च = और

दाने = दानमें

(या) = जो

स्थितिः = स्थिति है

(सा) = वह

एव = भी

सत् = सत् है

इति = ऐसे

उच्यते = कही जाती है

च = और

तदर्थीयम् = { उस परमात्माके
अर्थ किया हुआ

कर्म = कर्म

एव = निश्चयपूर्वक

सत् = सत् है

इति = ऐसे

अभिधीयते = कहा जाता है

अश्रद्धासे किये अश्रद्धया हुतं दत्तं तपस्तप्तं कृतं च यत् ।

इष्ट कर्मकी
निन्दा ।

असदित्युच्यते पार्थ न च तत्प्रेत्य नो इह ॥२८॥

अश्रद्धया, हुतम्, दत्तम्, तपः, तप्तम्, कृतम्, च, यत्,

असत्, इति, उच्यते, पार्थ, न, च, तत्, प्रेत्य, नो, इह ॥२८॥

और—

पार्थ = हे अर्जुन

अश्रद्धया = बिना श्रद्धाके

हुतम् = { होमा हुआ

हवन (तथा)

दत्तम् = दिया हुआ दान (एवं)

तप्तम् = तपा हुआ

तपः = तप

च = और

यत् = जो (कुछ भी)

कृतम् = किया हुआ कर्म है

(तत्) = वह (समस्त)	नो = न (तो)
असत् = असत्	इह = इसलोकमें (लाभदायक है)
इति = ऐसे	च = और
उच्यते = कहा जाता है	न = न
(इसलिये)	प्रेत्य = मरनेके पीछे
तत् = वह	(ही लाभदायक है)

इसलिये मनुष्यको चाहिये कि सच्चिदानन्दधन परमात्माके नामका निरन्तर चिन्तन करता हुआ निष्कामभावसे केवल परमेश्वरके लिये शास्त्रविधिसे नियत किये हुए कर्मोंका परम श्रद्धा और उत्साहके सहित आचरण करे ।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे श्रद्धात्रयविभागयोगो नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥

अथाष्टादशोऽध्यायः

प्रधान विषय-१ से १२ तक त्यागका विषय । (१३-१८) कर्मोंके होनेमें सांख्यसिद्धान्तका कथन । (१९-४०) तीनों गुणोंके अनुसार ज्ञान, कर्म, कर्ता, बुद्धि, धृति और सुखके पृथक्पृथक् भेद । (४१-४८) फलसहित वर्णधर्मका विषय । (४९-५५) ज्ञाननिष्ठाका विषय । (५६-६६) भक्ति-सहित निष्काम कर्मयोगका विषय । (६७-७८) श्रीगीताज्ञाका माहात्म्य ।

अर्जुन उवाच

संन्यास और त्यागका तत्त्व जाननेके लिये अर्जुनका प्रश्न । संन्यासस्य महाबाहो तत्त्वमिच्छामि वेदितुम् ।
त्यागस्य च हृषीकेश पृथक्केशिनिषूदन ॥१॥
संन्यासस्य, महाबाहो, तत्त्वम्, इच्छामि, वेदितुम्,
त्यागस्य, च, हृषीकेश, पृथक्, केशिनिषूदन ॥१॥

उसके उपरान्त अर्जुन बोला-

महाबाहो = हे महाबाहो । हृषीकेश = हे अन्तर्यामिन्

केशि-	= { हे वासुदेव	तत्त्वम्	= तत्त्वको
निषूदन	= { (मैं)	पृथक्	= पृथक् पृथक्
संन्यासस्य	= संन्यास	वेदितुम्	= जानना
च	= और	इच्छामि	= चाहता हूँ
त्यागस्य	= त्यागके		

श्रीभगवानुवाच

त्वागके विषयमें दूसरों के ४ सिद्धान्तों का कथन ।

काम्यानां कर्मणां न्यासं संन्यासं कवयो विदुः ।

सर्वकर्मफलत्यागं प्राहुस्त्यागं विचक्षणाः ॥२॥

काम्यानाम्, कर्मणाम्, न्यासम्, संन्यासम्, कवयः, विदुः,
सर्वकर्मफलत्यागम्, प्राहुः, त्यागम्, विचक्षणाः ॥२॥

इस प्रकार अर्जुनके पूछनेपर श्रीकृष्ण भगवान् बोले, हे अर्जुन ! कितने ही-

कवयः = पण्डितजन (तो) (च) = और (कितने ही)

काम्यानाम् = काम्य*

कर्मणाम् = कर्मोंके

न्यासम् = त्यागको

संन्यासम् = संन्यास

विदुः = जानते हैं

विचक्षणाः = { विचारकुशल
पुरुष

सर्वकर्म-फलत्यागम् = { सबकर्मोंके फल-
के त्यागको †

* स्त्री, पुत्र और धन आदि प्रिय वस्तुओंका प्राप्तिके लिये तथा रोग-सङ्कटादिकी निवृत्तिके लिये जो यज्ञ, दान, तप और उपासना आदि कर्म किये जाते हैं, उनका नाम 'काम्यकर्म' है ।

† ईश्वरकी भक्ति, देवताओंका पूजन, माता-पिता आदि गुरुजनोंकी सेवा, यज्ञ, दान और तप तथा वर्णाश्रमके अनुसार आजीविकाद्वारा गृहस्थका निर्वाह एवं शरीरसम्बन्धी खानपान इत्यादिक जितने कर्तव्य कर्म हैं उन सबमें इस लोक और परलोककी संपूर्ण कामनाओंके त्यागका नाम सब कर्मोंके फलका त्याग है ।

त्यागम् = त्याग

प्राहुः = कहते हैं

[„] त्याज्यं दोषवदित्येके कर्म प्राहुर्मनीषिणः ।

यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यमिति चापरे ॥३॥

त्याज्यम्, दोषवत्, इति, एके, कर्म, प्राहुः, मनीषिणः,

यज्ञदानतपःकर्म, न, त्याज्यम्, इति, च, अपरे ॥३॥

तथा-

एके = कई एक
मनीषिणः = विद्वान्
इति = ऐसे
प्राहुः = कहते हैं (कि)कर्म = कर्म (सभी)
दोषवत् = दोषयुक्त हैं
(इसलिये)त्याज्यम् = { त्यागनेके
योग्य हैंच = और
अपरे = दूसरे विद्वान्
इति = ऐसे

(आहुः) = कहते हैं (कि)

यज्ञदान- = { यज्ञ, दान और
तपःकर्म = { तपरूप कर्मन = { त्यागने योग्य
त्याज्यम् = { नहीं हैं

त्यागके विषयमें निश्चयं शृणु मे तत्र त्यागे भरतसत्तम ।

अपना निश्चय त्यागो हि पुरुषव्याघ्र त्रिविधः संप्रकीर्तितः ॥४॥

कहनेके लिये भगवान् का निश्चयम्, शृणु, मे, तत्र, त्यागे, भरतसत्तम,

कथन । त्यागः, हि, पुरुषव्याघ्र, त्रिविधः, संप्रकीर्तितः ॥ ४ ॥

परन्तु-

भरतसत्तम = हे अर्जुन

तत्र = उस

त्यागे = { त्यागके
विषयमें (तं)

मे = मेरे

निश्चयम् = निश्चयको

शृणु = सुन

पुरुषव्याघ्र = हे पुरुषश्रेष्ठ (वह)

त्यागः = त्याग (सात्त्विक राजस और तामस ऐसे)	त्रिविधः = तीनों प्रकारका हि = ही संप्रकीर्तितः = कहा गया है
---	--

यज्ञ, दान और
तप रूप कर्मोंके
त्यागका निषेध।

यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत् ।

यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम् ॥५॥

यज्ञदानतपःकर्म, न, त्याज्यम्, कार्यम्, एव, तत्,
यज्ञः, दानम्, तपः, च, एव, पावनानि, मनीषिणाम् ॥५॥

तथा—

यज्ञदान = { यज्ञ, दान और तपःकर्म = { तप रूप कर्म	यज्ञः = यज्ञ दानम् = दान
न = { त्यागनेके योग्य त्याज्यम् = { नहीं है (किन्तु)	च = और तपः = तप (यह तीनों)
तत् = वह	एव = ही
एव = निःसन्देह	मनीषिणाम् = { बुद्धिमान्* = { पुरुषोंको
कार्यम् = करना कर्तव्य है (क्योंकि)	पावनानि = { पवित्र करने- = { वाले हैं

यज्ञ, दान और
तप आदि कर्मों-
में फल तथा
आसक्ति के
त्यागका कथन।

एतान्यपि तु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा फलानि च ।

कर्तव्यानीति मे पार्थ निश्चितं मतमुत्तमम् ॥६॥

एतानि, अपि, तु, कर्माणि, सङ्गम्, त्यक्त्वा, फलानि, च,
कर्तव्यानि, इति, मे, पार्थ, निश्चितम्, मतम्, उत्तमम् ॥६॥

* वह मनुष्य बुद्धिमान् है जो कि फल और आसक्तिको त्यागकर
केवल भगवत्-अर्थ कर्म करता है ।

इसलिये—

पार्थ	= हे पार्थ	फलानि	= फलोंको
एतानि	= { यह यज्ञ, दान और तपस्वरूप कर्म	त्यक्त्वा	= त्यागकर (अवश्य)
तु	= तथा	कर्तव्यानि	= करने चाहिये
(अन्यानि)	= और	इति	= ऐसा
अपि	= भी	मे	= मेरा
कर्माणि	= संपूर्ण श्रेष्ठ कर्म	निश्चितम्	= { निश्चय किया हुआ
सङ्गम्	= आसक्तिको	उत्तमम्	= उत्तम
च	= और	मतम्	= मत है

तामस त्यागके
लक्षण ।

नियतस्य तु संन्यासः कर्मणो नोपपद्यते ।

मोहात्तस्य परित्यागस्तामसः परिकीर्तितः॥७॥

नियतस्य, तु, संन्यासः, कर्मणः, न, उपपद्यते,
मोहात्, तस्य, परित्यागः, तामसः, परिकीर्तितः ॥७॥

तु	= और (हे अर्जुन)	(इसलिये)	
नियतस्य	= नियत*	मोहात्	= मोहसे
कर्मणः	= कर्मका	तस्य	= उसका
संन्यासः	= त्याग करना	परित्यागः	= त्याग करना
न	} = योग्य नहीं है	तामसः	= तामस त्याग
उपपद्यते		परिकीर्तितः	= कहा गया है

राजस त्यागके
लक्षण ।

दुःखमित्येव यत्कर्म कायक्लेशभयात्त्यजेत् ।

स कृत्वा राजसं त्यागं नैव त्यागफलं लभेत् ॥८॥

दुःखम्, इति, एव, यत्, कर्म, कायक्लेशभयात्, त्यजेत्,
सः, कृत्वा, राजसम्, त्यागम्, न, एव, त्यागफलम्, लभेत् ॥८॥

* इसी अध्यायके श्लोक ४८ की टिप्पणीमें इसका अर्थ देखना चाहिये ।

और यदि कोई मनुष्य—

यत्	= जो (कुछ)	त्यजेत्	= त्याग कर दे (तो)
कर्म	= कर्म है	सः	= वह पुरुष (उस)
(तत्)	= वह (सब)	राजसम्	= राजस
एव	= ही	त्यागम्	= त्यागको
दुःखम्	= दुःखरूप है	कृत्वा	= करके
इति	= ऐसे (समझकर)	एव	= भी
कायक्लेश-	= { शारीरिक	त्यागफलम्	= त्यागके फलको
भयात्	= { क्लेशके भयसे	न	= { प्राप्त नहीं
	(कर्मोंका)	लभेत्	= { होता है—

अर्थात् उसका वह त्याग करना व्यर्थ ही होता है ।

सात्त्विक त्याग- कार्यमित्येव यत्कर्म नियतं क्रियतेऽर्जुन ।

के लक्षण ।

सङ्गं त्यक्त्वा फलं चैव स त्यागः सात्त्विको मतः॥

कार्यम्, इति, एव, यत्, कर्म, नियतम्, क्रियते, अर्जुन,

सङ्गम्, त्यक्त्वा, फलम्, च, एव, सः, त्यागः, सात्त्विकः, मतः॥९॥

और—

अर्जुन	= हे अर्जुन	सङ्गम्	= आसक्तिको
कार्यम्	= करना कर्तव्य है	च	= और
इति	= ऐसे (समझकर)	फलम्	= फलको
एव	= ही	त्यक्त्वा	= त्यागकर
यत्	= जो	क्रियते	= किया जाता है
नियतम्	= { शास्त्रविधिसे नियत	सः	= वह
	= { किया हुआ कर्तव्य	एव	= ही
कर्म	= कर्म	सात्त्विकः	= सात्त्विक

त्यागः = त्याग । मतः = माना गया है—

अर्थात् कर्तव्य कर्मोंको स्वरूपसे न त्यागकर उनमें जो आसक्ति और फलका त्यागना है वही सात्त्विक त्याग माना गया है ।

रागद्वेषके त्याग- न द्वेष्ट्यकुशलं कर्म कुशले नानुषज्जते ।

से त्यागी के लक्षण ।

त्यागी सत्त्वसमाविष्टो मेधावी छिन्नसंशयः॥१०॥

न, द्वेष्टि, अकुशलम्, कर्म, कुशले, न, अनुषज्जते,

त्यागी, सत्त्वसमाविष्टः, मेधावी, छिन्नसंशयः ॥१०॥

और है अर्जुन जो पुरुष—

अकुशलम् = { अकल्याण-
कारक

कर्म = कर्मसे (तो)

न = { द्वेष नहीं करता
द्वेष्टि = { है (और)

कुशले = { कल्याण-
कारक कर्ममें

न = { आसक्त नहीं
अनुषज्जते = { होता है (वह)

सत्त्व- = { शुद्धसत्त्वगुण-
समाविष्टः = { से युक्त हुआ
पुरुष

छिन्नसंशयः = संशय रहित

मेधावी = ज्ञानवान् (और)

त्यागी = त्यागी है

स्वरूपसे सर्व न हि देहभृता शक्यं त्यक्तुं कर्माण्यशेषतः ।

कर्म त्यागमें

अशक्यता का

कथन और कर्म-

फलके त्यागसे यः, तु, कर्मफलत्यागी, सः, त्यागी, इति, अभिधीयते ॥११॥

त्यागीका लक्षण हि

देहभृता

= क्योंकि

= { देहधारी
पुरुषके द्वारा

अशेषतः = संपूर्णतासे

कर्माणि = सब कर्म

त्यक्तुम् = त्यागे जानेको

नशक्यम् = शक्य नहीं हैं	सः = वह
(तस्मात्) = इससे	तु = ही
यः = जो पुरुष	त्यागी = त्यागी है
कर्मफल- = { कर्मोंके फलका	इति = ऐसे
त्यागी = { त्यागी है	अभिधीयते = कहा जाता है

सकामी पुरुषोंको अनिष्टमिष्टं मिश्रं च त्रिविधं कर्मणः फलम् ।
 कर्मफलकी प्राप्ति भवत्यत्यागिनां प्रेत्य न तु संन्यासिनां कचित् ॥
 और त्यागी पुरुषोंके लिये अनिष्टम्, इष्टम्, मिश्रम्, च, त्रिविधम्, कर्मणः, फलम्,
 सर्वथा कर्मफलके भवति, अत्यागिनाम्, प्रेत्य, न, तु, संन्यासिनाम्, कचित् । १२ ।
 अभावका कथन

तथा—

अत्यागिनाम् = { सकामी	प्रेत्य = { मरनेके
पुरुषोंके	{ पश्चात् (भी)
कर्मणः = कर्मका (ही)	भवति = होता है
इष्टम् = अच्छा	तु = और
अनिष्टम् = बुरा	संन्यासिनाम् = { त्यागी*
च = और	{ पुरुषोंके
मिश्रम् = मिला हुआ	(कर्मोंका फल)
(इति) = ऐसे	कचित् = { किसी
त्रिविधम् = तीन प्रकारका	{ कालमें भी
फलम् = फल	न = नहीं होता—

क्योंकि उनके द्वारा होनेवाले कर्म वास्तवमें कर्म नहीं हैं ।

* संपूर्ण कर्तव्यकर्मोंमें फल, आसक्ति और कर्तापनके अभिमानको
 जिसने त्याग दिया है उसीका नाम त्यागी है ।

संपूर्ण कर्मोंके पञ्चैतानि महाबाहो कारणानि निबोध मे ।
 होनेमें अधिष्ठा- सांख्ये कृतान्ते प्रोक्तानि सिद्धये सर्वकर्मणाम् ॥
 नादि पञ्च
 हेतुओं का पञ्च, एतानि, महाबाहो, कारणानि, निबोध, मे,
 निरूपण । सांख्ये, कृतान्ते, प्रोक्तानि, सिद्धये, सर्वकर्मणाम् ॥१३॥

और-

महाबाहो = हे महाबाहो	सांख्ये = सांख्य
सर्वकर्मणाम् = संपूर्ण कर्मोंकी	कृतान्ते = सिद्धान्तमें
सिद्धये = सिद्धिके लिये*	प्रोक्तानि = कहे गये हैं
एतानि = यह	(तानि) = उनको (तूं)
पञ्च = पांच	मे = मेरेसे
कारणानि = हेतु	निबोध = भली प्रकार जान

[„] अधिष्ठानं तथा कर्ता करणं च पृथग्विधम् ।

विविधाश्च पृथक्चेष्टा दैवं चैवात्र पञ्चमम् ॥१४॥

अधिष्ठानम्, तथा, कर्ता, करणम्, च, पृथग्विधम्,
 विविधाः, च, पृथक्, चेष्टाः, दैवम्, च, एव, अत्र, पञ्चमम् ॥१४॥

और हे अर्जुन-

अत्र = इस विषयमें	च = तथा
अधिष्ठानम् = आधार†	पृथग्विधम् = न्यारे न्यारे
च = और	करणम् = करण‡
कर्ता = कर्ता	च = और

* अर्थात् संपूर्ण कर्मोंके सिद्ध होनेमें ।

† जिसके आश्रय कर्म किये जाय उसका नाम आधार है ।

‡ जिन जिन इन्द्रियादि और साधनोंके द्वारा कर्म किये जाते हैं उनका नाम करण है ।

विविधाः	= नाना प्रकारकी	एव	= ही
पृथक्	= न्यारी न्यारी	पञ्चमम्	= पांचवां हेतु
चेष्टाः	= चेष्टा (एवं)	दैवम्	= दैव*
तथा	= वैसे		(कहा गया है)

[„] शरीरवाङ्मनोभिर्यत्कर्म प्रारभते नरः ।

न्याय्यं वा विपरीतं वा पञ्चैते तस्य हेतवः ॥१५॥

शरीरवाङ्मनोभिः, यत्, कर्म, प्रारभते, नरः,
न्याय्यम्, वा, विपरीतम्, वा, पञ्च, एते, तस्य, हेतवः ॥१५॥
क्योंकि—

नरः	= मनुष्य	यत्	= जो (कुछ)
शरीरवाङ्-	= { मन, वाणी	कर्म	= कर्म
मनोभिः	= { और शरीरसे	प्रारभते	= आरम्भ करता है
न्याय्यम्	= शास्त्रके अनुसार	तस्य	= उसके
वा	= अथवा	एते	= यह
विपरीतम्	= विपरीत	पञ्च	= पांचों (ही)
वा	= भी	हेतवः	= कारण हैं

आत्माको कर्ता तत्रैवं सति कर्तारमात्मानं केवलं तु यः ।

माननेवाले की पश्यत्यकृतबुद्धित्वान्न स पश्यति दुर्मतिः ॥१६॥

निन्दा ।

तत्र, एवम्, सति, कर्तारम्, आत्मानम्, केवलम्, तु, यः,
पश्यति, अकृतबुद्धित्वात्, न, सः, पश्यति, दुर्मतिः ॥१६॥

तु	= परन्तु	यः	= जो पुरुष
एवम्	= ऐसा	अकृत-	= { अशुद्धबुद्धि†
सति	= होनेपर भी	बुद्धित्वात्	= { होनेके कारण

* पूर्वकृत शुभाशुभ कर्मोंके संस्कारोंका नाम दैव है ।

† सत्सङ्ग और शास्त्रके अभ्याससे तथा भगवत्-अर्थ कर्म और उपासनाके

तत्र	= उस विषयमें	पश्यति	= देखता है
केवलम्	= { केवल शुद्ध- स्वरूप	सः	= वह
आत्मानम्	= आत्माको	दुर्मतिः	= { मलिन बुद्धि- वाला अज्ञानी
कर्तारम्	= कर्ता	न	= { यथार्थ नहीं देखता है

आत्माको अकर्ता
माननेवाले की
प्रशंसा ।

यस्य नाहंकृतो भावो बुद्धिर्यस्य न लिप्यते ।

हत्वापि स इमाँल्लोकान्न हन्ति न निबध्यते ॥१७॥

यस्य, न, अहंकृतः, भावः, बुद्धिः, यस्य, न, लिप्यते,
हत्वा, अपि, सः, इमान्, लोकान्, न, हन्ति, न, निबध्यते । १७।
और हे अर्जुन-

यस्य	= जिस पुरुषके (अन्तःकरणमें)	सः	= वह पुरुष
अहंकृतः	= मैं कर्ता हूँ (ऐसा)	इमान्	= इन
भावः	= भाव	लोकान्	= सब लोकोंको
न	= नहीं है (तथा)	हत्वा	= मारकर
यस्य	= जिसकी	अपि	= भी (वास्तवमें)
बुद्धिः	= बुद्धि (सांसारिक पदार्थोंमें और संपूर्ण कर्मोंमें)	न	= न (तो)
न	= { लिपायमान नहीं होती	हन्ति	= मारता है (और)
लिप्यते		न	= न
		निबध्यते	= पापसे बंधता है*

करनेसे मनुष्यकी बुद्धि शुद्ध होती है इसलिये जो उपरोक्त साधनोंसे रहित
है उसकी बुद्धि अशुद्ध है ऐसा समझना चाहिये ।

* जैसे अग्नि, वायु और जलके द्वारा प्रारब्धवश किसी प्राणीकी हिंसा
होती देखनेमें आवे तो भी वह वास्तवमें हिंसा नहीं है, वैसे ही जिस

कर्मप्रेरक और
कर्मसंग्रह का
निर्णय ।

ज्ञानं ज्ञेयं परिज्ञाता त्रिविधा कर्मचोदना ।

करणं कर्म कर्तेति त्रिविधः कर्मसंग्रहः ॥१८॥

ज्ञानम्, ज्ञेयम्, परिज्ञाता, त्रिविधा, कर्मचोदना,

करणम्, कर्म, कर्ता, इति, त्रिविधः, कर्मसंग्रहः ॥१८॥

तथा हे भारत-

परिज्ञाता	= ज्ञाता*	(और)
ज्ञानम्	= ज्ञान† (और)	कर्ता = कर्ता§
ज्ञेयम्	= ज्ञेय‡	करणम् = करण× (और)
त्रिविधा	= यह तीनों (तो)	कर्म = क्रिया+
कर्मचोदना	= कर्मके प्रेरक हैं अर्थात् इन तीनोंके संयोगसे तो कर्ममें प्रवृत्त होनेकी इच्छा उत्पन्न होती है	इति = यह त्रिविधः = तीनों कर्मसंग्रहः = कर्मके संग्रह हैं अर्थात् इन तीनोंके संयोगसे कर्म बनता है

पुरुषका देहमें अभिमान नहीं है और स्वार्थरहित केवल संसारके हितके लिये ही जिसकी सम्पूर्ण क्रियायें होती हैं उस पुरुषके शरीर और इन्द्रियों-द्वारा यदि किसी प्राणीकी हिंसा होती हुई लोकदृष्टिमें देखी जाय तो भी वह वास्तवमें हिंसा नहीं है क्योंकि आसक्ति, स्वार्थ और अहंकारके न होनेसे किसी प्राणीकी हिंसा हो ही नहीं सकती तथा बिना कर्तृत्व अभिमानके किया हुआ कर्म वास्तवमें अकर्म ही है इसलिये वह पुरुष पापसे नहीं बंधता है ।

* जाननेवालेका नाम ज्ञाता है ।

† जिसके द्वारा जाना जाय उसका नाम ज्ञान है ।

‡ जाननेमें आनेवाली वस्तुका नाम ज्ञेय है ।

§ कर्म करनेवालेका नाम कर्ता है ।

× जिन साधनोंसे कर्म किया जाय उनका नाम करण है ।

+ करनेका नाम क्रिया है ।

तीनों गुणोंके ज्ञानं कर्म च कर्ता च त्रिधैव गुणभेदतः ।
 अनुसार ज्ञान, प्रोच्यते गुणसंख्याने यथावच्छृणु तान्यपि ॥१६॥
 कर्म और कर्ताके ज्ञानम्, कर्म, च, कर्ता, च, त्रिधा, एव, गुणभेदतः,
 भेदोंको सुननेके प्रोच्यते, गुणसंख्याने, यथावत्, शृणु, तानि, अपि ॥१९॥
 लिये भगवान्-
 की आज्ञा । उन सबमें-

ज्ञानम्	= ज्ञान	गुणसंख्याने	= सांख्यशास्त्रमें
च	= और	त्रिधा	= { तीन तीन प्रकारसे
कर्म	= कर्म	प्रोच्यते	= कहे गये हैं
च	= तथा	तानि	= उनको
कर्ता	= कर्ता	अपि	= भी (तुं मेरेसे)
एव	= भी	यथावत्	= भली प्रकार
गुणभेदतः	= गुणोंके भेदसे	शृणु	= सुन

सात्त्विक ज्ञानके
लक्षण ।

सर्वभूतेषु येनैकं भावमव्ययमीक्षते ।

अविभक्तं विभक्तेषु तज्ज्ञानं विद्धि सात्त्विकम् ॥

सर्वभूतेषु, येन, एकम्, भावम्, अव्ययम्, ईक्षते,
 अविभक्तम्, विभक्तेषु, तत्, ज्ञानम्, विद्धि, सात्त्विकम् ॥२०॥

हे अर्जुन-

येन	= जिस ज्ञानसे (मनुष्य)	अविभक्तम्	= विभागरहित (समभावसे स्थित)
विभक्तेषु	= पृथक् पृथक्	ईक्षते	= देखता है
सर्वभूतेषु	= सब भूतोंमें	तत्	= उस
एकम्	= एक	ज्ञानम्	= ज्ञानको (तो तुं)
अव्ययम्	= अविनाशी	सात्त्विकम्	= सात्त्विक
भावम्	= परमात्मभावको	विद्धि	= जान

राजस ज्ञानके लक्षण । पृथक्त्वेन तु यज्ज्ञानं नानाभावान्पृथग्विधान् ।
वेत्ति सर्वेषु भूतेषु तज्ज्ञानं विद्धि राजसम् ॥

पृथक्त्वेन, तु, यत्, ज्ञानम्, नानाभावान्, पृथग्विधान्,
वेत्ति, सर्वेषु, भूतेषु, तत्, ज्ञानम्, विद्धि, राजसम् ॥२१॥

तु	= और	नाना-	} = अनेक भावोंको
यत्	= जो	भावान्	
ज्ञानम्	= ज्ञान अर्थात् जिस ज्ञानके द्वारा मनुष्य	पृथक्त्वेन	= न्यारा न्यारा करके
		वेत्ति	= जानता है
		तत्	= उस
सर्वेषु	= संपूर्ण	ज्ञानम्	= ज्ञानका (तूं)
भूतेषु	= भूतोंमें	राजसम्	= राजस
पृथग्विधान्	= भिन्नभिन्नप्रकारके	विद्धि	= जान

तामस ज्ञानके लक्षण । यत्तु कृत्स्नवदेकस्मिन्कार्ये सक्तमहैतुकम् ।

अतत्त्वार्थवदल्पं च तत्तामसमुदाहृतम् ॥२२॥

यत्, तु, कृत्स्नवत्, एकस्मिन्, कार्ये, सक्तम्, अहैतुकम्,
अतत्त्वार्थवत्, अल्पम्, च, तत्, तामसम्, उदाहृतम् ॥२२॥

तु	= और	कृत्स्नवत्	= { संपूर्णताके सदृश
यत्	= जो ज्ञान	सक्तम्	= आसक्त है*
एकस्मिन्	= एक	च	= तथा (जो)
कार्ये	= { कार्यरूप शरीरमें ही	अहैतुकम्	= बिना युक्तिवाला

* अर्थात् जिस विपरीत ज्ञानके द्वारा मनुष्य एक क्षणभंगुर नाशवान् शरीरको ही आत्मा मानकर उसमें सर्वस्वकी भांति आसक्त रहता है ।

अतच्चार्य- = { तत्त्व अर्थसे
वत् = { रहित (और)
अल्पम् = तुच्छ है

तत् = वह (ज्ञान)
तामसम् = तामस
उदाहृतम् = कहा गया है

सात्त्विक कर्मके
लक्षण ।

नियतं सङ्गरहितमरागद्वेषतः कृतम् ।

अफलप्रेप्सुना कर्म यत्तत्सात्त्विकमुच्यते ॥२३॥

नियतम्, सङ्गरहितम्, अरागद्वेषतः, कृतम्,
अफलप्रेप्सुना, कर्म, यत्, तत्, सात्त्विकम्, उच्यते ॥२३॥

तथा हे अर्जुन-

यत् = जो
कर्म = कर्म

नियतम् = { शास्त्रविधिसे
नियत किया
हुआ (और)

सङ्गरहितम् = { कर्तापनके अभि-
मानसे रहित

अफल- = { फलकोन चाहने-
प्रेप्सुना = { वाले पुरुषद्वारा
अराग- } = बिना रागद्वेषसे
द्वेषतः }
कृतम् = किया हुआ है
तत् = वह (कर्म तो)

सात्त्विकम् = सात्त्विक
उच्यते = कहा जाता है

राजस कर्मके

लक्षण ।

यत्तु कामेप्सुना कर्म साहंकारेण वा पुनः ।

क्रियते बहुलायासं तद्राजसमुदाहृतम् ॥२४॥

यत्, तु, कामेप्सुना, कर्म, साहंकारेण, वा, पुनः,
क्रियते, बहुलायासम्, तत्, राजसम्, उदाहृतम् ॥२४॥

तु = और
यत् = जो
कर्म = कर्म

बहुला- = { बहुत परिश्रमसे
यासम् = { युक्त है

पुनः = तथा

कामेप्सुना = { फलको
चाहनेवाले

वा = और

साहंकारेण = { अहंकारयुक्त | तत् = वह (कर्म)
 = { पुरुषद्वारा | राजसम् = राजस
 क्रियते = किया जाता है | उदाहृतम् = कहा गया है

तामस कर्मके लक्षण । अनुबन्धं क्षयं हिंसामनवेक्ष्य च पौरुषम् ।

मोहादारभ्यते कर्म यत्तत्तामसमुच्यते ॥२५॥

अनुबन्धम्, क्षयम्, हिंसाम्, अनवेक्ष्य, च, पौरुषम्,
 मोहात्, आरभ्यते, कर्म, यत्, तत्, तामसम्, उच्यते ॥२५॥

तथा—

यत्	= जो	अनवेक्ष्य	= न विचारकर
कर्म	= कर्म	मोहात्	= केवल अज्ञानसे
अनुबन्धम्	= परिणाम	आरभ्यते	= { आरम्भ किया
क्षयम्	= हानि		{ जाता है
हिंसाम्	= हिंसा	तत्	= वह कर्म
च	= और	तामसम्	= तामस
पौरुषम्	= सामर्थ्यको	उच्यते	= कहा जाता है

सात्त्विक कर्ताके लक्षण । मुक्तसङ्गोऽनहंवादी धृत्युत्साहसमन्वितः ।

सिद्धयसिद्धयोर्निर्विकारः कर्ता सात्त्विक उच्यते ॥

मुक्तसङ्गः, अनहंवादी, धृत्युत्साहसमन्वितः,

सिद्धयसिद्धयोः, निर्विकारः, कर्ता, सात्त्विकः, उच्यते ॥२६॥

तथा हे अर्जुन ! जो कर्ता—

मुक्तसङ्गः	= आसक्तिसे रहित	धृत्युत्साह-	= { धैर्य और उत्साह-
(और)		समन्वितः	{ से युक्त (एवं)
अनहंवादी	= { अहंकारके वचन	सिद्धय-	= { कार्यके सिद्ध होने
	{ न बोलनेवाला	सिद्धयोः	{ और न होनेमें

निर्विकारः = { हर्ष शोकादि | कर्ता = कर्ता (तो)
 विकारोंसे रहित | सात्त्विकः = सात्त्विक
 है (वह) उच्यते = कहा जाता है

राजस कर्ताके लक्षण । रागी कर्मफलप्रेप्सुर्लुब्धो हिंसात्मकोऽशुचिः ।

हर्षशोकान्वितः कर्ता राजसः परिकीर्तितः ॥

रागी, कर्मफलप्रेप्सुः, लुब्धः, हिंसात्मकः, अशुचिः,

हर्षशोकान्वितः, कर्ता, राजसः, परिकीर्तितः ॥२७॥

और जो-

रागी = आसक्तिसे युक्त | अशुचिः = अशुद्धाचारी
 कर्मफल- = { कर्मोंके फलको (और)
 प्रेप्सुः = { चाहनेवाला हर्ष- = { हर्ष शोकसे
 (और) शोकान्वितः = { लिपायमान है
 लुब्धः = लोभी है (तथा) (वह)
 हिंसात्मकः = { दूसरोंको कष्ट | कर्ता = कर्ता
 देनेके स्वभाव- राजसः = राजस
 वाला परिकीर्तितः = कहा गया है

तामस कर्ताके लक्षण । अयुक्तः प्राकृतः स्तब्धः शठो नैष्कृतिकोऽलसः ।

विषादी दीर्घसूत्री च कर्ता तामस उच्यते ॥२८॥

अयुक्तः, प्राकृतः, स्तब्धः, शठः, नैष्कृतिकः, अलसः,

विषादी, दीर्घसूत्री, च, कर्ता, तामसः, उच्यते ॥२८॥

तथा जो-

अयुक्तः = { विक्षेपयुक्त | शठः = धूर्त (और)
 चित्तवाला { दूसरेकी
 प्राकृतः = शिक्षासे रहित | नैष्कृतिकः = { आजीविकाका
 स्तब्धः = धमण्डी { नाशक (एवं)

विषादी = { शोक करनेके
स्वभाववाला

अलसः = आलसी

च = और

दीर्घसूत्री = दीर्घसूत्री*है (वह)
कर्ता = कर्ता

तामसः = तामस

उच्यते = कहा जाता है

तीनों गुणोंके अनुसार बुद्धि और धृतिके भेदोंको सुनने-के लिये भगवान् की आज्ञा ।
बुद्धेर्भेदं धृतेश्चैव गुणतस्त्रिविधं शृणु ।
प्रोच्यमानमशेषेण पृथक्त्वेन धनंजय ॥२६॥
बुद्धेः, भेदम्, धृतेः, च, एव, गुणतः, त्रिविधम्, शृणु,
प्रोच्यमानम्, अशेषेण, पृथक्त्वेन, धनंजय ॥२९॥
तथा-

धनंजय = हे अर्जुन (तू)

बुद्धेः = बुद्धिका

च = और

धृतेः = धारणशक्तिका

एव = भी

गुणतः = गुणोंके कारण

त्रिविधम् = तीन प्रकारका

भेदम् = भेद

अशेषेण = संपूर्णतासे

पृथक्त्वेन = विभागपूर्वक

(मया) = मेरेसे

प्रोच्यमानम् = कहा हुआ

शृणु = सुन

सात्त्विकी बुद्धि-के लक्षण ।
प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च कार्याकार्ये भयाभये ।

बन्धं मोक्षं च या वेत्ति बुद्धिः सा पार्थ सात्त्विकी ॥

प्रवृत्तिम्, च, निवृत्तिम्, च, कार्याकार्ये, भयाभये,
बन्धम्, मोक्षम्, च, या, वेत्ति, बुद्धिः, सा, पार्थ, सात्त्विकी ॥३०॥

पार्थ = हे पार्थ

प्रवृत्तिम् = प्रवृत्तिमार्ग†

* दीर्घसूत्री उसको कहा जाता है कि जो थोड़े कालमें होने लायक साधारण कार्यको भी फिर कर लेने ऐसी आशासे बहुत कालतक नहीं पूरा करता ।

† गृहस्थमें रहते हुए फल और आसक्तिको त्यागकर भगवत् अर्पण बुद्धिसे केवल लोकशिक्षाके लिये राजा जनककी भांति वर्तनेका नाम प्रवृत्तिमार्ग है ।

च	= और	बन्धम्	= बन्धन
निवृत्तिम्	= निवृत्तिमार्गको*	च	= और
च	= तथा	मोक्षम्	= मोक्षको
कार्या-	= { कर्तव्य और अकर्तव्यको (एवं)	या	= जो बुद्धि
कार्ये		वेत्ति	= तत्त्वसे जानती है
भयाभये	= भय और अभयको	सा	= वह
(तथा)		बुद्धिः	= बुद्धि (तो)
		सात्त्विकी	= सात्त्विकी है

राजसी बुद्धिके लक्षण । यया धर्ममधर्मं च कार्यं चाकार्यमेव च ।

अयथावत्प्रजानाति बुद्धिः सा पार्थ राजसी ॥

यया, धर्मम्, अधर्मम्, च, कार्यम्, च, अकार्यम्, एव, च,
अयथावत्, प्रजानाति, बुद्धिः, सा, पार्थ, राजसी ॥३१॥

और-

पार्थ	= हे पार्थ	च	= और
यया	= { जिस बुद्धिके द्वारा (मनुष्य)	अकार्यम्	= अकर्तव्यको
धर्मम्	= धर्म	एव	= भी
च	= और	अयथावत्	= यथार्थ नहीं
अधर्मम्	= अधर्मको	प्रजानाति	= जानता है
च	= तथा	सा	= वह
कार्यम्	= कर्तव्य	बुद्धिः	= बुद्धि
		राजसी	= राजसी है

* देहाभिमानको त्यागकर केवल सच्चिदानन्दधन परमात्मामें एकीभावसे स्थित हुए श्रीशुकदेवजी और सनकादिकोंकी भांति संसारसे उपराम होकर विचरनेका नाम निवृत्तिमार्ग है ।

तामसी बुद्धिके लक्षण । अधर्म धर्ममिति या मन्यते तमसावृता ।

सर्वार्थान्विपरीतांश्च बुद्धिः सा पार्थ तामसी ॥

अधर्मम्, धर्मम्, इति, या, मन्यते, तमसा, आवृता,
सर्वार्थान्, विपरीतान्, च, बुद्धिः, सा, पार्थ, तामसी ॥३२॥

और

पार्थ	= हे अर्जुन	च	= तथा (और भी)
या	= जो	सर्वार्थान्	= संपूर्ण अर्थोंको
तमसा	= तमोगुणसे	विपरीतान्	= विपरीत ही
आवृता	= आवृत हुई बुद्धि	(मन्यते)	= मानती है
अधर्मम्	= अधर्मको	सा	= वह
धर्मम्	= धर्म	बुद्धिः	= बुद्धि
इति	= ऐसा	तामसी	= तामसी है
मन्यते	= मानती है		

सात्त्विकी धृति के लक्षण । धृत्या यया धारयते मनःप्राणेन्द्रियक्रियाः ।

योगेनाव्यभिचारिण्या धृतिः सा पार्थ सात्त्विकी ॥

धृत्या, यया, धारयते, मनःप्राणेन्द्रियक्रियाः,
योगेन, अव्यभिचारिण्या, धृतिः, सा, पार्थ, सात्त्विकी ॥३३॥

और-

पार्थ	= हे पार्थ	अव्यभि-	= { अव्यभि-
योगेन	= ध्यानयोगके द्वारा	चारिण्या	= { चारिणी*
यया	= जिस	धृत्या	= धारणासे (मनुष्य)

* भगवत्-विषयके सिवाय अन्य सांसारिक विषयोंको धारण करना ही व्यभिचार दोष है उस दोषसे जो रहित है वह अव्यभिचारिणी धारणा है ।

मनः-	{ मन प्राण और	सा	= वह
प्राणेन्द्रिय-	{ इन्द्रियोंकी	धृतिः	= धारणा (तो)
क्रियाः	{ क्रियाओंको*	सात्त्विकी	= सात्त्विकी है
धारयते	= धारण करता है		

राजसी धृतिके यया तु धर्मकामार्थान्धृत्या धारयतेऽर्जुन ।
लक्षण ।

प्रसङ्गेन फलाकाङ्क्षी धृतिः सा पार्थ राजसी ॥३४॥

यया, तु, धर्मकामार्थान्, धृत्या, धारयते, अर्जुन,

प्रसङ्गेन, फलाकाङ्क्षी, धृतिः, सा, पार्थ, राजसी ॥३४॥

तु	= और	धृत्या	= धारणाके द्वारा
पार्थ	= हे पृथापुत्र	धर्म-	= { धर्म अर्थ और
अर्जुन	= अर्जुन	कामार्थान्	= { कामोंको
फलाकाङ्क्षी	= { फलकी इच्छा- वाला मनुष्य	धारयते	= धारण करता है
प्रसङ्गेन	= अति आसक्तिसे	सा	= वह
यया	= जिस	धृतिः	= धारणा
		राजसी	= राजसी है

तामसी धृतिके यया स्वप्नं भयं शोकं विषादं मदमेव च ।
लक्षण ।

न विमुञ्चति दुर्मेधा धृतिः सा पार्थ तामसी ॥३५॥

यया, स्वप्नम्, भयम्, शोकम्, विषादम्, मदम्, एव, च,

न, विमुञ्चति, दुर्मेधाः, धृतिः, सा, पार्थ, तामसी ॥३५॥

पार्थ	= हे पार्थ	यया	= जिस
दुर्मेधाः	= { दुष्ट बुद्धिवाला मनुष्य	(धृत्या)	= धारणाके द्वारा
		स्वप्नम्	= निद्रा

* मन, प्राण और इन्द्रियोंको भगवत्-प्राप्तिके लिये भजन, ध्यान और
निष्काम कर्मोंमें लगानेका नाम उनकी क्रियाओंको धारण करना है ।

भयम्	= भय	न	= { नहीं छोड़ता है
शोकम्	= चिन्ता	विमुञ्चति	= { अर्थात् धारण
च	= और		{ किये रहता है
विषादम्	= दुःखको (एवं)	सा	= वह
मदम्	= उन्मत्तताको	धृतिः	= धारणा
एव	= भी	तामसी	= तामसी है

तीनों गुणोंके
अनुसार सुखके
भेदोंको सुननेके
लिये भगवान्की
आज्ञा और
सात्त्विक सुखके
लक्षण ।

सुखं त्विदानीं त्रिविधं शृणु मे भरतर्षभ ।
अभ्यासाद्रमते यत्र दुःखान्तं च निगच्छति ॥३६॥
सुखम्, तु, इदानीम्, त्रिविधम्, शृणु, मे, भरतर्षभ,
अभ्यासात्, रमते, यत्र, दुःखान्तम्, च, निगच्छति ॥३६॥
हे अर्जुन—

इदानीम्	= अब	(साधक पुरुष)
सुखम्	= सुख	{ भजन ध्यान
तु	= भी (तूं)	{ और सेवादिके
त्रिविधम्	= तीन प्रकारका	{ अभ्याससे
मे	= मेरेसे	रमते = रमण करता है
शृणु	= सुन	च = और
भरतर्षभ	= हे भरतश्रेष्ठ	दुःखान्तम् = दुःखोंके अन्तको
यत्र	= जिस सुखमें	निगच्छति = प्राप्त होता है

[„] यत्तदग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमम् ।

तत्सुखं सात्त्विकं प्रोक्तमात्मबुद्धिप्रसादजम् ॥३७॥
यत्, तत्, अग्रे, विषम्, इव, परिणामे, अमृतोपमम्,
तत्, सुखम्, सात्त्विकम्, प्रोक्तम्, आत्मबुद्धिप्रसादजम् ॥३७॥
तत् = वह (सुख) | अग्रे = { प्रथम साधनके
आरम्भकालमें

	(यद्यपि)		
विषम्	= विषके	आत्मबुद्धि-	भगवत्-
इव	= सदृश भासता है*	प्रसादजम्	विषयक बुद्धि-
	(परन्तु)		के प्रसादसे
परिणामे	= परिणाममें	सुखम्	उत्पन्न हुआ
अमृतोपमम्	= अमृतके तुल्य है	तत्	= सुख है
(अतः)	= इसलिये	सात्त्विकम्	= वह
यत्	= जो	प्रोक्तम्	= सात्त्विक
			= कहा गया है

राजस सुखके विषयेन्द्रियसंयोगाद्यत्तदग्रेऽमृतोपमम् ।
लक्षण ।

परिणामे विषमिव तत्सुखं राजसं स्मृतम् ॥३८॥

विषयेन्द्रियसंयोगात्, यत्, तत्, अग्रे, अमृतोपमम्,

परिणामे, विषम्, इव, तत्, सुखम्, राजसम्, स्मृतम् ॥३८॥

और-

यत्	= जो	तत्	= वह (यद्यपि)
सुखम्	= सुख	अग्रे	= भोगकालमें
विषयेन्द्रिय-	{ विषय और	अमृतो-	{ अमृतके सदृश
संयोगात्	{ इन्द्रियोंके	पमम्	{ (भासता है परन्तु)
	{ संयोगसे	परिणामे	= परिणाममें
(भवति)	= होता है	विषम्	= विषके†

* जैसे खेलमें आसक्तिवाले बालकको विद्याका अभ्यास मूढ़ताके कारण प्रथम विषके तुल्य भासता है वैसे ही विषयोंमें आसक्तिवाले पुरुषको भगवत्-भजन, ध्यान, सेवा आदि साधनोंका अभ्यास मर्म न जाननेके कारण प्रथम विषके सदृश भासता है ।

† बल, वीर्य, बुद्धि, धन, उत्साह और परलोकका नाशक होनेसे विषय और इन्द्रियोंके संयोगसे होनेवाले सुखको परिणाममें विषके सदृश कहा है ॥

इव = सदृश है
 (अतः) = इसलिये
 तत् = वह (सुख)

राजसम् = राजस
 स्मृतम् = कहा गया है

तामस सुखके
 लक्षण !

यदग्रे चानुबन्धे च सुखं मोहनमात्मनः ।

निद्रालस्यप्रमादोत्थं तत्तामसमुदाहृतम् ॥३६॥

यत्, अग्रे, च, अनुबन्धे, च, सुखम्, मोहनम्, आत्मनः,

निद्रालस्यप्रमादोत्थम्, तत्, तामसम्, उदाहृतम् ॥३९॥

तथा-

यत् = जो
 सुखम् = सुख
 अग्रे = भोगकालमें
 च = और
 अनुबन्धे = परिणाममें
 च = भी
 आत्मनः = आत्माको
 मोहनम् = मोहनेवाला है

तत् = वह
 निद्रालस्य- = निद्रा आलस्य
 प्रमादोत्थम् = और प्रमादसे
 उत्पन्न हुआ
 (सुख)
 तामसम् = तामस
 उदाहृतम् = कहा गया है

तीनों गुणोंके
 विषयका उप-
 संहार ।

न तदस्ति पृथिव्यां वा दिवि देवेषु वा पुनः ।

सत्त्वं प्रकृतिजैर्मुक्तं यदेभिः स्यात्त्रिभिर्गुणैः ॥४०॥

न, तत्, अस्ति, पृथिव्याम्, वा, दिवि, देवेषु, वा, पुनः, सत्त्वम्,
 प्रकृतिजैः, मुक्तम्, यत्, एभिः, स्यात्, त्रिभिः, गुणैः ॥४०॥

पुनः = और (हे अर्जुन)
 पृथिव्याम् = पृथिवीमें
 वा = या
 दिवि = स्वर्गमें

वा = अथवा
 देवेषु = देवताओंमें (ऐसा)
 तत् = वह (कोई भी)
 सत्त्वम् = प्राणी

न	= नहीं	त्रिभिः	= तीनों
अस्ति	= है (कि)	गुणैः	= गुणोंसे
यत्	= जो	मुक्तम्	= रहित
एभिः	= इन	स्यात्	= हो
प्रकृतिजैः	= प्रकृतिसे उत्पन्न हुए		

क्योंकि यावन्मात्र सर्वजगत् त्रिगुणमयी मायाका ही विकार है ।

वर्णधर्म के विषयका आरम्भ **ब्राह्मणक्षत्रियविशां शूद्राणां च परंतप ।**
कर्माणि प्रविभक्तानि स्वभावप्रभवैर्गुणैः ॥४१॥

ब्राह्मणक्षत्रियविशाम्, शूद्राणाम्, च, परंतप,
 कर्माणि, प्रविभक्तानि, स्वभावप्रभवैः, गुणैः ॥४१॥

इसलिये—

परंतप	= हे परंतप	कर्माणि	= कर्म
ब्राह्मण-	} = ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्योंके	स्वभाव-	= { स्वभावसे
क्षत्रिय-		प्रभवैः	= { उत्पन्न हुए
विशाम्		गुणैः	= गुणों करके
च	= तथा	प्र-	= { विभक्त किये
शूद्राणाम्	= शूद्रोंके (भी)	विभक्तानि	= { गये हैं

अर्थात् पूर्वकृत कर्मोंके संस्काररूप स्वभावसे उत्पन्न हुए
 गुणोंके अनुसार विभक्त किये गये हैं ।

ब्राह्मण के स्वाभाविक कर्मों का कथन । **शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च ।**
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम् ॥४२॥

शमः, दमः, तपः, शौचम्, क्षान्तिः, आर्जवम्, एव, च,
 ज्ञानम्, विज्ञानम्, आस्तिक्यम्, ब्रह्मकर्म, स्वभावजम् ॥४२॥

उनमें—

शमः = अन्तःकरणका निग्रह दमः = इन्द्रियोंका दमन

शौचम्	= { बाहर भीतर- की शुद्धि*	ज्ञानम्	= { शास्त्रविषयक ज्ञान
तपः	= { धर्मके लिये कष्ट सहन करना (और)	च	= और
क्षान्तिः	= क्षमाभाव (एवं)	विज्ञानम्	= { परमात्मतत्त्व- का अनुभव
आर्जवम्	= { मन इन्द्रियां और शरीरकी सरलता	एव	= भी (ये तो)
आस्तिक्यम्	= आस्तिक बुद्धि	ब्रह्मकर्म	= { ब्राह्मणके स्वाभाविक कर्म हैं
		स्वभावजम्	

क्षत्रिय के शौर्य तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम् ।
स्वाभाविक कर्मों दानमीश्वरभावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम् ॥४३॥
का कथन ।

शौर्यम्, तेजः, धृतिः, दाक्ष्यम्, युद्धे, च, अपि, अपलायनम्,
दानम्, ईश्वरभावः, च, क्षात्रम्, कर्म, स्वभावजम् ॥४३॥
और-

शौर्यम्	= शूरवीरता	अपि	= भी
तेजः	= तेज	अपलायनम्	= { न भागनेका स्वभाव (एवं)
धृतिः	= धैर्य	दानम्	= दान
दाक्ष्यम्	= चतुरता	च	= और
च	= और	ईश्वरभावः	= स्वामीभाव†
युद्धे	= युद्धमें		

* गीता अ० १३ श्लोक ७ की टिप्पणीमें देखना चाहिये ।

† अर्थात् निःस्वार्थभावसे सबका हित सोचकर शास्त्राज्ञानुसार शासन-
द्वारा प्रेमके सहित पुत्रतुल्य प्रजाको पालन करनेका भाव ।

(ये सत्र)
 क्षात्रम् = क्षत्रियके | स्वभावजम् = स्वाभाविक
 कर्म = कर्म हैं

वैश्य और शूद्रके
 स्वाभाविक कर्मों
 का कथन ।

कृषिगौरक्ष्यवाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम् ।

परिचर्यात्मकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम् ॥४४॥

कृषिगौरक्ष्यवाणिज्यम्, वैश्यकर्म, स्वभावजम्,
 परिचर्यात्मकम्, कर्म, शूद्रस्य, अपि, स्वभावजम् ॥४४॥

तथा-

कृषिगौरक्ष्य- वाणिज्यम्	=	खेती, गौ- पालन और क्रयविक्रय- रूप सत्य- व्यवहार*(ये)	परि- चर्यात्मकम्	=	{ सत्र वर्णोंकी सेवा करना (यह)
वैश्यकर्म स्वभावजम्	=	{ वैश्यके स्वाभाविक कर्म हैं (और)	शूद्रस्य अपि स्वभावजम् कर्म	=	{ शूद्रका = भी स्वाभाविक = कर्म है

स्वाभाविक स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः ।

कर्मोंसे भगवत्
 प्राप्तिका कथन
 और उनकी
 विधि ।

स्वकर्मनिरतः सिद्धिं यथा विन्दति तच्छृणु ॥४५॥

* वस्तुओंके खरीदने और बेचनेमें तौल नाप और गिनती आदिसे
 कम देना अथवा अधिक लेना एवं वस्तुको बदलकर या एक वस्तुमें
 दूसरी (खराब) वस्तु मिलाकर दे देना अथवा (अच्छी) ले लेना तथा
 नफा आदत और दलाली ठहराकर उससे अधिक दाम लेना या कम
 देना तथा झूठ कपट चोरी और जबरदस्तीसे अथवा अन्य किसी प्रकारसे
 दूसरेके हकको ग्रहण कर लेना इत्यादिक दोषोंसे रहित जो सत्यतापूर्वक
 पवित्र वस्तुओंका व्यापार है उसका नाम सत्य-व्यवहार है ।

स्वे, स्वे, कर्मणि, अभिरतः, संसिद्धिम्, लभते, नरः,
स्वकर्मनिरतः, सिद्धिम्, यथा, विन्दति, तत्, शृणु ॥४५॥

एवं इस-

स्वे	= अपने	यथा	= जिस प्रकारसे
स्वे	= अपने (स्वाभाविक)	स्वकर्म-	{ अपने स्वाभाविक
कर्मणि	= कर्ममें	निरतः	= { कर्ममें लगा हुआ
अभिरतः	= लगा हुआ		{ मनुष्य
नरः	= मनुष्य	सिद्धिम्	= परमसिद्धिको
संसिद्धिम्	= { भगवत्प्राप्तिरूप	विन्दति	= प्राप्त होता है
	{ परमसिद्धिको	तत्	= उस विधिको
लभते	= प्राप्त होता है		(तुं मेरेसे)
	(परन्तु)	शृणु	= सुन

[॥ ”] यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम् ।

स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः॥४६॥

यतः, प्रवृत्तिः, भूतानाम्, येन, सर्वम्, इदम्, ततम्,
स्वकर्मणा, तम्, अभ्यर्च्य, सिद्धिम्, विन्दति, मानवः ॥४६॥

हे अर्जुन-

यतः	= जिस परमात्मासे	सर्वम्	= सर्व (जगत्)
भूतानाम्	= सर्व भूतोंकी	ततम्	= व्याप्त है*
प्रवृत्तिः	= उत्पत्ति हुई है (और)	तम्	= उस परमेश्वरको
येन	= जिससे	स्वकर्मणा	= { अपने स्वाभाविक
इदम्	= यह		{ कर्मद्वारा

* जैसे बर्फ जलसे व्याप्त है वैसे ही संपूर्ण संसार सच्चिदानन्दधन परमात्मासे व्याप्त है ।

अभ्यर्च्य = पूजकर*

मानवः = मनुष्य

सिद्धिम् = परमसिद्धिको

विन्दति = प्राप्त होता है

स्वधर्म पालन-
की प्रशंसा ।

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात् ।

स्वभावनियतं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम् ॥४७॥

श्रेयान्, स्वधर्मः, विगुणः, परधर्मात्, स्वनुष्ठितात्,
स्वभावनियतम्, कर्म, कुर्वन्, न, आप्नोति, किल्बिषम् ॥४७॥

इसलिये-

स्वनुष्ठितात् = { अच्छी प्रकार
आचरण
किये हुए

परधर्मात् = दूसरेके धर्मसे

विगुणः = गुणरहित

(अपि) = भी

स्वधर्मः = अपना धर्म

श्रेयान् = श्रेष्ठ है

(यस्मात्) = क्योंकि

स्वभाव- = { स्वभावसे नियत
नियतम् = { किये हुएकर्म = { स्वधर्मरूप
कर्मकोकुर्वन् = करता हुआ
(मनुष्य)

किल्बिषम् = पापको

न = नहीं

आप्नोति = प्राप्त होता

स्वधर्म त्याग

सहजं कर्म कौन्तेय सदोषमपि न त्यजेत् ।

का निषेध ।

सर्वारम्भा हि दोषेण धूमेनाग्निरिवावृताः ॥४८॥

सहजम्, कर्म, कौन्तेय, सदोषम्, अपि, न, त्यजेत्,

सर्वारम्भाः, हि, दोषेण, धूमेन, अग्निः, इव, आवृताः ॥४८॥

* जैसे पतिव्रता स्त्री पतिको ही सर्वस्व समझकर पतिका चिन्तन करती हुई पतिकी आज्ञानुसार पतिके ही लिये मन, वाणी, शरीरसे कर्म करती है वैसे ही परमेश्वरको ही सर्वस्व समझकर परमेश्वरका चिन्तन करते हुए परमेश्वरकी आज्ञाके अनुसार मन, वाणी और शरीरसे परमेश्वरके ही लिये स्वाभाविक कर्तव्य कर्मका आचरण करना कर्मद्वारा परमेश्वरको पूजना है ।

अतएव-

कौन्तेय = हे कुन्तीपुत्र	धृमेन = धूर्से
सदोषम् = दोषयुक्त	अग्निः = अग्निके
अपि = भी	इव = सदृश
सहजम् = स्वाभाविक*	सर्वारम्भाः = सब ही कर्म
कर्म = कर्मको	(किसी न किसी)
न = नहीं	दोषेण = दोषसे
त्यजेत् = त्यागना चाहिये	आवृताः = आवृत हैं
हि = क्योंकि	

सांख्ययोगसे असक्तबुद्धिः सर्वत्र जितात्मा विगतस्पृहः ।

भगवत्-प्राप्तिका
कथन ।

नैष्कर्म्यसिद्धिं परमां संन्यासेनाधिगच्छति॥४६॥

असक्तबुद्धिः, सर्वत्र, जितात्मा, विगतस्पृहः,
नैष्कर्म्यसिद्धिम्, परमाम्, संन्यासेन, अधिगच्छति ॥४९॥

तथा हे अर्जुन—

सर्वत्र = सर्वत्र	संन्यासेन = { सांख्ययोगके
असक्त- = { आसक्तिरहित	द्वारा (भी)
बुद्धिः = { बुद्धिवाला	परमाम् = परम
विगत- = { स्पृहारहित	नैष्कर्म्य- = { नैष्कर्म्य
स्पृहः = { (और)	सिद्धिम् = { सिद्धिको
जितात्मा = { जीते हुए अन्तः-	अधि- } = प्राप्त होता है-
करणवाला पुरुष	गच्छति }

अर्थात् क्रियारहित शुद्ध सच्चिदानन्दघन परमात्माकी
प्राप्तिरूप परमसिद्धिको प्राप्त होता है ।

* प्रकृतिके अनुसार शास्त्रविधिसे नियत किये हुए जो वर्णाश्रमके धर्म
और सामान्य धर्मरूप स्वाभाविक कर्म हैं उनको ही यहां 'स्वधर्म' 'सहज

ज्ञानयोग के अनुसार भगवत् प्राप्तिकी विधि को समझनेके लिये अर्जुनके प्रति भगवान्की आज्ञा ।

सिद्धिं प्राप्तो यथा ब्रह्म तथाप्नोति निबोध मे ।
 समासेनैव कौन्तेय निष्ठा ज्ञानस्य या परा ॥५०॥

सिद्धिम्, प्राप्तः, यथा, ब्रह्म, तथा, आप्नोति, निबोध, मे,
 समासेन, एव, कौन्तेय, निष्ठा, ज्ञानस्य, या, परा ॥५०॥

इसलिये—

कौन्तेय	= हे कुन्तीपुत्र	या	= जो
सिद्धिम्	= { अन्तःकरणकी शुद्धिरूपसिद्धिको	ज्ञानस्य	= तत्त्वज्ञानकी
प्राप्तः	= प्राप्त हुआ पुरुष	परा	= परा
यथा	= जैसे (सांख्ययोगके द्वारा)	निष्ठा	= निष्ठा है
ब्रह्म	= { सच्चिदानन्दधन ब्रह्मको	(तत्)	= उसको
आप्नोति	= प्राप्त होता है	एव	= भी (तूं)
तथा	= तथा	मे	= मेरेसे
		समासेन	= संक्षेपसे
		निबोध	= जान

ज्ञानयोगके अनुसार भगवत् प्राप्तिका पात्र बननेकी विधि ।

बुद्ध्या विशुद्धया युक्तो धृत्यात्मानं नियम्य च ।
 शब्दादीन्विषयांस्त्यक्त्वा रागद्वेषौ व्युदस्य च ॥
 विविक्तसेवी लब्धाशी यतवाक्कायमानसः ।
 ध्यानयोगपरो नित्यं वैराग्यं समुपाश्रितः ॥५२॥

बुद्ध्या, विशुद्धया, युक्तः, धृत्या, आत्मानम्, नियम्य, च,
 शब्दादीन्, विषयान्, त्यक्त्वा, रागद्वेषौ, व्युदस्य, च ॥५१॥

कर्म 'स्वकर्म' 'नियत कर्म' 'स्वभावज कर्म' 'स्वभावनियत कर्म' इत्यादि नामोंसे कहा है ।

विविक्तसेवी, लब्धाशी, यतवाकायमानसः,
ध्यानयोगपरः, नित्यम्, वैराग्यम्, समुपाश्रितः ॥५२॥

हे अर्जुन—

विशुद्धया	= विशुद्ध	नित्यम्	= निरन्तर
बुद्धया	= बुद्धिसे	ध्यान-	= { ध्यानयोगके
युक्तः	= युक्त	योगपरः	= { परायण हुआ
विविक्तसेवी	= { एकान्त और शुद्ध देशका सेवन करने- वाला (तथा)	धृत्या	= { सात्त्विक धारणासे†
लब्धाशी	= मिताहारी*	आत्मानम्	= अन्तःकरणको
यतवाकाय-	= { जीते हुए मन वाणी शरीर-	नियम्य	= वशमें करके
मानसः	= { वाला (और)	च	= तथा
वैराग्यम्	= दृढ़ वैराग्यको	शब्दादीन्	= शब्दादिक
समुपाश्रितः	= { भली प्रकार प्राप्त हुआ	विषयान्	= विषयोंको
	= पुरुष	त्यक्त्वा	= त्यागकर
		च	= और
		रागद्वेषौ	= रागद्वेषोंको
		व्युदस्य	= नष्ट करके

[„] अहंकारं बलं दर्पं कामं क्रोधं परिग्रहम् ।

विमुच्य निर्ममः शान्तो ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥५३॥

अहंकारम्, बलम्, दर्पम्, कामम्, क्रोधम्, परिग्रहम्,
विमुच्य, निर्ममः, शान्तः, ब्रह्मभूयाय, कल्पते ॥५३॥

* हल्का और अल्प आहार करनेवाला ।

† गीता अ० १८ श्लोक ३३ में जिसका विस्तार है ।

तथा—

अहंकारम्	= अहंकार	(और)
बलम्	= बल	
दर्पम्	= घमण्ड	शान्तः = { शान्त अन्तः-
कामम्	= काम	करण हुआ
क्रोधम्	= क्रोध (और)	
परिग्रहम्	= संग्रहको	ब्रह्मभूयाय = { सच्चिदानन्दघन
विमुच्य	= त्यागकर	{ ब्रह्ममें एकीभाव
निर्ममः	= ममतारहित	{ होनेके लिये
		कल्पते = योग्य होता है

ज्ञानयोगसे परा
भक्तिकी प्राप्ति ।

ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न काङ्क्षति ।

समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम् ॥५४॥

ब्रह्मभूतः, प्रसन्नात्मा, न, शोचति, न, काङ्क्षति,

समः, सर्वेषु, भूतेषु, मद्भक्तिम्, लभते, पराम् ॥५४॥

फिर वह—

ब्रह्मभूतः	= { सच्चिदानन्दघन ब्रह्ममें एकीभाव- से स्थित हुआ	न	= न (किसीकी)
प्रसन्नात्मा	= { प्रसन्नचित्त- वाला पुरुष	काङ्क्षति	= { आकाङ्क्षा (ही) करता है (एवं)
न	= न (तो किसी वस्तुके लिये)	सर्वेषु	= सब
शोचति	= शोक करता है (और)	भूतेषु	= भूतोंमें
		समः	= समभाव हुआ*
		पराम्	= { मेरी परा-
		मद्भक्तिम्	= { भक्तिको†
		लभते	= प्राप्त होता है

* गीता अध्याय ६ श्लोक २९ में देखना चाहिये ।

† जो तत्त्वज्ञानकी पराकाष्ठा है तथा जिसको प्राप्त होकर और कुछ

परा भक्तिसे भक्त्या मामभिजानाति यावान्यश्चास्मि तत्त्वतः ।
भगवत्-प्राप्ति । ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनन्तरम् ॥५५॥

भक्त्या, माम्, अभिजानाति, यावान्, यः, च, अस्मि, तत्त्वतः,
ततः, माम्, तत्त्वतः, ज्ञात्वा, विशते, तदनन्तरम् ॥५५॥

और उस-

भक्त्या	= पराभक्तिके द्वारा	अस्मि	= हूं (तथा)
माम्	= मेरेको	ततः	= उस भक्तिसे
तत्त्वतः	= तत्त्वसे	माम्	= मेरेको
अभि-	= { भली प्रकार	तत्त्वतः	= तत्त्वसे
जानाति	= { जानता है (कि)	ज्ञात्वा	= जानकर
(अहम्) = मैं		तदनन्तरम्	= तत्काल (ही)
यः	= जो	विशते	= { मेरेमें प्रवेश
च	= और		= { हो जाता है-
यावान्	= जिस प्रभाववाला		

अर्थात् अनन्यभावसे मेरेको प्राप्त हो जाता है फिर उसकी दृष्टिमें मुझ वासुदेवके सिवाय और कुछ भी नहीं रहता ।

भक्तिसहित सर्वकर्माण्यपि सदा कुर्वाणो मद्व्यपाश्रयः ।
निष्काम कर्म-
योगसे भगवत्-
प्राप्ति । मत्प्रसादादवाप्नोति शाश्वतं पदमव्ययम् ॥५६॥

सर्वकर्माणि, अपि, सदा, कुर्वाणः, मद्व्यपाश्रयः,
मत्प्रसादात्, अवाप्नोति, शाश्वतम्, पदम्, अव्ययम् ॥५६॥

और-

मद्व्य- = { मेरे परायण हुआ
पाश्रयः = { निष्कामकर्मयोगी(तो) | सर्वकर्माणि = { संपूर्ण
कर्मांको

जानना बाकी नहीं रहता वही यहां 'पराभक्ति' 'ज्ञानकी परानिष्ठा'
'परमनैष्कर्म्यसिद्धि' और 'परमसिद्धि' इत्यादि नामोंसे कही गई है ।

सदा	= सदा	शाश्वतम्	= सनातन
कुर्वाणः	= करता हुआ	अव्ययम्	= अविनाशी
अपि	= भी	पदम्	= परमपदको
मत्प्रसादात्	= मेरी कृपासे	अवाप्नोति	= प्राप्त हो जाता है

भक्तिसहित चेतसा सर्वकर्माणि मयि संन्यस्य मत्परः ।

निष्काम कर्म-

योग करनेके

लिये भगवान्-

की आज्ञा ।

बुद्धियोगमुपाश्रित्य मच्चित्तः सततं भव ॥५७॥

चेतसा, सर्वकर्माणि, मयि, संन्यस्य, मत्परः,

बुद्धियोगम्, उपाश्रित्य, मच्चित्तः, सततम्, भव ॥५७॥

इसलिये हे अर्जुन तू-

सर्वकर्माणि = सब कर्मोंको

चेतसा = मनसे

मयि = मेरेमें

संन्यस्य = अर्पण करके*

मत्परः = { मेरे परायण
हुआ

समत्वबुद्धिरूप

बुद्धियोगम् = { निष्काम

{ कर्मयोगको

उपाश्रित्य = अवलम्बन करके

सततम् = निरन्तर

मच्चित्तः = मेरेमें चित्तवाला

भव = हो

भगवत्-चिन्तन

से उद्धार और

भगवत्-आज्ञाके

त्यागसे अधोगति

मच्चित्तः सर्वदुर्गाणि मत्प्रसादात्तरिष्यसि ।

अथ चेत्त्वमहंकारान्न श्रोष्यसि विनङ्क्ष्यसि ॥

मच्चित्तः, सर्वदुर्गाणि, मत्प्रसादात्, तरिष्यसि,

अथ, चेत्, त्वम्, अहंकारात्, न, श्रोष्यसि, विनङ्क्ष्यसि ॥५८॥

इस प्रकार-

त्वम् = तू

मच्चित्तः = { मेरेमें निरन्तर
मनवाला हुआ

* गीता अध्याय ९ श्लोक २७ में जिसकी विधि कही है ।

मत्प्रसादात्=मेरी कृपासे

सर्वदुर्गाणि = { जन्म मृत्यु
आदि सब
सङ्कटोंको

(अनायास ही)

तरिष्यसि = तर जायगा

अथ = और

चेत् = यदि

अहंकारात् = { अहंकारकं
कारण
(मेरे वचनोंको)

न = नहीं

श्रोष्यसि = सुनेगा (तो)

विनङ्क्ष्यसि = { नष्ट हो जायगा
अर्थात्
परमार्थसे भ्रष्ट
हो जायगा

विना इच्छा यदहंकारमाश्रित्य न योत्स्य इति मन्यसे ।

भी स्वभाविक

कर्मोंके होनेमें

प्रकृतिकी प्रबल-

ताका निरूपण । यत्, अहंकारम्, आश्रित्य, न, योत्स्ये, इति, मन्यसे,

मिथ्यैष व्यवसायस्ते प्रकृतिस्त्वां नियोक्ष्यति ॥

मिथ्या, एषः, व्यवसायः, ते, प्रकृतिः, त्वाम्, नियोक्ष्यति ॥५९॥

और-

यत् = जो (तुं)

अहंकारम् = अहंकारको

आश्रित्य = अवलम्बन करके

इति = ऐसे

मन्यसे = मानता है (कि)

न = { मैं युद्ध नहीं

योत्स्ये = { करूंगा (तो)

एषः = यह

ते = तेरा

व्यवसायः = निश्चय

मिथ्या = मिथ्या है

(यतः) = क्योंकि

प्रकृतिः = { क्षत्रियपन-
का स्वभाव

त्वाम् = तेरेको

नियोक्ष्यति = { जबरदस्ती
युद्धमें लगा
देगा

[॥] स्वभावजेन कौन्तेय निबद्धः स्वेन कर्मणा ।

कर्तुं नेच्छसि यन्मोहात् करिष्यस्यवशोऽपि तत् ॥

स्वभावजेन, कौन्तेय, निबद्धः, स्वेन, कर्मणा, कर्तुम्,
न, इच्छसि, यत्, मोहात्, करिष्यसि, अवशः, अपि, तत् ॥६०॥

और-

कौन्तेय	= हे अर्जुन	अपि	= भी
यत्	= जिस कर्मको (तू)	स्वेन	= अपने (पूर्वकृत)
मोहात्	= मोहसे	स्वभावजेन	= स्वाभाविक
न	= नहीं	कर्मणा	= कर्मसे
कर्तुम्	= करना	निबद्धः	= बंधा हुआ
इच्छसि	= चाहता है	अवशः	= परवश होकर
तत्	= उसको	करिष्यसि	= करेगा

नवके हृदय-

में अन्तर्यामी

परमात्मा की

व्यापकता का

कथन ।

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति ।

भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया ॥६१॥

ईश्वरः, सर्वभूतानाम्, हृद्देशे, अर्जुन, तिष्ठति,

भ्रामयन्, सर्वभूतानि, यन्त्रारूढानि, मायया ॥६१॥

क्योंकि-

अर्जुन	= हे अर्जुन	(उनके कर्मोंके
यन्त्रा-	= { शरीररूप यन्त्रमें	अनुसार)
रूढानि	= { आरूढ़ हुए	
सर्व-	} = संपूर्ण प्राणियोंको	भ्रामयन् = भ्रमाता हुआ
भूतानि		सर्व-
ईश्वरः	= { अन्तर्यामी	भूतानाम् = { सब भूत-
	= { परमेश्वर	प्राणियोंके
मायया	= अपनी मायासे	हृद्देशे = हृदयमें
		तिष्ठति = स्थित है

ईश्वरके शरण होनेके लिये आशा और तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत ।
तत्प्रसादात्परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम्॥
उसका फल । तम्, एव, शरणम्, गच्छ, सर्वभावेन, भारत, तत्प्रसादात्,
पराम्, शान्तिम्, स्थानम्, प्राप्स्यसि, शाश्वतम् ॥६२॥

इसलिये—

भारत	= हे भारत	तत्प्रसादात्	= { उस परमात्मा- को कृपासे (ही)
सर्वभावेन	= सब प्रकारसे	पराम्	= परम
तम्	= उस परमेश्वरकी	शान्तिम्	= शान्तिको (और)
एव	= ही	शाश्वतम्	= सनातन
शरणम्	= अनन्यशरणको*	स्थानम्	= परमधामको
गच्छ	= प्राप्त हो	प्राप्स्यसि	= प्राप्त होगा

उपदेशका उप- इति ते ज्ञानमाख्यातं गुह्याद्गुह्यतरं मया ।
संहार । विमृश्यैतदशेषेण यथेच्छसि तथा कुरु ॥६३॥

इति, ते, ज्ञानम्, आख्यातम्, गुह्यात्, गुह्यतरम्, मया,
विमृश्य, एतत्, अशेषेण, यथा, इच्छसि, तथा, कुरु ॥६३॥
इति = इस प्रकार (यह) । गुह्यात् = गोपनीयसे (भी)

* लज्जा भय मान बड़ाई और आसक्तिको त्यागकर एवं शरीर और संसारमें अहंता ममतासे रहित होकर केवल एक परमात्माको ही परम आश्रय परम गति और सर्वस्व समझना तथा अनन्यभावेसे अतिशय श्रद्धा भक्ति और प्रेमपूर्वक निरन्तर भगवान्‌के नाम गुण प्रभाव और स्वरूपका चिन्तन करते रहना एवं भगवान्‌का भजन स्मरण रखते हुए ही उनकी आज्ञानुसार कर्तव्य कर्मोंका निःस्वार्थ भावसे केवल परमेश्वरके लिये आचरण करना यह 'सब प्रकारसे परमात्माके अनन्यशरण' होना है ।

गुह्यतरम्	= अति गोपनीय	विमृश्य	= { अच्छी प्रकार
ज्ञानम्	= ज्ञान		{ विचारके
मया	= मैंने		(फिर तू)
ते	= तेरे लिये	यथा	= जैसे
आख्यातम्	= कहा है	इच्छसि	= चाहता है
एतत्	= { इस रहस्ययुक्त	तथा	= वैसे ही
	{ ज्ञानको	कुरु	= कर
अशेषेण	= संपूर्णतासे		

अर्थात् जैसी तेरी इच्छा हो वैसे ही कर ।

अर्जुनकी प्रीति सर्वगुह्यतमं भूयः शृणु मे परमं वचः ।

के कारण पुनः इष्टोऽसि मे दृढमिति ततो वक्ष्यामि ते हितम् ॥

उपदेश का सर्वगुह्यतमम्, भूयः, शृणु, मे, परमम्, वचः, इष्टः, असि, मे, दृढम्, इति, ततः, वक्ष्यामि, ते, हितम् ॥६४॥

अरन्ध्र । इतना कहनेपर भी अर्जुनका कोई उत्तर नहीं मिलनेके कारण श्रीकृष्ण भगवान् फिर बोले कि हे अर्जुन—

सर्व-	{ संपूर्ण	दृढम्	= अतिशय
गुह्यतमम्	= { गोपनीयोंसे भी	इष्टः	= प्रिय
	{ अति गोपनीय	असि	= है
मे	= मेरे	ततः	= इससे
परमम्	= परम (रहस्ययुक्त)	इति	= यह
वचः	= वचनको (तू)	हितम्	= { परम हित-
भूयः	= फिर (भी)		{ कारक वचन (मैं)
शृणु	= सुन (क्योंकि तू)	ते	= तेरे लिये
मे	= मेरा	वक्ष्यामि	= कहूंगा

भगवान्की
भक्ति करनेके
लिये आज्ञा और
उसका फल ।

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ।

मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे ॥६५॥

मन्मनाः, भव, मद्भक्तः, मद्याजी, माम्, नमस्कुरु,
माम्, एव, एष्यसि, सत्यम्, ते, प्रतिजाने, प्रियः, असि, मे ॥६५॥

हे अर्जुन तू—

मन्मनाः = { केवल मुझ सच्चिदानन्दघन वासुदेव परमात्मामें ही
भव = { अनन्य प्रेमसे नित्य निरन्तर अचल मनवाला हो
(और)

मद्भक्तः = { मुझ परमेश्वरको ही अतिशय श्रद्धा भक्तिसहित
(भव) = { निष्कामभावसे नाम गुण और प्रभावके श्रवण,
कीर्तन, मनन और पठनपाठनद्वारा निरन्तर
भजनेवाला हो (तथा)

मद्याजी = { मेरा (शङ्ख चक्र गदा पद्म और किरीटकुण्डल आदि
(भव) = { भूषणोंसे युक्त पीताम्बर वनमाला और कौस्तुभ-
मणिधारी विष्णुका) मन वाणी और शरीरके द्वारा
सर्वस्व अर्पण करके अतिशय श्रद्धा भक्ति और
प्रेमसे विह्वलतापूर्वक पूजन करनेवाला हो (और)

माम् = { मुझ सर्वशक्तिमान् विभूति बल ऐश्वर्य माधुर्य
गुणोंसे सम्पन्न सबके आश्रयरूप वासुदेवको

नमस्कुरु = { विनयभावपूर्वक भक्तिसहित साष्टाङ्ग दण्डवत्
प्रणाम कर

(एवम्) = ऐसा करनेसे (तू)

माम् = मेरेको

एव = ही

एष्यसि = प्राप्त होगा (यह मैं)	(यतः) = क्योंकि (तू)
ते = तेरे लिये	मे = मेरा
सत्यम् = सत्य	प्रियः = अत्यन्त प्रिय(सखा)
प्रतिजाने = प्रतिज्ञा करता हूँ	असि = है

सर्व धर्मोंका सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं ब्रज ।

आश्रय त्यागकर अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥६६॥

केवल भगवत्-

शरण होनेके सर्वधर्मान्, परित्यज्य, माम्, एकम्, शरणम्, ब्रज,

लिये आज्ञा । अहम्, त्वा, सर्वपापेभ्यः, मोक्षयिष्यामि, मा, शुचः ॥६६॥

इसलिप्रे-

सर्व-धर्मान् = { सर्व धर्मोंको अर्थात् संपूर्ण कर्मोंके आश्रयको	शरणम् = { अनन्य- शरणको*
परित्यज्य = त्यागकर	ब्रज = प्राप्त हो
एकम् = केवल एक	अहम् = मैं
माम् = { मुझ सच्चिदानन्द- घन वासुदेव परमात्माकी ही	त्वा = तेरेको
	सर्वपापेभ्यः = संपूर्ण पापोंसे
	मोक्षयिष्यामि = मुक्त कर दूंगा
	मा = { तू शोक
	शुचः = { मत कर

अपात्रके प्रति इदं ते नातपस्काय नाभक्ताय कदाचन ।

श्रीगीताजी का न चाशुश्रूषवे वाच्यं न च मां योऽभ्यसूयति ॥

उपदेश करनेके लिये निषेध ।

इदम्, ते, न, अतपस्काय, न, अभक्ताय, कदाचन,

न, च, अशुश्रूषवे, वाच्यम्, न, च, माम्, यः, अभ्यसूयति ॥६७॥

* इसी अध्यायके श्लोक ६२ की टिप्पणीमें अनन्यशरणका भाव देखना चाहिये ।

हे अर्जुन इस प्रकार—

ते	= { तेरे (हितके लिये कहे हुए)	च	= तथा
		न	= न
इदम्	= { इस गीतारूप परमरहस्यको	अशुश्रूषवे	= { बिना सुननेकी इच्छावालेके ही
कदाचन	= किसी कालमें भी		{ प्रति
न	= न (तो)	(वाच्यम्)	= कहना चाहिये (एवं)
अतपस्काय	= { तपरहित मनुष्यके प्रति	यः	= जो
		माम्	= मेरी
वाच्यम्	= कहना चाहिये	अभ्य- }	= निन्दा करता है
च	= और	सूयति }	
न	= न	(तस्मै)	= उसके प्रति भी
अभक्ताय	= { भक्ति* रहितके प्रति	न	= { नहीं कहना चाहिये—

परन्तु जिनमें यह सब दोष नहीं हों ऐसे भक्तोंके प्रति

प्रेमपूर्वक उत्साहके सहित कहना चाहिये ।

श्रीगीताजीके प्रचार का माहात्म्य । य इमं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधास्यति ।

भक्तिं मयि परां कृत्वा मामेवैष्यत्यसंशयः ॥६८॥

यः, इमम्, परमम्, गुह्यम्, मद्भक्तेषु, अभिधास्यति,
भक्तिम्, मयि, पराम्, कृत्वा, माम्, एव, एष्यति, असंशयः ॥६८॥

क्योंकि—

यः = जो पुरुष । मयि = मेरेमें

* वेद शास्त्र और परमेश्वर तथा महात्मा और गुरुजनोमें श्रद्धा प्रेम और पूज्यभावका नाम भक्ति है ।

पराम्	= परम	मद्भक्त्येषु	= मेरे भक्तोंमें
भक्तिम्	= प्रेम	अभिधास्यति	= कहेगा*
कृत्वा	= करके	(सः)	= वह
इमम्	= इस	असंशयः	= निःसन्देह
परमम्	= परम	माम्	= मेरेको
गुह्यम्	= { रहस्ययुक्त गोता- शास्त्रको	एव	= ही
		एष्यति	= प्राप्त होगा

[„] न च तस्मान्मनुष्येषु कश्चिन्मे प्रियकृत्तमः ।

भविता न च मे तस्मादन्यः प्रियतरो भुवि ॥६६॥

न, च, तस्मात्, मनुष्येषु, कश्चित्, मे, प्रियकृत्तमः,

भविता, न, च, मे, तस्मात्, अन्यः, प्रियतरः, भुवि ॥६९॥

च	= और	च	= और
न	= न (तो)	न	= न
तस्मात्	= उससे बढ़कर	तस्मात्	= उससे बढ़कर
मे	= मेरा	मे	= मेरा
प्रिय-	= { अतिशय प्रिय	प्रियतरः	= अत्यन्त प्यारा
कृत्तमः	= { कार्य करनेवाला	भुवि	= पृथिवीमें
मनुष्येषु	= मनुष्योंमें	अन्यः	= दूसरा (कोई)
कश्चित्	= कोई	भविता	= होवेगा
(अस्ति)	= है		

श्रीगीताजीके अध्येष्यते च य इमं धर्म्यं संवादमावयोः ।

पठन का
माहात्म्य ।

ज्ञानयज्ञेन तेनाहमिष्टः स्यामिति मे मतिः ॥७०॥

* अर्थात् निष्कामभावसे प्रेमपूर्वक मेरे भक्तोंको पढ़ावेगा या अर्थकी व्याख्याद्वारा इसका प्रचार करेगा ।

अध्येष्यते, च, यः, इमम्, धर्म्यम्, संवादम्, आवयोः,
ज्ञानयज्ञेन, तेन, अहम्, इष्टः, स्याम्, इति, मे, मतिः ॥७०॥

च	= तथा (हे अर्जुन)	तेन	= उसके द्वारा
यः	= जो (पुरुष)	अहम्	= मैं
इमम्	= इस	ज्ञानयज्ञेन	= ज्ञानयज्ञसे*
धर्म्यम्	= धर्ममय	इष्टः	= पूजित
आवयोः	= हम दोनोंके	स्याम्	= होऊंगा
संवादम्	= { संवादरूप गीताशास्त्रको	इति	= ऐसा
अध्येष्यते	= { पढ़ेगा अर्थात् नित्य पाठ करेगा	मे	= मेरा
		मतिः	= मत है

श्रीगीताजीके श्रद्धावाननसूयश्च शृणुयादपि यो नरः ।
श्रवण का सोऽपि मुक्तः शुभाँल्लोकान्प्राप्नुयात्पुण्यकर्मणाम् ॥

श्रद्धावान्, अनसूयः, च, शृणुयात्, अपि, यः, नरः, सः, अपि,
मुक्तः, शुभान्, लोकान्, प्राप्नुयात्, पुण्यकर्मणाम् ॥७१॥

तथा—

यः	= जो	शृणुयात्	= { श्रवणमात्र
नरः	= पुरुष	अपि	{ भी करेगा
श्रद्धावान्	= श्रद्धायुक्त	सः	= वह
च	= और	अपि	= भी
अनसूयः	= { दोषदृष्टिसे रहित हुआ	मुक्तः	= पापोंसे मुक्त हुआ
		पुण्य-	= { उत्तम कर्म
		कर्मणाम्	= { करनेवालोंके
	(इस गीताशास्त्रका)	शुभान्	= श्रेष्ठ

* गीता अ० ४ श्लोक ३३ का अर्थ देखना चाहिये ।

लोकान् = लोकोंको । प्राप्नुयात् = प्राप्त होवेगा

गीताश्रवणसे अर्जुनका मोह नष्ट हुआ या नहीं यह जानने-के लिये भगवान् का प्रश्न ।

कच्चिदेतच्छ्रुतं पार्थ त्वयैकाग्रेण चेतसा ।

कच्चिदज्ञानसंमोहः प्रनष्टस्ते धनंजय ॥७२॥

कच्चित्, एतत्, श्रुतम्, पार्थ, त्वया, एकाग्रेण, चेतसा,
कच्चित्, अज्ञानसंमोहः, प्रनष्टः, ते, धनंजय ॥७२॥

इस प्रकार गीताका माहात्म्य कहकर भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र

आनन्दकन्दने अर्जुनसे पूछा—

पार्थ	= हे पार्थ	(और)
कच्चित्	= क्या	धनंजय = हे धनंजय
एतत्	= यह (मेरा वचन)	कच्चित् = क्या
त्वया	= तैने	ते = तेरा
एकाग्रेण	= एकाग्र	अज्ञान- = { अज्ञानसे उत्पन्न
चेतसा	= चित्तसे	संमोहः = { हुआ मोह
श्रुतम्	= श्रवण किया	प्रनष्टः = नष्ट हुआ

अर्जुन उवाच

अपने मोहका नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाच्युत ।

नाश होना स्थितोऽस्मि गतसन्देहः करिष्ये वचनं तव ॥७३॥

अर्जुनका भगवत् नष्टः, मोहः, स्मृतिः, लब्धा, त्वत्प्रसादात्, मया, अच्युत,
आज्ञा माननेकी स्थितः, अस्मि, गतसन्देहः, करिष्ये, वचनम्, तव ॥७३॥

प्रतिज्ञा करना । इस प्रकार भगवान्के पूछनेपर अर्जुन बोला—

अच्युत	= हे अच्युत	नष्टः	= { नष्ट हो गया
त्वत्प्रसादात्	= आपकी कृपासे		{ है (और)
(मम)	= मेरा	मया	= मुझे
मोहः	= मोह	स्मृतिः	= स्मृति

लब्धा	= प्राप्त हुई है (इसलिये मैं)	अस्मि	= हूं (और)
गतसन्देहः	= संशयरहित हुआ	तव	= आपकी
स्थितः	= स्थित	वचनम्	= आज्ञा
		करिष्ये	= पालन करूंगा

संजय उवाच

श्रीकृष्ण और
अर्जुनके संवाद-
की महिमा ।

इत्यहं वासुदेवस्य पार्थस्य च महात्मनः ।

संवादमिममश्रौषमद्भुतं रोमहर्षणम् ॥७४॥

इति, अहम्, वासुदेवस्य, पार्थस्य, च, महात्मनः,
संवादम्, इमम्, अश्रौषम्, अद्भुतम्, रोमहर्षणम् ॥७४॥

इसके उपरान्त संजय बोला हे राजन्-

इति	= इस प्रकार	इमम्	= इस
अहम्	= मैंने	अद्भुतम्	= अद्भुत रहस्ययुक्त (और)
वासुदेवस्य	= श्रीवासुदेवके	रोमहर्षणम्	= रोमाञ्चकारक
च	= और	संवादम्	= संवादको
महात्मनः	= महात्मा	अश्रौषम्	= सुना
पार्थस्य	= अर्जुनके		

[„] व्यासप्रसादाच्छ्रुतवानेतद्गुह्यमहं परम् ।

योगं योगेश्वरात्कृष्णात्साक्षात्कथयतः स्वयम् ॥

व्यासप्रसादात्, श्रुतवान्, एतत्, गुह्यम्, अहम्, परम्,
योगम्, योगेश्वरात्, कृष्णात्, साक्षात्, कथयतः, स्वयम् ॥७५॥

कैसे कि-

व्यास- प्रसादात्	= { श्रीव्यासजीकीं कृपासे दिव्य दृष्टिद्वारा	अहम्	= मैंने
		एतत्	= इस
		परम्	= परम (रहस्ययुक्त)

गुह्यम् = गोपनीय
 योगम् = योगको
 साक्षात् = साक्षात्
 कथयतः = कहते हुए
 स्वयम् = स्वयम्

योगेश्वरात् = योगेश्वर
 कृष्णात् = { श्रीकृष्ण
 भगवान्से
 श्रुतवान् = सुना है

श्रीकृष्ण और राजन्संस्मृत्य संस्मृत्य संवादमिममद्भुतम् ।

अर्जुनके संवाद-
 से संजयका
 हर्षित होना ।

केशवार्जुनयोः पुण्यं हृष्यामि च मुहुर्मुहुः ॥७६॥

राजन्, संस्मृत्य, संस्मृत्य, संवादम्, इमम्, अद्भुतम्,
 केशवार्जुनयोः, पुण्यम्, हृष्यामि, च, मुहुर्मुहुः ॥७६॥
 इसलिये-

राजन् = हे राजन् च = और
 केशवार्जुनयोः = { श्रीकृष्ण
 भगवान् और
 अर्जुनके
 अद्भुतम् = अद्भुत
 संवादम् = संवादको
 संस्मृत्य = { पुनः पुनः
 संस्मृत्य = { स्मरण करके(मैं)
 इमम् = इस(रहस्ययुक्त) मुहुर्मुहुः = बारम्बार
 पुण्यम् = कल्याणकारक हृष्यामि = हर्षित होता हूँ

भगवान्के
 विश्वरूप को
 स्मरण करके
 संजयका हर्षित
 होना ।

तच्च संस्मृत्य संस्मृत्य रूपमत्यद्भुतं हरेः ।

विस्मयो मे महान् राजन् हृष्यामि च पुनः पुनः ॥७७॥

तत्, च, संस्मृत्य, संस्मृत्य, रूपम्, अति, अद्भुतम्, हरेः,
 विस्मयः, मे, महान्, राजन्, हृष्यामि, च, पुनः, पुनः ॥७७॥

तथा-

राजन् = हे राजन् हरेः = श्रीहरिके*

* जिसका स्मरण करनेसे पापोंका नाश होता है उसका नाम हरि है ।

तत्	= उस	मे	= मेरे (चित्तमें)
अति	= अति	महान्	= महान्
अद्भुतम्	= अद्भुत	विस्मयः	= आश्चर्य (होता है)
रूपम्	= रूपको	च	= और
च	= भी	(अहम्)	= मैं
संस्मृत्य	= { पुनः पुनः	पुनः पुनः	= बारम्बार
संस्मृत्य	= { स्मरण करके	हृष्यामि	= हर्षित होता हूं

श्रीकृष्ण और
अर्जुनके प्रभाव-
का कथन ।

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः ।

तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ॥७८॥

यत्र, योगेश्वरः, कृष्णः, यत्र, पार्थः, धनुर्धरः,

तत्र, श्रीः, विजयः, भूतिः, ध्रुवा, नीतिः, मतिः, मम ॥७८॥

हे राजन् ! विशेष क्या कहूं—

यत्र	= जहां	तत्र	= वहींपर
योगेश्वरः	= योगेश्वर	श्रीः	= श्री
कृष्णः	= { श्रीकृष्ण भगवान् हैं (और)	विजयः	= विजय
यत्र	= जहां	भूतिः	= विभूति (और)
धनुर्धरः	= { गाण्डीव धनुषधारी	ध्रुवा	= अचल
पार्थः	= अर्जुन है	नीतिः	= नीति है
		(इति)	= ऐसा
		मम	= मेरा
		मतिः	= मत है

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां

योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे मोक्षसंन्यास-

योगो नामाष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥

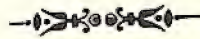
“श्रीमद्भगवद्गीता” यह एक परम रहस्यका विषय है। इसको परम कृपालु श्रीकृष्ण भगवान् ने अर्जुनको निमित्त करके सभी प्राणियोंके हितके लिये कहा है। परन्तु इसके प्रभावको वे ही पुरुष जान सकते हैं कि जो भगवान् के शरण होकर श्रद्धा, भक्तिसहित इसका अभ्यास करते हैं। इसलिये अपना कल्याण चाहनेवाले मनुष्योंको उचित है कि जितना शीघ्र हो सके अज्ञाननिद्रासे चेतकर एवं अपना मुख्य कर्तव्य समझकर श्रद्धा, भक्तिसहित सदा इसका श्रवण, मनन और पठनपाठनद्वारा अभ्यास करते हुए भगवान् की आज्ञानुसार साधनमें लग जायें। क्योंकि जो मनुष्य श्रद्धा, भक्तिसहित इसका मर्म जाननेके लिये इसके अन्तर प्रवेश करके सदा इसका मनन करते हैं, एवं भगवत्-आज्ञानुसार साधन करनेमें तत्पर रहते हैं, उनके अन्तःकरणमें प्रतिदिन नये-नये सद्भाव उत्पन्न होते हैं और वे शुद्धान्तःकरण हुए शीघ्र ही परमात्माको प्राप्त हो जाते हैं।



हरिः ॐ तत्सव् हरिः ॐ तत्सव् हरिः ॐ तत्सव्

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

त्यागसे भगवत्-प्राप्ति



त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव ॥



त्यक्त्वा कर्मफलासङ्गं नित्यतृप्तो निराश्रयः ।
कर्मण्यभिप्रवृत्तोऽपि नैव किञ्चित्करोति सः ॥
न हि देहभृता शक्यं त्यक्तुं कर्माण्यशेषतः ।
यस्तु कर्मफलत्यागी स त्यागीत्यभिधीयते ॥



STP-5000 5000

STP-5000 5000

STP-5000 5000

STP-5000 5000

STP-5000 5000

STP-5000 5000

STP-5000 5000

STP-5000 5000

STP-5000 5000

STP-5000 5000

STP-5000 5000

श्रीविष्णु



सशङ्खचक्रं सकिरीटकुण्डलं सपीतवस्त्रं सरसीरुहेक्षणम् ।
सहारवक्षःस्थलकौस्तुभश्रियं नमामि विष्णुं शिरसा चतुर्भुजम् ॥

त्यागसे भगवत्-प्राप्ति

गृहस्थाश्रममें रहता हुआ भी मनुष्य त्यागके द्वारा परमात्माको प्राप्त कर सकता है। परमात्माको प्राप्त करनेके लिये “त्याग” ही मुख्य साधन है। अतएव सात श्रेणियोंमें विभक्त करके त्यागके लक्षण संक्षेपमें लिखे जाते हैं।

(१) निषिद्ध कर्मोंका सर्वथा त्याग ।

चोरी, व्यभिचार, झूठ, कपट, छल, जवरदस्ती, हिंसा, अभक्ष्य-भोजन और प्रमाद आदि शास्त्रविरुद्ध नीच कर्मोंको मन, वाणी और शरीरसे किसी प्रकार भी न करना। यह पहिली श्रेणीका त्याग है।

(२) काम्य कर्मोंका त्याग ।

स्त्री, पुत्र और धन आदि प्रिय वस्तुओंकी प्राप्तिके उद्देश्यसे एवं रोग-संकटादिकी निवृत्तिके उद्देश्यसे किये जानेवाले यह दान, तप और उपासनादि सकाम कर्मोंको अपने स्वार्थके लिये न करना*। यह दूसरी श्रेणीका त्याग है।

(३) तृष्णाका सर्वथा त्याग ।

मान, बड़ाई, प्रतिष्ठा एवं स्त्री, पुत्र और धनादि जो कुछ

* यदि कोई लौकिक अथवा शास्त्रीय ऐसा कर्म संयोगवश प्राप्त हो जाय जो कि स्वरूपसे तो सकाम हो परन्तु उसके न करनेसे किसीको कष्ट पहुंचता हो या कर्म उपासनाकी परम्परामें किसी प्रकारकी बाधा आती हो तो स्वार्थका त्याग करके केवल लोकसंग्रहके लिये उसका कर लेना सकाम कर्म नहीं है।

भी अनित्य पदार्थ प्रारब्धके अनुसार प्राप्त हुए हों उनके बढ़ने-की इच्छाको भगवत्-प्राप्तिमें बाधक समझकर उसका त्याग करना । यह तीसरी श्रेणीका त्याग है ।

(४) स्वार्थके लिये दूसरोंसे सेवा करानेका त्याग ।

अपने सुखके लिये किसीसे भी धनादि पदार्थोंकी अथवा सेवा करानेकी याचना करना एवं बिना याचनाके दिये हुए पदार्थोंको या की हुई सेवाको स्वीकार करना तथा किसी प्रकार भी किसीसे अपना स्वार्थ सिद्ध करनेकी मनमें इच्छा रखना इत्यादि जो स्वार्थके लिये दूसरोंसे सेवा करानेके भाव हैं उन सबका त्याग करना * । यह चौथी श्रेणीका त्याग है ।

(५) संपूर्ण कर्तव्य कर्मोंमें आलस्य और

फलकी इच्छाका सर्वथा त्याग ।

ईश्वरकी भक्ति, देवताओंका पूजन, मातापितादि गुरुजनोंकी सेवा, यज्ञ, दान, तप तथा वर्णाश्रमके अनुसार आजीविकाद्वारा गृहस्थका निर्वाह एवं शरीरसंबन्धी खानपान इत्यादि जितने कर्तव्य कर्म हैं उन सबमें आलस्यका और सब प्रकारकी कामनाका त्याग करना ।

❀ यदि कोई ऐसा अवसर योग्यतासे प्राप्त हो जाय कि शरीरसंबन्धी सेवा अथवा भोजनादि पदार्थोंके स्वीकार न करनेसे किसीको कष्ट पहुँचता हो या लोकशिक्षामें किसी प्रकारकी बाधा आती हो तो उस अवसरपर स्वार्थका त्याग करके केवल उनकी प्रीतिके लिये सेवादिका स्वीकार करना दोषयुक्त नहीं है । क्योंकि स्त्री, पुत्र और नौकर आदिसे की हुई सेवा एवं बन्धु-बान्धव और मित्र आदिद्वारा दिये हुए भोजनादि पदार्थ स्वीकार न करनेसे उनको कष्ट होना एवं लोक-मर्यादामें बाधा पड़ना सम्भव है ।

(क) ईश्वर-भक्तिमें आलस्यका त्याग ।

अपने जीवनका परम कर्तव्य मानकर परमदयालु, सवके सुहृद्, परमप्रेमी, अन्तर्यामी परमेश्वरके गुण, प्रभाव और प्रेमकी रहस्यमयी कथाका श्रवण, मनन और पठन-पाठन करना तथा आलस्यरहित होकर उनके परमपुनीत नामका उत्साह-पूर्वक ध्यानसहित निरन्तर जप करना ।

(ख) ईश्वर-भक्तिमें कामनाका त्याग ।

इस लोक और परलोकके संपूर्ण भोगोंको क्षणभंगुर, नाशवान् और भगवान्की भक्तिमें बाधक समझकर किसी भी वस्तुकी प्राप्तिके लिये न तो भगवान्से प्रार्थना करना और न मनमें इच्छा ही रखना । तथा किसी प्रकारका संकट आ जानेपर भी उसके निवारणके लिये भगवान्से प्रार्थना न करना अर्थात् हृदयमें ऐसा भाव रखना कि प्राण भले ही चले जायं, परन्तु इस मिथ्या जीवनके लिये विशुद्ध भक्तिमें कलङ्क लगाना उचित नहीं है । जैसे भक्त प्रह्लादने पिताद्वारा बहुत सताये जानेपर भी अपने कष्ट-निवारणके लिये भगवान्से प्रार्थना नहीं की ।

अपना अनिष्ट करनेवालोंको भी, “भगवान् तुम्हारा बुरा करें” इत्यादि किसी प्रकारके कठोर शब्दोंसे श्राप न देना और उनका अनिष्ट होनेकी मनमें इच्छा भी न रखना ।

भगवान्की भक्तिके अभिमानमें आकर किसीको वरदानादि भी न देना, जैसे कि “भगवान् तुम्हें आरोग्य करें” “भगवान् तुम्हारा दुःख दूर करें” “भगवान् तुम्हारी आयु बढ़ावें” इत्यादि ।

पत्रव्यवहारमें भी सकाम शब्दोंका न लिखना अर्थात् जैसे “अठे उठे श्रीठाकुरजी सहाय छै” “ठाकुरजी विक्री चलासी” “ठाकुरजी वर्षा करसी” “ठाकुरजी आराम करसी” इत्यादि

सांसारिक वस्तुओंके लिये ठाकुरजीसे प्रार्थना करनेके रूपमें सकाम शब्द मारवाड़ीसमाजमें प्रायः लिखे जाते हैं वैसे न लिखकर “श्रीपरमात्मादेव आनन्दरूपसे सर्वत्र विराजमान हैं” “श्रीपरमेश्वरका भजन सार है” इत्यादि निष्काम माङ्गलिक शब्द लिखना तथा इसके सिवाय अन्य किसी प्रकारसे भी लिखने, बोलने आदिमें सकाम शब्दोंका प्रयोग न करना ।

(ग) देवताओंके पूजनमें आलस्य और कामनाका त्याग ।

शास्त्रमर्यादासे अथवा लोकमर्यादासे पूजनेके योग्य देवताओंको पूजनेकानियत समय आनेपर उनका पूजन करनेके लिये भगवान्की आज्ञा है एवं भगवान्की आज्ञाका पालन करना परम कर्तव्य है ऐसा समझकर उत्साहपूर्वक विधिके सहित उनका पूजन करना एवं उनसे किसी प्रकारकी भी कामना न करना ।

उनके पूजनके उद्देश्यसे रोकड़ वहीखाते आदिमें भी सकाम शब्द न लिखना अर्थात् जैसे मारवाड़ीसमाजमें नये बसनेके दिन अथवा दीपमालिकाके दिन श्रीलक्ष्मीजीका पूजन करके “श्रीलक्ष्मीजी लाभ मोकलो देसी” “भण्डार भरपूर राखसी” “ऋद्धि सिद्धि करसी” “श्रीकालीजीके आसरे” “श्रीगङ्गाजीके आसरे” इत्यादि बहुतसे सकाम शब्द लिखे जाते हैं वैसे न लिखकर “श्रीलक्ष्मीनारायणजीसबजगह आनन्दरूपसे विराजमान हैं” तथा “बहुत आनन्द और उत्साहके सहित श्रीलक्ष्मीजीका पूजन किया” इत्यादि निष्काम माङ्गलिक शब्द लिखना और नित्य रोकड़ नकल आदिके आरम्भ करनेमें भी उपरोक्त रीतिसे ही लिखना ।

(घ) माता-पितादि गुरुजनोंकी सेवामें आलस्य

और कामनाका त्याग ।

माता, पिता, आचार्य एवं और भी जो पूजनीय पुरुष वर्ण, आश्रम, अवस्था और गुणोंमें किसी प्रकार भी अपनेसे बड़े हों उन

सबकी सब प्रकारसे नित्य सेवा करना और उनको नित्य प्रणाम करना मनुष्यका परम कर्तव्य है इस भावको हृदयमें रखते हुए आलस्यका सर्वथा त्याग करके, निष्काम भावसे उत्साहपूर्वक भगवदाज्ञानुसार उनकी सेवा करनेमें तत्पर रहना ।

(ङ) यज्ञ, दान और तप आदि शुभ कर्मोंमें

आलस्य और कामनाका त्याग ।

पञ्च महायज्ञादि * नित्यकर्म एवं अन्यान्य नैमित्तिक कर्मरूप यज्ञादिका करना, तथा अन्न, वस्त्र, विद्या, औषध और धनादि पदार्थोंके दानद्वारा संपूर्ण जीवोंको यथायोग्य सुख पहुँचानेके लिये मन, वाणी और शरीरसे अपनी शक्तिके अनुसार चेष्टा करना तथा अपने धर्मका पालन करनेके लिये हर प्रकारसे कष्ट सहन करना इत्यादि शास्त्रविहित कर्मोंमें इस लोक और परलोकके संपूर्ण भोगोंकी कामनाका सर्वथा त्याग करके एवं अपना परम कर्तव्य मानकर श्रद्धासहित उत्साहपूर्वक भगवदाज्ञानुसार केवल भगवदर्थ ही उनका आचरण करना ।

(च) आजीविकाद्वारा गृहस्थ-निर्वाहके उपयुक्त कर्मोंमें

आलस्य और कामनाका त्याग ।

आजीविकाके कर्म जैसे वैश्यके लिये कृषि, गोरक्ष्य और वाणिज्यादि कहे हैं वैसे ही जो अपने अपने वर्ण, आश्रमके अनुसार शास्त्रमें विधान किये गये हों उन सबके पालनद्वारा संसारका हित करते हुए ही गृहस्थका निर्वाह करनेके लिये भगवान्की आज्ञा है। इसलिये अपना कर्तव्य मानकर लाभ-हानिको समान समझते हुए सब प्रकारकी कामनाओंका त्याग करके उत्साहपूर्वक उपरोक्त कर्मोंका करना† ।

* पञ्च महायज्ञ यह हैं । देवयज्ञ (अग्निहोत्रादि) ऋषियज्ञ (वेद-पाठ, सन्ध्या, गायत्रीजपदि) पितृयज्ञ (तर्पण श्राद्धादि) मनुष्ययज्ञ (अतिथिसेवा) और भूतयज्ञ (बलिवैश्व) ।

† उपरोक्त भावसे करनेवाले पुरुषके कर्म लोभसे रहित होनेके

(छ) शरीरसंबन्धी कर्मोंमें आलस्य

और कामनाका त्याग ।

शरीरनिर्वाहके लिये शास्त्रोक्त रीतिसे भोजन, वस्त्र और औषधादिके सेवनरूप जो शरीरसंबन्धी कर्म हैं उनमें सब प्रकारके भोगविलासोंकी कामनाका त्याग करके एवं सुख, दुःख, लाभ, हानि और जीवन, मरण आदिको समान समझकर केवल भगवत्-प्राप्तिके लिये ही योग्यताके अनुसार उनका आचरण करना ।

पूर्वोक्त चार श्रेणियोंके त्यागसहित इस पांचवीं श्रेणीके त्यागानुसार संपूर्ण दोषोंका और सब प्रकारकी कामनाओंका नाश होकर केवल एक भगवत्-प्राप्तिकी ही तीव्र इच्छाका होना ज्ञानकी पहिली भूमिकामें परिपक्व अवस्थाको प्राप्त हुए पुरुषके लक्षण समझने चाहिये ।

(६) संसारके संपूर्ण पदार्थोंमें और कर्मोंमें

ममता और आसक्तिका सर्वथा त्याग ।

धन, भवन और वस्त्रादि संपूर्ण वस्तुएँ तथा स्त्री, पुत्र और मित्रादि संपूर्ण बान्धवजन एवं मान, बड़ाई और प्रतिष्ठा इत्यादि इस लोकके और परलोकके जितने विषय-भोगरूप पदार्थ हैं उन सबको क्षणभंगुर और नाशवान् होनेके कारण अनित्य समझकर उनमें ममता और आसक्तिका न रहना तथा केवल

कारण उनमें किसी प्रकारका भी दोष नहीं आ सकता क्योंकि आजीविकाके कर्मोंमें लोभ ही विशेषरूपसे पाप करानेका हेतु है इसलिये मनुष्यको चाहिये कि गीता अध्याय १८ श्लोक ४४ की टिप्पणीमें जैसे वैश्यके प्रति वाणिज्यके दोषोंका त्याग करनेके लिये विस्तारपूर्वक लिखा है उसी प्रकार अपने अपने वर्ण, आश्रमके अनुसार संपूर्ण कर्मोंमें सब प्रकारके दोषोंका त्याग करके केवल भगवान्की आज्ञा समझकर भगवान्के लिये निष्काम भावसे ही संपूर्ण कर्मोंका आचरण करे ।

एक सच्चिदानन्दधन परमात्मामें ही अनन्यभावसे विशुद्ध प्रेम होनेके कारण मन, वाणी और शरीरद्वारा होनेवाली संपूर्ण क्रियाओंमें और शरीरमें भी ममता और आसक्तिका सर्वथा अभाव हो जाना । यह छठी श्रेणीका त्याग है॥

उक्त छठी श्रेणीके त्यागको प्राप्त हुए पुरुषोंका संसारके संपूर्ण पदार्थोंमें वैराग्य होकर केवल एक परम प्रेममय भगवान्-में ही अनन्य प्रेम हो जाता है । इसलिये उनको भगवान्के गुण, प्रभाव और रहस्यसे भरी हुई विशुद्ध प्रेमके विषयकी कथाओंका सुनना-सुनाना और मनन करना तथा एकान्त देशमें रहकर निरन्तर भगवान्का भजन, ध्यान और शास्त्रोंके मर्मका विचार करना ही प्रिय लगता है । विषयासक्त मनुष्योंमें रहकर हास्य, विलास, प्रमाद, निन्दा, विषयभोग और व्यर्थ वार्तादिमें अपने अमूल्य समयका एक क्षण भी बिताना अच्छा नहीं लगता एवं उनके द्वारा संपूर्ण कर्तव्य कर्म भगवान्के स्वरूप और नामका मनन रहते हुए ही बिना आसक्तिके केवल भगवदर्थ होते हैं ।

इस प्रकार संपूर्ण पदार्थोंमें और कर्मोंमें ममता और आसक्तिका त्याग होकर केवल एक सच्चिदानन्दधन परमात्मामें ही विशुद्ध प्रेमका होना ज्ञानकी दूसरी भूमिकामें परिपक्व अवस्थाको प्राप्त हुए पुरुषके लक्षण समझने चाहिये ।

॥ संपूर्ण पदार्थोंमें और कर्मोंमें तृष्णा और फलकी इच्छाका त्याग तो तीसरी और पांचवीं श्रेणीके त्यागमें कहा गया, परन्तु उपरोक्त त्यागके होनेपर भी उनमें ममता और आसक्ति शेष रह जाती है जैसे भजन, ध्यान और सत्सङ्गके अभ्याससे भरतमुनिका संपूर्ण पदार्थोंमें और कर्मोंमें तृष्णा और फलकी इच्छाका त्याग होनेपर भी हरिणमें और हरिणके पालनरूप कर्ममें ममता और आसक्ति बनी रही । इसलिये संसारके संपूर्ण पदार्थोंमें और कर्मोंमें ममता और आसक्तिके त्यागको छठी श्रेणीका त्याग कहा है ।

(७) संसार, शरीर और संपूर्ण कर्मोंमें सूक्ष्म वासना और अहंभावका सर्वथा त्याग ।

संसारके संपूर्ण पदार्थ मायाके कार्य होनेसे सर्वथा अनित्य हैं और एक सच्चिदानन्दघन परमात्मा ही सर्वत्र समभावसे परिपूर्ण हैं ऐसा दृढ़ निश्चय होकर शरीरसहित संसारके संपूर्ण पदार्थोंमें और संपूर्ण कर्मोंमें सूक्ष्म वासनाका सर्वथा अभाव हो जाना अर्थात् अन्तःकरणमें उनके चित्रोंका संस्काररूपसे भी न रहना एवं शरीरमें अहंभावका सर्वथा अभाव होकर मन, वाणी और शरीरद्वारा होनेवाले संपूर्ण कर्मोंमें कर्तापनके अभिमानका लेशमात्र भी न रहना । यह सातवीं श्रेणीका त्याग है ॐ ।

इस सातवीं श्रेणीके त्यागरूप परवैराग्यको † प्राप्त हुए पुरुषोंके अन्तःकरणकी वृत्तियाँ संपूर्ण संसारसे अत्यन्त उपराम हो जाती हैं । यदि किसी कालमें कोई सांसारिक फुरना हो भी जाती है तो भी उसके संस्कार नहीं जमते, क्योंकि उनकी एक सच्चिदानन्दघन वासुदेव परमात्मामें ही अनन्यभावसे गाढ़ स्थिति निरन्तर बनी रहती है ।

ॐ संपूर्ण संसारके पदार्थोंमें और कर्मोंमें तृष्णा और फलकी इच्छाका एवं ममता और आसक्तिका सर्वथा अभाव होनेपर भी उनमें सूक्ष्म वासना और कर्तृत्व अभिमान शेष रह जाता है इसलिये सूक्ष्म वासना और अहंभावके त्यागको सातवीं श्रेणीका त्याग कहा है ।

† पूर्वोक्त छठी श्रेणीके त्यागको प्राप्त हुए पुरुषकी तो विषयोंका विशेष संसर्ग होनेसे कदाचित् उनमें कुछ आसक्ति हो भी सकती है परन्तु इस सातवीं श्रेणीके त्यागी पुरुषका विषयोंके साथ संसर्ग होनेपर भी उनमें आसक्ति नहीं हो सकती क्योंकि उसके निश्चयमें एक परमात्माके सिवाय अन्य कोई वस्तु रहती ही नहीं इसलिये इस त्यागको परवैराग्य कहा है ।

इसलिये उनके अन्तःकरणमें संपूर्ण अवगुणोंका अभाव होकर अहिंसा १, सत्य २, अस्तेय ३, ब्रह्मचर्य ४, अपैशुनता ५, लज्जा, अमानित्व ६, निष्कपटता, शौच ७, सन्तोष ८, तितिक्षा ९, सत्सङ्ग, सेवा, यज्ञ, दान, तप १०, स्वाध्याय ११, शम १२, दम १३, विनय, आर्जव १४, दया १५, श्रद्धा १६, विवेक १७, वैराग्य १८, एकान्तवास, अपरिग्रह १९, समाधान २०, उपरामता, तेज २१,

१ मन, वाणी और शरीरसे किसी प्रकार किसीको कष्ट न देना । २ अन्तःकरण और इन्द्रियोंके द्वारा जैसा निश्चय किया हो वैसाका वैसा ही प्रिय शब्दोंमें कहना । ३ चोरीका सर्वथा अभाव । ४ आठ प्रकारके मैथुनोंका अभाव । ५ किसीकी भी निन्दा न करना । ६ सत्कार, मान और पूजादिका न चाहना । ७ बाहर और भीतरकी पवित्रता (सत्यता-पूर्वक शुद्ध व्यवहारसे द्रव्यकी और उसके अन्नसे आहारकी एवं यथा-योग्य वर्तावसे आचरणोंकी और जल-मृत्तिकादिसे शरीरकी शुद्धिको तो बाहरकी शुद्धि कहते हैं और रागद्वेष तथा कपटादि विकारोंका नाश होकर अन्तःकरणका स्वच्छ और शुद्ध हो जाना, भीतरकी शुद्धि कहलाती है) । ८ तृष्णाका सर्वथा अभाव । ९ शीत, उष्ण, सुख, दुःखादि द्वन्द्वोंका सहन करना । १० स्वधर्मपालनके लिये कष्ट सहना । ११ वेद और सत्-शास्त्रोंका अध्ययन एवं भगवान्‌के नाम और गुणोंका कीर्तन । १२ मनका वशमें होना । १३ इन्द्रियोंका वशमें होना । १४ शरीर और इन्द्रियोंके सहित अन्तःकरणकी सरलता । १५ दुःखियोंमें करुणा । १६ वेद, शास्त्र, महात्मा, गुरु और परमेश्वरके वचनोंमें प्रत्यक्षके सदृश विश्वास । १७ सत् और असत् पदार्थका यथार्थ ज्ञान । १८ ब्रह्मलोकतकके संपूर्ण पदार्थोंमें आसक्तिका अत्यन्त अभाव । १९ ममत्वबुद्धिसे संग्रहका अभाव । २० अन्तःकरणमें संशय और विक्षेपका अभाव । २१ श्रेष्ठ पुरुषोंकी उस शक्तिका नाम तेज है कि जिसके प्रभावसे विषयासक्त और नीच

क्षमा १, धैर्य २, अद्रोह ३, अभय ४, निरहंकारता, शान्ति ५ और ईश्वरमें अनन्य भक्ति इत्यादि सद्गुणोंका आविर्भाव स्वभावसे ही हो जाता है।

इस प्रकार शरीरसहित संपूर्ण पदार्थोंमें और कर्मोंमें वासना और अहंभावका अत्यन्त अभाव होकर एक सच्चिदानन्दघन परमात्माके स्वरूपमें ही एकीभावसे नित्य निरन्तर दृढ़ स्थिति रहना ज्ञानकी तीसरी भूमिकामें परिपक्व अवस्थाको प्राप्त हुए पुरुषके लक्षण हैं।

उपरोक्त गुणोंमेंसे कितने ही तो पहिली और दूसरी भूमिका-में ही प्राप्त हो जाते हैं परन्तु संपूर्ण गुणोंका आविर्भाव तो प्रायः तीसरी भूमिकामें ही होता है। क्योंकि यह सब भगवत्-प्राप्ति-के अति समीप पहुँचे हुए पुरुषोंके लक्षण एवं भगवत्-स्वरूपके साक्षात् ज्ञानमें हेतु हैं इसीलिये श्रीकृष्ण भगवान् ने प्रायः इन्हीं गुणोंको श्रीगीताजीके १३ वें अध्यायमें (श्लोक ७ से ११ तक) ज्ञानके नामसे तथा १६ वें अध्यायमें (श्लोक १ से ३ तक) दैवी संपदाके नामसे कहा है।

तथा उक्त गुणोंको शास्त्रकारोंने सामान्य धर्म माना है। इसलिये मनुष्यमात्रका ही इनमें अधिकार है अतएव उपरोक्त सद्गुणोंका अपने अन्तःकरणमें आविर्भाव करनेके लिये सभीको भगवान् के शरण होकर विशेषरूपसे प्रयत्न करना चाहिये।

प्रकृतिवाले मनुष्य भी प्रायः पापाचरणसे रुककर उनके कथनानुसार श्रेष्ठ कर्मोंमें प्रवृत्त हो जाते हैं।

१ अपना अपराध करनेवालेको किसी प्रकार भी दण्ड देनेका भाव न रखना। २ भारी विपत्ति आनेपर भी अपनी स्थितिसे चलायमान न होना। ३ अपने साथ द्वेष रखनेवालोंमें भी द्वेषका न होना। ४ सर्वथा भयका अभाव। ५ इच्छा और वासनाओंका अत्यन्त अभाव होना और अन्तःकरणमें नित्य निरन्तर प्रसन्नताका रहना।

उपसंहार

इस लेखमें सात श्रेणियोंके त्यागद्वारा भगवत्-प्राप्तिका होना कहा गया है। उनमें पहिली ५ श्रेणियोंके त्यागतक तो ज्ञानकी प्रथम भूमिकाके लक्षण और छठी श्रेणीके त्यागतक दूसरी भूमिकाके लक्षण तथा सातवीं श्रेणीके त्यागतक तीसरी भूमिकाके लक्षण बताये गये हैं। उक्त तीसरी भूमिकामें परिपक्व अवस्थाको प्राप्त हुआ पुरुष तत्काल ही सच्चिदानन्दघन परमात्माको प्राप्त हो जाता है। फिर उसका इस क्षणभङ्गुर नाशवान् अनित्य संसारसे कुछ भी सम्बन्ध नहीं रहता, अर्थात् जैसे स्वप्नसे जगे हुए पुरुषका स्वप्नके संसारसे कुछ भी सम्बन्ध नहीं रहता वैसे ही अज्ञाननिद्रासे जगे हुए पुरुषका भी मायाके कार्यरूप अनित्य संसारसे कुछ भी सम्बन्ध नहीं रहता। यद्यपि लोक-दृष्टिमें उस ज्ञानी पुरुषके शरीरद्वारा प्रारब्धसे संपूर्ण कर्म होते हुए दिखाई देते हैं एवं उन कर्मोंद्वारा संसारमें बहुत ही लाभ पहुंचता है। क्योंकि कामना, आसक्ति और कर्तृत्व अभिमानसे रहित होनेके कारण उस महात्माके मन, वाणी और शरीरद्वारा किये हुए आचरण लोकमें प्रमाणस्वरूप समझे जाते हैं और ऐसे पुरुषोंके भावसे ही शास्त्र बनते हैं, परन्तु यह सब होते हुए भी वह सच्चिदानन्दघन वासुदेवको प्राप्त हुआ पुरुष तो इस त्रिगुणमयी मायासे सर्वथा अतीत ही है, इसलिये वह न तो गुणोंके कार्यरूप प्रकाश, प्रवृत्ति और निद्रा आदिके प्राप्त होनेपर उनसे द्वेष करता है और न निवृत्त होनेपर उनकी आकांक्षा ही करता है, क्योंकि सुख-दुःख, लाभ-हानि, मान-अपमान और निन्दा-स्तुति आदिमें एवं मिट्टी, पत्थर और सुवर्ण आदिमें सर्वत्र

उसका समभाव हो जाता है इसलिये उस महात्माको न तो किसी प्रिय वस्तुकी प्राप्ति और अप्रियकी निवृत्तिमें हर्ष होता है, न किसी अप्रियकी प्राप्ति और प्रियके वियोगमें शोक ही होता है। यदि उस धीर पुरुषका शरीर किसी कारणसे शस्त्रों-द्वारा काटा भी जाय या उसको कोई अन्य प्रकारका भारी दुःख आकर प्राप्त हो जाय तो भी वह सच्चिदानन्दधन वासुदेवमें अनन्यभावसे स्थित हुआ पुरुष उस स्थितिसे चलायमान नहीं होता। क्योंकि उसके अन्तःकरणमें संपूर्ण संसार मृगतृष्णाके जलकी भांति प्रतीत होता है और एक सच्चिदानन्दधन परमात्मा-के अतिरिक्त अन्य किसीका भी होनापना नहीं भासता। विशेष क्या कहा जाय, वास्तवमें उस सच्चिदानन्दधन परमात्माको प्राप्त हुए पुरुषका भाव वह स्वयं ही जानता है। मन, बुद्धि और इन्द्रियों-द्वारा प्रगट करनेके लिये किसीका भी सामर्थ्य नहीं है। अतएव जितना शीघ्र हो सके अज्ञाननिद्रासे चेतकर उक्त सात श्रेणियों-में कहे हुए त्यागद्वारा परमात्माको प्राप्त करनेके लिये सत्पुरुषों-की शरण ग्रहणकरके उनके कथनानुसार साधन करनेमें तत्पर होना चाहिये। क्योंकि यह अति दुर्लभ मनुष्यका शरीर बहुत जन्मोंके अन्तमें परम दयालु भगवान्की कृपासे ही मिलता है। इसलिये नाशवान् क्षणभङ्गुर संसारके अनित्य भोगोंको भोगनेमें अपने जीवनका अमूल्य समय नष्ट नहीं करना चाहिये।

शान्तिः शान्तिः शान्तिः



15

चनी

पता-

गीताप्रेस, गोरखपुर

